मन्त्रानुष्ठानपद्धतिः

7-7

कृष्णानन्द शास्त्री

7-7

ॐ

मन्त्रानुष्ठान-पद्धतिः

(समस्त उपयोगी शास्त्रीय मन्त्रों, एवं दशविद्याओं का
सम्पूर्ण शास्त्रीय विधान)

सम्पादकः
कृष्णानन्द शास्त्री
(कर्मकाण्ड प्रदीप, दुर्गार्चन सृति-वेदोक्त नित्यकर्म पद्धति
एवं देव पूजा पद्धति आदि पुस्तकों के लेखक)

प्रकाशक
भारतीय संस्कृत भवन
माई हीरां गेट, जालन्धर शहर

प्रकाशक :
भारतीय संस्कृत भवन
माई हीरां गेट, जालन्धर शहर
(पंजाब) 144008

© पुनर्मुद्रणाद्याः सर्वेऽधिकाराः प्रकाशकायत्ताः
प्रथम संस्करण-अक्षय तृतीया सम्वत् 2046
मूल्यम्-पैंतालीस रुपए मात्र

कम्पोजिंग कर्त्ता :
सिक्का कम्पोजिंग हाउस,
मुद्रक :
गायत्री प्रिंटर्ज़
जालन्धर शहर ।

कुछ वक्तव्य

संसार के अनेकानेक कष्टों के मूल में मानसिक उथल-पुथल ही कारण होती है। रक्तचाप, उन्माद, अर्द्धांगवात, प्रमेह, मधुमेह, हृदयरोग आदि जितने प्रमुख रोग हैं उनके मूल में मानसिक कारण ही काम करते हैं। यदि इस विषय को और गम्भीरता से सोचा जाये तो दुर्व्यसन एवं अपथ्य सेवन के पीछे भी मानसिक दौर्बल्य कारण रूप में दीखते हैं। यहां तक कि औषधोपचार में दीखने वाली अरुचियों में भी मानसिक स्थितियां ही कारण होती हैं। दुर्घटना आदि में भी इन मानसिक विकृतियों को स्वीकारा जाता है। सच पूछो तो ऐसे क्लेश निश्चित रूप से है ही नहीं जहां पर कि मानसिक स्थिति की भूमिका न रही हो। मानसिक स्वास्थ्य पर तो बात यहां तक आ जाती है कि कोई ऊंचे से ऊंचा क्लेश व्यक्ति को हिला नहीं पाता है। "यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते" का गीता वाक्य यही तो बताता है। अतः आज के संसार में जहां कि भौतिकता बढ़ती चली आ रही है। चिकित्सा के क्षेत्र में ज्ञाता लोग यहां पर सामान्य रूप से सहमत है कि सभी क्लेशों के पीछे मन की स्थितियां व्याप्त हैं।

प्राप्तव्य दैवी सम्पत्तियां गीता में परिगणित हैं। और वहां पर आसुरी सम्प्रदायें भी स्पष्ट रूप से लिखी हैं। उन पर यदि गम्भीरता से विचार किया जाये तो संसार के सभी तापों एवं सन्तापों का समाधान निहित है। दैवी सम्पदायें गीता में इस प्रकार वर्णित है—

अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञान योगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्चयज्ञश्च स्वाध्याय स्तप आर्जवम् ॥16/1॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दयाभूतेष्वलोलुप्त्वमार्दवं ह्रीरचापलम् ॥16/2॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहोनातिमानितः।
भवति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥16/3॥

अर्थात् अभय (भय का सर्वथा अभाव) सत्व संशुद्धि (अन्तःकरण की भली प्रकार से स्वच्छता), ज्ञानयोग व्यवस्थितिः=तत्त्व ज्ञान के लिये

ध्यान योग में निरन्तर सुदृढ़ स्थिति। दान=सात्विक दान, दम=इन्द्रियों का दमन, यज्ञ=उत्तम कर्मों का आचरण, स्वाध्याय=वेदों का अध्ययन, तप:=स्वधर्माचरण के लिए कष्ट का सहना, आर्जवम्=शरीर और इन्द्रियों के सहित अन्त: करण की सरलता, अहिंसा=मन, वाणी कर्म से किसी को कष्ट न देना, सत्य=यथार्थ और प्रिय भाषण, अक्रोध=अपना अपकार होने पर भी शान्त रहना, त्याग=कर्मों का कर्तृत्वाभिमान का अभाव; शान्ति अन्त: करण की उपरामता तथा चित्त की चंचलता का अभाव, अपैशुनम् = किसी की निन्दा न करना, भूतेषु दया = हेतु रहित दया, अलोलुप्त्वम् इन्द्रिय-विषयों के साथ संयोग होने पर भी अनासक्ति, मार्दव = कोमलता, ह्री = लोक शास्त्र विरुद्ध आचरण में लज्जा, अचापलम् = व्यर्थ चेष्टाओं का त्याग, तेज = श्रेष्ठ पुरुषों की वह शक्ति जिसके प्रभाव से नीचे लोग अन्यायाचरण छोड़ दे। क्षमा, धृति: = धैर्य, शौच = वाह्य एवं आन्तरिक शुद्धि, अद्रोह = शत्रुता का अभाव, नातिमानिता = अपने पूज्यत्व का अभिमान न होना। ये सारी सम्पदाएं दैवी हैं। इनको प्राप्त करने के लिए ही मानव जीवन को प्रवृत्त होना है। इस पर यह वात आती है कि ये सारी सम्पदाएं आन्तरिक हैं अत: भौतिक साधन इनकी प्राप्ति में सर्वथा साधन वन ही नहीं सकते हैं क्योंकि ये उनके प्रभाव से दूर है।

अन्तत: यह सार हुआ कि शौर्य धैर्य आदि गुण भी मनोमूलक ही हैं जिनके लिए दैनिक नित्य कर्मों के विधान अनिवार्य किये गये हैं।

इन सभी दृष्टियों से विचार करने पर यह वात सामने आती है कि मानसिक चिकित्सा सर्वोपरि महत्त्व की वस्तु है। इस के लिये औषध विधान तो सर्वथा नगण्य है ये उतने प्रभावी हैं भी नहीं अत: आवश्यक हो जाते हैं वे साधना के क्षेत्र जिनके लिए आदरणीय श्री कृष्णानन्द जी शास्त्री ने प्रस्तुत पुस्तक मन्त्रानुष्ठान पद्धति को सर्व साधारण के लिये उपलब्ध कराया है। मन्त्र शब्द लिखित साहित्य के आदि से जुड़ा है। प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद को मन्त्र रूप में ही संगृहीत किया गया है।

आज के विविध ताप-तप्त समाज के लिये यह एक अत्यन्त उपादेय ग्रन्थ है। यहां संसार में विविध क्लेश पैदा हो रहे हैं उनकी भौतिक विधि

से रोकथाम मात्र करने के प्रयास किये जाते हैं। पर भारत ने इसे वास्तविक रूप में देखा था। इस लिये भारतीय साहित्य का श्रीगणेश मन्त्र से ही होता है। इस का कारण क्या रहा है? यह बात विगत विवेचन से स्पष्ट हो जाती है। एक मनस्वी व्यक्ति के लिये संसार कभी असह्य क्लेश नहीं दे सकता है। वह सभी सांसारिक दु:खों को सहर्ष झेल लेता है। श्रीराम के बारे में यह बात आती है कि—

आहूतस्याभिषेकाय बनाय प्रस्थितस्य च।
न लक्षितस्तस्य स्वल्पोऽप्याकार विभ्रम: ॥

अर्थात् जब श्रीराम को राज्याभिषेक के लिये आदेश दिये जाने वाले राम का तथा उसी समय वनवास के लिए प्रस्थान करने वाले राम के आकार में किंचिन्मात्र भी अन्तर नहीं आया। यह स्थिति मानसिक स्थिति प्राप्त करने के लिये कोई भी भौतिक साधन काम नहीं कर सकते हैं। इनके लिए मन्त्र साधना ही मुख्य होती है।

मन्त्र क्या है?

मन्त्र एक अत्यन्त सत्य तत्त्व है। यह व्यक्ति की शक्ति को उद्दीप्त कर उसमें एक महती शक्ति का संचार करता है। इसी मन्त्र का चित्रात्मक रूप यन्त्र है तथा क्रियात्मक रूप तन्त्र कहा गया है। इस प्रकार के विद्वज्जनों के विवेचन को देखकर यदि कहा जाये तो यह सिद्धान्त सामने आता है कि मन्त्र यन्त्र एवं तन्त्र एक ही सत्य के तीन रूप हैं। इनमें से मन्त्र शब्द की परिभाषायें विभिन्न प्रकार से जो भी मिलती हैं वे इस शब्द के अभिधेय को व्यापक बना देती हैं। वैदिक संहिताओं में गायक के विचारों को उपज, ऋक्, छन्द, स्तुति को मन्त्र कहा गया है। ब्राह्मणों में ऋषियों के गद्यमय या पद्यमय कथनों को मन्त्र कहा गया है। यूं साधारण रूप से यदि वैदिक साहित्य के मन्तव्य पर दृष्टिपात करें तो वैदिक सूक्त या यज्ञीय निरूपणों को मन्त्र कहा गया है। तच्चोदकेषु मन्त्राख्या (पू० मी० 2/1/32) में यही अभिप्रेत है। ये ही मन्त्र ऋक्, यजुष् और साम कहलाते हैं। ये वेदों के ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् भाग से भिन्न हैं। यूं मन्त्र की यह भी एक परिभाषा है कि जिसमें किसी देवता के प्रति समर्पित सूक्ष्म प्रार्थना की गई हो। शक्ति और तान्त्रिक सम्प्रदायों में अनेक

सूक्ष्म और रहस्यमय वाक्यों या शब्द खण्डों और अक्षरों का प्रयोग होता है, उन्हें भी मन्त्र कहते हैं। विश्वास किया जाता है कि उनसे महान् शक्तियां और सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

इन सभी परिभाषाओं पर यदि मन्त्र शब्द को परखें तो इसका इतिहास वैदिक साहित्य से जुड़कर एक अनादि (जिस के अथ का पता न हो) स्थिति में आ जाता है।

लौकिक तथा पारलौकिक सिद्धियों को प्राप्त करने के लिये कोई न कोई साधन अपनाना पड़ता है। सिद्धि के अनुकूल इन साधनों का अवलम्बन या आचरण ही साधन कहलाता है। मन्त्र साधना हमारे लिये इस कारण भी अत्यावश्यक हो जाती है कि हमारे जीवन के प्राप्तव्य अभय, सत्वसंसिद्धि, दम, शम, सन्तोष, तप, आदि गीता में वर्णित दैवी सम्पदायें इसी से सुलभ हो पाती हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में अत्यन्त उपादेय प्रकरणों से प्रारम्भ करके ग्राह्य एवं व्यावहारिक विषयों को मनोवैज्ञानिक क्रम से दिया गया है। आरम्भ में षट्कर्म विधान दे कर नित्य कर्मों में मुख्य गायत्री के पुरश्चरण विधान दिये गये हैं। आज के युग के लिए अपेक्षित अन्य विधान दिये गये हैं। इस में कुछ जैन मन्त्र-स्तोत्र भी दिये गये हैं। इन के प्रयोगों से पूर्व मन्त्र विधानों के लिए साधक के विषय में पूर्ण जानकारी विस्तार पूर्वक दी गयी है। विभिन्न स्तोत्रों तथा प्रयोगों के पश्चात् मन्त्र महोदधि में आये आकर्षण मोहन उच्चाटन आदि विधियों को भी दिया गया है। विभिन्न मन्त्रों के साथ यन्त्रों के ब्लाक भी दिये गये हैं। मुद्राओं के लक्षण तथा अनेक आसनों के लक्षण भी दिये गये हैं।

मैं यह विश्वास करता हूं कि पूज्य शास्त्री जी एक अनुभव सम्पन्न व्यक्तित्व के हैं। आज के युग के लिए यह अत्यन्त अपेक्षित विधान कितना तथा किस प्रकार उपादेय है? इसको ध्यान में रख कर इस ग्रन्थ को लिखा गया है। अनेकानेक तापों से सन्तप्त समाज को सांसारिक कष्टों से विमुक्त करने कराने के लिए यह एक सुन्दर ग्रन्थ है। विश्वास है कि सर्वसाधारण इस पवित्र श्रम से लाभान्वित होगा—

प्राचार्य राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, नाहन, हि० प्र०

शुकदेव शर्मा
व्याकरणाचार्य
एम० ए० एम० फिल०

मन्त्रानुष्ठानपद्धति

विषय-सूची

भूमिका 1—48 पृ०

1. षट् कर्म 1
2. कर्मों के लक्षण 1
3. कर्मों के देवता 1
4. देवतावर्ण 2
5. ऋतु 2
6. कर्मों की दिशा 2
7. कर्मों के करने का समय 2
8. तिथि, वार 2
9. पक्ष 3
10. ग्रहविचार 3
11. शान्तिक पौष्टिककर्म 3
12. आसनके भेद 3
13. आसन का विचार 4
14. मन्त्र की प्रकृति 4
15. प्रकृतिचक्र 4
16. मन्त्र की प्रकृति जानने की विधि 4
17. मन्त्र की महिमा 5
18. मन्त्र क्या है 5
19. देवता और मन्त्र 5
20. मन्त्रों के सिद्ध न होने के कारण 7
21. दीक्षाग्रहणका समय 8
22. मन्त्रदीक्षा के अधिकारी 10
23. मन्त्रों के अनुष्ठान की विधि 11
24. कार्यसिद्धि के लिए सकाम निष्काम अनुष्ठान 13
25. जप में माला विधान 13
26. ईश्वर नाम और मन्त्रों का सम्बन्ध 15
27. मन्त्रों को गुप्त रखने का लाभ-हानि 16
28. मन्त्रों का सद् उपयोग न करने पर हानि 17
29. ईश्वर में श्रद्धा और प्रेम 18
30. मन्त्रों का चुनाव 18
31. अक्षर कोष्ठकचक्र 19
32. नाम राशि और मन्त्रराशि देखना 19

33. राशि और नाम चक्र 20
34. अपने नाम और मन्त्र के नाम नक्षत्र का मिलाप 21
35. चक्र नम्बर दो 23
36. ग्रहण में अनुष्ठान का फल 23
37. मन्त्रसाधकों के लिए विशेष उपदेश 23
38. मन्त्रप्रयोग के अंग
39. भक्ति, शुद्धि, आसन, पंचाग सेवन, आचार, धारणा, दिव्यदेश सेवन 28
40. प्राण क्रिया, मुद्रा, आवाहन, तर्पण, हवन, वलि, याग 29
41. वहिर्याग, जप, ध्यान 30
42. समाधि, मन्त्रसाधन, साधन के विशेष विचार 31
43. मन्त्रानुष्ठान में विशेषध्यान योग्य सर्वसिद्धादि शोधन मन्त्रार्थ, मन्त्रचैतन्य मन्त्रों की कुल्लुका, मन्त्रसेतु 32
44. महासेतु, निर्वाण 33
45. प्राणयोग, दीपनी, मन्त्र के सूतक मन्त्र के दोष 34
46. वीजनिवृत्ति के उपाय, अभक्तिदोष के उपाय, दीक्षा सप्त अधिकार 35
47. पुरश्चरण एवं अनुष्ठान्, पुरश्चरण का स्थान 36
48. पवित्रभोजन, पुरश्चरण के मन्त्रसिद्धि के उपाय, मन्त्र-सिद्धि के लक्षण 37

मन्त्र प्रयोग विधि

1. गायत्रीपुरश्चरण 39
गायत्री शापविमोचन 40
गायत्री कवच 40
2. शुक्रोपासितमृतसंजीवनी-मन्त्र 45
शताक्षरा गायत्रीमन्त्र 45
3. महामृत्युंजय जपविधि 46
महामृत्युंजय जपविधि मन्त्रमहोदधि में 48
4. वैरीविनाशन दुर्गामन्त्र 50
दुर्गा नवसार्धविधि 52
5. त्रैलोक्य मोहिनी गौरीमंत्र 53
6. श्रीकार्तवीर्यार्जुन मंत्र I 54
7. कार्तवीर्यस्तोत्रम् 56
8. कार्तवीर्यार्जुनमन्त्र II 57
9. हनुमद्वडवानलस्तोत्रम् 58
10. हनुमत् तन्त्रम् 59
11. भगवती दुर्गा का कष्टहर मन्त्र 62
12. कुवेर मन्त्र 62

13. दारिद्रय नाशक लक्ष्मी मन्त्र 63
14. वटुकभैरव मन्त्र 63
15. श्रीसूक्तस्य सम्पुट विधि 65
16. उच्छिष्ट गणपति मन्त्र 70
17. हरिद्रा गणेशमन्त्र 73
18. चक्रेश्वरी देवी की आराधना 74
19. इन्द्राक्षीस्तोत्रम् 76
20. महालक्ष्यष्टक स्तोत्रम् 80
21. विष्णु पुराणान्तर्गत लक्ष्मी स्तोत्रम् 81
22. चाक्षुपोपनिषद् 84
23. वगलामुखीमन्त्र 86
24. त्रिपुरवालामन्त्र 89
25. कर्णपिशाचिनीमन्त्र 92
26. सन्तानगोपालमन्त्र 92
27. गारुड मन्त्र प्रयोग 93
28. महाविद्या नीलसरस्वती मन्त्र 94
29. विश्वावसु गन्धर्वमन्त्र 95
30. षडक्षर शिवमन्त्र 96
31. प्रत्यंगिरामन्त्र 97
32. छिन्नमस्तका मन्त्र 98
33. आसुरीविद्या 101
34. श्रीविद्या 102
35. ऋणमोचगमंगलस्तोत्र 102
36. नवग्रहाणां मन्त्रजपं 106
सूर्य, सोम, भौम, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु
37. पन्द्रिया यन्त्रविधान 116
38. वीसायन्त्र का विधान 118
39. दरिद्रतानाशक सूर्यमन्त्र 119
40. सूर्य मन्त्र की पीठ पूजा 121
41. नवार्णमन्त्र विधि: 127
42. कालरात्रि वशीकरण मन्त्र 141
43. ,, स्तम्भन मन्त्र 143
44. ,, मोहनमन्त्र 144
45. ,, आकर्षणमन्त्र 146
46. ,, वशंकर 147
47. शतचण्डी विधानम् 151
48. स्वर्णाकर्षण भैरव मन्त्र 157
49. वाग्देवीसरस्वती 158
50. अन्यप्रकार 158
51. पतिप्राप्तिमन्त्र 158

52. मनोकामनासिद्धि मन्त्र 158
53. गोपालसुन्दरी मन्त्र 159

द्वितीय भाग
जैनधर्म के मन्त्र

1. सरलीकरण 163
2. नवकारमन्त्र का कल्प 166
3. उपसग्गहरस्तोत्र 167
4. पद्मावतीस्तोत्र 168
5. पद्मावती की साधना 169
6. घण्टाकर्ण का मन्त्र 171
7. घण्टाकर्णस्तोत्र 172
8. सरस्वती की आराधना 172
9. स्वप्न में शुभाशुभ 173
10. लक्ष्मी प्राप्तिका मन्त्र 174
11. भूतप्रेत वाधा 175
12. शुद्ध उच्चारण मंत्र 176
13. मृत्युंजय मन्त्र 177
14. धनवृद्धिकर मन्त्र 177
15. रोग निवारण मन्त्र 178
16. मनोवांछित मन्त्र 179
17. शत्रुनिवारण मन्त्र 179
18. कर्ण पिशाचिनी मन्त्र 180
19. रोगनिवारक मन्त्र 181
20. परमात्म द्वात्रिंशिका स्तोत्र 182
21. मुस्लिमन्त्र 187
22. रामचरित मानस के सिद्ध प्रयोग 189
23. विविधि देवताओं के गायत्री मन्त्र

तृतीय भाग

1. महाकाली तन्त्र 201
2. भुवनेश्वरी तन्त्र 218
3. छिन्नमस्ता तन्त्र
4. वगलामुखी तन्त्र 250
5. मातंगी तन्त्र 265
6. कमलात्मिका तन्त्र 271
7. दुर्गा तन्त्र 27
8. शिवतन्त्र 28
9. गणेश तन्त्र 29
10. सूर्य तन्त्र 30
11. विष्णुतन्त्र 31
12. नारायण हृदय तन्त्र 32
13. लक्ष्मीहृदय तन्त्र 32
14. अथर्वणोक्तप्रत्यंगिरा सूक्तम् 3

समर्पणम्

मन्त्र-शास्त्र के प्रवर्तक

महेश्वर, महादेव, अवढरदानी,

पार्वती-परमेश्वर के चरणकमलों में

तन्त्रशास्त्रों ने

जिन्हें शिव-शक्ति के रूप

में वर्णित किया है—

तथा

उन महामनीषियों के चरणों में

जिन्होंने पावनभारत भूमि में

मन्त्र-तन्त्रात्मक-साहित्य

के अगाध भण्डार की

रचना की

तथा

उन महान् गुरुओं के पवित्र चरणों में

जिन्होंने मन्त्र-तन्त्रात्मक साहित्य

के क्रियात्मक प्रयोगों को

अनावरण कर हमारा मार्गदर्शन किया है।

कृष्णानन्दः

"श्रीशः पायादपायात्"

प्राक्कथनम्

भोः ! विद्वांसाः ! महाप्राज्ञः सम्प्रति ह्यस्मिन्प्रकृष्ट प्रादुर्भवे आर्य-देशेऽस्मिन् भारतवर्षे प्राधान्येन वैदिको धर्म एवासीत् । ततश्च कियता समतीतेन समयेन नानाविधाः धर्माः वैदिकधर्म-प्रचार-विद्वेषकाः नष्ट दृष्टिभिरयथातत्व-दर्शिभिः—केवलं दयामुखै र्महा निर्दयै र्मनुष्यापस-दैराहताः कालदोषेण प्रसिद्धिमाययुः । भारतीय-प्रजानां दृढ़-साहसिक मनोबन्धनानि शिथिलानि कृतानि ।

वैदिक धर्मश्च त्रेधा-सात्विको राजसः तामसश्चेति । स त्रिविधोऽपि द्विविधः-आभ्यन्तरो वाह्यश्च । आभ्यन्तरश्च स्वमनो व्यापार रूपः, वाह्यः इतरेन्द्रियवृत्ति कृत व्यापार रूपः । तत्र लोक वृत्तिः वाह्यधर्मे आभ्यन्तर धर्मे च परिणिष्ठितास्ति । अस्मिञ्जगति सर्वजगन्निर्वाहाय वर्णाश्रम व्यवस्था कृतास्ति तादृश धर्म पालनं ईश्वरानुज्ञा ।

चतुर्णामपि वर्णानामाचारो धर्मपालनम् ।
आचारहीना देहानां भवेद्धर्मःपराङ्मुखेः ।।

सम्प्रतिहि ब्राह्मणानां अध्ययनं, अध्यापनं, यजनं, याजनं, दानं, प्रतिग्रहं एतानि षड् कर्माणि यथा शास्त्रं यथेश्वरानुज्ञातं न भवन्ति । केषुचिन्मध्योत्तर प्रभृति प्रदेशेषु तु सन्ध्या नामापि क्वचिन्न श्रूयते । का गायत्री, का सन्ध्या । अस्माकं पितामहादयः सन्ध्यामकुर्वंस्ततो वयं ब्राह्मणाः इति ब्रुवते केवलं चिह्न भूतेन यज्ञोपवीतेनैव कर्मणि प्रतिग्रहे अधिकारिणः परिदृश्यन्ते । येषां गोत्र पुरुषाः वशिष्ठ गौतमादयः धर्म-शास्त्राण्यकुर्वन ते सन्ध्यामपि न जानन्ति किमेतत्कलि कलिकौतुकम् ?"

अस्मिन्भूमण्डले सम्प्रति एतादृशाः परोपकारिणः जनाः विरलाः सन्ति । परमेतत् परम हर्षस्य विषयः जगति जायमानानां त्रिविधानां सर्ववैदिक धर्मावलम्बि जनानां हितार्थाय समग्रतया मन्त्र-तन्त्र-स्तोत्रादि विविधानि पुस्तकानि निःसृतानि, परन्त्विदं "मन्त्रानुष्ठान पद्धतिः" पूर्व प्रकाशित पुस्तकेभ्यो नितरामौत्कृष्ठ्यं समवहतीत्यहं मन्ये ।

एतत् कृते जालन्धरवास्तव्य विद्वद्वर्य पण्डित कृष्णानन्द शास्त्रिण-म्प्रति कोटिशो धन्यवादा: प्रदीयन्ते मया, येन खलु महाभागेन महता परिश्रमेण मन्त्रमहोदधि, मन्त्रमहार्णव, शाक्तप्रमोदादि ग्रन्थै: सङ्गृहीता प्रकाशिता च । पुस्तकेऽस्मिन् गायत्री महामृत्युञ्जय, शाक्त, शिव, गणेश सूर्य्यादीनां मन्त्र स्तोत्रतन्त्राणि दृश्यन्ते । अत: सर्वेषां शाक्त, शैव, गाणपत्य, सौर वैष्णवानामप्ययमानन्ददायक एवास्ति सर्वाङ्ग परिपूरितोऽयं ग्रन्थ: ।

आशासेऽहं सज्जानानां निर्मत्सराणां पुरुषाणां विशेषतो धार्मिकाणां द्विजजाति वटूनां कृते ग्रन्थोऽयं पुण्यलाभञ्च ददत: सन्तोषयिष्यतीति ।

विदुषामनुगामिन:

भास्करज्यौतिष सदन — श्रीधराचार्य:

ज्यौतिषाचार्य

सपाटू (सोलन हि० प्र०) — पुराण कर्मकाण्ड आचार्य

भूमिका

ओं शं नो मित्रः शं वरुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं नो इन्द्रो बृहस्पतिः। शं नो विष्णु रुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मवदिष्यामि। ऋतंवदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु-माम्। अवतु वक्तारम्। ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

भारतवर्ष अनादिकाल से ज्ञान-विज्ञान की गवेषणा, अनुशीलन एवं अनुसन्धान की भूमि रहा है। विद्या की विभिन्न शाखाओं में भारतीय-मनीषियों एवं अध्येताओं ने जो कुछ दिया वह निस्सन्देह यहां की विचार-विमर्श एवं चिन्तन प्रधान मनोवृत्ति का द्योतक है।

दर्शन, व्याकरण, साहित्य, गणित, ज्योतिष एवं आगमों आदि सभी विद्याओं में भारतीयमनीषियों का कृतित्व एवं व्यक्तित्व अपनी कुछ ऐसी विशेषताओं को लिए हुए है, जो अन्याऽन्य जनों में अनेक दृष्टियों से असाधारण है।

इसी गवेषणा के परिणामस्वरूप यहां अनेक साधनाओं का प्रस्फुटन हुआ, जिनमें मन्त्रात्मक साधना का एक विशिष्ट स्थान है। मन्त्र शब्द के गर्भ में मनन की परिव्याप्ति है। शब्द, शब्द के मूल अक्षर, बीजाक्षर या गम्भीर परिचिन्तन का उपक्रम जो वृद्धिगत एवं विकसित हुआ, वह अतल मननात्मक गहराई के परिणामस्वरूप मन्त्रात्मक विद्या के रूप में परिलक्षित हुआ, जो अक्षरों में अन्तर्निहित अपरिसीम शक्ति का परि-द्योतक है। अन्तर्जीवन में सन्निहित असीम शक्ति की अक्षरीय अवतारणा का यह एक स्पष्ट निदर्शन है।

भारतीय तत्त्ववेत्ताओं और ज्ञानियों का चरम अभिप्रेत दैहिक नहीं अपितु आध्यात्मिक रहा है। इसलिए मन्त्र-साधना का भी मुख्यध्येय आत्मोन्नयन से जुड़ा हुआ है। पर सांसारिक जीवन केवल आध्यात्मिक

ही नहीं अपितु दैहिक भी है । अत: मन्त्रविद्या के विकास में हम देखते हैं कि वह आगे चलकर भौतिक अभिसिद्धियों से जुड़ जाती है । मगर तत्त्वज्ञ, चिन्तक उन भौतिक अभिसिद्धियों का प्रयोग दैहिक-भोग के लिए नहीं करते थे । नैमित्तिक रूप में वे अध्यात्म उत्कर्ष एवं धर्मवृद्धि के लिए प्रयुक्त करते थे ।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो मन्त्र, उसके उपजीवी तन्त्र, यन्त्र आदि का क्रम बहुत प्राचीन है । वेदचतुष्टयी में अथर्ववेद इसी प्रकार की रचना है, जिसमें मान्त्रिक प्रयोगों का विस्तृत विवेचन-विश्लेषण मिलता है ।

जिन पाश्चात्य विद्वानों ने वैदिक वाङ्मय का भाषागत, विवेचन सरणि आदि दृष्टि से गम्भीर अध्ययन किया है, उनके अनुसार अथर्वन का आशय मन्त्र प्रयोग है, ऐसा मन्त्र प्रयोग जिसके द्वारा रोगों का अपगम किया जा सके ।

अथर्ववेद को अथर्वांगिरस भी कहा गया है, अंगिरा हानि और विनाश का द्योतक है, अथर्वन् सर्जन या शान्ति का सूचक है । ऐसा प्रतीत होता है कि मन्त्रविद्या के उत्तरवर्ती विकास में यहां मन्त्र शत्रुओं के मारण, उच्चाटन, संहनन से जुड़ा, उस भाव की अभिव्यंजना अंगिरा में है ।

वेद-परक साहित्य में आगे चलकर मन्त्र एवं तन्त्र विद्या पर अनेक ग्रन्थ रचे गए । तथा विविध आस्था के अनुरूप उन्हें पृथक्-पृथक् भेदों में बांटा गया, जिनमें वैष्णव, शाक्त, शैव प्रमुख हैं । इनके साथ ही आगम का प्रयोग भी आया है, जो तन्त्र के अर्थ में है। आगम शब्द इनके अनादि स्रोत या गुरुपरम्परा से आ रहे क्रम के अर्थ में सन्निहित है । यद्यपि, मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र आगे चलकर भौतिक एषणा की पूरकता से जुड़ते गए, पर उनके तात्त्विक विश्लेषण में उनका पूर्ववर्ती सात्त्विक अर्थ ही अधिकांशत: विद्यमान रहा । तान्त्रिक पटल में उल्लेख है—"तनोति त्रिपुलानर्थान् तत्त्वमन्त्रसमन्वितान् । त्राणं च कुरुते यस्मात् तन्त्रमित्य-भिधीयते ।', मन्त्रसाहित्य के इतिहास में वह युग भी आया जहां

पंचमकार के सेवन द्वारा साध्य प्राप्ति का प्रयत्न देखा जाता रहा। यह मन्त्र-तन्त्रात्मक जगत् का एक कुत्सितपक्ष रहा। भिन्न-भिन्न आचार्यों ने इस पंचमकार को पृथक्-पृथक् रूपमें वर्णित किया, अनेकग्रन्थों की रचना की गई। इस पक्ष को स्थापित करने में अनेक युक्तियों का आश्रय लिया गया, मगर यह पक्ष भारत में फूला-फला नहीं। इस का विकास नहीं हो पाया।

कौलाचार-या नाथ-सिद्धों ने भी इस दिशा में मन्त्र-तन्त्र की अभिव्यक्ति की, मगर लोगों की प्रकृति आध्यात्मिक भूमिका की रही, इससे ऐसे विधान भी उपेक्षित रहे ?

ऐसा समय भी आया जब जीवन का उपक्रम भोगोन्मुखता की ओर अधिक प्रवृत्त हो गया। जिससे मन्त्रों से किसी रूप में आध्यात्मिकता के सधने की बात थी, वह लुप्त होती गई, केवल भौतिक, और वह भी वासनात्मक तथा शत्रु के प्रति मारक और उच्चाटन आदि की प्रवृत्ति की बलवत्ता रही। ऐसे तन्त्र ग्रन्थों का निर्माण भी किया गया।

ऐसा समय भी आया, जब मन्त्रों के नाम पर जनसाधारण की प्रवंचना का भी स्वार्थ लोलुपजनों द्वारा एक उपक्रम चलाया गया। अनभिज्ञजन मन्त्रों के नाम पर ठगे जाने लगे, फलस्वरूप मन्त्रों की वास्तविकता और शक्तिमत्ता से लोगों की निष्ठा उठती गई। अब भी ऐसे लोग आप को मिलेंगे जो, टूने-जादू के नाम पर अपनी दुकानदारी चला रहे हैं, और लोग ठगे जा रहे हैं।

यद्यपि मन्त्रवेत्ता, मन्त्र प्रभाव, मन्त्रशक्ति सर्वांशत: नष्ट नहीं हुई थी, और न आज ही नष्ट हुई है, पर मन्त्रों के नाम पर जनसाधारण को ठगने का विस्तार हो गया। वास्तविकता से जनसाधारण अनभिज्ञ हो गया।

भारतवर्ष के प्रत्येक धर्म, सम्प्रदाय ने मन्त्र विद्या को अपनाया। वैष्णव, शाक्त, शैव, जैन, बौद्ध समस्त सम्प्रदायों के आचार्यों ने इस विद्या के विकास में योगदान दिया तथा अपनाया भी। इन मन्त्रों की विधियों का विकास भी किया। समय-समय पर इन का उपयोग भी किया गया।

मन्त्र—जो कुछ विशिष्ट प्रभावक शब्दों द्वारा निर्मित किया हुआ वाक्य होता है, वह मन्त्र कहा जाता है। उस का बार-बार जप करने पर शब्दों के पारम्परिक संघर्षण के कारण वातावरण में एक प्रकार की विद्युत् तरंगे उत्पन्न होने लगती हैं, तथा साधक की इच्छित भावनाओं को वल मिलने लगता है, फिर वह जो इच्छा करता है वही होता है। साधक मन्त्र के अक्षरों, शब्दों, वीजों को अपने शरीर में व्याप्त देखता है, उस का विश्वास उन वीजों एवं अक्षरों में सुदृढ़ होता जाता है, वह जिस देवता के स्वरूप का चिन्तन करते हुए जप करता है, उस देवता की शक्ति का आभास उसे मिल जाता है, वह अक्षर, वह बीज उसे अपने में समा लेते हैं, जिससे वह शक्ति सम्पन्न हो जाता है, और उसकी मनोकामना पूर्ण हो जाती हैं।

मन्त्रों के जाप के लिए उनके हिसाव से जाप की विभिन्न मात्रा में शब्द, अंक, तथा विभिन्न मन्त्रों के लिए विभिन्न प्रकार के पदार्थों से वनी मालाएं, विभिन्न प्रकार के आसन, दिशाएं, क्रियाएं आदि पहले से ही निर्धारित हैं। मन्त्रों के विधान लिखे जाते समय इनका भी विधान रचनाकारों ने साथ ही दिया है।

यन्त्र—जिसमें सिद्ध किए हुए मन्त्रों से अभिमन्त्रित कागज को, अथवा किसी विशिष्ट प्रकार के निर्धारित अंकों, शब्दों व आकृतियों से लिखित भोजपत्र को, किसी विशेष धातु से वने तावीजों में रखकर दिया जाता है, अथवा किसी की वाँह में या गले में वान्ध दिया जाता है, या किसी विशेष स्थान पर रख दिया जाता है। यन्त्रों को भी मन्त्र जाप से सिद्ध किया जाता है।

इस विद्या में शान्ति, वश्य, स्तम्भन, उच्चाटन, मारण, विद्वेषण इन छः कर्मों की प्रसिद्धि है। और ये यन्त्र इन्हीं कार्यों के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं।

जप—विचारों के एकीकरण तथा पवित्रीकरण का श्रेष्ठ तथा सरलतम साधन जप ही है। जप के द्वारा ही मनुष्यों के विचार संयत एवं स्थिर हो सकते हैं। जप करते समय मन को एकाग्र करके जप एवं इष्ट-

देव के ध्यान में लगाना। ध्यान देने योग्य बात यह है कि जपकाल में साधक को सदैव उत्साह से ओत-प्रोत होना चाहिए। साधक जाग्रत हो कर तन्मय भाव से मन्त्र के अर्थ का चिन्तन करते हुए जप करे। शरीर को स्थिर रखे। इधर-उधर के वातावरण पर ध्यान न दे। जप मौनभाव से होना चाहिए। मन्त्र का बार-बार उच्चारण सोई हुई शक्ति को जगाने के समान है। मन्त्रसिद्ध हो जाने पर आत्म शक्ति से आकृष्ट देवता मान्त्रिक के समक्ष अपने को समर्पित कर देता है। देवता की शक्ति उस मान्त्रिक में आ जाती है।

जप एवं ध्यान—शास्त्रकार कहते हैं कि जब तक ध्यान में दृढ़ता उत्पन्न न होगी, तब तक कुछ भी नहीं हो सकता। आध्यात्मिक आनन्द का पूरा-पूरा लाभ ध्यान में ही उठाया जा सकता है। ध्यान की साधना साधारण नहीं है। मात्र ध्यान शब्द की चर्चा से कुछ होने वाला नहीं है ध्यान की उच्चतम साधना के पूर्व मन-वाणी एवं इन्द्रियों को एकाग्र करके इष्टदेव के ध्यान में लगाने के लिए जप की आवश्यकता है। जप के नाद से सांसारिक वस्तुओं तथा विचारों से मन को खींच कर एक ओर लगाने के लिए शुद्ध सात्विक भक्ति के साथ इष्ट के साथ जुड़ना पड़ता है। बाहरी विघ्न-बाधाएं स्वत: ही दूर हो जाती हैं। मन एकाग्र होकर इष्ट देव से जुड़ जाता है। साधक का मन सूर्य की किरणों के समान विकसित एवं प्रज्वलित हो जाता है। साधक तेजस्वी हो जाता है। गीता में कहा है—

"चञ्चलं हि मन: कृष्ण प्रमाथी बलवद् दृढ़म्।"
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्॥

मन चंचल है, संसार में चल रही घटनाओं में, समाज एवं परिवार के वातावरण में उलझा हुआ मन सदैव अस्थिर रहता है। व्यक्ति मन के द्वारा संकल्प-विकल्पों के घोड़े दौड़ाता रहता है। व्यक्ति भी संसार यात्रा में उलझा हुआ है, उस के पास एक क्षण का भी अवकाश नहीं कि स्थिर चित्त से बैठ सके। उसकी शान्ति उस से दूर रहती है। न वह अपने विषय में सोच सकता है न अच्छे विचार मन में ला सकता है। मन किसी के धन को देखकर ईर्ष्या करता है, उसके कार्य को देखकर द्वेष की

भावना रखता है, अनेक प्रकार के दुर्विचारों को अपने में संजोता है। बुरे विचार उस के मस्तिष्क में घूमते रहते हैं। मन वश में कैसे हो? जब तक दुर्ध्यान बना हुआ है तब तक वह शुक्ल ध्यान में कैसे आएगा। मन को लगाम देनी पड़ेगी। तृष्णा को समाप्त कर सन्तोष का भाव लाना होगा। काम-क्रोध, लोभ, मोह आदि विकारों को तिलांजलि देनी पड़ेगी, तभी मन एकाग्र होगा, तभी ध्यान की स्थिति बनेगी। जैन शास्त्रों ने ध्यान के विषय में बहुत गहराई से चिन्तन किया है। उन की साधना प्रक्रिया बहुत स्पष्ट है।

ओम् का महत्त्व—ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन्॥
य: प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमांगतिम्।

श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान् श्री कृष्ण ने ओं को ब्रह्म कहा है। बिना ओं के मन्त्र का उच्चारण नहीं करना चाहिए। समस्त मन्त्र-साहित्य में ओं का स्मरण अवश्य किया जाता है। यह परब्रह्म का वाचक है। मन्त्र के एक-एक शब्द में ओं की ध्वनि व्यक्त होती है। ओं की उपासना योगी जन अपने हृदय में करते हैं। जैनदर्शन में यह ओं परमेष्ठी का वाचक भी है।

"ओं कारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिन:।
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नम:॥"

पंचमकार का शुद्ध रूप

वाममार्गी साधकों ने मन्त्रविद्या को जो हानि पहुंचाई, उस का भारत के लोगों पर बुरा प्रभाव पड़ा। अपनी गल्त परम्परा को स्थापित करने के लिए अनेक प्रकार के वितण्डों का आश्रय लिया गया। साधना का मार्ग दूषित करने में उन्होंने कोई कमी नहीं रहने दी? उनका मूलमन्त्र था—

"मद्यं मासं च मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
मकार पंचकं प्राहुर्योगिनां मुक्ति दायकम्॥

अर्थात्—मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन ये पांच मकार योगिजनों को मोक्ष प्रदान करने वाले हैं।

यह धारणा तामसी या राजसी प्रकृति के लोगों की तो हो सकती है, सात्त्विक प्रकृति के लोगों की नहीं। साधना का मार्ग सात्त्विक है। मन, वाणी, काय की शुद्धता में ही साधना हो सकती है। आसन पर बैठने वाले के लिए नियम है कि वह अपने शरीर की शुद्धि करे। शुद्ध आसन पर बैठे, उचित दिशा की ओर मुख करे, शुद्ध वस्त्रों को धारण करे। मन को शुद्ध कर, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का परित्याग कर मन्त्र जाप या साधना में प्रवृत्त हो।

इसी बात को स्पष्ट करते हुए पूज्यपाद श्री तारानन्द तीर्थ द्वारा संगृहीत "तन्त्रतत्त्व-प्रकाश" नामक निबन्ध में इस विषय को सप्रमाण स्पष्ट किया गया है—

1. मदिरा

ब्रह्मस्थान सरोजपात्रलसिता ब्रह्माण्ड तृप्तिप्रदा,
या शुभ्रांशुकला सुधा विगलिता या पानयोग्या सुरा।
सा हाला पिवतामनर्थफलदा श्रीदिव्यभावाश्रिता।
यां पीत्वा मुनयः परार्थ कुशला निर्वाणमुक्तिं गताः॥

अर्थात्—जो सहस्रार पद्मरूपी पात्र में चन्द्रमा की कलासुधा के स्रवसे पीने योग्य सुरा बनी है, वह तीनों लोकों को दिव्यभाव के आश्रित शुभफल देने वाली है, जिसे पीकर मुनि लोग मुक्ति को प्राप्त कर गए।

2. मांस

काम क्रोध सुलोभ मोह पशुकान् छित्वा विवेकासिना,
मांसं निर्विषयं परात्मसुखदं खादन्ति तेषां बुधाः।
ते विज्ञानपरा धरातलसुरास्ते पुण्यवन्तो नराः,
नाश्नीयात् पशुमांसमात्म विमतेः हिंसापरं सज्जनः॥

अर्थात्—काम, क्रोध, लोभ, मोह रूपी पशुओं को विवेक की तलवार से काटकर विषयों से रहित होकर परमानन्द सुख को देने वाले मांस को खाते हैं। वे पृथिवी के देवता, पुण्यवान्, विशिष्ट ज्ञान से युक्त सज्जन लोग ही उत्तम हैं। शुद्धमति वाले सज्जन पुरुष पशु मांस को नहीं खाते?

3. मीन

अहंकारो दम्भो मदपिशुनता मत्सर द्विषः,
षडेतान् मीनान् वै विषयहर जालेन विधृतान् ।
पचन् सद् विद्याग्नौ नियमित कृतिर्धीवरकृतिः,
तदा खादेत सर्वान्न च जलचराणां च पिशितम् ॥

अर्थात्—अहंकार, दम्भ, मद, मान, मत्सर, द्वेष, इन छः विषय-विकार रूपी मीनों (मछलियों) को विद्या रूपी अग्नि में जला देवे। इन को मारने से ही मुनिवृत्ति को व्यक्ति धारण कर सकता है। जल में रहने वाली मछली का सेवन नहीं करना चाहिए।

4. मुद्रा

आशा तृष्णा जुगुप्साभयविशद घृणामान लज्जा प्रकोपात्,
ब्रह्माग्नावष्ट मुद्रा पर सुकृतिजनः पाच्यमानः समन्तात् ।
नित्यं संभक्षयेत् तानवहितमनसा दिव्यभावानुरागी,
योऽसौ ब्रह्माण्डभाण्डे पशुहतिविमुखो रुद्रतुल्यो महात्मा ॥

अर्थात्—आशा, तृष्णा, भय, घृणा, मान, लज्जा, कोप, जुगुप्सा इन आठ विकारों में ब्रह्मरूपी अग्नि में पका ले, अर्थात् इन विकारों को सदैव के लिए भस्म कर दें। इस संसार में विचरण करने वाले दिव्य भावना से युक्त लोग इन विकारों से मुक्त होकर शिवस्वरूप हो जाते हैं। वास्तव में मनुष्य शरीर के यही विकार साधना में आगे बढ़ने नहीं देते।

5. मैथुन

या नाडी सूक्ष्म रूपा परमपदगता सेवनीया सुषुम्णा ।
सा कान्तालिङ्गनर्हो न मनुजरमणी सुन्दरी वारयोषित् ।
कुर्य्यात् चन्द्रार्कयोगे युगपवन गतैः मैथुनं नैव योनौ ।
योगीन्द्रो विश्व वन्द्यः सुखमय भवने तां परिष्वज नित्यम् ॥

अर्थात्—कुण्डली जागरण के रूप में सुषुम्णानाडी का ही महत्त्वपूर्ण स्थान है, उसी में साधक को विचरण करना चाहिए। मनुष्यमात्र के मेरुदण्ड के उभय पार्श्व में इडा, पिंगला नामक दो नाड़ियां हैं, इन दोनों नाड़ियों के मध्य में अतिसूक्ष्म एक-दूसरी नाड़ी है, जिसका नाम सुषुम्ना

है, इस के निचले भाग में चतुर्दल त्रिकोणाकार एक कमल है, इस कमल पर कुण्डलिनी शक्ति सर्पाकार कुण्डली बनाकर स्थित है, इस नाड़ी शक्ति द्वारा ही योगी इसमें भ्रमण करता है।

नोट—यह विषय अतिविस्तृत है। यहां मात्र वाममार्ग पर चलने वालों के पंच मकार का ही स्पष्टीकरण करना उद्देश्य था।

तन्त्र शास्त्र

वेदों के देवी सूक्त-आदि में शक्ति उपासना का मूल रूप में वर्णन हुआ है, मगर इसका पूर्ण विकास तन्त्रशास्त्र में हुआ है। कालान्तर में इसने बौद्ध एवं जैन दर्शन को भी प्रभावित किया है। वैदिक तन्त्र में भी यह मन्त्र शक्ति सिद्धान्तों से ही सम्बद्ध न रह कर, वैष्णव, शैव एवं गाणपत्य तन्त्र के रूप में विकसित हुआ। तन्त्र का प्रभाव सम्पूर्ण भारतीय आचार-विचार पर पड़ा एवं पुराण-आदि में भी इसके महत्त्व को स्वीकार करते हुए इसकी व्याख्या की गई। इसने उपासना पद्धति—विशेष कर शक्ति पूजा को प्रभावित किया, जिससे हम किसी भी पूजा में कई तान्त्रिक प्रक्रियाओं को अवश्य पाते हैं। तन्त्र शब्द 'तनु विस्तारे' धातु से ष्ट्रन प्रत्यय लगने से बना है। जिसका तात्पर्य है कई विषयों—मन्त्र-यन्त्र आदि को विस्तृत करना।

आगम ग्रन्थ के तन्त्रों को हम दो भागों में बांट सकते हैं—

प्रथम दार्शनिक पक्ष, दूसरा व्यावहारिक पक्ष। कुछ तन्त्र को तीन दलों में विभक्त कर प्रत्येक के 64 भेद बताते हैं। शक्ति तन्त्रों में देवी को मां एवं संहार करने वाली के रूप में देखा गया है। देवी परमात्मा की परम प्रकृति के रूप में वर्णित होती है, जिसके विभिन्न नाम हैं—काली, भुवनेश्वरी, बगला, छिन्नमस्ता, कमला, दुर्गा, तारा आदि। राक्षसों के विनाश के लिए भक्तों की कामना सिद्धि के लिए वे विभिन्न रूप धारण करती हैं। वे परम शक्ति हैं। एवं शिव सहित सभी देव अपनी शक्ति उसी से प्राप्त करते हैं—

"शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुम्।
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ॥

अथवा—न शिवेन विना शक्तिर्न शक्ति रहितः शिवः ॥"

शक्ति मानव शरीर में कुण्डलिनी का रूप ग्रहण कर आधार-चक्र में बिजली के समान चमकती है। मानव-तन्त्र में (शरीर में) छः चक्र होते है—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध एवं आज्ञा। इनके अतिरिक्त मस्तक में ब्रह्मरन्ध्र वीजकोष के रूप में विद्यमान है। तान्त्रिक साधना द्वारा अलौकिक सिद्धि, मुक्ति आदि की प्राप्ति अति शीघ्रता से मिलती है।

मन्त्र व्यक्ति को ज्ञानी गुरु से ही प्राप्त करना चाहिए। तान्त्रिक पूजा में बौद्धिंक मन्त्रों का प्रयोग होता है, मगर तन्त्र शास्त्र ने स्वतन्त्र रूप से असंख्य मन्त्रों का प्रणयन किया है। इसमें प्रत्येक देवता हेतु वीज मन्त्रों का प्रावधान है। वीज के अतिरिक्त कवच, हृदय, न्यास आदि के रूप में भी अनेकानेक मन्त्र हैं। मन्त्रों की सिद्धि में स्थान, समय एवं मालाओं का भी विशिष्ट महत्त्व है। मन्त्रों के साथ-साथ तान्त्रिक उपासना में न्यास, मुद्रा, यन्त्र एवं मण्डल का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। न्यास का अर्थ है= शरीर के अंगों प्र देवता का आवाहन करना, जिससे वह पवित्र होकर पूजा-अर्चना के लिए उपयुक्त हो जाए। देवो भूत्वा देवं यजेत् भी इसी बात को कहता है। न्यास के तन्त्रशास्त्र में कई रूप हैं=हंसन्यास, प्रणवन्यास, वर्णमातृकान्यास, वाह्यमातृकान्यास, अन्तर्मातृका न्यास, ऋष्यादिन्यास, वीजन्यास आदि।

मुद्रा का भी तन्त्र शास्त्र में महत्त्वपूर्णस्थान है=तान्त्रिक पूजा में अंगुलियों और हाथों को एक विशेष प्रकार से अवस्थित करना होता है। मुद्राओं की संख्या भी अत्यधिक है=आवाहिनी, स्थापिनी, संनिधापिनी, संनिरोधिनी, सम्मुखीकरणी, सकलीकृति आदि। इनके लक्षण यथा-स्थान दे दिए गये हैं।

तान्त्रिक आराधना का एक अन्य प्रधान अंग है—यन्त्र, जिसे भोज-पत्र, कागज, विभिन्न धातु आदि पर चित्रित किया जाता है। तान्त्रिक पूजा में इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार से किया जाता है। भिन्न देवता के भिन्न यन्त्र होते हैं। साधक यन्त्र पर देवता की विशेष पूजा करता है।

विशेष अनुष्ठान आदि किए जाते हैं, तथा कभी-कभी विशेष शान्ति के निमित्त यन्त्र को भोजपत्र आदि पर अंकित कर तांबा-चान्दी आदि के तावीज में रख कर गले या बांह पर धारण किया जाता है और यन्त्र के बिना पूजा निष्फल मानी जाती है। व्यक्ति की अपनी निष्ठा एवं साधक की रुचि भी इससे सम्बन्ध रखती है।

सकाम पूजा के लिए इन विधानों को करना ही अभीष्ट है। तभी मन्त्र सिद्धि हो सकता है।

निष्काम भाव से प्रभु की उपासना के लिए, यन्त्र आदि की आवश्यकता नहीं रहती, वहां शरीर शुद्धि, स्थान शुद्धि, आसन-शुद्धि एवं माला की शुद्धि का ध्यान रखना होगा। साथ ही क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार असत्य, स्तेय आदि का त्याग करना भी अत्यावश्यक है। ब्रह्मचर्य का पालन करना सर्वोत्तम है।

मन्त्र का प्रभाव भी तभी होता है यदि आत्मा शुद्ध-बुद्ध, निर्मल एवं निर्लेप है। प्रभु का साक्षात्कार भी आत्मा की शुद्धि पर निर्भर है। तभी केवल ज्ञान प्राप्त हो सकता है। आत्मा सत्यं, शिवं, सुन्दरं होकर सच्चिदानन्द का रूप धारण कर लेती है। वास्तव मे यही उच्चकोटि की साधना है। साधना में प्रपंच नहीं होता। होती है प्रभु की भक्ति, प्रभु पर विश्वास, एवं अनन्य श्रद्धा।

उपासना

वास्तव में यद्यपि नित्यानन्द स्वरूप परब्रह्म परमात्मा में एकान्त प्रीति करना उपासना है, तथापि सम्पूर्ण संसार को मोह में डालने वाली परब्रह्म परमात्मा की मलिन सत्त्वप्रधानमाया के वशीभूत जीव के रज और तम भाव को नष्ट करने के लिए उपासना का आश्रय अवश्य लेना चाहिए। शास्त्रकारों ने मानव-कल्याण के लिए अनेक मार्गों का उपदेश दिया है फिर भी अविद्या का नाश करने के लिए तथा आत्मज्ञान अथवा आत्मसाक्षात्कार के सम्बन्ध से वेदान्त में निम्न त्रिवर्ग बताया गया है, जब तक आत्मसाक्षात्कार की क्षमता प्राप्त न हो, तब तक चित्त शुद्धि एवं मन की एकाग्रता के लिए कर्म और उपासना की परमावश्यकता है।

आत्मपर्याय परब्रह्म परमात्मा की उपासना के दो भेद हैं—

1. सगुण और 2. निर्गुण। सगुण निराकार और सगुणसाकार। सगुण उपासना के दो भेद हैं। निर्गुण निराकार तत्त्व एक ही है। उसकी उपासना के बिना निरतिशयानन्द की प्राप्ति और दुःख की आत्यन्तिक निवृत्ति नहीं होती। वेद में कहा गया है—

"तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।"

(यजु. 31/18।

'सगुण निराकार की उपासना के अन्तर्गत हिरण्यगर्भ आदि से लेकर जितना कारण और कार्य ब्रह्म का विस्तार है, वह सभी आ जाता है।

सगुण साकार के अन्तर्गत ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र से लेकर, दुर्गा, भवानी, भैरव आदि सभी आकार वाली मूर्तियों की उपासना आ जाती है। इस प्रकार पृथ्वी के एक परमाण से लेकर महाकाश पर्यन्त अहंतत्त्व, महत्तत्त्व आदि सबमें किसी न किसी रूप से उसी एक निर्गुण, निष्कल, निरञ्जन तत्त्व की उपासना होती है। इस प्रकार वैदिक, स्मार्त, पौराणिक, तान्त्रिक आदि सभी उपासनाओं में उपास्यदेव की व्यापकता से मुख्यतया परब्रह्म परमात्मा ही उपास्य ठहरते हैं।

शास्त्र बताता है कि मन्त्रों की आराधना से देवता लोग हमारे अधीन हो जाते हैं, वे हमारी इच्छा पूर्ण करके क्लेशों का निवारण करते हैं—"देवाधीनं जगत्सर्वं मन्त्राधीनास्तु देवताः" ऐसा सुना गया है। साथ ही मन्त्रों के जप होमादि से पूजित देवता प्रसन्न होकर सारे सांसारिक सुखों और पुरुषार्थों को देते हैं।

'मन्त्राणां जप होमाद्यैः स्तूयमाना हि देवताः।
प्रसन्ना निखिलान् भोगान् पुरुषार्थांश्च यच्छति॥"

मन्त्र हमारे मुख से निकलने वाले पचास अक्षर ही हैं प्रत्येक अक्षर मन्त्र है—"अमन्त्रमक्षरं नास्ति। न क्षरतीति अक्षरः" की व्युत्पत्ति से अक्षर का कभी नाश नहीं होता। कहा गया है "क्षरः सर्वभूतानि अक्षरः ब्रह्म उच्यते। किन-किन अक्षरों के जोड़ने से किस देवता का प्रकाश होता है और कौन-सी शक्ति प्रकट होती है यह बात गुरुओं तथा मन्त्र शास्त्रों

से जानी जा सकती है। ऐसे मन्त्रों का अनुष्ठान क्लेश-विनाश, सम्पत् प्राप्ति और मोक्ष लाभ के लिए भी किया जा सकता है।

भूत-प्रेत-यक्षिणी आदि से लेकर परमात्मा तक की उपासना के लिए सप्तकोटि महामन्त्र और साधारण मन्त्र हैं। मानव अपने पूर्वसंस्कार के अनुसार ऐहिक सुख सम्पदा, अनिष्ट निरसन, एवं आत्मोद्धार की अभिलाषा रखते हैं। ये सभी अभिलाषाएं देव-देवियों की उपासना से पूर्ण होती हैं।

(उपासना का यह संक्षिप्त रूप जानकारी के लिए दिया गया है। यह विषय गहन एवं विस्तार वाला है।)

देखा जाए तो आत्मशक्ति ही मनुष्य का शक्ति-स्रोत है। जैसे—सूर्य का प्रकाश पुष्पों को विकसित करता है, फलों को परिपक्व करता है, उसी प्रकार अन्तरात्मा का प्रेरक प्रकाश जीवन-शक्ति के सुरभित पुष्पों को विकसित करता है। बृहदारण्यकोपनिषद में कहा गया है, "आत्मैवास्य ज्योतिः"। अपने अन्दर के दिव्य प्रकाश से अपने जीवन मार्ग को स्वयं देखना चाहिए। ईश्वर आत्मा के रूप में आपके मन में वर्तमान है। आपकी आत्मा ईश्वर की आवाज़ है। मनुष्य स्वयं ही आत्मस्वरूप है। यह आत्मा ही देखने, सुनने, छूने, विचार करने, जानने, क्रिया करने वाला विज्ञान मुक्त है।

प्रश्नोपनिषद में कहा गया है—"एष हि द्रष्टा स्प्रष्टा श्रोता घ्राता रसयिता मन्ता बोद्धा कर्ता विज्ञानात्मा पुरुषः॥"

यह आत्मशक्ति ही मनुष्य का गुप्त शक्ति स्रोत है। जो मनुष्य शंकाशील, उद्देश्य रहित, हताश, उदास, निराश हो जाता है, वह समाज के लिए निरुपयोगी हो जाता है, वह कुछ भी महान् कार्य नहीं कर सकता। ठूंठ मात्र होकर रह जाता है।

मैं ईश्वर अंश हूं, ईश्वर की दिव्य शक्ति मुझ में निवास करती है, ईश्वर की विपुल सहायता, सदा सर्वदा मेरे साथ है, मैं ईश्वर की ओर से यह सत्कर्म कर रहा हूं, ऐसा समर्पणभाव रखकर कार्य करने से आध्यात्मिक बल बढ़ता है। आत्मशक्ति की वृद्धि का अभ्यास करने के

लिए मन को शान्त एवं संतुलित कर ब्रह्म विचार से रमण करना चाहिए। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है कि श्रद्धाभाव से युक्त होकर, पत्र पुष्प आदि जो भी मुझे समर्पित करता है, वही भगवत् भक्त मुझे प्रिय हैं। वह मेरा है, मैं उसका हूं। इसलिए भक्तिभाव से प्रभु को समर्पित होना ही उपासना है। यही सिद्धि है।

दस महाविद्याओं का संक्षिप्त परिचय

1. **महाकाली**—दस महाविद्याओं में प्रथम काली हैं, जो प्रलय काल से सम्वद्ध कृष्णवर्णा है। वे शव पर इसलिए आरूढ़ हैं कि शक्ति-विहीन विश्व मृत ही है। शत्रु संहारक शक्ति भयावह होती है। इसीलिए कालि की मूर्ति भयावह है। शक्ति विहीन निर्वल विश्व का घमण्ड दूर कर भगवती हंसती है। पूर्णवस्तु को चतुरस्र कहा जाता है, इसीलिए वे अपनी चार भुजाओं से अपनी पूर्णता को प्रकट करती हैं। स्वयं अभय-स्वरूपा है, अपना आश्रय लेने वाले को निर्भय वनाती है, इसीलिए वे अभयमुद्रा धारण किए हुए है। क्षणभंगुर संसार में परमसुख देने वाली भगवती ही हैं, जीवित और मृत विश्व की आधार वही हैं, मृतप्राणियों का एक मात्र सहारा वे ही हैं, इसीलिए उन्होंने मुण्डमाला धारण कर रखी है। प्रलयकाल में सवके लीन होने पर भगवती नग्न रहती हैं, इसीलिए उनका विग्रह शरीर नग्न है। संसार के विनाश पर उस तपो-भूमि का विकास होता है, इसलिए वे श्मशानवासिनी कहलाती हैं। उग्र-रूपा होने पर भी वे भगवती स्वरूपा मां है। जो जन-जन का उद्धार कर सब को संरक्षण देती हैं।

शक्ति साधना के दो पीठों में काली की उपासना श्याम पीठ पर करने योग्य है। भक्ति मार्ग में तो सर्वथा किसी भी रूप में, किसी भी तरह, उन महामाया की उपासना फलप्रदा है, पर साधना या सिद्धि के लिए इनकी उपासना वीरभाव से की जाती है। वीर साधक दुर्लभ होता है। जिनके मन से अहंता, माया, ममता, और भेद वुद्धि का नाश नहीं हुआ है, वे इनकी उपासना को करने में पूर्ण सफल नहीं हो सकते। साधना के द्वारा जव पूर्ण शिशुत्व का उदय हो जाता है, तव भगवती

का श्री विग्रह साधक के सामने प्रकट हो जाता है। उस समय उनकी छवि अवर्णनीय होती है। कज्जल के पहाड़ के समान, दिव्यवसना, मुक्त-कुन्तला, शव पर आरूढ़, मुण्डमालाधारिणी भगवती का प्रत्यक्ष दर्शन साधक को कृतार्थ कर देता है। गुरुकृपा और जगदम्वा की कृपा अथवा पूर्वकृत साधनाओं के फलस्वरूप काली की उपासना में सफलता प्राप्त होती है।

2. तारा—हिरण्यगर्भावस्था में कुछ प्रकाश होता है, प्रलयरूपिणी कालरात्रि में तारांओं के समान सूक्ष्म जगत के ज्ञान एवं उनके साधन प्रकट होते हैं, उन्हीं हिरण्यगर्भ की शक्ति तारा है। हिरण्यगर्भ पहले क्षुधा से उग्र था, जव उसे अन्न मिला, तव वह शान्त हुआ। क्षुधातुर हिरण्यगर्भ के संहारक होने से उसकी यह शक्ति भी संहारिणी हैं। इसके चारों हाथों में जहरीले सांप हैं, जो संहारके सूचक हैं। यह देवी भी शवारूढा हैं, तथा मुण्ड व खप्पर लिए हुए हैं। और दुष्टों का संहार कर रक्तपान करती है। नागों से वन्धा जटाजूट देवी की रश्मियों की भयानकता को सूचित करती है।

3. षोडशी—प्रशान्त हिरण्यगर्भ या सूर्य शिव हैं और उन्हीं की शक्ति पोडशी है, जवकि हिरण्यगर्भ के दूसरे रूप रुद्र की शक्ति तारा रूप में वर्णित है. पोडशी का विग्रह पांच मुख वाला है। पांचों मुख तत्पुरुष, सद्योजात, वामदेव, अघोर और ईशान शिव के इन पांच रूपों के प्रतीक हैं। पूर्वोक्त पांच दिशाओं के रंग हरित, रक्त, धूम. नील और पीत होने से ये मुख भी इन्ही रंगों के हैं। देवी के दस हाथ हैं। जिनमें वे अभय, टंक, शूल, वज्र, पाश, खड्ग अंकुश, घण्टा; नाद और अग्नि लिए हैं। इनमें पोडश कलाएं पूर्णरूपेण विकसित हैं। अत: एव यह षोडशी कहलाती है।

4. भुवनेश्वरी—वृद्धिगत विश्व का अधिष्ठान त्र्यम्वक शिव हैं, उनकी शक्ति भुवनेश्वरी हैं, सोमात्मक अमृत से विश्व का पोषण हुआ करता है, इसीलिए भगवती ने अपने किरीट में चन्द्रमा धारण कर रखा है। ये ही भगवती त्रिभुवन का भरण-पोषण करती है, इसका संकेत इनकी

अभयमुद्रा से मिलता है। उदीयमान सूर्यवत कान्तिमति त्रिनेत्रा एवं उन्नत कुचयुगला देवी हैं। कृपा दृष्टि की सूचना उनके मृदुहास्य से मिलती हैं। शासनशक्ति के सूचक अंकुश, पाश, आदि को भी वे धारण करती हैं।

5. **छिन्नमस्ता**—परिवर्तनशील जगत का अधिपति चेतन कवन्ध है, उसकी शक्ति छिन्नमस्ता है। विश्व का वृद्धि-ह्रास तो सदैव होता रहता है, जब विकास की मात्रा अधिक और ह्रास की मात्रा कम होती है, तो भुवनेश्वरी का प्राकट्य होता है, इसके विपरीत निर्गम अधिक और आगम कम होता है, तो छिन्नमस्ता का प्राधान्य होता है। छिन्नमस्ता भगवती छिन्नशीर्ष हैं एवं खप्पर लिए हुए स्वयं दिगम्वर है। कवन्ध शोणित की धारा पीती रहती है। हृदय पर कमल की माला धारण किए हुए ये देवी रक्तासक्त मनोभाव के ऊपर विराजमान रहती है।

छिन्नमस्ता भगवती का स्वरूप अत्यन्त गोपनीय और साधकों को प्रिय है। इसे अधिकारी ही प्राप्त कर सकता है। आधी रात अर्थात् चतुर्थ सन्ध्याकाल में छिन्नमस्ता के मन्त्र की साधना से साधक को सरस्वती की सिद्धि हो जाती है। शत्रुविजय, समूहस्तम्भन, राज्य प्राप्ति और दुर्लभ मोक्ष प्राप्ति के निमित्त छिन्नमस्ता की साधना अमोघ है। छिन्नमस्ता का आध्यात्मिक स्वरूप अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यों तो सभी शक्तियां विशिष्ट आध्यात्मिक तत्त्व चिन्तकों की संकेत हैं, पर छिन्नमस्ता नितान्तगुह्य तत्त्व बोध की प्रतीक है। छिन्न यज्ञ शीर्ष की प्रतीक यह देवी श्वेत कमल-पीठ पर खड़ी है। इनकी नाभि में योनिचक्र है, दिशाएं ही इनका वस्त्र हैं। वे अपना शीश स्वयं काटकर भी स्वयं जीवित हैं. जिससे उनमें अपने में पूर्ण अन्तर्मुखी साधना का संकेत मिलता है।

6. **त्रिपुरभैरवी**—क्षीयमान विश्व का अधिष्ठान दक्षिणमूर्ति काल-भैरव हैं। उनकी शक्ति ही त्रिपुरभैरवी हैं। उनके ध्यान का स्वरूप भी अद्भुत है। उदित हो रहे सहस्र सूर्यों के समान अरुण कान्ति वाली और क्षौमाम्वर धारिणी होती हुई मुण्डमाला पहने हैं, रक्त से उनके पयोधर लिप्त हैं। वे तीन नेत्र एवं हिमांशुमुकुट धारण किये, हाथ में जप वटी,

विद्या, वर, एवं अभयमुद्रा धारण किए हुए हैं। यह भगवती मन्द-मन्द हास्य करती रहती हैं।

7. **धूमावती**—विश्व की अमाङ्गल्यपूर्ण-अवस्था की अधिष्ठात्री शक्ति धूमावती हैं। ये विधवा समझी जाती हैं। यहां पुरुष अव्यक्त है, चैतन्य, बोध, आदि अत्यन्त तिरोहित होते हैं। यह भगवती विवर्णा, चंचला, दुष्टा एवं दीर्घ तथा गलितवसन धारण करने वाली, खुले केशों वाली, विरलदन्त वाली, विधवा रूप में रहने वाली, काकध्वज वाले रथ पर आरूढ, लम्बे-लम्बे पयोधरों वाली, हाथ में शूर्प लिए, अत्यन्त रूक्ष नेत्रों वाली, क्षुधा-पिपासा से पीड़ित लम्बी नासिका वाली, कुटिल नेत्रों वाली, कुटिल स्वभावा, भयप्रदा और कलह की निवासभूमि हैं।

8. **वगला**—व्यष्टिरूप में शत्रुओं को नष्ट करने की इच्छा रखने वाली, समष्टि रूप में परमेश्वर की संहारेच्छा की अधिष्ठात्री शक्ति वगला हैं—यह देवी सुधासमुद्र के मध्य स्थित मणिमय मण्डप में रत्नवेदी पर रत्नमय सिंहासन पर विराजमान हैं। स्वयं पीतवर्ण होती हुईं पीतवर्ण के वस्त्र, पीले आभूषण एवं पीली माला धारण किये हैं। इनके एक हाथ में शत्रु की जिह्वा और दूसरे हाथ में मुद्गर है।

पीताम्बरा विद्या के नाम से विख्यात वगलामुखी की साधना शत्रुभय से मुक्त होने और वाक्‌सिद्धि के लिए की जाती है। वगला का प्रयोग साधना की अपेक्षा रखता है। स्तम्भन शक्ति के रूप में इनका विनियोग शास्त्रों में वर्णित है। वगला महाविद्या ऊर्ध्वाम्नाय के अनुसार ही उपास्य मानी जाती हैं। श्रीकुल की सभी महाविद्याओं की उपासना गुरु के सान्निध्य में रहकर सतर्कता से, इन्द्रियनिग्रह पूर्वक सफलता की प्राप्ति होने तक करते रहना चाहिए।

9. **मातंगी**—मतंग शिव का नाम है, उनकी शक्ति मातंगी हैं। ये श्यामवर्णा हैं, चन्द्रमा को मस्तक पर धारण किये हुए त्रिनेत्रा, रत्नमय सिंहासन पर विराजमान, नील कमल के समान कान्ति वाली और राक्षस समूह रूप अरण्य को भस्मसात करने में दावानल के समान हैं। ये चार भुजाओं में पाश, खड्ग, खेटक और अंकुश धारण किए हुए हैं, तथा असुरों

को मोहित करने वाली एवं भक्तों को अभीष्ट फल देने वाली हैं।

मातंगी मतंगमुनि की कन्या कही गई हैं। वस्तुत: वाणीविलास की सिद्धि प्रदान करने में इनका कोई विकल्प नहीं। चाण्डालरूप को प्राप्त शिव की प्रिया होने के कारण इन्हें चाण्डाली या उच्छिष्ट चाण्डाली भी कहा गया है। गृहस्थ-जीवन को सुखी बनाने, पुरुषार्थ सिद्धि और वाग्विलास में पारंगत होने के लिए मातंगी-साधना श्रेयस्करी है।

10. **कमला**—सदाशिव पुरुष की शक्ति कमला हैं। इनके ध्यान में बताया गया है कि ये सुवर्णतुल्य कान्तिमती, हिमालय के सदृश श्वेत-वर्ण के चार गजों द्वारा शुण्डाओं से गृहीत, सुवर्ण-कलशों से स्नापित हो रही हैं। ये देवी चार भुजाओं में वर, अभय और कमलद्वय धारण किए हुए तथा किरीट धारण किए हुए और क्षौमवस्त्र को धारण किए हुए हैं।

कमला वैष्णवी शक्ति हैं। महाविष्णु की लीला विलास सहचरी कमला की उपासना वास्तव में जगदाधार शक्ति की उपासना है। इनकी कृपा के अभाव में जीव में सम्पत-शक्ति का अभाव हो जाता है। मानव, दानव और दैव सभी इनकी कृपा के बिना पंगु हैं। विश्वभर में इस आदि शक्ति की उपासना आगम-निगम दोनों में समान रूप से प्रचलित है। भगवती कमला दस विद्याओं में एक हैं। ये परम वैष्णवी, सात्त्विक और शुद्धाचारा, विचार धर्म चेतना और भक्त्यक-गम्या हैं। इनका आसन कमल पर है।

विनम्र निवेदन

मन्त्र एवं तन्त्र विषय पर संक्षेप में बहुत कुछ कह दिया है। मन्त्र-तन्त्र साहित्य का शुद्ध स्वरूप एवं उपासना का लक्ष्य भी कहा गया है। अनुष्ठान करते समय साधक को शरीर शुद्धि, एवं विचार-शुद्धि पर विशेष ध्यान देना होगा। अनुष्ठान करते समय आसन पूजन, अर्घ्य स्थान, स्थापन, गणपति पूजन एवं सर्व ग्रहों का पूजन, स्थण्डिल निर्माण, कलश स्थापन, पीठ स्थापन, तथा पीठ पर देवता का पूजन करने के पश्चात् ही किसी के दिशा-निर्देश में कार्य आरम्भ करना चाहिए।

इस पुस्तक में उन्हीं मन्त्रों को स्थान दिया गया जो अत्युपयोगी हैं।

उन्हीं विद्याओं का समावेश किया गया है जिनकी सात्त्विक रूप में साधना की जा सकती है ।

अधिक मन्त्र—जो अनावश्यक हैं, उन्हें व्यर्थ समझकर छोड़ दिया गया है । बाज़ार में छोटी-बड़ी इस विषय की बहुत पुस्तकें छपी हुई हैं, मैंने उनमें से किसी का आश्रय नहीं लिया, न ही उन्हें देखने का प्रयास ही किया है । मेरे समक्ष भारत के प्रसिद्ध ग्रन्थ मन्त्र महोदधि, मन्त्र महार्णव, एवं शाक्त प्रमोद ही रहे हैं । मन्त्र महोदधि का अवलोकन-पठन वर्षों से करता आ रहा हूं । एक-एक प्रकरण मेरी दृष्टि में सदैव उजागर होता रहा है ।इन्हीं प्रामाणिक ग्रन्थों का मैं आभारी हूं, जिनसे मैंने पूर्ण सहायता ली । इस में शैव, शाक्त, वैष्णव एवं जैन धर्म के प्रसिद्ध मन्त्रों का विधान दिया गया है। जिससे इस की प्रामाणिकता दृष्टिगोचर होगी । मेरा यह परिश्रम इन मन्त्रों को व्यवस्थित रूप में जनता के समक्ष रखने का ही रहा है ।

मेरा विश्वास है साधक वर्ग इस रचना को आदर की दृष्टि से देखेगा । इसे मैं पूर्ण तो नहीं कहूंगा । मगर आवश्यक सामग्री दे दी है ।

विदुषामनुचरः
कृष्णानन्दः

मन्त्र साहित्य में प्रयुक्त

मुद्रा

1. **मुष्टिमुद्रा लक्षणम्**—मुष्टि दक्षिणहस्तेन विधाय ऊर्ध्वं समुन्नयेत ।
मुद्रामुष्टि अभिधाख्याता सर्व विघ्न विनाशिनी ।।
2. **मृगमुद्रा**—दक्षस्य अनामिकांगुष्ठमध्यमाग्राणि योजयेत् ।
शिष्टे द्वे उच्छ्रिते कुर्यान् मृगमुद्रेयमीरिता ।।
3. **शक्तिमुद्रा**—मुष्टिकरौविधाय द्वौ वामस्योपरि दक्षिणं कृत्वा
शिरसि युंजीत शक्ति मुद्रेयमीरिता ।।
4. **लिंगमुद्रा**—उच्छ्रितं दक्षिणांगुष्ठं वामांगुष्ठेन वन्धयेत् ।
वामांगुली दक्षिणाभिरंगुलीभिश्च वन्धयेत् ।
लिंग मुद्रेयमाख्याता शिव सान्निध्यकारिणी ।।
5. **पंचमुख मुद्रा**—मणि वन्धकरौ युक्तावंगुल्यग्राणि मेलयेत् ।
मुद्रा पंचमुखाख्येयं दर्शिता शिव तोषिणी ।।
6. **सन्निधान मुद्रा**—उत्तानांगुष्ठौ मुष्टी सन्निधान मुद्रा ।।
7. **संमुखीकरण मुद्रा**—मुद्रया संमुखीकरिण्या उत्तानौमुष्टी
हृद्यंजलि निवन्धनं प्रार्थना मुद्रा ।।

हृदय प्रदेश में अञ्जलि वनाने को संमुखीमुद्रा कहते हैं प्रणाम की प्रक्रिया ।

8. **दीप मुद्रा**—मध्यमामूलयोरंगुष्ठ योगो दीप मुद्रा ।।
9. **नैवेद्य मुद्रा**—अनाम मूलयो: अंगुष्ठयोगो नैवेद्य मुद्रा ।।
10. **ग्रास मुद्रा**—पद्माभो वामस्तो ग्रासमुद्रा ।
सर्वांगुलिभि: समान मुद्रा ।।
11. **पद्ममुद्रा**—करौ द्वौ संमुखौ कृत्वा संहतौ उन्नतौ पुन: ।
अंगुली प्रसृता मध्येऽगुष्ठौ पद्मस्य मुद्रिका ।।

12. पाशमुद्रा—तर्जनीमध्यमे वामे ऊर्ध्वमुख्यौ विधाय च ।
दक्षिणे द्वे अधोमुख्यौ संमुख्यौ च परस्परम् ।
पाशमुद्रा भवेदेषा मिथः संपीडनेतरयोरिति ॥

13. गदामुद्रा—अन्योऽन्याभिमुखौ कृत्वा हस्तौ तु ग्रथिताबुभौ ।
अंगुष्ठौ मध्यमे तद्वत्संयुक्ते सुप्रसारिते ।
गदामुद्रेयमुदिता दर्शिता विघ्नहारिणी ॥

14. मुसलमुद्रा—कनिष्ठांगुष्ठयुङ्मुद्रा त्रिकोण त्वशनेर्मता ।
(कुलिशं वज्रम्—अशनेर्वज्रस्य कनिष्ठिकांगुष्ठ योगादन्यासां
प्रसारणात् त्रिकोणः इत्यर्थः ।

15. असि मुद्रा—ऊर्ध्वस्य वामहस्तस्य तर्जन्याद्यंगुलि त्रयम् ।
खड्ग मुद्रा—प्रसार्य योजयेदन्ये मिथोऽंगुष्ठ कनिष्ठिके ।
खड्ग मुद्रेयमुदिता सर्वशत्रु कृन्तनी ॥

16. खेचरी मुद्रा—सव्यं दक्षिणहस्ते तु सव्यहस्ते तु दक्षिणम् ।
बाहू कृत्वा महादेवी हस्तौ संपरिवर्त्य च ।
कनिष्ठानामिके देवि युक्ता तेन क्रमेण तु ।
तर्जनीभ्यां समाक्रान्ते सर्वोर्ध्वमपि मध्यमे ।
अंगुष्ठौ तु महादेवि सरलावपि कारयेत् ।
इयं सा खेचरी नाममुद्रा सर्वोत्तमा ॥

17. वीजमुद्रा—परिवर्त्य करौ स्पृष्टावर्द्ध चन्द्राकृतिप्रिये ।
तर्जन्यंगुष्ठ युगलं युगपत् कारयेत्ततः ।
अधः कनिष्ठावष्टब्धे मध्यमे विनियोजयेत् ।
तथैव कुटिले योज्ये सर्वाधस्तादनामिके ।
वीजमुद्रेयमुदिता सर्वसिद्धि प्रदायिनी ॥

18. क्षोभमुद्रा—मध्यमां मध्यमे कृत्वा कनिष्ठांगुष्ठरोधिते ।
तर्जन्यौ दंडवत् कृत्वा मध्यमोपर्यनामिके ।
क्षोभाभिधानाम मुद्रेयं सर्व संक्षोभकारिणी ॥

19. द्राविणीमुद्रा—क्षोभमुद्रायाः लक्षणमुक्तम् । एतस्याः एव मुद्रायाः
मध्यमे सरले यदा क्रियते तदा विद्राविणीमता ।

20. **आकर्षिणीमुद्रा**—मध्यमा तर्जनीभ्यां तु कनिष्ठानामिके समे ।
अंकुशाकार रूपाभ्यां मध्यमे परमेश्वरि ।
इयमाकर्षिणीमुद्रा त्रैलोक्याकर्षणे क्षमा ॥

21. **वश्यमुद्रा**—पुटाकारौ करौ कृत्वा तर्जन्यावंकुशाकृति ।
परिवर्त्य क्रमेणैव मध्यमे तदधोगते ।
क्रमेण देविते नैव कनिष्ठानामिकादय: ।
संयोज्य निविडा सर्वा: अंगुष्ठावग्रदेशत: ।
मुद्रेयं परमेशानी सर्ववश्यकरी मता ॥

22. **उन्मादमुद्रा**—संमुखौ तु करौ कृत्वा मध्यमामध्यमेऽनुजे (कनिष्ठे)
अनामिके तु सरले तदधस्तर्जनीद्वयम् ।
दंडाकारौ ततोऽगुष्ठौ मध्यमान स्वदेशगौ ।
मुद्रेषोन्मादिनी नाम क्लेदिनी सर्व योषिताम् ॥

23. **महांकुश मुद्रा**—अस्यास्त्वनामिकायुग्ममध: कृत्वांकुशाकृति ।
तर्जन्यावपि तेनैव क्रमेण विनियोजयेत् ॥
इयं महांकुशमुद्रा सर्व कामार्थ साधिनी ॥
अन्योऽन्याभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठिकानामिका पुन: ।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनुमुद्रा प्रकीर्तिता ॥

24. **धेनुमुद्रा**—दोनों हाथों की अनामिका एवं कनिष्ठकाओं को एक दूसरे से मिलाकर तथा तर्जनी एवं मध्यमा को एक दूसरे से मिलाने से धेनुमुद्रा बनती है, इसकी आकृति गाय के थन जैसी होती है ।

25. **अवगुण्ठन मुद्रा**—दाहिने हाथ की मुट्ठी लगाकर मध्यमा एवं तर्जनी को अधोमुख कर चारों ओर घुमाने से अवगुण्ठनमुद्रा बनती है ।
सव्यहस्त कृतामुष्टि दीर्घाधोमुख तर्जनी ।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता भवेत् ॥

26. **ज्वालिनी मुद्रा**—मणिवन्धयुतोकृत्वा प्रसृतांगुलिकौ करौ ।
कनिष्ठाङ्गुष्ठयुगले मिलित्वान्त: प्रसारिते ।
ज्वालिनी नाम मुद्रैषा वैश्वानर प्रियंकरी ॥

दोनों मणि वन्धों को मिलाकर हाथ की अंगुलियों को सीधा कर कनिष्ठा एवं अंगूठा मिलने से ज्वालिनी मुद्रा वन जाती है।

27. **स्थापनीमुद्रा**—अधोमुखीकृता सैव स्थापनीति निगद्यते ।

आवाहनीमुद्रा को अधोमुख करने से स्थापनीमुद्रा वन जाती है।

28. **सन्निधान मुद्रा**—आश्लिष्ट मुष्टियुगला प्रोन्नतांगुष्ठ युग्मका ।

सन्निधाने समुच्छिष्ठा मुद्रेयं तन्त्रवेदिभिः ।।

अंगूठों को ऊपर उठाकर दोनों मुट्ठियों को परस्पर मिलाने से सन्निधानमुद्रा वनती है।

29. **सन्निरोधमुद्रा**—अंगुष्ठ गर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता ।।

अंगूठों को भीतर कर दोनों मुट्ठियों को परस्पर मिलाने से सन्निरोधमुद्रा वनती है।

30. **सकलीकरणमुद्रा**—देवांगेषु षडंगानां व्यासः स्यात् सकली कृतिः ।

देवता के अंगों पर षडंगन्यास करना सकलीकरणमुद्रा कहलाती है।

31. **परमीकरण के लिए महामुद्रा**—अन्योऽन्य ग्रथितांगुष्ठौ प्रसारित करांगुलिः ।

महामुद्रेयमुदिता परमीकरणे वुधैः ।

अंगूठों को परस्पर ग्रथित कर अंगुलियां फैलाने से महामुद्रा वनती है।

32. **योनिमुद्रा**—मिथः कनिष्ठके वद्धा तर्जनीभ्यामनामिके ।

अनामिकोर्ध्वं संश्लिष्ट दीर्घमध्मयोरधः ।

अंगुष्ठाग्रद्वयं न्यस्येद् योनि मुद्रेयमीरिता ।।

33. **त्रिखण्डमुद्रा**—परिवर्त्य करौं स्पष्टा वंगुष्ठौ कारयेत्समौ ।

अनामान्तर्गते कृत्वा तर्जन्यौ कुटिलाकृतिः ।

कनिष्के नियुञ्जीत निजस्थाने महेश्वरी ।

त्रिखण्डे समाख्याता त्रिपुराह्वान कर्मणि ।।

34. **महायोनिमुद्रा**—मध्यमे कुटिले कृत्वा तर्जन्युपरि संस्थिते ।

अनामिका मध्यगते तथैवहि कनिष्ठिके ।

सर्वा एकत्रसंयोज्या अंगुष्ठ परिपीडिताः ।

एषा तु प्रथमामुद्रा महायोन्यभिधागता ।।

35. **अक्षमालामुद्रा**—अंगुष्ठ तर्जन्यग्रेषु ग्रथयित्वांगुलित्रयम् ।
प्रसारयेदक्षमालामुद्रेयं परिकीर्तिता ।।

36. **परशुमुद्रा**—करे करं तु करयोस्तिर्यक् संयोज्य चांगुली: ।
संहता: प्रसृता: कुर्यान्मुद्रेयं परशोर्मता ।।

37. **वाणमुद्रा**—यथा हस्तगता: वाणास्तथा हस्तं कुरुप्रिये ।
वाण मुद्रेयमाख्याता रिपुवर्ग निकृन्तनी ।।

38. **वज्रमुद्रा**—दक्षिणहस्तं मुष्टिं वध्वा क्षेपणाकारं कुर्यात् ।

39. **धनुर्मुद्रा**—वामस्य मध्यमाग्रंतु तर्जन्यग्रेणयोजयेत् ।
अनामिकां कनिष्ठां च तस्यांगुष्ठेन पीडयेत् ।
दर्शयेत्वामके स्कन्धे धनुर्मुद्रेयमीरिता ।।

40. **कुण्डिका मुद्रा**—करद्वयं यदा सुभ्रु कुण्डाकार भवेत्तदा ।
कुण्डकेति महामुद्रा कथिता पूर्वसूरिभि: ।।

41. **दण्डमुद्रा**—मुष्टि कुर्यात्तु दक्षस्य (हस्तस्य) दर्शयेद्दण्डमुद्रिका ।

42. **शक्तिमुद्रा**—मष्टिंकृत्वा कराभ्यां च वामस्योपरि दक्षिणम् ।
कृत्वा शिरसि संयोज्या शक्तिमुद्रेयमीरिता ।।

43. **चर्ममुद्रा**—वामहस्तं यथा तिर्यक् कृत्वा चैव प्रसार्य च ।
आकुञ्चितांगुली: कुर्याच्चर्ममुद्रेयमीरिता ।।

44. **सुदर्शनचक्रमुद्रा**—हस्तौ तु संमुखौ कृत्वा सुलग्नौ सुप्रसारितौ ।
कनिष्ठांगुष्ठको लग्नौ मुद्रेया चक्रसंज्ञिका ।।

45. **घण्टामुद्रा**—वाममुष्टि भ्रमेणैव घण्टामुद्राप्रजायते ।

46. **शंखमुद्रा**—वामांगुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानं ततो मुष्टिमंगुष्ठात्तु प्रसारयेत् ।
वामांगुल्यस्तथा श्लिष्ठा संयुक्ता: स्यु: प्रसारिता: ।
दक्षिणांगुष्ठ संस्पृष्ट्वा ज्ञेयेषा शंखमुद्रिका ।।

47. **त्रिशूल मुद्रा**—अंगुष्ठेन कनिष्ठा तु वध्वा श्लिष्टांगुलित्रयम् ।
प्रसारयेत् त्रिशूलाख्या मुद्रेषा परिकीर्त्तिता ।।

48. **होममद्रा**—मृगी हंसी सूकरी इति होमेमुद्रा त्रयंसंमतम् ।

मृगीमुद्रा—मध्यमानामिकांगुष्ठयोगे मुद्रामृगीमता ।

हंसी—हंसी कनिष्ठा हीनानां सर्वासां योजने मता ।

सूकरी—सूकरी कर संकोचे मुद्रालक्षणमीरितम् ।

49. अवगुण्ठनमुद्रा—सव्यहस्त कृतामुष्टि: दीर्घाधोमुखतर्जनी ।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता भवेत् ।।

50. धेनुमुद्रा—अन्योऽन्याभिमुखौश्लिष्टौ कनिष्ठिकानामिका पुन: ।।
तथा तु तर्जनीमध्या धेनु मुद्रा प्रकीर्तिता ।।

51. महामुद्रा—अन्योऽन्यग्रथितांगुष्ठौ प्रसारितकरांगुलि: ।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणा बुधै: ।।

52. आवाहनमुद्रा—अनामामूलसंलग्नागुंष्ठाग्राञ्जलिरीरिता ।
देवावाह्नकरी चैपामुद्रावाहनसंज्ञिका ।।

53. स्थापनीमुद्रा—अधोमुखी कृतासैव स्थापनीति निगद्यते ।

54. मुद्रा का लक्षण—मोहनात् सर्वदेवानां द्रावणात् पापसंतते: ।
तस्मान् मुद्रेति विख्यात: मुनिभि: तन्त्रवेदिभि: ।।

अर्थ—मुद्रा शब्द का प्रथम अक्षर देवताओं की प्रसन्नता का तथा दूसरा अक्षर पापक्षय का सूचक है । इस प्रकार मुद्रा के प्रभाव से देवता प्रसन्न होते हैं तथा साधक पापरहित हो जाता है ।

आवाहन आदि की नौ मुद्राएं—पूजन की गन्ध आदि मुद्राएं तथा षडंग न्यासकी मुद्राओं का साधारणतया सभी मन्त्रों के जप पूजनादि में प्रयोग करना चाहिए । शान्ति, वशीकरण. सम्मोहन, विद्वेप, उच्चाटन एवं मारण इन काम्य प्रयोगों में क्रमश: पद्म, पाश, गदा, मुसल, वज्र एवं सूकरी मुद्रा का उपयोग होता है । शान्तिक-पौष्टिक कर्मों के हवन में मृगीमुद्रा से, वशीकरण आदि में हंसी मुद्रा से तथा स्तम्मन, विद्वेषण उच्चाटन एवं मारण में सूकरी मुद्रा से आहुतियां डालनी चाहिएं ।

होममुद्राणां फलम्—शांतौ वश्ये मृगी हंसी, स्तम्भनादिषु सूकरी ।

समिधा—दूर्वाया: समिध: शान्तौ गोघृतेन समन्विता: ।
वश्यार्थे होमे अजाघृताक्ता दाडिमसमिध: ।
स्तम्भने मेषी घृताक्ता राजवृक्षसमिध: ।
धत्तूरसमिधो द्वेषे अतसीतेल संयुता: ।।
कटतैलयुता: शस्ता: मारणे खदिरोद्भवा: ।
उच्चाटने सर्षपतैलाक्ता: आम्रसमिध: ।।

पुष्पपत्रफलानि अधोमुखानि नार्पयेत । यथोत्पन्नं तथैव अर्पयेत् ।

ब्रह्मार्पणम्—ओं इत: पूर्वं प्राण बुद्धि देह धर्माधिकारतो जाग्रत्-स्वप्नसुषुप्ति अवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यां उदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मा र्पणं भवतु स्वाहा । मां मदीयं च सकलं हरये ते समर्पये ओं तत्सदिति ।।

आसन

आसन लक्षणम्—पद्मं स्वस्तिकं विकटे कुक्कटं वज्रभद्रके ।
शान्त्यादिषु प्रकुर्वीत आसनमुत्तमम् ॥

1. **पद्मासनम्**—ऊर्ध्वोरूपरि विन्यस्य सम्यक्पादतले उभे ।
अंगुष्ठौ च निवध्नीयात् हस्ताभ्यां व्युत्क्रमात्ततः ।
पद्मासनमितिप्रोक्तं योगिनाम् हृयंगमम् ।

2. **स्वस्तिकम्**—जानूर्वोरन्तरे कृत्वा सम्यक्पादतले उभे ।
ऋजुकायो विशेद्योगी स्वस्तिकं तत्प्रचक्षते ॥

3. **विकटासनम्**—जानुजंघान्तराले तु भुजयुग्मं प्रकल्पयेत् ।
विकटासनमेतत् स्यात् ।

4. **कुक्कटासनम्**—कृत्वोत्कटासनं पूर्वं समपाद द्वयं ततः ।
अन्तर्जानु करद्वन्द्वं कुक्कुटासनमीरितम् ॥

5. **वज्रासनम्**—ऊर्वोः पादौ क्रमात् न्यस्येत् जान्वोः प्रत्य
ङ्मुखांगुलिः ।। करौ निदध्यात् आख्यातं वज्रासनमनुत्तमम् ।

6. **भद्रासनम्**—सीवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्येद् गुल्फ युग्मं सुनिश्चलम् ।
वृषणाधः पादपार्ष्णी पाणिभ्यां परिवन्धयेत् ।
भद्रासनं समुद्दिष्टं योगिभिः पूजितं परम् ॥

आसन के भेद—गोखड्ग गजफेरूणां मेषी महिषयोस्तथा ।
कृतौ निवेश्य कुर्वीत जपं शान्त्यादि कर्मणि ॥

विन्यासः—ग्रन्थनं च विदर्भाख्यः संपुटो रोधनं तथा ।
योगः पल्लव एते षड्विन्यासः कर्मसु स्मृताः ।
प्रत्येकमेषां षण्णां तु लक्षणं प्रणिगद्यते ॥

ग्रन्थनम्—एको मन्त्रस्य वर्णः स्यात् ततो नामाक्षरं पुनः ।
मन्त्रार्णो नामवर्णश्चेत्येव ग्रन्थनमीरितम् ॥

विदर्भः—आदौ मन्त्राक्षर द्वन्द्वमेकं नामाक्षरं पुनः ।
एवं पुनः पुनः प्रोक्तो विदर्भो मन्त्रवित्तमैः ॥

संपुटः—मन्त्रमादौ समुच्चार्य ततो नामाखिलं पठेत ।
अन्ते व्युत्क्रमतो मन्त्रमेष संपुटः ईरितः ॥

रोधनम्—आदिमध्यावसानेषु नाम्नो मन्त्रस्तु रोधनम् ॥

पल्लव:—नामान्ते तु मनुर्योगो मन्त्रान्ते नाम पल्लव: ।

मण्डलम्—अर्द्ध चन्द्र निभं पार्श्वद्वये पद्मद्वयांकितम् ।
जलस्य मण्डलं प्रोक्तं प्रशस्तं शान्ति कर्मणि ॥
त्रिकोणं स्वस्तिकोपेतं वश्ये वह्नेस्तु मण्डलम् ।
चतुरस्र वज्रयुक्तं स्तम्भे भूमेस्तु मण्डलम् ॥
वृत्तादिवस्तद् विद्वेषे विन्दुषट् कांकितं तु तम् ।
वायु मण्डलमुच्चाटे मारणे वह्नि मण्डलम् ॥
सरोरुहं पाशगदे मुसलं कुलिशं त्वसि ॥

निष्काम कर्म का महत्त्व—निष्कामं भजतां देवं अखिलाभीष्ट सिद्धय: ।
प्रति मन्त्रम् सुमुदितं ये प्रयोगा: सुखाप्तये ।
तदासक्तिं विधायैव निष्कामो देवतां भजेत् ।
शुद्धान्त: करणस्तेन लभते ज्ञानमुत्तमम् ।
कार्यं कारणसंघातं प्रविष्टश्चेतनात्मक: ।
जीवो ब्रह्मैव संपूर्ण इति ज्ञात्वाविमुच्यते ।
मनुष्य देहं सम्प्राप्य उपासीत् च देवता: ॥

आत्म ज्ञान प्राप्तये—काम-क्रोध-लोभा: अरय:, तेषां क्षयं कृत्वा कृतै: कर्मभि: वैदिकै: देवोपासनादिभि: च, अन्त:करण शुद्धि द्वारा ज्ञानाप्ति:-तस्मात् प्रवर्तितव्यम् । आत्मज्ञान पर्यन्त-मेव मन्त्रोपास्ति: । अहं ब्रह्म इति साक्षात्कारो ज्ञानम् । तस्मान्मुक्ति: ।

अर्थात्—कार्याणि-कारणानि भूतानि च तत्संघात: शरीरम् । तच्चालक: चेतनो जीव:—वस्तुतो ब्रह्मैव ॥

देवताओं की प्रिय मुद्राएं

विष्णु की—शंख, चक्र, गदा, पद्म, वेणु, श्रीवत्स, कौस्तुभ, वनमाला, ज्ञान, विल्व, गरुड, नारसिंही, वाराही, हयग्रीवी, धनु, वाण, परशु जगन्मोहनिका एवं काम ये 19 मुद्राएं हैं ।

शिव की—लिंग, योनि, त्रिशूल, माला, वर, मृग, अभय, खट्वांग, कपाल एवं डमरु ये दस मुद्राएं हैं।

गणेश की—दन्त, पाश, अंकुश, विघ्न, परशु, लड्डू एवं वीजपूर ये 7 मुद्राए हैं।

दुर्गा की—पाश, अंकुश, वर, अभय, खड्ग, चर्म, धनुष, वाण तथा मौसली ये नौ मुद्राएं हैं।

शक्ति की—मत्स्य, कूर्म, लेलिहा तथा महायोनि मुद्राएं हैं।

त्रिपुरा की—संक्षोभ, द्रावण, आकर्षण, वश्य, उन्माद, महांकुशा, खेचरी, वीज, योनि एवं त्रिखण्डा मुद्राएं हैं।

अन्य देवताओं की—लक्ष्मीपूजा में लक्ष्मीमुद्रा, सरस्वती पूजन में अक्षमाला, वीणा, व्याख्या एवं पुस्तक मुद्रा। गोपालपूजन में वेणुमुद्रा, रामपूजन में धनुष एवं वाण मुद्रा, कृष्णपूजन में जगन्मोहन मुद्रा तथा अग्निपूजन मे सप्तजिह्वा मुद्रा दिखलानी चाहिए।

मुद्रायें—आसन, प्राणायाम, धारणा एवं ध्यान आदि मुद्राओं का सम्मिश्रण है। तन्त्र शास्त्र में अनेक ऐसी मुद्राएं हैं जिन की सहायता से जीव शक्तिमान होकर शिव स्वरूप हो जाता है।

विनियोग का प्रकार—1. **ऋषिः**—जिस व्यक्ति ने शिवजी के मुख से मन्त्र सुनकर विधिवत् उसे सिद्ध किया, वह उस मन्त्र का ऋषि है। 2. **छन्द**—मन्त्र को सर्वतोभावेन आच्छादित करने की विधि को छन्द कहते हैं। 3. **वीज**—मन्त्र शक्ति को उद्भासित करने वाला तत्त्व वीज कहलाता है। 4. **शक्ति**—जिसकी सहायता से वीज मन्त्र वन जाता है वह तत्त्व शक्ति कहलाता है। 5. **विनियोग**—मन्त्र को फल की दिशा का निर्देश देना विनियोग कहलाता है। इन सभी का ज्ञान होने पर ही मन्त्र का फल मिलता है।

रुद्राक्षमाला का महत्त्व

रुद्राक्ष का मनका सिद्ध माना गया है, अनेक लेखकों ने इस के महत्त्व की प्रशंसा की है। रुद्राक्ष की माला पर जप करने तथा धारण करने से सभी प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

शिरसा धार्यंते कोटि: कर्णयोर्दशकोटय: ।
शतकोटिर्गले वद्धो मूर्ध्नि कोटि सहस्रकम् ।
अयुतं चोपवीते तु लक्ष कोटिर्भुजे स्थिते ।
मणिवन्धे तु रुद्राक्षो मोक्षसाधनक: पर: ॥
रुद्राक्षार्पितचेता यो रुद्राक्षस्तु वैधृत: ।
असौ महेश्वरो लोके नमस्य: स तु लिंगवत् ॥

यह मनका अनेक मुख वाला मिलता है, प्रत्येक का अलग-अलग महत्त्व है।

1. एक मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् शिव स्वरूप है। भोग व मोक्ष रूप फल को प्रदान करता है, जहां एक मुखी की पूजा होती है, वहां लक्ष्मी का निवास होता है, सभी प्रकार के उपद्रव शान्त रहते हैं, मनुष्य की सभी कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं।

2. दो मुखी रुद्राक्ष को देव.देवेश्वर कहा गया है। वह सम्पूर्ण कामनाओं और फलों की देने वाला है। गर्भवती महिलाओं की कमर में बांधने से सभी बाधाएं दूर हो जाती हैं।

3. तीन मुखी रुद्राक्ष धारण करने से समस्त विद्याएं प्रतिष्ठित होती हैं। तीन दिन के पश्चात् आने वाला बुखार इस को धारण करने से नहीं होता।

4. चार मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् ब्रह्मा का रूप है। उसके दर्शन मात्र से धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को देता है।

5. पांच मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् कालाग्नि है। वह सब कुछ करने में समर्थ है। सम्पूर्ण मनोवाञ्छित फल देने वाला है। इस के तीन दाने धारण करने से लाभ होता है।

6. छः मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् कार्तिकेय का रूप है। यह विद्यार्थियों के लिए उत्तम है। इस को धारण करने से विद्या की प्राप्ति होती है।

7. सात मुख वाला रुद्राक्ष अनंगरूप है, इस को धारण करने से दरिद्री भी ऐश्वर्यशाली हो जाता है।

8. आठ मुख वाला रुद्राक्ष अष्टमूर्ति भैरव रूप है। उसको धारण करने से मनुष्य दीर्घायु होता है।

9. नौ मुख वाले रुद्राक्ष को भैरव या कपिल का रूप मानते हैं। नौ रूप धारण करने से भगवती दुर्गा उसकी अधिष्ठात्री देवी मानी जाती है। जो मनुष्य वाएं हाथ में इसे धारण करता है, वह सर्वेश्वर हो जाता है।

10. दशमुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् भगवान् विष्णु का रूप है। सभी प्रकार के रोगों को दूर करता है।

11. ग्यारह मुख वाला रुद्राक्ष रुद्र रूप है। इस को धारण करने से सर्वत्र विजयी होता है।

12. वारह मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् आदित्य स्वरूप है। इस को धारण करने से सूर्य के समान तेजस्वी होता है।

13. तेरह मुख वाला रुद्राक्ष साक्षात् विश्वेदेवों का स्वरूप है। इस को धारण करने में सभी अभीष्टों की प्राप्ति होती है।

14. चौदह मुख वाला परम शिव स्वरूप है। भक्ति पूर्वक मस्तक पर धारण करें।

छः मुख वाला रुद्राक्ष दाहिने हाथ में, सात मुख वाला कण्ठ में, आठमुख वाला मस्तक में, नौ मुख वाला वाएं हाथ में, चौदह मुखवाला शिखा में, वारह मुख वाला केश प्रदेश में धारण करना चाहिए।

वारह रुद्राक्ष हाथ में, पन्द्रह भुजा में, वाईस मस्तक में, सत्ताइस गले में, वत्तीस कण्ठ में धारण करें। यज्ञोपवीत में तीन, शिखा में एक।

विविध देवताओं के गायत्रीमन्त्र

विष्णुगायत्री—ओं त्रैलोक्यमोहनाय विद्महे कामदेवाय धीमहि तन्नो विष्णु: प्रचोदयात् ।।

नारायण गायत्री—ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो-विष्णु: प्रचोदयात् ।

गोपाल गायत्री—ओं श्री कृष्णाय विद्महे दामोदराय धीमहि तन्नो-विष्णु प्रचोदयात् ।

राम गायत्री—ओं दाशरथायविद्महे सीतावल्लभाय धीमहि, तन्नो राम: प्रचोदयात् ।

शिव गायत्री—ओं तत्पुरुपायविद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्र: प्रचोदयात् ।

दक्षिणामूर्ति गायत्री—ओं दक्षिणामूर्तयेविद्महे ध्यानस्थाय धीमहि तन्नोऽधीश: प्रचोदयात् ।

गणेश गायत्री—ओं तत्पुरुषायविद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात् ।

सूर्य गायत्री—ओं आदित्याय विद्महे मार्तण्डाय धीमहि । तन्न: सूर्य: प्रचोदयात् ।

कामदेव गायत्री—ओं कामदेवाय विद्महे पुष्पवाणाय धीमहि । तन्नोऽनंग: प्रचोदयात् ।

शक्ति गायत्री—ओं संमोहिन्यै: विद्महे विश्व जन्यै धीमहि । तन्न: शक्ति: प्रचोदयात् ।

त्रिपुरागायत्री—ऐं त्रिपुरा देव्यै विद्महे क्लीं कामेश्वर्यै धीमहि सौ: तन्न: क्लिन्ने प्रचोदयात् ।

भैरवी गायत्री—ओं त्रिपुरायै विद्महे महाभैरव्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

दुर्गा गायत्री— ओं महादेव्यै विद्महे दुर्गादेव्यै धीमहि । तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

लक्ष्मी गायत्री—ओं महालक्ष्म्यै विद्महे विष्णुपत्न्यै च धीमहि
तन्नो लक्ष्मी प्रचोदयात् ।

सरस्वती गायत्री—ओं वाग्देव्यै च विद्महे कामराजाय धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

भुवनेश्वरी गायत्री—ओं नारायण्यै विद्महे भुवनैश्वर्य्यै धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

छिन्नमस्ता गायत्री—ओं वैरोचिन्यै विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

कालिका गायत्री—ओं कालिकायै विद्महे श्मशान वासिन्यै धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

तारा गायत्री—ओं एक जटायै विद्महे महोग्रायै धीमहि । तन्नो
तारा प्रचोदयात् ।

भैरवी गायत्री—ओं त्रिपुरायै विद्महे महाभैरव्यै धीमहि । तन्नो
देवी प्रचोदयात् ।

महालक्ष्मी गायत्री—महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि
तन्नो देवी प्रचोदयात् ।

आदित्य गायत्री—आदित्याय विद्महे सहस्र किरणाय धीमहि ।
तन्न: सूर्य: प्रचोदयात् ।

गरुड गायत्री—तत्पुरुषाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि । तन्नो
गरुड: प्रचोदयात् ।

कार्तिकेय गायत्री—ओं तत्पुरुषाय विद्महे महासेनाय धीमहि ।
तन्न: षण्मुख: प्रचोदयात् ।

ब्रह्मगायत्री—वेदात्मनाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि । तन्नो ब्रह्म
प्रचोदयात् ।

अग्नि गायत्री—वैश्वानराय विद्महे लालीलाय धीमहि । तन्नो
अग्नि: प्रचोदयात् ।

विष्णु गायत्री—नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नोविष्णु:
प्रचोदयात् ।

नरसिंह गायत्री—वज्र नखाय विद्महे तीक्ष्ण दंष्ट्राय धीमहि । तन्नो
नारसिंह: प्रचोदयात् ।

कात्यायनी गायत्री—कात्यायनाय विद्महे कन्याकुमारी धीमहि ।
तन्नो दुर्गि प्रचोदयात् ।

वहिर्याग में पीठ पूजन-आदि

शुद्ध आसन पर बैठकर शास्त्रीय विधि से अर्घ्य स्थापन करना चाहिए। उस विशेषार्घ्य में से कुछ जल वर्द्धिनी कलश में डालना चाहिए। फिर मूलमन्त्र से प्राणायाम कर अपने वाईं ओर गुरुपंक्ति का तथा दाहिनी ओर गणपति को प्रणाम कर पीठ पूजा करनी चाहिए।

स्वर्ण आदि से निर्मित या चन्दन से लिखित यन्त्र पर मण्डूक से परतत्त्व पर्यन्त देवताओं का तथा आठों दिशाओं और मध्य में पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

विष्णु एवं लक्ष्मी के पूजन में पृथिवी के वाद क्षीर सागर, गणेश के पूजन में इक्षुसागर और देवताओं के पूजान में अमृतसागर का पूजन करना चाहिए।

आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य और ईशान कोणों में ज्ञान-वैराग्य और ऐश्वर्य का पूजन करना चाहिए। पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर दिशाओं में अधर्म-अज्ञान-अवैराग्य और अनैश्वर्य का पूजन करना चाहिए, धर्म आदि के पूजन में तथा आवरण पूजन में पूर्वदिशा साधक के सामने माननी चाहिएं। इन्द्रादि दशदिग्पालों के पूजन में यथास्थान पर पूर्व आदि दिशाओं को मानना चाहिए।

श्वेतकृष्ण, अरुण, पीत, श्याम, रक्त, श्वेत, कृष्ण और रक्त वस्त्र धारण करने वाली तथा अभय मुद्रा वाली पीठ शक्तियों का ध्यान करना चाहिए। शालिग्राम एवं मणि यन्त्र पर प्रतिदिन पूजन करना चाहिए। स्वर्ण आदिकी प्रतिमा या विधिवत् प्रतिष्ठित प्रतिमा का भी प्रतिदिन पूजन करना चाहिए। सुन्दर लक्षण वाले शिवलिंग का पूजन करना चाहिए। प्रतिमा में इष्टदेव का आवाहन करना चाहिए। मूल मन्त्र वोल कर हृदय में सुषुम्णा मार्ग द्वारा ब्रह्मरन्ध्र में स्थित इष्टदेव को नासारन्ध्र में लाकर पुष्पांजलि के मातृका यन्त्र में स्थापित कर इस पुष्पांजलि को मूर्ति पर चढ़ाना चाहिए—इस क्रिया को आवाहन कहते हैं। शालिग्राम या प्रतिष्ठित प्रतिमा में आवाहन नहीं करना चाहिए। आवाहन आदि उपचारों से पूजन करते समय भ० शंकर द्वारा वताए गये श्लोक को वोलना चाहिए—

आत्मसंस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर।
अरण्यामिव हव्यांशं मूर्तावावाहयाम्यहम् ॥
आवाहन मुद्रा एवं स्थापनी मुद्रा द्वारा कार्य करे ?

आसन एवं उपवेशन—सर्वान्तर्यामिणे देव सर्ववीजमयं शुभम् ।
स्वात्मस्थाय परं शुद्धमासनं कल्पयाम्यहम् ॥
अस्मिन् वरासने देव सुखासीनोऽक्षरात्मक ।
प्रतिष्ठितो भवेश त्वं प्रसीद परमेश्वर ॥
इससे उपवेशन करे ।

सन्निधान—अनन्या तव देवेश मूर्ति शक्तिरियं प्रभो ।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्वं भक्तानुग्रह तत्पर: ॥
सन्निधान मुद्रा से सन्निधान करना चाहिए ।

सन्निरोधन—आज्ञया तव देवेश कृपाम्भोधे गुणाम्वुधे ।
आत्मानन्दैक तृप्तं त्वां निरुपध्मि पितर्गुरो ॥
अपनी मुद्रा द्वारा सन्निरोधन करे ।

सम्मुखीकरण—अज्ञानाद् दुर्मनस्त्वाद्वा वैकल्यात् साधनस्य च ।
यदपूर्णं भवेत् कृत्यं तदप्यभिमुखो भव ॥
इसकी मुद्रा से सम्मुखीकरण करना चाहिए ।

सकलीकरण—दृशापीयूष वर्षिण्या पूरयन् यज्ञविष्टरम् ।
मूर्तौ वा यज्ञ सम्पूर्ते स्थिरोभव महेश्वर ॥
प्रार्थनी मुद्रा द्वारा पूजन करना चाहिए ।

अवगुण्ठन—अव्यक्त वाङ्मनश्चक्षु: श्रोत्रपूरामितद्युते ।
स्वतेज: पञ्चरेणाशु वेष्टितो भव सर्वत: ॥
अवगुण्ठनी मुद्रा द्वारा अवगुण्ठन करे ।

अमृतीकरण एवं परमीकरण—धेनुमुद्रा से अमृतीकरण करने के बाद महामुद्रा बनाते हुए परमीकरण करना चाहिए और फिर इष्टदेव का स्वागत करना चाहिए ।

स्वागतम्—यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवा: स्वाभीष्ट सिद्धये ।
तस्मै ते परमेशाय स्वागतं स्वागतं च ते ॥

इससे इष्टदेव का स्वागत करना चाहिए।

पाद्य—श्यामाक, अपराजिता, कमल एवं दूव को पाद्य के जल में मिलाना चाहिए।

यद्भक्ति लेश सम्पर्कात् परमानन्द विग्रहम्।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये॥

इष्टदेव को—नमः शब्द बोलते हुए पाद्य समर्पण करे।

आचमन—लौंग-जायफल एवं कंकोल ये तीनों वस्तुएं आचमन-जल में डालें—

वेदनामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने।
आचामं कल्पयामीश शुद्धानां शुद्धिहेतवे॥

सुधावीज-वं-वोलते हुए इष्टदेव को आचमन दे।

अर्घ्य—अर्घ्यपात्र में दूव-तिल-कुशा, सरसों, जौ, पुष्प चावल एवं कुंकुम—जल में डाले—

तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्द लक्षणम्।
तापत्रय विनिर्मुक्तं तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम्॥

स्वाहा शब्द का उच्चारण करते हुए अर्घ्य प्रदान करे।

मधुपर्क—मधुपर्क के पात्र में दही, घी एवं शहद मिलाना चाहिए।

सर्वकालुष्य हीनाय परिपूर्ण सुखात्मने।
मधुपर्कमिदं देव कल्पयामि प्रसीद मे।

वं—शब्द बोलते हुए इष्ट देव को मधुपर्क समर्पित करे।

पुनराचमन—उच्छिष्टोऽप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम्॥

तैल—उद्वर्तन एवं स्नान—स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकनाथ महाशय।
सर्व लोकेषु शुद्धात्मन ददामि स्नेहमुत्तमम्॥

सुगन्धित तेल इत्र आदि लगाना चाहिए।

परमानन्द बोधाब्धि निमग्न निजमूर्तये।
सांगोपांग मिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीश ते॥

इससे इष्टदेव को स्नान करवाना चाहिए।

अभिषेक—इसके बाद यथाशक्ति शंख से सुगन्धित जल से अभिषेक करे।

वस्त्र-उत्तरीय—माया चित्र पटच्छन्न निजगुह्योरु तेजसे।
निरावरण विज्ञान वासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥
इससे वस्त्र चढ़ाए।

यमाश्रित्य महामाया जगत् संमोहिनी सदा।
तस्मै ते परमेशाय कल्पयाम्युत्तरीयकम् ॥
इससे उत्तरीय चढ़ाए।

उपवीत एवं आभूषण—यस्य शक्ति त्रयेणेदं सम्प्रोत मखिलं जगत्।
यज्ञसूत्राय तस्यै ते यज्ञसूत्रं प्रकल्पये।
इससे यज्ञोपवीत प्रदान करे।

स्वभाव सुन्दरांगाय नाना शक्त्याश्रयाय ते।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चितम्।
इससे आभूषण चढ़ाए।

मूल मन्त्र से सम्पुटित वर्णमाला के एक-एक अक्षर का देवता के अंगों में न्यास करना चाहिए।

गन्ध—परमानन्द सौभाग्य परिपूर्ण दिगन्तरम्।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वर ॥

कनिष्ठिका से पात्र में रखी गन्ध (कुंकुम) चढ़ाए। फिर कनिष्ठिका और अंगूठे को मिला कर गन्धमुद्रा दिखाए।

पुष्प—तुरीय-वनसंभूतं नाना गुण मनोहरम्।
अमन्द सौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तरम् ॥

अनेक प्रकार के पुष्प अंगूठे एवं तर्जनी मिलाकर चढ़ाए। पुष्प गन्ध युक्त ही चढ़ाए।

प्रशस्त फल—जामुन, अनार, इमली, विजौरा, केला, आमला, वेर, आम, कटहल इन फलों से देवता का पूजन करना चाहिए। अमलतास का पुष्प और तुलसी ये दोनों निर्माल्य नहीं होते।

जम्बू-दाडिम-जंवीर-निंतिणी-वीज पूरकाः। रंभा-धात्री च वदरी-

रसाल-पनसोऽपि च । एषां फलैः यंजेदेवं तुलसी तु हरिप्रिया ।।

आवरण पूजा—इस प्रकार पुष्पों से पूजन करने के वाद षडंग पूजा से प्रारम्भ कर दिक्पाल तथा उनके आयुधों तक आवरण पूजा करनी चाहिए और फिर धूप, दीप आदि उपचारों से इष्ट देव का पूजन करना चाहिए । आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य एवं ईशान कोणों में क्रमशः हृदय, शिर, शिखा और कवच का पूजन कर अग्रभाग में नेत्र तथा दिशाओं में अस्त्र का पूजन करना चाहिए । अंग पूजा करते समय तीन श्वेत तथा तथा तीन रक्त वर्ण वाली हाथ में वर और अभय धारण करने वाली सुन्दर स्त्री जैसे रूपवाली अंग देवियों का ध्यान करना चाहिए ।

अपनी-अपनी दिशाओं में जाति और आयुध आदि—वाहन और शक्ति के साथ दिक्पालों का पूजन करना चाहिए । इनके मन्त्रों के प्रारंभ में ओम् तथा अपने-अपने वीज—लं रं मं क्षं वं यं सं हं ह्रीं आं—लगाने चाहिएं—यथा—ओं लं इन्द्राय सुराधिपतये सायुधाय सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय अमुकेष्ट देवता पार्षदाय नमः । ओं रं अग्नये तेजोऽधिपतये० । ओं मं यमाय प्रेताधिपतये० । ओं क्षं नैऋतये रक्षोऽधिपतये० । ओं हं ईशानायभूताधिपतये० । ओं ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये० । ओं आं ब्रह्मणे लोकाधिपतये ।।आदि ।

आवरण पूजा के वाद—अभीष्टसिद्धि मे देहि शरणागतवत्सल ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यमिदमावरणार्चनम् ।।

धूप—ओं वनस्पति रसोपेता गन्धाढ्यः सुमनोहरः ।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ।।

घण्टा पूजन एवं धूपदान—जय ध्वनिमातः स्वाहा—इस दशाक्षर मन्त्र से घण्टा का पूजन करना चाहिए । फिर वाएं हाथ से घण्टा वजाते हुए इष्टदेव के गुणों को गाते हुए दाहिने हाथ से देवता की नाभि के पास से धूप देनी चाहिए, फिर शंख से जल तथा पुष्पांजलि चढ़ानी चाहिए । दीपदान में भी ऐसा ही करना चाहिए ।

दीप—वायें हाथ की मध्यमा से दीपक का स्पर्श करते हुए मूल मन्त्र के साथ—सुप्रकाशो महादीपः सर्वतः तिमिरापहः ।

स वाह्याभ्यन्तर-ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

यह श्लोक बोलकर धूप मन्त्र से धूप के स्थान पर दीप पद लगाकर ओं सांगाय सपरिवाराय अमुक देवतायै दीपं दर्शयामि नमः० ।

नैवेद्यम्—सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेक भक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ॥
सांगाय सपरिवाराय अमुकदेवतायै नैवेद्यं निवेदयामि नमः ॥
धेनुमुद्रा दिखाकर नैवेद्य समर्पित करे ।

नैवेद्य के पश्चात् जल चढ़ाना चाहिए—

आरती एवं ताम्बूल—ताम्बूल निवेदित कर छत्र एवं चामर दिखलाने चाहिएं ।

वुद्धि सवासना क्लृप्तादर्पणं मंगलानि च ।
मनोवृत्तिर्विचित्रा ते नृत्य रूपेण कल्पिता ॥
ध्वनयो गीतरूपेण शब्दवाद्यप्रभेदतः ।
छत्राणि नवपद्मानि कल्पितानि मया प्रभो ॥
सुषुम्णां ध्वज रूपेण प्राणाद्याश्चामरात्मना ।
अहंकारो गजत्वेन वेगः क्लृप्तोरथात्मना ॥
इन्द्रियाणि अश्वरूपाणि शब्दादिरथवर्त्मना ।
मनः प्रग्रहरूपेण वुद्धिसारथि रूपतः ॥
सर्वमन्यत्तथा लुप्तं तवोपकरणात्मना ॥

इन श्लोकों को पढ़कर साधक तन्मय होकर मूल मन्त्र का यथा-शक्ति जप कर देवता के दाहिने हाथ में विशेषार्घ का जल छोड़ना चाहिए ।

गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादात् परमेश्वर ॥

प्रदक्षिणा—देव को दण्डवत् प्रणाम कर इष्टदेव की प्रदक्षिणा करनी चाहिए ।

ब्रह्मार्पणम्—ओं इतः पूर्वं प्राण वुद्धिदेह धर्माधिकारतो जाग्रत स्वप्न-सुषुप्ति-अवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यां उदरेण शिश्नेन यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा, मां मदीयं च सकलं हरये ते समर्पये ओं तत्सद् इति ॥

इसके वाद संहार मुद्रा द्वारा इष्टदेव को हृदय में स्थापित करना चाहिए ।

कल्याणवृष्टिस्तोत्र

(भगवान् शंकराचार्य विरचित)

कल्याण वृष्टिभिरिवामृत पूरिताभि:
लक्ष्मी स्वयं वरणमंगल दीपिकाभि: ।
सेवाभिरम्ब तव पाद सरोज मूले
नाकारि किं मनसि भक्ति मतां जनानाम् ॥1॥
एतावदेव जननि स्पृहणीयमास्ते
त्वद् वन्दनेषु सलिल स्थगिते च नेत्रे
सान्निध्य मुद्यदरुणायत सोदरस्य
त्वद् विग्रहस्य सुधया परयाऽऽप्लुतस्य ॥2॥
ईशित्वभाव कलुषा कतिनाम सन्ति
ब्रह्मादय: प्रतियुगं प्रलयाभिभूता: ।
एक: स एव जननि स्थिरसिद्धिरास्ते,
य: पादयोस्तव सकृत प्रणतिं करोति ॥3॥
लब्ध्वा सकृत् त्रिपुर सुन्दरि तावकीनं
कारुण्य कन्दलित कान्तिभरं कटाक्षम् ।
कन्दर्पभाव सुभगास्त्वयि भक्ति भाज:,
सम्मोहयन्ति तरुणीर्भुवन त्रयेषु ॥4॥
ह्रींकारमेव तव नाम गृणन्ति वेदा:,
मातस्त्रिकोणनिलये त्रिपुरे त्रिनेत्रे ।
यत्स्मृतौ यमभटादि भयं विहाय
दीव्यन्ति नन्दनवने सहलोकपालै: ॥5॥
हन्तु: पुरामधिगलं परिपूर्यमाण:
क्रूरं कथं नु भविता गरलस्य वेग: ।
आश्वासनाय किल मातरिदं तवार्धं
देहस्य शश्वदमृताप्लुत शीतलस्य ॥6॥
सर्वज्ञतां सदसि वाक्पटुतां प्रसूते
देवि त्वदंघ्रिसरसीरुहयो: प्रणाम: ।

किं च स्फुरन् मुकुट मुज्ज्वलमातपत्रं
द्वे चामरे च वसुधां महती ददाति ॥7॥
कल्पद्रुमैरभिमत प्रतिपादनेषु
कारुण्य वारिधिभिरम्ब भवत्कटाक्षै: ।
आलोकय त्रिपुर सुन्दरि मामनर्थं
त्वय्येव भक्तिभरितं त्वयि दत्तदृष्टि: ॥8॥
हन्तेतरेष्वपि मनांसि निधाय चान्ये
भक्ति वहन्ति किल पामरदैवतेषु ।
त्वामेव देविमनसा वचसा स्मरामि,
त्वामेव नौमि शरणं जगति त्वमेव ॥ 9 ॥
लक्ष्येषु सत्स्वपि तवाक्षि विलोकनानाम्
आलोकय त्रिपुर सुन्दरि मां कथंचित् ।
नूनं मयापि सदृशं करुणैक पात्रम्
जातो जनिष्यति जनो न च जायते च ॥ 10 ॥
ह्रीं ह्री मिति प्रतिदिनं जपतां जनानां
किं नाम दुर्लभमिह त्रिपुराधिवासे ।
माला किरीटमद वारणमाननीयां—
स्तान् सेवते मधुमती स्वयमेव लक्ष्मी: ॥ 11 ॥
सम्पत् कराणि सकलेन्द्रिय नन्दनानि
साम्राज्यदान कुशलानि सरोरुहाक्षि ।
त्वद् वन्दनानि दुरितौघ हरोद्यतानि
मामेव मातरनिशं कलयन्तु नान्यम् ॥ 12 ॥
कल्पोप संहरण कल्पित ताण्डवस्य
देवस्य खण्डपरशो: परमेश्वरस्य ।
पाशाङ्कुशैक्षव शरासन पुष्प वाणा
सा साक्षिणी विजयते तव मूर्तिरेका ॥ 13 ॥
लग्नं सदा भवतु मातरिदं तवार्धं
तेज: परं वहुल कुंकुम पंक शोणम् ।

भास्वत्किरीट ममृताशु कलावतंसं
मध्ये त्रिकोण मुदितं परमामृतार्द्रम् ॥ 14 ॥
ह्रींकारमेव तव धाम तदेव रूपं
त्वन्नाम सुन्दरि सरोज निवासमूले ।
त्वत्तेजसा परिणतं वियदादिभूतं
सौख्यं तनोति सरसीरुह सम्भवादे: ॥ 15 ॥
ह्रींकार त्रयसम्पुटेन महता मन्त्रेण सन्दीपितं
स्तोत्रं य: प्रति वासरं तव पुरो मातर्जपेन्मन्त्रवित् ।
तस्य क्षोणिभुजो भवन्ति वशगा लक्ष्मीश्चिर स्थायिनी ।
वाणी निर्मल सूक्तिभार भरिता जागर्ति दीर्घं वय: ॥ 16 ॥

(कल्याण वृष्टि स्तोत्र भगवान् शंकराचार्य द्वारा विरचित है। षोडशी विद्या के मूलमन्त्र के अक्षरों पर आधृत एक एक अक्षर पर इसमें सोलह श्लोक हैं। मन्त्रज्ञ इसका प्रतिदिन पाठ करें तो उनका परम कल्याण अवश्यंभावी है। साधकों के लिए इसका अर्थ भी दिया जा रहा है। यह करुणापूर्ण भाव और भाषा में विरचित है।

कल्याण वृष्टि स्तोत्र का भावार्थ

अम्ब ! अमृत से परिपूर्ण कल्याण की वर्षा करने वाली एवं लक्ष्मी को स्वयं वरण करने वाली मंगलमयी दीपमाला की भांति आपकी सेवाओं में आपके चरण कमलों में भक्तिभाव रखने वाले मनुष्यों के मन में क्या नहीं कर दिया ? अर्थात् उनके समस्त मनोरथों को पूर्ण कर दिया ॥ 1 ॥

जननि ! मेरी तो वस यही स्पृहा है कि परमोत्कृष्ट सुधा से परिप्लुत तथा उदीयमान अरुण वर्ण सूर्य की समता करने वाले आपके अरुण-विग्रह के सन्निकट पहुंच कर आपकी वन्दना के साथ मेरे नेत्र अश्रु जल से परिपूर्ण हो जाएं ॥ 2 ॥

मां ! प्रभुत्व भाव से कलुषित ब्रह्मा आदि कितने देवता हो चुके हैं जो प्रत्येक युग में प्रलय से अभिभूत (विनष्ट) हो गये हैं, किन्तु एक वही व्यक्ति स्थिर युक्तियुक्त विद्यमान रहता है, जो एक बार आपके चरणों में प्रणाम कर लेता है ॥ 3 ॥

त्रिपुर सुन्दरि ! आप में भक्तिभाव रखने वाले भक्तजन एक बार भी आपकी करुणा से अंकुरित सुशोभन कटाक्ष को पाकर कामदेव सदृश सौन्दर्यशाली हो जाते हैं और त्रिभुवन में युवतियों को सम्मोहित कर लेते हैं ॥ 4 ॥

त्रिकोण में निवास करने वाली एवं तीन नेत्रों से सुशोभित माता त्रिपुर सुन्दरि ! वेद ह्लींकार को ही आपका नाम बतलाते हैं । वह नाम जिनके संस्मरण में आ गया वे भक्तजन यमदूतों के भय को त्याग कर लोकपालों के साथ नन्दन वन में क्रीडा करते हैं ॥ 5 ॥

माता ! निरन्तर अमृत से परिप्लुत होने के कारण शीतल वने हुए आपके शरीर का यह अर्धभाग जिनके साथ संलग्न था, उन त्रिपुरहन्ता शंकर जी के गले में भरा हुआ हलाहल विष का वेग उनके लिए अनिष्ट-कारक कैसे होता ॥ 6 ॥

देवि ! आपके चरण कमलों में किया हुआ प्रणाम सर्वज्ञता और सभा में वाक्चातुर्य तो उत्पन्न करता ही है । साथ ही उद्भासित मुकुट, श्वेतछत्र दो चामर और विशाल पृथ्वी का साम्राज्य भी प्रदान करता है ॥ 7 ॥

मां त्रिपुर सुन्दरि ! मैं आपकी ही भक्ति से परिपूर्ण हूं और आपकी ओर ही दृष्टि लगाए हुए हूं, अतः आप मुझ अनाथ की ओर मनोरथों को पूर्ण करने में कल्प वृक्ष सदृशं एवं करुणासागर रूप अपने कटाक्षों से देख तो लें ॥ 8 ॥

देवि ! खेद है कि अन्यान्य जन आपके अतिरिक्त अन्य नीच देवताओं में भी मन लगाकर उनकी भक्ति करते हैं, किन्तु मैं मन और वचन से आपका ही स्मरण करता हूं, आपको ही प्रणाम करता हूं, क्योंकि जगत् में आप ही शरणदात्री हैं ॥ 9 ॥

त्रिपुर सुन्दरि ! यद्यपि आपके नेत्रों के लिए देखने के बहुत से लक्ष्य विद्यमान हैं, तथापि किसी प्रकार आप मेरी ओर दृष्टि डाल दें, क्योंकि निश्चय ही मेरे समान करुणा का पात्र न कोई पैदा हुआ है, न हो रहा है, न ही पैदा होगा ॥ 10 ॥

त्रिपुर में निवास करने वाली मां ! ह्रीं ह्रीं इस प्रकार (आपके वीजमन्त्र का) प्रतिदिन जप करने वाले मनुष्यों के लिए इस जगत् में क्या दुर्लभ है ? माला, किरीट और उन्मत्त गजराज से युक्त उन माननीयों की तो स्वयं मधुमती लक्ष्मी ही सेवा करती हैं ॥ 11 ॥

कमल नयनि ! आप की वन्दनाएं सम्पत्ति प्रदान करने वाली, समस्त इन्द्रियों को आनन्दित करने वाली, साम्राज्य प्रदान करने में कुशल और पाप समूह को नष्ट करने में उद्यत रहने वाली हैं, माता ! वे निरन्तर मुझे ही प्राप्त हों, दूसरे को नहीं ॥ 12 ॥

कल्प के उपसंहार के समय ताण्डवनृत्य करने वाले खण्ड परशु देवाधिदेवं परमेश्वर शंकर के लिए पाश, अंकुश, ईख का धनुष और पुष्पवाण को धारण करने वाली आप की वह एकमात्र मूर्त्ति साक्षीरूप में सुशोभित होती है ॥ 13 ॥

माता ! आपका यह अर्धांग जो परम तेजोमय, अत्यधिक कुंकुमपंक से युक्त होने के कारण अरुण, चमकदार, किरीट से सुशोभित, चन्द्रकला से विभूषित अमृत से परमार्द्र और त्रिकोण के मध्य में प्रकट है। सदा शिवजी से संलग्न रहे ॥ 14 ॥

कमल पर निवास करने वाली सुन्दरि ! ह्रींकार ही आपका धरम हैं, वही आपका रूप है, वही आपका नाम है, और वही आपके तेज से उत्पन्न हुए आकाशादि से क्रमश: परिणत-जगत् का आदिकारण है, जो ब्रह्मा, विष्णु आदि की रचित, पालित वस्तु वनकर परम सुख देता है ॥ 15 ॥

मां ! जो मन्त्रज्ञ तीन "ह्रीं" कार से सम्पुटित महान् मन्त्र से संदीपित इस स्तोत्र का प्रतिदिन आप के समक्ष जप करता है, उसके राजा लोग वशीभूत हो जाते हैं, उसकी लक्ष्मी चिरस्थायिनी हो जाती है, उसकी वाणी निर्मल सूक्तियों से परिपूर्ण हो जाती है, और वह दीर्घायु हो जाता है ।

श्री गणेशाय नमः

ओं नमः शिवाय

अथ मन्त्रानुष्ठान पद्धतिः

1. षट् कर्म

शान्तिर्वश्यं स्तम्भनं च द्वेषमुच्चाटन-मारणे ।
उक्तानीमानि कर्माणि शान्तिरोगादि नाशनम् ।।

कर्म छः प्रकार के होते हैं—(1) शांति-कर्म (2) वशीकरण (3) स्तम्भन (4) वैर (5) उच्चाटन (6) मारण ।

2. कर्मों के लक्षण

शान्तिः रोगादिनाशनम्, वश्यं वचन-कारित्वं स्तम्भो वृत्तिनिरोधनम् । द्वेषोऽप्रीतिः, प्रीतिमतोरुच्चाटः स्थानतश्च्युतिः ।
मारणं प्राणहरणम् इति षट् कर्म लक्षणम् ।

(1) रोग और ग्रहादि के निवारण को **'शांति कर्म'** कहते हैं । (2) सब वस्तुओं को वश में करने को **'वशीकरण'** कहते हैं । (4) दो मित्रों में वैर उत्पन्न करने को **'वैर'** कहते हैं (5) अपने देश से दूसरे देश में चले जाने को **'उच्चाटन'** कहते हैं । (6) जीव को मार देने को **'मारण'** कहते हैं ।

3. कर्मों के देवता

रतिर्वाणी रमाज्येष्ठा दुर्गाकाली च देवता ।।

शांति कर्म की अधिष्ठात्री **'रति देवी'** है । वशीकरण की **सरस्वती** अर्थात् वाणी है । स्तम्भन की **रमा** अर्थात् लक्ष्मी है । वैर की **'ज्येष्ठा**

देवी', उच्चाटन की 'दुर्गा' और मारण की 'भद्रकाली देवी' है। जिस कार्य की इच्छा हो, उसी के देवता का पूजन करना चाहिए।

4. देवतावर्ण

सिताऽरुण हरिद्राभ मिश्रश्यामलधूसराः।
प्रपूजयेत कर्मादौ स्ववर्णैः कुसुमैः क्रमात् ॥

5. ऋतु

ऋतुषट्कं वसन्ताद्यमहोरात्रं भवेत् क्रमात्।
एकैकस्य ऋतोर्मानं घटिका दशकं मतम् ॥
हेमन्तं च वसन्ताख्यम् शिशिरं ग्रीष्मतोयदौ।
शरदं कर्मणां षट्कं योजयेत् क्रमात् सुधीः ॥

प्रत्यहं सूर्योदयात् नाडीदशकं वसन्तः, तदग्रिमं नाडीदशकं शिशिरः, तदग्रिमं नाडीदशकं ग्रीष्मः। तदग्रिमं नाडी दशकं वर्षा, तदग्रिमं नाडीदशकं हेमन्तः, तदग्रिमं नाडीदशकं शरत्।

6. कर्मों की दिशा

शिव सोमेन्द्र निर्ऋति पवनाग्नि दिशः क्रमात् ॥
तत्तत् कर्माणि कुर्वीत् जपंस्तत्तत् दिशाम् ॥

शांति कर्म ईशान दिशा में करना चाहिये, वशीकरण उत्तर दिशा में करना चाहिए, स्तम्भन पूर्व दिशा में करना चाहिये, विद्वेष 'नैर्ऋत' दिशा में, उच्चाटन वायव्य दिशा में और मारण आग्नेय दिशा में करना चाहिए। अर्थात् कर्म करते समय मुख उस दिशा की ओर होना चाहिए जिस कर्म को करना है।

7. कर्मों के करने का समय

मध्याह्न से पहिले वशीकरण, मध्याह्न में विद्वेष और उच्चाटन, तीसरे पहर में शांति कर्म और स्तम्भन, सायं काल में मारण कर्म को करे।

8. तिथि, वार

शुक्लपक्षे द्वितीया च सप्तमी पंचमी तथा।
तृतीया बुधजीवाभ्यां युताशान्ति विधौ मता ॥

चतुर्थी नवमी षष्ठी त्रयोदशी तिथिस्तथा ।
जीवसोमयुता शस्ता वशीकरण कर्मणि ॥
एकादशी च दशमी नवमी चाष्टमी पुनः ।
शनैश्चर सितोपेता प्रोक्ता विद्वेष कर्मणि ॥
कृष्णे चतुर्दश्यष्टम्यौ भानुसूने युते यदि ।
उच्चाटनाख्यं कर्मात्र कर्तव्यं फलसिद्धये ॥
भूताष्टम्यौ कृष्णगते अमावस्या तदन्तगाः ।
भानुमन्दकुजोपेताः स्तम्भन मारणयोः शुभाः ॥

शुभ कार्य शुभ वारों में और अशुभ कर्म क्रूर वारों में करने चाहिएं। जैसे शांति कर्म करना हो तो गुरुवार को करे और विद्वेषादि शनिवार को करे।

9. पक्ष

शुभ कार्य शुक्ल पक्ष में और दिन में, क्रूर कार्य कृष्ण पक्ष में और रात्रि में होना चाहिए।

10, ग्रह विचार

अपने कार्य के लिए अपनी राशि से और दूसरे के कार्य के लिये दूसरे की राशि से ग्रहादि का शुभाशुभ तथा चन्द्रमा योगिनी इत्यादि शुभ समय शुभ मुहूर्त्त का विचार कर लेना चाहिए।

उत्तराफाल्गुणी, हस्त अश्विनी, श्रवण, विशाखा, मृगशिर इन नक्षत्रों तथा रविवार सहित शुभ वारों में मंत्र यन्त्र व्रतादि साधन शुभ होता है।

11. शांतिक पौष्टिक कर्म

पुनर्वसु, पुष्य, स्वाति, तीनों उत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, अश्विनी, हस्त, अनुराधा, रोहिणी और मृगशिर इन नक्षत्रों में और पुण्य दिन में शांतिक कर्म तथा पौष्टिक कर्म करना चाहिए।

12. आसन के भेद

मन्त्र जपने के कितने ही प्रकार के आसन होते हैं। जैसा काम हो, उसी प्रकार का आसन होना चाहिये। जैसे पुष्टि कर्म में पद्मासन से बैठे, शांति कर्म में स्वस्तिक आसन से बैठे, विद्वेष कर्म में कुक्कुट आसन

से बैठे उच्चाटन में अर्द्ध स्वस्तिक आसन से, मारण और स्तम्भन में विकटासन से बैठे, वशीकरण में भद्रासन से बैठना चाहिए।

13. आसन का विचार

वशीकरण करने को भेड़ के चर्म पर, आकर्षण करने को बाघाम्बर चर्म पर, उच्चाटन करने पर ऊंट के चर्म पर, विद्वेष करने को घोड़े के चर्म पर, बन्धु छुड़ाने के लिए मृग चर्म पर, मारण में भैंस के चर्म पर बैठना उचित है। बैठने से पहले अपना आसन, दिशा फल कूर्म चक्र की रीति से बिछावे तो उचित है।

दूसरे मत से ज्ञान सिद्धि के लिए काला आसन हो, मोक्ष के लिये व्याघ्र की चर्म का, पौष्टिक के लिए कुशा का, शांति के लिए विष्टर का, व्याधि नाश के लिए लकड़ी का, दु:ख मोचन के लिए कंबल का आसन होना चाहिए। यदि कोई भी न मिले तो कुशा का आसन या विष्टर होना चाहिए।

14. मन्त्र की प्रकृति

मन्त्र की प्रकृति चार प्रकार की होती है। और जैसी प्रकृति हो वैसा ही उसका फल होता है। नीचे लिखे चक्र से जानें।

15. प्रकृति-चक्र

प्रकृति	शत्रु	साध्य	सिद्ध	सुसिद्ध
फल	यदि मन्त्र की प्रकृति शत्रुता भाव में हो तो काम नहीं बने	यदि साध्य प्रकृति हो तो बने काम को बिगाड़ दे।	यदि सिद्ध प्रकृति हो तो अवसर आने पर कार्य सिद्ध होवे।	सुसिद्ध प्रकृति में कार्य शीघ्र होवे।

16. मन्त्र की प्रकृति जानने की विधि

मन्त्र के अक्षर, नाम राशि के अक्षर शुरु करने वाली तिथि के अंक,

वारांक, नक्षत्रांक व पहर के अंकों को युक्त करके 4 का भाग देकर यदि शेष 1 वचे तो शत्रु, 2 वचे तो साध्य, 3 से सिद्ध और 4 से सुसिद्ध जानना।

17. मन्त्र की महिमा

'ॐ' शब्द की वहुत महिमा है, जिस के जप से प्रत्येक आशा पूर्ण हो सकती है। प्राचीन ऋषि मुनि और योगी पुरुष सहस्रों वर्षों से इस मन्त्र का जप करके इस में एक वल उत्पन्न कर गए हैं। मन्त्र का जप उस समय में विशेष महत्त्व रखता था और जीवन को सफल बनाने का सबसे उत्तम प्रकार था। जिन मनुष्यों के पास धन नहीं, विद्या नहीं, यदि उसके पास मन्त्र शक्ति है, तो सब कुछ है। मन्त्र शक्ति से मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है। असफल जीवन के लिये मन्त्र ही एक औषधि है। सांसारिक संकटों से मन्त्र ही सफलता दिलवा सकता है। मन्त्र शक्ति से मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है। असफल जीवन के लिये मन्त्र ही एक औषधी है। सांसारिक संकटों से मन्त्र ही सफलता दिलवा सकता है। मन्त्र शक्ति से धन, संतान, विद्या, मान, ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है।

18. मन्त्र क्या है ?

जब प्रलय के उपरान्त सृष्टि का प्रारम्भ हुआ तो पहिले सामान्य अवस्था में स्थित प्रकृति से मान-मान मे अहंकार और अहंकार से शब्द की उत्पत्ति हुई। यह मूल शब्द प्रणव (ॐ) है अनेक रूपों से (प्रकट) हुआ। उस के क्रमिक विकास द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति हुई। मन्त्रों के अर्थों को जानते हुए जिन्होंने विधि द्वारा मन्त्रों का जप करके ईश्वर के दर्शन किये हैं उनको ऋषि कहते हैं (ऋषयोमन्त्रद्रष्टारः)। हमारी आशाओं की प्राप्ति तथा मुक्ति का साधन इन मन्त्रों में ही है। प्रत्येक मन्त्र प्रत्येक विशेष कार्य के लिये बनाया गया है। यदि मन्त्र का उच्चारण शुद्ध और विधि के साथ किया जाए तो उसका फल अवश्य और शीघ्र प्राप्त होता है।

19. देवता और मन्त्र

प्रत्येक कार्य को आरम्भ करने वाली एक शक्ति होती है। हमारे

शास्त्रों में प्रत्येक पदार्थ का एक देवता होता है। पृथ्वी, देवी, गंगादि नदियां ऋतुओं के देवतादि इस सिद्धान्त से पूजित होते हैं। प्रत्येक वस्तु और अवस्था एक क्रिया, एक गति का परिणाम है। जो शक्ति इस गति को देख रही है वह इस क्रिया से उत्पन्न वस्तु तथा अवस्था का देवता कहा जाता है। जैसे कि मनुष्य के शरीर में प्राण हैं, जीव है वैसे ही सब अवस्थाएं हैं और अवस्थाओं के भी जीव हैं, इन जीवों को शास्त्र में देवता कहते हैं। पृथ्वी का जीव पृथ्वी देवता है, जल का जीव वरुण देवता है। शरीर सर्वदा जड़ होता है। वह शरीर जड़ का हो अथवा चेतन का, शास्त्र सम्बन्धी जड़ के उपासक नहीं, उस जड़ में व्याप्त हो कर उसे संचालित करने वाली चेतन शक्ति की हमारे यहां उपासना होती है। हम आभ्यन्तरिक चेतन शक्ति को देवता कहते हैं। जैसे शरीर में जीव हृदय में रहता है, वैसे ही इस व्यापक विश्व के पदार्थों के सम्बन्धी देवताओं के अपने-2 दिव्य लोक हैं, शरीर का केन्द्र हृदय कहा जाता है, ऐसे ही उन लोगों को उन वस्तुओं का मूल केन्द्र कहना चाहिये, जैसे सूर्य मण्डल नेत्र में अग्नि का प्रकाश करता है इसी तरह ऊष्ण का केन्द्र है और उसका स्वामी सूर्य देवता का इस में निवास है। प्रत्येक मन्त्र इस प्रकार कम्पन पैदा करते हैं। जिस प्रकार के कम्पन से वह अवस्था या वस्तु बनती है, जिस के बनने को वह मन्त्र बनाया गया है। इस अवस्था और वस्तु का संचालक जो देवता है वही उस मन्त्र का भी देवता होगा। मन्त्र की कामना अथवा विश्वास-पूर्वक अनुष्ठान उस देवता को अपनी ओर आकर्षित करता है। यदि कोई मनुष्य हमारे कथन के अनुसार कोई कार्य करे तो हम स्वयं उसकी ओर आकर्षित हो जायेंगे और उस की मनोकामना पूर्ण करने का यत्न करेंगे। इसी प्रकार जब मन्त्र जप के द्वारा हम वैसी कम्पन जैसे उस मन्त्र के देवता को उत्पन्न करना पड़ता है, स्वयं उत्पन्न करते हैं तो उस की प्रसन्नता होती है और वह हमारे मन की कामनाओं को शीघ्र प्रगट करने में सहायक होते हैं। प्रत्येक कम्पन एक आकार उत्पन्न करता है इसी प्रकार कम्पन व आकार का परस्पर सम्बन्ध ही साधक को सफलता प्रदान करता है।

साधक मन्त्र जप द्वारा एक कम्पन उत्पन्न करता है और वह उस कम्पन से आकार बनाना चाहता है जो उसके अभीष्ट कार्य के प्रेरक देवता का आकार हो, वह उस देवता की एक प्रकार से मूर्तिपूजा करने का यत्न करता है। इस पूजा या आकर्षण की सफलता उसके मन्त्र के कम्पन पर निर्भर है। यदि मन्त्र का उच्चारण शुद्ध और विधि से किया जाता है तो कम्पन ठीक होगा। यदि उच्चारण शुद्ध नहीं तो कम्पन ठीक आकार नहीं बनावेगा और आकार ठीक फल नहीं दे सकता। विपरीत फल होने का भय हो सकता है। जप के साथ यदि जप करने वाला मन्त्र देवता का ध्यान भी करता है, तो ध्यान का आकार एक कम्पन उत्पन्न करेगा, दोनों का एक संघर्ष होगा अर्थात् दोनों एक हो जाएंगे। उच्चारण के कम्पन में जो त्रुटि है वह ध्यान के आकर्षण से दूर हो जाएगी। इस प्रकार जप करने वाला जप का पूर्ण लाभ उठा सकेगा। देवताओं का केवल ध्यान और पूजन भी उनका आकर्षण करता है उस ध्यान और पूजन के कम्पन भी मानसिक आशाओं को पूर्ण करते हैं। प्रसन्न होकर कभी कभी देवता साधक को स्वयं प्रत्यक्ष या स्वप्न में भी मन्त्र उपदेश करते हैं। ऐसे मन्त्र बहुत शक्ति वाले होते हैं। इन मन्त्रों का न तो कोई संस्कार करना पड़ता है और न ही कीलक, शापोद्धार इत्यादि करना पड़ता है। वह अपने आप सिद्ध होते हैं। अतः आपको यदि किसी मन्त्र, देवता का अनुष्ठान करना है तो उसको श्रद्धा और विधि के साथ एकाग्र चित्त होकर करें, इससे आपको शीघ्र फल की प्राप्ति होगी।

20. मंत्रों के सिद्ध न होने के कारण

मन्त्रों का ठीक प्रकार से और विधि के साथ जप और अनुष्ठान करने पर भी यदि जप करने वाले को उसका कोई फल प्राप्त नहीं होता तो जप करने वाले की श्रद्धा उस मन्त्र पर से कम हो जाती है और यह अनुष्ठान छोड़ देता है। उस को सिद्धि क्यों नहीं होती, इसके क्या कारण हैं ? प्रथम साधक का मन्त्र पर दृढ़ विश्वास होना चाहिये तो मन्त्र सिद्धि शीघ्र होती है। विधि में थोड़ी सी भी त्रुटि होने से मन्त्र सिद्धि में बाधा

होती है। जिस प्रकार की सामग्री, स्थान, आसन की आवश्यकता हो वह पूर्ण होना चाहिए। जहां जप में हवन और मार्जन का विधान हो उसे सावधान होकर करना चाहिए। प्रयोग में आने वाली सामग्री शुद्ध और सात्त्विकता से प्राप्त की हुई होनी चाहिये। कपट, छल, चोरी, धोखा, रिश्वत इत्यादि के धन से प्राप्त सामग्री नहीं होनी चाहिये। ऐसे धन से किया हुआ अनुष्ठान विधि-पूर्वक होने पर भी सफल नहीं होता।

कभी कभी हमारे प्रारब्ध कर्मों के अशुभ फल बहुत बलवान् होते हैं, अतः अनुष्ठान करने से उनके उस परिणाम स्वरूप जो रोग, शोक, हानि इत्यादि के आकार में प्रकट हो सकते थे हमें बचा देते हैं, परन्तु हमारे वह अशुभकर्म अनुष्ठान के फल में बाधक हो जाते हैं। अशुभ कर्म जितना बलवान् होगा अनुष्ठान के फल में उतनी देर होगी। जब अनुष्ठान भोग्य द्वारा उस अशुभ कर्म का क्षय हो जाएगा तब मन्त्र सिद्धि प्राप्त होगी।

21. दीक्षा ग्रहण का समय

मन्त्र अनुष्ठान के लिये मन्त्र दीक्षा लेते समय काल, तिथि, दिन इत्यादि सब का विचार कर लेना चाहिए। दीक्षा से पहिले शिष्य को व्रत रखना चाहिये, उस दिन सायंकाल में गुरु शिष्य को बुलाकर उसकी चोटी बांध दें। शिष्य इस मन्त्र 'ओं नमः सिद्धम्' का जप करे और गुरु के चरणों की ओर ध्यान करके रात्रि को कुशा के आसन पर सोवे। मन्त्र का तीन बार पाठ करे। स्वप्न में यदि हाथी, बैल, माला, समुद्र सर्प, वृक्ष, पर्वत घोड़ा, अथवा पवित्र वस्तुएं सोना इत्यादि दृष्टिगोचर हों तो अनुष्ठान में सफलता होगी। ज्येष्ठ, आषाढ़, भाद्रपद, पौष और मलमास में मन्त्र दीक्षा नहीं लेनी चाहिए। दीक्षा के लिये फाल्गुण का मास सब से श्रेष्ठ है। गोपाल मंत्र की दीक्षा चैत्र में उत्तम होती है। मंगलवार और शनिवार के अतिरिक्त अन्य किसी भी वार में दीक्षा ली जा सकती है। प्रतिपदा, चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी अमावस्या यह तिथियां दीक्षा के लिये ठीक नहीं हैं, कोई कोई पूर्णमासी को भी छोड़ना मानते हैं। द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, त्रयोदशी

केवल विष्णुमन्त्र की दीक्षा में ग्रहण करनी। जिस दिन मेघ गर्जना हो, भूकम्प का कोई उत्पात हो और सायंकाल हो, दीक्षा ग्रहण में वर्जित है। शुक्ल पक्ष की षष्ठी, सप्तमी, द्वादशी भी वर्जित है। भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, श्रवण, धनिष्ठा नक्षत्र भी मन्त्र दीक्षा में निषिद्ध हैं। शिव और अग्नि मंत्र ग्रहण में आर्द्रा और कृत्तिका दोष युक्त नहीं माने जाते हैं। प्रीति आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन धृति, वृद्धि, ध्रुव, सुकर्मा, साध्य, शुक्ल, हर्षण, वरीयान, शिव, ब्रह्म, सिद्ध और ऐन्द्र ये योग मन्त्र दीक्षा में श्रेष्ठ माने गए हैं। बव, कौलव, तैतल और वणिज ये करण मन्त्र दीक्षा में शुभ हैं। विष्णु मन्त्र के लिये वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ लग्न शुभ हैं। शिव मन्त्र के लिये मेष, कर्क, तुला और मकर लग्न शुभ हैं। शक्ति मन्त्र के लिये मिथुन, कन्या, धन और मीन, लग्न शुभ हैं। भाद्रों मास की षष्ठी, आश्विनकृष्ण चतुर्दशी, कार्तिक शुक्ल नवमी, मार्गशीर्ष की तृतीया, पौषशुदि नवमी, माघ शुदि चतुर्थी, फाल्गुण शुदि नवमी, चैत की चतुर्दशी, वैशाख की अक्षय तृतीया ज्येष्ठ का दशहरा, आषाढ़ शुदि पंचमी और श्रावण कृष्ण पंचमी इन सब तिथियों में मन्त्र ग्रहण करने के लिये तिथि, वार, योग इत्यादि का विचार नहीं करना चाहिये। चैत्र शुदि त्रयोदशी, वैशाख शुदि एकादशी, ज्येष्ठ वदि चतुर्दशी, आषाढ़ की नागपंचमी, श्रावण की एकादशी, फाल्गुण शुदि षष्ठी ये तिथियां भी दीक्षा के लिये शुभ कही हैं। शक्तिमन्त्र की दीक्षा में चतुर्दशी और अष्टमी और गणपति के मन्त्र ग्रहण के लिये चतुर्थी श्रेष्ठ है। सूर्य ग्रहण में दीक्षा ली जा सकती है। सूर्यग्रहण में शक्ति दीक्षा और चन्द्रग्रहण में विष्णु दीक्षा शुभ नहीं होती है। गंगादि पवित्र तीर्थों में, कुरुक्षेत्र में, देवी के चारों पीठों में, कैलाश और काशी में मन्त्र दीक्षा लेते समय, समय विचार नहीं करना चाहिये। गौशाला, गुरु का घर, देव मन्दिर, जंगल, नदी के तट, आम के वृक्ष और वेल वृक्ष के समीप, पर्वत के ऊपर गुफा में और गंगा के तट पर ये स्थान दीक्षा के लिये शुभ हैं। गया, सूर्य क्षेत्र, चन्द्रपर्वत, मतंग देश, कन्या का घर, कामरूप यह स्थान दीक्षा के लिये वर्जित हैं। संकट के समय अथवा किसी विशेष

हालत में बिना कालादि का विचार किये भी दीक्षा दी जा सकती है ।

22. मन्त्र दीक्षा के अधिकारी

यदि अधिकारी को दीक्षा दी गई तो सफल होगी, नहीं तो दुरुपयोग होगा। यदि दीक्षा देने वाला योग्य हो तो साधक का कल्याण होगा। नहीं तो वह अपना स्वार्थ साधन करेगा या ठीक मार्ग न बतला सकने के कारण भ्रष्ट कर देगा। इस कारण दीक्षा में गुरु और शिष्य दोनों की पात्रता देखनी चाहिये। जो सदाचारी, नित्य कर्म करने वाला, वासनाओं से रहित, अभिमान रहित, स्वार्थ और यश का ख्याल न करने वाला, स्त्री, मित्र किसी के अधीन न हो, रोगी या अंगहीन न हो, सहन शक्ति जिस में हो, लोकसेवा करने वाला, शास्त्र का ज्ञानी, जिस ने मन्त्र स्वयं सिद्ध किया हो, जो विघ्नों को दूर करने में समर्थ हो वही योग्य गुरु है।

श्रद्धालु, विश्वासी, विचारशील, सदाचारी, नित्यकर्मी, जिज्ञासु हो, कामी, क्रोधी न हो, कपटी,, पाखंडी न हो, जो गुरु के वाक्य पर विश्वास करता हो, जो गुरु के दोष नहीं देखता, जो गुरु की निन्दा नहीं करता, जिसमें आत्म उद्धार और लोक सेवा की भावना हो, वही शिष्य दीक्षा ग्रहण करने का उत्तम अधिकारी है।

इसी प्रकार जिस में क्रोध के भाव अधिक हैं वह रुद्र या काली की दीक्षा का अधिकारी है। जिस में नियम और मर्यादा और धर्म के भाव अधिक हैं वह भगवान् राम की दीक्षा का अधिकारी है, जिस में प्रेम की भावना अधिक है वह गोपाल की उपासना कर सकेगा। जिस में भक्ति के प्रति श्रद्धा के भाव हैं वह भगवान् विष्णु की उपासना कर सकेगा। इसी प्रकार रुचि के अनुसार अधिकार प्राप्त होता है। जिस प्रकार की कामना की सिद्धि के लिये साधक प्रवृत्त हो रहा है वह उस प्रकार की कामना को पूरा करने वाले देवता के मन्त्र का अधिकारी है। जैसे विद्या की भावना करने वाला भाव रखता हो तो सरस्वती के मन्त्र की दीक्षा का अधिकारी समझना चाहिए।

गुरु को चाहिये कि शिष्य को कुछ दिन अपने पास रख कर परीक्षा

करे, तब उसके अनुसार उसको दीक्षा दे।

23. मन्त्रों के अनुष्ठान की विधि

किसी भी मन्त्र के प्रयोग के पहिले उसका पुरश्चरण करना चाहिये। पुरश्चरण के बिना किसी भी मन्त्र की सिद्धि नहीं होती है। प्रत्येक मन्त्र के पुरश्चरण की जप संख्या और उसके करने की विधियां पृथक् पृथक् हैं।

पुरश्चरणों में एक जैसी संख्या में जप होगा, जब तक कि पूर्णत: अनुष्ठान समाप्त न हो जाए। तीर्थ स्थान, नदी का तट, गुफा, पर्वत, समुद्र का तट, जंगल, उद्यान, विल्व, पीपल अथवा आमला का वृक्ष, गौशाला, देव मन्दिर, घर में एकान्त का कमरा ये स्थान जप के लिये उत्तम स्थान हैं। स्थान ऐसा होना चाहिये कि जहां जप में बाधा पड़ने का भय न हों।

पुरश्चरण करने वाले को स्वच्छ रहना, जितेन्द्रिय रहना और सात्विक भोजन का विशेष ध्यान रखना चाहिये। बाल कटवाना, तेल लगाना, बिना भोग लगाए भोजन करना, दूसरे का भोजन खाना, दान लेना, पर स्त्री का ध्यान, काम, क्रोध, लोभ, मोह, स्त्री का संग, आलस्य पुरश्चरण में वर्जित हैं। पितृ तर्पण न करने से भी जप व्यर्थ हो जाता है। यदि अपने पास सामग्री न हो तो तीर्थ के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान से और पर्व से अतिरिक्त अन्य तिथियों में श्रद्धा युक्त और सदाचारी मनुष्य से एक दिन की सामग्री भिक्षा के रूप में ले लें। जप के समय मौनभंग होने पर प्रणव (ओं) का जप करके फिर जप करना चाहिए। यदि क्रोध इत्यादि का विकार आ जावे तो आचमन और प्राणायाम करना चाहिये। मलमूत्र का वेग रोक कर जप नहीं करना चाहिये। शरीर, मुख, वस्त्र, स्थान सामग्री और मन सब को साफ और पवित्र रखना चाहिये। पहिले दिन जितनी संख्या में जप करो, नित्य उतनी संख्या में जप करना चाहिये, कभी ज्यादा और कभी कम जप करने से जप नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। कलियुग में शास्त्रों के अनुसार चार गुणा जप करने की विधि लिखी है। पृथ्वी शयन, ब्रह्मचर्य पालन, मौन रहना, गुरु सेवा, त्रिकाल संध्या करना, स्नान, पूजा और पितृतर्पण करना, दान, देवस्तुति,

सदाचारी रहना और क्रोध से रहित होकर जप करना ठीक होता है। स्त्री, शूद्र और नास्तिक से न बोलें। झूठ न बोलें। एकान्त में शयन करना चाहिये। यदि पुरश्चरण में मृत्यु शौच अथवा जननाशौच हो तो भी अनुष्ठान न छोड़े।

शावर मन्त्रों के अतिरिक्त अन्य सभी मन्त्र पुरश्चरण के द्वारा सिद्ध होते हैं। आजकल देखने में आया हैं कि अभीष्ट मन्त्र का जिस प्रकार प्रयोग लिखा जाता है और वह देखकर प्रयोग करने बैठ गए, उसका फल यह होता है कि सफलता नहीं होती और समय भी नष्ट हो जाता है। और लोगों की श्रद्धा मन्त्रों में कम हो जाती है। किसी भी मन्त्र का प्रयोग उस साधक को सिद्ध होता है जिसने पुरश्चरण के द्वारा पहिले उसी मन्त्र को सिद्ध कर लिया है। शास्त्रों में पुरश्चरण के लिये जो संख्या दी हुई है वह सतयुग के लिये है, त्रेता में उस से द्विगुण, द्वापर में तीन गुणा और कलियुग में चार गुणा जप करने पर पुरश्चरण पूरा होता है। पुरश्चरण के फल होने का यह प्रमाण है कि उस के अन्त में मन्त्र देवता का प्रत्यक्ष साक्षात होगा और साधक को अभीष्ट वरदान देंगे। शास्त्र में पुरश्चरण की कई विधियां हैं। किसी एक विधि द्वारा पुरश्चरण किया जा सकता है।

ग्रहण काल में मन्त्र का जप करने पर फिर ग्रहण के अन्त में ही मन्त्र की जप संख्या का दशांश हवन, हवन का दशांश, तर्पण, और तर्पण का दशांश मार्जन, मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन करना चाहिये।

गोपाल मन्त्र में हवन संख्या के वरावर तर्पण करना होगा। यदि सामान्य अनुष्ठान करते समय, वीच में ग्रहण आ जावे तो सामान्य अनुठान को छोड़ना नहीं चाहिये। चन्द्र ताराशुद्धि होने पर शुक्ल पक्ष में पुरश्चरण आरम्भ करना चाहिये, पुरश्चरण के लिये जो स्थान निश्चित करे उसे दो या चार गज के घेरे में एक सीमा निश्चित कर लेवे। अनुष्ठान पूरा होने तक उस सीमा से बाहिर नहीं जाना चाहिये। आहार-विहार सव उस सीमा के अन्दर होना चाहिये। अनुष्ठान स्थान पर कूर्म चक्र के अनुसार मण्डप वनाए। जिस देवता के मन्त्र का पुरश्चरण करना

हो उस देवता की गायत्री का जप करे। गायत्री का जप एक हजार होगा। इस जप से साधक के पाप नष्ट होते हैं और विघ्नों की शान्ति होती है। गायत्री जप से पहिले यह ध्यान कर लेना चाहिये कि पापों के नाश के लिये जप करता हूं ऐसा संकल्प पढ़ लेना चाहिये। पुरश्चरण के पहले दिन उपवास करें। दूसरे दिन नित्य क्रिया के उपरान्त संकल्प पूर्वक भूत शुद्धि, प्राणायाम और मन्त्र देवता की मुद्रा आदि पूर्वक उस देवता की पूजा-पद्धति के अनुसार पूजा करे, देवता का अपने हृदय में ध्यान करे। जप के समाप्त होने पर हवन और तर्पणादि करे। कलश से जल लेकर अपने मस्तक पर अभिषेक करे। यह नित्य प्रति की विधि है। पुरश्चरण समाप्त होने के दिन ब्राह्मण भोजन, हवन और दान दे, फिर गुरु देव की यथाशक्ति पूजा करे।

24. कार्य सिद्धि के लिये सकाम और निष्काम अनुष्ठान करना

कोई भी अनुष्ठान हो वह भावना के अनुसार दो भागों में बांटा जा सकता है सकाम और निष्काम। किसी कार्य की सफलता इतने समय में हो ऐसा विचार रखकर जब कोई अनुष्ठान किया जाता है तो अनुष्ठान को सकाम अनुष्ठान कहते हैं। प्रायश्चित्त समझ कर या केवल ईश्वर की प्राप्ति के लिये जो अनुष्ठान किया जाता है उस को निष्काम अनुष्ठान कहा जाता है। यदि जाप का कोई फल रोग इत्यादि से जो उत्पन्न हुआ हो—की शान्ति के लिये प्रायश्चित्त किया जा रहा हो तो वह सकाम ही होगा। इसी प्रकार जब हम ऐसा अनुष्ठान करते हैं कि इस अनुष्ठान से ईश्वर दर्शन या ऐसा ही कोई फल मिले तो वह भी सकाम ही समझा जाएगा।

25. जप में माला का विधान

जप में माला किस प्रकार की होनी चाहिये। जप करने के समय माला का होना अत्यावश्यक है। जप करते समय माला सर्वदा गुप्ति में अथवा छुपी हुई होनी चाहिये। जप करते समय माला पृथ्वी को स्पर्श न करे। अंगुष्ठ मध्यमा और अनामिका के मिलाप से जप किया जाता है। जप के समय तर्जनी अंगुली को माला से पृथक् रखते हैं, उससे माला

को छूना नहीं चाहिये। जब एक माला का जप पूरा हो जाता है तो माला को वहीं से फेर लेते हैं। इस प्रकार सिमरों का उल्लंघन नहीं होता। यदि माला न हो तो अंगुली पर जप की संख्या की गिनती की जा सकती है। परन्तु इसमें अनामिका के मध्यम पोर से आरम्भ करके कनिष्ठिका की ओर गिनते हुए तर्जनी मूल में समाप्त करना चाहिये। मध्यमा के नीचे की दो ग्रन्थियों को छोड़ देना चाहिये। इस प्रकार जब 100 जप हो जावे तो फिर अनामिका के मूल पर से आरम्भ करके तर्जनी के मध्य तक 8 संख्या का जप करे इस प्रकार 108 जप की माला की संख्या पूरी हो जाएगी। कई देवताओं के मन्त्रों में इससे विपरीत होता है। जप के समय अंगुलियों को पृथक पृथक न करे। केवल सब को झुका कर जप की गिनती करे, इन्हें परस्पर इकट्ठा रखे। जप संख्या की गिनती आवश्यक है। गिनती न किया जप निष्फल जाता है। ऐसा तन्त्र-शास्त्र का मत है। माला पूर्ण होने पर गिनती में चावल, अंगुली के पोट अनाज, फूल, चन्दन और मिट्टी से गिनती नहीं करनी चाहिये। जिस माला से जप हो, उन्हीं मणियों की छोटी माला संख्या की गिनती केलिये बना लेनी चाहिये। जप माला के द्वारा भी गिनती की जा सकती है और कागज पर लिख कर भी कर सकते हैं। अक्षरों के द्वारा माला की संख्या का काम लेना तन्त्रों में अच्छा माना गया है। उसका प्रकार यह है कि (अ) से लेकर सब स्वर और व्यंजन मणि मान लिये ज.ते हैं। एक अक्षर का अनुस्वार युक्त जप करके जैसे (अ) का (अं) और (क) का (कं) फिर एक मन्त्र का जप करना चाहिये (ह) के उपरांत (ल) का एक बार फिर उच्चारण करना चाहिये और फिर वहीं से उल्टे क्रम से अक्षरों का उच्चारण करते हुए (अ) तक आना चाहिये। इस प्रकार एक माला पूर्ण होती है। (क्ष) को सिमरण मानना चाहिये। पद्म बीज, रुद्राक्ष, शंख, मोती, स्फटिक, मणि, स्वर्ण, मूंगा, चान्दी, कुश की जड़ और तुलसी की माला सामान्य पूजा के प्रयोग में आती है। इन में शंखों से लेकर कुश तक की माला, मालाओं में सब से श्रेष्ठ मानी गई हैं। शिव और शक्ति मन्त्रों में रुद्राक्ष और विष्णु मन्त्रों में तुलसी की माला श्रेष्ठ है। माला

एक ही जाति के मनकों की होनी चाहिये, इसमें दो जाति के पदार्थों का मेल नहीं होना चाहिये। मारणादि प्रयोग में पद्म बीज की माला, पाप नाश के लिये कुश मूल की, पुत्र कामनादि में स्वर्ण रत्न आदि की माला, धन कामना में मूंगा की माला प्रयोग में लानी चाहिये। जिन मणियों की माला बनाई जावे वह एक आकार के समान हों। मनके टूटे फूटे अथवा कीड़े इत्यादि से खाये हुए न हों। मोक्ष के लिये जप में 50 मणियों की, धन के लिये 60 की, सब कामनाओं के लिये 27 की, मारणादि में 15 की, कार्यसिद्धि में 54 की और सब कामनाओं की सिद्धि के लिये 108 मणियों की माला बनावे। इन सब में सिमेरु और लगेगा। जप से पहले माला का संस्कार करके तब जप करना चाहिये। माला जिस सूत्र में पिरोई जावे वह रूई या रेशम का सूत्र हो। शांति कार्य में सफेद, वशीकरण इत्यादि में लाल और मारणादि में काला सूत्र लगावे। लाल सूत्र सब के लिये और सब कार्यों में श्रेष्ठ है। सूत्र को पहले तीन गुणा करके फिर तीन गुणा करे। वर्णमाला की रीति से प्रणव के साथ (अ) से लेकर (ह) तक के अक्षर अनुस्वार लगा कर जप करे और फिर विपरीत से करे। एक अक्षर जप के साथ एक मणि का ग्रन्थन करे मणियों के मध्य में ब्रह्म ग्रन्थी दे और प्रणव जप से सिमेरु ग्रन्थित करे। जिस मन्त्र का जप करना हो उसके जप से भी माला ग्रन्थन किया जाता है। रुद्राक्ष और पद्म बीज इत्यादि की मणियों के मुख तथा पुष्पों का निर्णय हो सकता है। रुद्राक्ष में जिधर गहरा मुख हो वह और पद्म बीज में, जिधर दो बिन्दु हों उधर मुख समझना चाहिये। दो या तीन फेरे देकर मन्त्र या अक्षर के जप के साथ मणियों के मध्य में ग्रन्थी देना चाहिये, माला के द्वारा जिस देवता का जप करना हो, उस माला को पीपल के पत्र के डोने में रख कर उस देवता के मन्त्र से माला का स्थापन करे, पंचगव्य से स्नान, चन्दन से लेपन देकर पूजन इत्यादि करे। फिर माला पर देवता का आवाहन करके प्राण प्रतिष्ठा करे और देवता का पूजन करें।

26. ईश्वर नाम और मन्त्रों का सम्बन्ध

ईश्वर के सभी नाम महामन्त्र हैं। इन नामों से ही मन्त्रों का

निर्माण होता है। फिर भी वह केवल मन्त्र नहीं। नाम मन्त्र नहीं है। प्रभु के नामों का स्थान मन्त्र से बहुत ऊंचा है। तात्पर्य नाम के उस भाव से है जबकि भगवान् का नाम समझ कर भगवान् को प्रसन्न करने के लिये लिया जाता है। वह ही नाम जब मन्त्र विधि से लिया जाता है तो मन्त्र हो जाता है। नाम की ही सब से अधिक प्रधानता है, भाव मात्र से ही वह मन्त्र हो जाता है तब उस पर वह सब नियम लगते हैं जो मन्त्र के लिये हैं। नाम को मन्त्र बना देने पर उस शब्द की शक्ति मात्र काम करती है और यह नाम के गुणों को न जान कर नाम का अपमान होता है जो नाम के बहुत प्रभाव को जानते हैं वह कभी उस का प्रयोग मन्त्र रूप में नहीं करेंगे। ब्रह्माण्ड में और इस के बाहर जितने प्रकार की शक्तियां हैं वह सब उस सर्वशक्तिमान की अपार शक्ति के एक कण के सहस्र भाग के तुल्य भी तुलना नहीं कर सकतीं। नाम अपने नाम से अभिन्न है। नाम प्रभु का स्वरूप है इस कारण वह ही शक्ति सिन्धु है। शक्ति उस से ही शक्ति पाकर शक्ति बनती है। वह व्यापक शक्ति का सागर है। जब नाम उच्चारण नाम के रूप में होता है तो वह नामों का स्वरूप होता है। भगवान् पर जैसे कोई नियम बन्धन नहीं हो सकता वैसे ही नाम पर भी नहीं हो सकता। प्रभु के प्रत्येक रूप में जैसे सब शक्तियां हैं वैसे ही नाम भी सर्व समर्थ है। कोई भी साधक किसी भी ईश्वर के नाम का जप किसी भी अवस्था में कर सकता है। नाम के लिये चक्र निर्णय नक्षत्रादि काल निर्णय, स्थान इत्यादि कोई भी बन्धन नहीं है। अपनी रुचि के अनुसार किसी भी नाम का जप किया जा सकता है। नाम का न तो कोई संस्कार होता है और न पुरश्चरण वह तो केवल प्रेम ही होता है। मन्त्र के संस्कार और पुरश्चरण इत्यादि सब होते हैं जब हम नाम को मन्त्र के जप में ग्रहण करते हैं। नाम सर्वदा सिद्ध और सर्वदा दोष रहित है नाम जप की कोई विधि नहीं है।

27. मन्त्रों को गुप्त रखने का लाभ व हानि

मन्त्र सिद्धि के लिये जिन संस्कारों की आवश्यकता बताई गई है। उनमें अन्तिम संस्कार है "गुप्ती" अर्थात् गुप्त रखना या मन्त्र किसी को

बताना नहीं। मन्त्रसाधक के बारे में यह किसी को पता न लगे कि वह किस मन्त्र का जप करता है। यदि नाम का मन्त्रविधि से जप होता है तो उस को भी गुप्त रखना चाहिये। यदि जप के समय कोई पास हो तो मानसिक जप करना चाहिए। वाचक जप करना हो तो सर्वदा एकांत स्थान पर करना चाहिए। मन्त्र के गुप्त रखने का फल यह होता है कि लोगों की व्यर्थ की बातों से बच जाते हैं। जिसको मन्त्र को ग्रहण करने की अभिलाषा होती है वह विद्वान् गुरु के पास जाता है। गुरु उसके अधिकार के अनुकूल मन्त्र देता है। जिसके साधन से वह अपनी कामनाओं को प्राप्त करता है। शास्त्रों में ऐसा विधान है कि एक ही मन्त्र एक ही वर्ण जाति या मनुष्य को न सुनाया जाए। मन्त्र को प्रकट करने पर आज्ञा का उल्लंघन होता है। शास्त्र आज्ञा भंग करने के पाप के कारण अनुष्ठान सफल नहीं होता।

28. मन्त्रों का सद् उपयोग न करने से हानि

जो शक्ति जितनी बलवान् होती है उसके अनुसार ही उतना ही लाभ होता है। उस के विपरीत होने पर उतनी ही हानि होती है। मन्त्र के अनुष्ठान में साधक को प्राय: मृत्यु शय्या पर जाते, पागल होते और सब कुछ नाश होते भी देखा गया है। इस का कारण यह है कि अज्ञानता या विधि न जानते हुए विपरीत फल का होना। जब साधक कोई अनुष्ठान करता है तो बहुत सी गुप्त शक्तियां इस में बाधा उत्पन्न करती हैं। कई बार बहुत से भयानक दृश्य दिखलाई देते हैं। चारों ओर अग्नि दिखाई देती है। मारने वाले पशु आते हुए दिखाई देते हैं। इस प्रकार के कई और भी भयानक दृश्य दृष्टिगोचर होते हैं। जब साधक दृढ़चित्त होकर अपने स्थान पर बैठा रहे वहां से उठे नहीं और जप करता रहे तो सब कुछ स्वयं शांत हो जाता है। चाहे कोई आकृति ही क्यों न हो वह अनुष्ठान के स्थान से कूर्म चक्र को पार नहीं कर सकती। यदि साधक भयभीत होकर भागने लगे तो उसकी मृत्यु हो जाती है। वह जीवन भर पागल हो जाता है। विधि-पूर्वक जप न होने से हानि का भय रहता है। जहां जिस वस्तु या विधि का प्रयोग बताया गया हो वहां वैसे ही करना चाहिए। मन्त्र का जप ध्यान, उच्चारण जिस प्रकार से होना हो वैसा न होने पर हानि होती

है। अनुष्ठान के समय प्राय: पिछले किए हुए बुरे कर्मों का फल, रोग, धन हानि और बाधायें उत्पन्न होती हैं। परन्तु उनसे तंग आकर साधक का हृदय अनुष्ठान से टूट जाता है। यदि वह अनुष्ठान छोड़ दे तो वह और भी अधिक हानिकारक सिद्ध होते हैं। यदि साहस करके और उन बाधाओं से भयभीत न होकर अनुष्ठान करता रहे तो वह उन सब पर विजयी हो जाता है। अनुष्ठान की सब से अधिक सफलता दृढ़ निश्चय पर निर्भर है। गुरु पर निश्चय, मन्त्र पर निश्चय, और इष्ट पर निश्चय जिस साधक में यह तीनों प्रकार के निश्चय दृढ़ हैं उसको कोई शक्ति असफल नहीं कर सकती। और जिस में श्रद्धा और प्रेम नहीं है उसको ब्रह्मा भी सफल नहीं बना सकता। सभी मन्त्रों में एक जैसी शक्ति है। जिस मन्त्र को ग्रहण किया जाए उस पर पूरा विश्वास हो, उसकी विधि से ही अन्य मन्त्रों का अनुष्ठान भी किया जा सकता है।

29. ईश्वर में श्रद्धा और प्रेम रखना

जिस साधन के द्वारा मन जितना एकाग्र हो वह साधन उतना ही अच्छा होता है। मन का स्वभाव चंचल है और साधक उसको एकाग्र करने के लिए प्रयत्न करता है। वह तब ही हो सकता है जब एक ही साधन में उसको लगाए रखने का प्रयत्न करे। यदि साधनों का परिवर्तन करता रहे तो फिर साधन करना और न करना दोनों एक जैसे हैं। मन्त्र की या नाम की शक्ति भी तब ही प्रकट होती है जब एक ही नाम बार-बार लिया जावे। मन्त्र हो या नाम उसका लगातार उच्चारण होता रहे तो लाभदायक होगा।

30. मन्त्रों का चुनाव

वायु, अग्नि, भूमि, जल और आकाश इन पांच महाभूतों के कोष्ठकों में उनके अक्षर देख लें। यदि मन्त्र और साधक के नाम का पहला अक्षर एक ही तत्त्व के कोष्ठक में हो तो वह अपनी कुल का मन्त्र होगा, नहीं तो दूसरी कुल का मन्त्र होगा। यदि वह अपने मित्र तत्त्व के कोष्ठक में हो तो भी ले सकते हैं। यदि शत्रु के कोष्ठक में हो तो नहीं लेना चाहिए। अपनी कुल का मन्त्र सब से श्रेष्ठ होता है।

जल, भूमि का मित्र, वायु अग्नि का मित्र, आकाश सब का ही मित्र माना गया है। जल और वायु की शत्रुता है। भूमि और वायु की भी शत्रुता, है। जल और अग्नि की भी शत्रुता है। शत्रु मन्त्र विपरीत फल देने वाला होता है।

अक्षर कोष्ठक चक्र

वायु	अ	आ	ए	क	च	ट	त	प	य	प
अग्नि	इ	ई	ऐ	ख	छ	ठ	थ	फ	र	क्ष
भूमि	उ	ऊ	ओ	ग	ज	ड	द	व	ल	त्र
जल	ऋ	ॠ	औ	घ	झ	ढ	ध	भ	व	ज्ञ
आकाश	ऌ	ॡ	अं	ङ	ञ	ण	न	म	श	ह

31. नाम राशि और मन्त्र राशि देखना

राशि चक्र में भी शुद्ध मन्त्र ग्रहण करना चाहिए और शत्रु, मृत्यु और व्यय करने वाली राशि वाले मन्त्रों को छोड़ देना चाहिए। अपनी जन्म राशि के भाव से मन्त्र की राशि तक गिनना चाहिए। यदि साधक को अपनी जन्म राशि ज्ञात न हो तो प्रसिद्ध राशि से गिनती करनी चाहिए। पहिली, पांचवीं और नौवीं राशि के मन्त्र शुभ होते हैं। दूसरी, छठी और दसवीं राशि के मन्त्र मध्यम होते हैं। चौथी आठवीं और बारहवीं राशि के मन्त्र शत्रु होते हैं। चौथी राशि का मन्त्र केवल विष्णु के बारे में ही घातक होता है। और शक्ति के बारे में छठी राशि पर मन्त्र आवे तो छोड़ देना चाहिए।

राशियों के नाम—मेष को लग्न, वृष को धन, मिथुन को भ्रातृ, कर्क को बन्धु, सिंह को पुत्र, कन्या को शत्रु, तुला को कलत्र, वृश्चिक को मृत्यु, धन को धर्म, मकर को कर्म, कुम्भ को लाभ और मीन को व्यय

राशि और नाम चक्र

नाम भाव	लग्न	धन	भ्रातृ	बन्धु	पुत्र	शत्रु	कलत्र	मृत्यु	धर्म	कर्म	आय	व्यय
राशि	मेष	वृष	मिथु०	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
	अ आ इ ई	उ ऊ ऋ	ॠ ऌ ॡ	ए ऐ	ओ औ	अः श ष स ह ल क्ष अं	क ख ग घ ङ	च छ ज झ ञ	ट ठ ड ढ ण	त थ द ध न	प फ ब भ म	य र ल व

नाम समझें। इस के अनुसार मन्त्र का फल समझना चाहिए। केवल विष्णु मन्त्रों में शत्रु के स्थान पर वन्धु, बन्धु के स्थान पर शत्रु का पाठ होगा।

फल—लग्न राशि के मन्त्र से मन्त्र सिद्धि धन स्थान के मन्त्र से धन, वृद्धि, भाई के स्थान का लेने से भाई वृद्धि, वन्धु का स्थान लेने से मित्रों से प्रेम, पुत्र स्थान का लेने से पुत्र की प्राप्ति, शत्रु का लेने से शत्रु की वृद्धि, कलत्र स्थान का लेने से मध्यम फल, मृत्यु स्थान का लेने से मृत्यु, धर्म स्थान का लेने से धार्मिक विचार, कर्म स्थान का लेने से कार्य सिद्धि, लाभ स्थान का लेने से धन की प्राप्ति और व्यय स्थान का मन्त्र लेने से व्यय और धन की हानि होती है।

32. अपने नाम और मन्त्र के नाम नक्षत्र का मिलाप

नक्षत्रों के नीचे लिखे हुए चक्र में यदि अपनी जाति में दोनों के नाम हों तो अति प्रेम, दूसरी जाति से मध्यम प्रतीति होती हैं। राक्षस और मनुष्य के मिलाप से विनाश, राक्षस और देवता होने से शत्रु होगी। इस कारण अच्छा मन्त्र वह होगा जो अपनी जाति के कोष्ठक के वर्ण का होगा। देवता और देवता, मनुष्य और मनुष्य, राक्षस और राक्षस एक जाति के हैं। देवता और मनुष्य दोनों के मध्यम फल होते हैं। शेष छोड़ देने चाहिएं। इसके जानने का यह ढंग है कि साधक का जन्म नक्षत्र तथा मन्त्र का प्रथम अक्षर जिस खाने में पड़े उस नक्षत्र तक गिनती होगी। यदि साधक का जन्म नक्षत्र ज्ञात न हो तो उसके नाम का प्रथम अक्षर जिस नक्षत्र के कोष्ठ में पड़े वहां से गिनती करनी चाहिए। गिनती बाई ओर से होगी। इसमें मित्र वर्ग अपना वर्ग तथा शत्रु वर्ग देखना चाहिए। दूसरा प्रकार यह है कि साधक के जन्म नाम के नक्षत्र से मन्त्र नक्षत्र तक जन्म, सम्पद, विपद, क्षेम, शत्रु, साधक, वध मित्र तथा परम मित्र इस प्रकार गिनती करे यदि एक वार गिनती पूरी न हो तो दूसरी वार इसी प्रकार से गिनती करे। मन्त्र नक्षत्र जिस कोष्ठक में आवे मन्त्र को वैसा ही जानो। एक प्रकार यह भी है कि जन्म नक्षत्र से मन्त्र नक्षत्र तक के कोष्ठों तक गिनती को देखते हैं जन्म नक्षत्र से मन्त्र नक्षत्र छठे आंठवें नवें या चौथे कोष्ठक में पड़े तो शुभ होते हैं और शेष अशुभ होते हैं। तीसरे पांचवें तथा सातवें कोष्ठक को छोड़ देना चाहिए।

अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्व०	पुष्य	आश्ले०
अ, आ	इ	ई, उ, ऊ	ऋ ॠ ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ औ	क	ख, ग
देवता	मनुष्य	राक्षस	मनुष्य	देवता	मनुष्य	देवता	देवता	राक्षस

मघा	पू. फा.	उ. फा.	हस्त	चित्रा	स्वाति	विशा.	अनुराधा	ज्येष्ठा
घ ङ	च	छ ज	झ ञ	ट ठ	ड	ढ ण	त थ द	ध
राक्षस	मनुष्य	मनुष्य	देवता	राक्षस	देवता	राक्षस	देवता	राक्षस
मूला	पू. पा	उ. पा	श्रव	धनिष्ठा	शत.	पू. भा.	उ. भा.	रेवती
न प फ	व	भ	म	य र	ल	व श	ष स ह	त्र क्ष
राक्षस	मनुष्य	मनुष्य	देवता	राक्षस	राक्षस	मनुष्य	मनुष्य	देवता

33. चक्र नं० 2

मन्त्र के जितने अक्षर हों उन्हें पृथक कर लो और उन अक्षरों पर जो मात्रायें हों उन्हें भी पृथक करके स्वर मान लो जैसे (ी) की मात्रा हो तो ई मान लो अब सब अक्षरों को स्वरों सहित तथा व्यञ्जन के कोष्ठक में देखें जिस कोष्ठक में अक्षर निकलें उस कोष्ठक के ऊपर साधक की संख्या नोट कर लें यदि एक कोष्ठक या एक पंक्ति में अधिक शब्द पड़ें तो जितने शब्द पड़ें तो साधक अंक को उतनी बार लीजिए इस प्रकार सब अक्षरों के साधक अंक लेकर उनको जोड़ लो और 8 पर भाग दो इसी प्रकार साधक के नाम के अक्षरों को भी स्वरों के साथ पृथक करो और उनके साधना के नीचे के साधक अंक की गिनती को भी जोड़ लें और उनको भी 8 पर भाग दें। मन्त्र अक्षरों में भाग करने से जो शेष हो और साधक के नाम के अक्षरों में जो शेष हो, उन दोनों को देखें यदि मन्त्र का शेष साधक के शेष से कम हो तो मन्त्र ऋणी है यदि अधिक हो तो मन्त्र धन है। ऋणी मन्त्र को ग्रहण करना चाहिए धन को त्याग देना चाहिए। यदि दोनों के शेष अक्षर एक जैसे हों तो ग्रहण करने योग्य हैं।यदि मन्त्र अंक और नाम अंक का शेष कुछ न बचा हो तो इस मन्त्र को कभी सेवन न करना चाहिए।

34. ग्रहण में अनुष्ठान का फल

सूर्य अथवा चंद्र ग्रहण के समय समुद्र में जाने जाली नदियों में खड़े होकर आरम्भ होने के काल से समाप्ति काल तक जप करना चाहिए। जितना भी जप करो उसका दशांश हवन करो और ब्राह्मण भोजन कराने से भी सिद्धि होती है। सूर्य तथा चंद्रमा ग्रहण में मंत्र के जप का कई गुणा फल मिलता है। नदी में नाभि तक खड़े होकर जप करना चाहिए।

35. मन्त्र साधकों के लिए विशेष उपदेश

1. मन्त्र साधन करने का स्थान एकान्त हो साफ तथा पवित्र हो वहां अन्य कोई दूसरा अन्दर न आए।

6	6	6	0	3	4	4	0	0	0	3
अ आ	इ ई	उ ऊ	ऋ ॠ	ऌ ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ	ट
ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न	प	फ
ब	भ	म	य	र	ल	व	श	ष	स	ह
2	2	5	0	0	2	1	0	4	4	1

चक्र नं० 2.

2. कोई भी ऐसा कार्य छोड़कर साधन करने मत बैठो जिससे मन चंचल हो जाए। तथा साधना करते समय उसमें विशेष बाधा होवे।
3. अनुष्ठान करने के दिनों में ब्रह्मचर्य का पूर्ण रूप से पालन करना चाहिए। सत्य अहिंसा प्रभृति नियमों पर कठोरता से स्थित रहे।
4. अनुष्ठान के मध्य में आहार आदि सर्वथा सात्विक एवं शुद्ध होना चाहिए। अपने शरीर तथा ऋतु के अनुसार प्रयोग करो।
5. अनुष्ठान के समय आलस्य तथा प्रमाद से दूर रहो किन्तु कितनी ही अशान्ति क्यों न हो ढीले मत रहो, नियम को मत छोड़ो जरा सा आलस्य सारे किये पर पानी फेर देता है।
6. बाहर अथवा कुल का चाहे कितना ही दु:खदायी और दु:खमय समाचार क्यों न हो अपने हृदय को मत हिलाओ, उस समय मन को वश में रखने की चेष्टा करो।
7. अनुष्ठान के दिनों में यह चेष्टा बराबर करो कि मन शान्त रहे। कोई ऐसी बात मत करो जिससे तुम्हारे मन में भ्रम उत्पन्न हो।
8. अनुष्ठान के दिनों में किसी प्रकार का समाचार पत्र, पत्र, टैलीफून, तथा अन्य समाचार, मत सुनो और पढ़ो जहां तक हो सके इन से दूर रहने की चेष्टा करो।
9. कुछ भी चमत्कार देखो तो भयभीत न होना चाहिए दृढ़ विश्वास तथा धैर्य से परिणाम की प्रतीक्षा करो। जैसी अवस्था हो उसके अनुसार अपना अनुष्ठान करते जाओ।
10. अपने साधन करने की बात किसी पर प्रकट न होने दो चाहे उससे किसी प्रकार का सम्बन्ध क्यों न हो। सर्वदा उसे गुप्त रखने की चेष्टा करो।
11. किसी प्रकार की इच्छा रखकर अनुष्ठान करने में उसमें थोड़ी सी भी कमी आ जाने पर अनुष्ठान भंग हो जाता है। कभी-कभी विपरीत फल देने का भी भय रहता है।

12. किसी भी अनुष्ठान के सफल न होने पर धैर्य को नहीं छोड़ना चाहिए उस को दूसरी बार करना चाहिए असफलता तुम्हारी किसी कमी के कारण से ही होती है ।
13. किसी मनुष्य से सुनने मात्र से ही अनुष्ठान करने मत बैठ जाओ । जब तक पूरी विधि या गुरु बतलाने वाला पास न हो । उसे न करो ।
14. जिस मन्त्र या देवता का अनुष्ठान करो उसमें पूर्ण विश्वास तथा प्रेम होना चाहिए ।

मन्त्रप्रयोग के अंग

I. **भक्ति**—इष्टदेव में परम अनुराग या परम प्रेम को भक्ति कहते हैं। भक्ति तीन प्रकार की होती है—1. वैधी भक्ति—विधि एवं निषेध द्वारा निर्णीत और साधकों द्वारा अपनायी गयी भक्ति वैधी होती है।

II. **रागात्मिकाभक्ति**—जो इष्टदेव के प्रति भाव या अनुराग द्वारा उत्पन्न हो। जब मनमें भाव पैदा होगा तभी राग भी पैदा होगा। साध्य एवं साधक में प्रेममय सम्बन्ध होना ही राग है। साध्य के लिए साधक का समर्पणभाव। जो भी काम करना वह साध्य के लिए की हो।

III. **पराभक्ति**—इष्टदेव के प्रति जब राग पुष्ट हो जाता है, तब यही भक्ति पराभक्ति कहलाती है। भक्त का प्रेम जब शुद्ध-माधुर्य-मय हो जाता है, प्रगाढ़ स्नेह हो जाता है, उसे पराभक्ति या प्रेमा भक्ति कहते हैं, जहां साध्य-साधक में कोई भिन्नता नहीं रहती।

2. **शुद्धि**—मन्त्रसाधना में चार प्रकार की शुद्धियों पर बल दिया जाता है—1. **काय शुद्धि**, 2. **चित्त शुद्धि**, 3. **दिक्शुद्धि**, 4. **स्थान शुद्धि**।

1. मल के प्रक्षालन को स्नान कहते हैं, स्नान करने से शरीर निर्मल हो जाता है। स्नान सात प्रकार से होता है—

(i) **मन्त्र स्नान**—मन्त्रों द्वारा अपने शरीर का मार्जन करना।

(ii) **भौम**—उबटन आदि लगाकर शरीर का मार्जन करना।

(iii) **आग्नेय**—भस्म से स्नान करना।

(iv) **वायव्य**—गायों के खुरों से उड़ी हुई धूल में स्नान करना।

(v) **दिव्य**—धूप या वर्षा में स्नान करना।

(vi) **वारुण**—जलसे स्नान करना।

(vi) **मानस**—मन से भगवान् विष्णु का स्मरण करना।

(2) **चित्तशुद्धि**—अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, तया सभी जीवों पर अनुग्रह, अद्रोह, अतिमानिता का अभाव—ये चित्तशुद्धि के लक्षण हैं।

(3) **दिक् शुद्धि**—दिशाओं की शुद्धि। इसके द्वारा साधक का मन वश में रहता है, साधना में सिद्धि मिलती है। पूर्व और उत्तर दिशाएं ही उत्तम हैं।

(4) **स्थान शुद्धि**—स्थान पवित्र होना चाहिए, देवगृह हो। कीट-पतंगादि रहित हो।

3. **आसन**—मन्त्रसिद्धि के लिए रेशम, ऊन, कुशा, बाघाम्बर, मृगचर्म के आसन सर्व श्रेष्ठ हैं।

आसन शुद्धि, पृथ्वी शुद्धि, पूजन आदि भी आवश्यक हैं।

4. **पचांग सेवन**—गीता, सहस्रनाम, स्तव, कवच एवं हृदय इन पांचों को पंचांग कहते हैं। अपने-अपने सम्प्रदाय की गीता का स्वाध्याय, मनन और चिन्तन करने से, इष्टदेव के सहस्रनाम का पाठ करने से, तथा उस देवता का स्तोत्र, कवच एवं हृदय का पाठ करने से साधक पाप रहित होकर सिद्धि प्राप्त करता है।

5. **आचार**—मन्त्र साधना में तीन प्रकार से आचार माने गये हैं—1. वामाचार 2. दक्षिणाचार और 3. दिव्याचार। वामाचार पद्धति प्रवृत्ति मूलक है, दक्षिणाचार पद्धति निवृत्ति मूलक है। प्रवृत्ति मनुष्य का सहज जीवन है, निवृत्ति महाफलदायिनी है। जो सब जीवों के लिए हितकर है वह दिव्याचार है।

6. **धारणा**—श्रद्धा एवं योग दोनों का विधिवत् अभ्यास होने से धारणा की सिद्धि हो जाती है। वाह्य वस्तुओं के साथ मनोयोग होने से वहिर्धारणा और अन्तर्जगत के सूक्ष्म द्रव्यों के साथ मनोयोग होने से अन्तर्धारणा बनती है। धारणा की सिद्धि हो जाने से मन्त्रसाधना में तत्पर साधक को ध्यानसिद्धि एवं मन्त्रसिद्धि मिल जाती है।

7. **दिव्य देश सेवन**—वह्नि, अम्बु, लिंग, स्थण्डिल, कुण्ड, पट, मण्डल, विशिखा, नित्ययन्त्र, भावयन्त्र पीठ, विग्रह, विभूति, नाभि, हृदय, और मूर्धा इन सोलह को दिव्य देश कहा गया है। साधक को अपने अधिकार के अनुसार दिव्यदिशा में पूजा और उपासना करनी चाहिए। धारणा की सहायता से दिव्य देश में इष्ट का साक्षात्कार होता है। इस लिए मन्त्र-

साधना में दिव्य देश सिद्धिदायक माना गया है।

8. **प्राण क्रिया**—मन, प्राण और वायु में अभेद सम्बन्ध माना गया है। तथा वायु एवं प्राण में कार्य कारण सम्बन्ध होता है, इस लिए प्राणायाम पूर्वक न्यासों को करना चाहिए। अंगन्यास, करन्यास को अवश्य करना चाहिए।

9. **मुद्रा**—तन्त्रशास्त्र के रहस्यवेत्ता ऋषियों ने 'मुद्रा' शब्द का निर्वचन करते हुए कहा है—कि मुद्रा शब्द का प्रथम अक्षर 'मु' देवताओं की प्रसन्नता तथा दूसरा अक्षर 'द्रा' पापक्षय का सूचक होता है। इस लिए मुद्रा के प्रभाव से देवता प्रसन्न होते हैं और साधक पाप रहित हो जाता है।

आवाहन—आदि की नौ मुद्राएं, पूजन की गन्धादि मुद्राएं, तथा षडंगन्यासादि मुद्राओं का साधारणतया सभी काम्यमन्त्रों के प्रयोगों में करना चाहिए।

प्रत्येक देवता की मुद्राएं भिन्न-भिन्न होती हैं।

10. **तर्पण**—तर्पण करने से देवता शीघ्र प्रसन्न होते हैं। सकाम-तर्पण में तत्तद् द्रव्यों से तथा निष्काम तर्पण में केवल जल से तर्पण करें।

11. **हवन**—जप के विना मन्त्र सिद्ध नहीं होता, तथा हवन के विना वह फल नहीं देता। अत: अभीष्टफल की प्राप्ति के लिए श्रद्धा पूर्वक हवन करना चाहिए। काम्य एवं निष्काम प्रयोग में हवन किया जाता है।

12, **बलि:**—देवता के लिए द्रव्य का समर्पण बलि कहलाता है। बलिदान करने से विघ्नों की शान्ति होती है; तथा साधक निरापद होकर सिद्धि को प्राप्त करता है।

13. **याग**—इष्टदेव के पूजन को याग कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है—I. अन्तर्याग, इस में अपने देहमय पीठ पर पीठदेवता, पीठ शक्तियों एवं आवरण देवताओं के साथ मानसोपचारों से इष्ट देव का पूजन होता है, फिर आधार चक्र में सोई हुई कुण्डलिनी को जगाकर ब्रह्मरन्ध्र में विद्यमान परमशिव के पास ले जाकर वहां से टपकने वाली

अमृतधाराओं से इष्ट देव को तृप्तकर मन्त्रार्थ की भावना के साथ जप किया जाता है। सभी प्रकार के पूजनों में अन्तर्याग की महिमा सर्वोपरि है। अन्तर्याग की सिद्धि से जपसिद्धि, उससे ध्यान सिद्धि, उससे समाधि-सिद्धि और उससे देवता का साक्षात्कार होता है।

II. **बहिर्याग**—पीठ, विग्रह एवं तन्त्र आदि में विधिवत् पूजन को वहिर्याग कहते हैं। भावों के साथ विविध उपचारों के समर्पण को पूजन कहते हैं। उपचार के तीन प्रकार होते हैं। दशोपचार, षोडशोपचार, पंचोपचार। साधक को अपनी शक्ति के अनुसार दशोपचार, पंचोपचार, षोडशोपचार से अपने इष्टदेव का, पीठदेवताओं का, एवं आवरण देवताओं का भक्तिपूर्वक पूजन करना चाहिए।

14, **जप**—मन्त्र की बार-बार आवृत्ति को जप कहते हैं। यह तीन प्रकार से होता है—मानसिक, उपांशु एवं वाचिक।

1. मन्त्रार्थ की भावना के साथ तन्मय होकर मन्त्र का मन ही मन जाप करना मानसिक जप है। 2. मन्त्रार्थ एवं देवता में मन लगाकर जिह्वा एवं ओष्ठ को कुछ कम्पित करते हुए, केवल अपने ही को सुनाई पड़ने योग्य मन्त्र का उच्चारण उपांशु जप कहलाता है। 3. मन्त्रार्थ एवं देवता में मन लगाकर वाणी द्वारा सुनाई पड़ने योग्य मन्त्र का उच्चारण वाचिक जप कहलाता है।

सभी प्रयोगों में मानसिक एवं उपांशु जप ही श्रेष्ठ हैं। मैला या अपवित्र वस्त्र पहन कर या केश एवं मुख को दुर्गन्धयुक्त रखते हुए जप करने से देवता साधक का अनिष्ट कर सकता है। जप में आलस्य, निद्रा जंभाई, भूख, चिन्ता, शोक, क्रोध, भय, घृणा तथा कुविचार पूर्णरूपेण वर्जित हैं।

देवता, गुरु एवं मन्त्र में ऐक्य भाव रखते हुए, मन्त्रार्थ और देवता का ध्यान करते हुए एकाग्रमन से प्रतिदिन प्रातःकाल से मध्याह्न तक तुल्य संख्या में जप करना चाहिए। किसी दिन अधिक, किसी दिन कम जप करने से अनुष्ठानमें विघ्न पड़ता है।

15. **ध्यान**—मन्त्रसाधना में ध्यान भावप्रधान होता है। क्यों कि

कारण ब्रह्म एवं कार्य ब्रह्म दोनों ही भावमय होते हैं। जिस प्रकार मन्त्र शब्द से सम्बद्ध है, उसी प्रकार शब्द अर्थ से सम्बद्ध है। अर्थ भाव से, भाव रूप से सम्बद्ध होता है। इस लिए प्रत्येक मन्त्र का एक विशेष अर्थ भाव रूप होने के कारण ध्यान भी विशिष्ट होता है।

16. **समाधि**—जिसप्रकार लय योग की समाधि महालय एवं हठ-योग की समाधि महाबोध मानी जाती है, उसी प्रकार मन्त्रयोग की समाधि को महाभाव कहते हैं।

मन, मन्त्र एवं देवता इन तीनों की जब तक पृथक-पृथक् सत्ता रहती है, तब तक ध्यान का अधिकार रहता है, इन तीनों के भाव में मिलते ही समाधि आरम्भ हो जाती है। जिससे महाभाव उत्पन्न होता है।

मन का मन्त्र में, मन्त्र का देवता में लय कर, त्रिपुटी का नाश कर साधक समाधि प्राप्त करता है। इस अवस्था में साधक को रोमांच, स्तब्धता, तथा प्रेमाश्रु बहने लगते हैं, इस स्थिति से साधक कृत-कृत्य हो जाता है, तथा उसे मन्त्र योग का महाफल मिल जाता है। इस समाधि में साधक अपने अस्तित्व को भूल जाता है, और वह स्वयं इष्टमय हो जाता है।

मन्त्र साधन—सिद्धि के लिए किए जाने वाला प्रयत्न साधना कहलाता है। उसके उपयोगी उपकरणों को साधन कहते हैं। साधन के बिना साधना की ओर प्रवृत्त होना सम्भव नहीं है। अतः मन्त्र साधना की जानकारी के साथ-साथ मन्त्र साधन का सम्यक् ज्ञान भी परमावश्यक है।

साधना में विशेष विचार—साधना के बारे में एक और बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि जब वह कर्त्ता के अभीष्ट की प्राप्ति में सहायक हो तो उसे साधना कहते हैं। जो मन्त्र या क्रियाएं साधक का अभीष्ट सिद्ध नहीं कर सकतीं या कर्ता के लिए अभीष्ट कारक हों उन्हें साधन नहीं कहते। मन्त्र साधन में यह महत्त्वपूर्ण बात है कि कोई मन्त्र साधक का अभीष्ट सिद्ध करेगा या नहीं, किस किस कारण यह मन्त्र

अभीष्ट फलदायक हो सकता यह विचारणीय है।

मन्त्रानुष्ठान में विशेष ध्यान योग्य बातें—

1. सिद्धादिशोधन, 2. मन्त्रार्थ, 3, मन्त्रचैतन्य, 4. मन्त्रों की कुल्लुका, 5. मन्त्रसेतु, 6. महासेतु, 7. निर्वाण, 8. मुखशोधन 9. प्राणायाम 10. दीपनी, 11. मन्त्रक सतक, 12. मन्त्र के दोष तथा दोष निवृत्ति।

उक्त बारह बातों की विधिवत् जानकारी आवश्यक है, अन्यथा मन्त्र साधक का परम शत्रु बन जाता है।

1. **सिद्धादि शोधन**—किस मन्त्र के द्वारा साधक को सिद्धि मिलेगी, कौन-सा मन्त्र त्याज्य है, किस मन्त्र से साधना निष्फल होगी, मन्त्रशोधन में साध्य, सिद्ध और शत्रु विचार एवं ऋणी-धनी विचार किया जाता है। कुलाकुल चक्र, अकहड चक्र, अकथह चक्र, राशि चक्र, नक्षत्र चक्र, एवं ऋणी धनी चक्रों के आधार पर साधक के लिए सिद्धि दायक मन्त्र का चुनाव किया जाता है।

2. **मन्त्रार्थ**—मन्त्र साधारण शब्द नहीं है, वह इष्टदेव से अभिन्न होते हुए भी उसके स्वरूप का बोध कराता है। मन्त्र जिस अर्थ या लक्ष्य का संकेत करता है। साधक को उसकी जानकारी हो जाए तो साधना में सुविधा रहती है। मन्त्र प्रयोग में मन्त्रार्थ की भावना को ही जप कहा जाता है। जप के प्रभाव से ही सिद्धि होती है।

3. **मन्त्र चैतन्य**—साधारणतया शब्द दो प्रकार के होते हैं—एक तो किसी अर्थ के अवगत हो जाने पर मन—प्रेरित वायु के आघात से कण्ठ, तालु आदि विशेष स्थानों से उच्चारित होने वाला शब्द, दूसरा अन्त:करण में अर्थ को उद्भासित करने वाला चैतन्य शब्द, जिसे वैयाकरण स्फोट या शब्द ब्रह्म कहते हैं। स्फोट का अर्थ है जिससे अर्थ स्फुटित हो। अर्थ का स्फुरण, स्पन्दन या कम्पन से होता है तथा कम्पन नाद सहकारी है, अतः स्पन्दन या कम्पन शब्द रूप ही है। चैतन्य स्पन्दन जिससे समस्त सूक्ष्म अर्थ, शब्द, तन्मात्रा, आकाश, स्थूल शब्द या स्थूल सृष्टि की अभिव्यक्ति हुई, शब्द, ब्रह्म अथवा सगुण ब्रह्म ही है। मन्त्र

का भी यही मूलस्वरूप है और उसके इसी अर्थ में मन्त्र, देवता, गुरु का ऐक्य होता है, जिसे जप में आवश्यक माना गया है। यह अत्यावश्यक है कि साधक के मन में अपने मन्त्र के प्रति साधारण शब्द भाव न रहे अपितु उसमें ब्रह्मभाव जाग्रत हो जाए। भाव के आते ही मन्त्र चैतन्य रूप में स्फुरित होने लगता है और इस स्थिति में साधक का मन उसमें तल्लीन एवं तन्मय हो जाता है।

4. **मन्त्रों की कुल्लुका**—रुद्रयामल में कहा गया है कि जो व्यक्ति कुल्लुक को जाने बिना जप करता है उसकी आयु, विद्या, कीर्ति और यश नष्ट हो जाता है। अत: मन्त्र का जप करने से पहले उसकी कुल्लुका का ज्ञान कर लेना चाहिए। सरस्वती तन्त्र एवं वाराही तन्त्र में बतलाया गया है कि जप प्रारम्भ करते समय साधक को जिस देव के मन्त्र का जप करना हो उसकी कुल्लुका का सिर पर उसका न्यास कर लेना चाहिए, ऐसा करने से जप निर्विघ्न समाप्त होता है। तथा साधक को सिद्धि होती है। उदाहरण—मन्त्र का देवता—शिव, कुल्लुका का मन्त्र-ओं हों।

5. **मन्त्रसेतु**—साधक का मन्त्र के साथ सम्बन्ध जोड़ने वाला बीज सेतु कहलाता है। मन्त्र का जप करने से पहले सेतु मन्त्र का हृदय में जप करना चाहिए। प्रधानत: मन्त्रों का सेतु प्रणव होता है।

6. **महासेतु**—जप करने से पहले महासेतु मन्त्र का जप किया जाता है। इसके प्रभाव से साधक को सभी समय एवं सभी अवस्थाओं में जप करने का अधिकार मिलता है।

उदाहरणार्थ—महाकाली का महासेतु क्रीं, तारा का हुम्, त्रिपुर सुन्दरी का ह्रीं। इसका जप कण्ठस्थित विशुद्ध चक्र में किया जाता है।

7. **निर्वाण**—सर्वप्रथम प्रणव, फिर अकार से क्षकार तक समस्त स्वर वर्ण और फिर मूलमन्त्र के बाद पुन: स्वरवर्ण तथा अन्त में प्रणव एवं मातृका से सम्पुटित मूल मन्त्र का जप करना निर्वाण कहलाता है। इससे मन्त्र के आत्मस्वरूप का बोध होता है।

8. **मुखशोधन**—मन्त्र शास्त्र में जप करने से पहले मुखशोधन करना आवश्यक है। भोजन, कलह, असत्य आदि वचनों का मल जिह्वा

पर रहता है, इसका शोधन भी मन्त्र से होता है। मन्त्र का जो बीज है—उसका दस वार हृदय में जप करने से मन्त्र जप का अधिकार मिल जाता है।

9. **प्राणयोग**—जिस प्रकार प्राण युक्त शरीर ही कुछ कर सकता है, उसी प्रकार प्राणयुक्त मन्त्र भी सिद्ध होकर अभीष्ट फल देता है। बाराही तन्त्र में एवं योगिनी हृदय तन्त्र में प्राण की विधि बतलायी गयी है। माया बीज से पुटित मूल मन्त्र का सात बार जप करना प्राणयोग कहलाता है।

10. **दीपनी**—जिस प्रकार दीपक से वातावरण का अन्धकार दूर हो जाता है, उसी प्रकार दीपनी क्रिया से मन्त्र प्रदीप्त हो जाता है। तथा साधक को उसकी समस्त शक्तियों की प्रतीति होने लगती है। मन्त्र शक्तियों का आगार माना जाता है तथा एक ही मन्त्र से अनेक प्रकार की सिद्धियां एवं फल प्राप्त हो जाते हैं।

11. **मन्त्र के सूतक**—मन्त्र में दो प्रकार के सूतक होते हैं—

1, जात सूतक एवं 2. मृत सूतक। इन दोनों अशौचों का मन्त्र किये बिना मन्त्रसिद्ध नहीं होता। अतः मन्त्रजप से पूर्व प्रणव से सम्पुटित मूलमन्त्र का जप के प्रारम्भ में तथा जप के अन्त में 108 बार या सात बार जप कर लेना चाहिए।

12. **मन्त्र के दोष**—हरि तत्त्व दीधिति में मन्त्र के आठ दोष बताए गये हैं—1. अभक्ति, 2. अक्षरभ्रान्ति, 3. लुप्त, 4. छिन्न, 5. ह्रस्व, 7. कथन एवं 8. स्वप्न कथन।

1. मन्त्र को अक्षरों का समूह समझना या दूसरे मन्त्र को अपने मन्त्र से श्रेष्ठ समझना अभक्ति दोष है।

2 गुरु या शिष्य के प्रमादवश मन्त्र के अक्षरों में उलटफेर हो जाना अक्षर भ्रान्ति है।

3. मन्त्र में किसी वर्ण की न्यूनता को लुप्तदोष कहते हैं।

4. मन्त्र में संयुक्त वर्णों में से किसी अंश का छूट जाना छिन्न-दोष है।

5. दीर्घ वर्ण के स्थान पर ह्रस्व वर्ण का उच्चारण ह्रस्व दोष है।

6. ह्रस्व वर्ण के स्थान पर दीर्घ वर्ण का उच्चारण दीर्घ दोष है।

7. जाग्रत अवस्था में अपना मन्त्र किसी को बतला देना कथन-दोष है।

8. स्वप्न में अपना मन्त्र बतला देना स्वप्न कथनदोष है।

दोष निवृत्ति के उपाय—मन्त्र सर्व शक्तिमान देवता का स्वरूप है, ऐसा अनुभव कर एक-एक मन्त्र के उच्चारण में परमानन्द का अनभव करते हुए मन्त्र का जप करने से मन्त्राधिष्ठातृदेव प्रसन्न हो जाते हैं, जिससे भक्ति का उदय होता है, भक्ति उदित होने से शीघ्र सिद्धि मिल जाती है।

अभक्ति दोष को दूर करने का उपाय—अक्षर भ्रान्ति-लुप्त-छिन्न, ह्रस्व, दीर्घ आदि दोषों की निवृत्ति के लिए मन्त्र को बार-बार पढ़ना चाहिए।

दीक्षा—यह सत्य है कि साधक, मन्त्र एवं देवता इन तीनों में मूलत: एक ही तत्त्व विद्यमान है, फिर भी किस साधक के हृदय में किस देवता एवं किस मन्त्र के आश्रय से वह स्फुरित करना है—यह दीक्षा का मुख्य कारण है।

गुरु की कृपा एवं शिष्य की श्रद्धा इन दो पवित्र भावनाओं का सङ्गम दीक्षा है। गुरु का आत्मदान एवं शिष्य का आत्मसमर्पण, एक की कृपा एवं दूसरे की श्रद्धा के अतिरेक से ही हो सकता है। दीक्षा एक दृष्टि से गुरु की ओर से आत्मदान, ज्ञानसंचार या शक्तिपात है, तो दूसरी दृष्टि से शिष्य की प्रसुप्त शक्तियों का उद्बोधन है। अत: सभी प्रकार के साधकों के लिए दीक्षा लेना अनिवार्य है। दीक्षा से शरीर की समस्त अशुद्धियों, मन की समस्त भ्रान्तियों और सिद्धि का मार्ग खुल जाता है।

सप्त अधिकार—जब गुरुदेव कृपापूर्वक अपने शिष्य को मन्त्रोपदेश करते हैं तो उसे दीक्षा कहते हैं। इसके बाद शिष्य को समझ कर जब गुरुदेव शिष्य को योग क्रिया सिखाना शुरू करते हैं। तो उसे **महादीक्षा**

कहते हैं। गुरु के बतलाए हुए लक्ष्य को ध्यान में रखकर साधक जिस साधना विधि से मन्त्रसिद्धि प्राप्त करता है, उसे **पुरश्चरण** कहते हैं, तथा विशेप प्रक्रिया, विशेष काल तथा पुरश्चरण के द्वारा किया जाने वाला पुरश्चरण ही **महापुरश्चरण** कहलाता है। पुरश्वरण के द्वारा सिद्धि मिल जाने पर जब साधक को साधना में उच्च अधिकार मिलता है तब गुरु शिष्य को साधना के रहस्यों को बतलाते हैं, जिससे साधक आनन्द के राज्य में प्रविष्ट होता है, इस क्रिया को **अभिषेक** कहते हैं। तत्पश्चात् अत्युन्नत संस्कार सम्पन्न शिष्य को जब गुरु अपने में मिला लेता है तो उसे महाभिपेक कहते हैं। आध्यात्मिक उन्नति के द्वारा साधक उच्चावस्था में जाकर नाम एवं रूप की एकता जानने पर अनेक सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। इस सर्वोत्तम अधिकार को **तद्भाव** कहते हैं। इसी भाव के द्वारा साधक इष्टदेव के साथ अपनी दृढ़ एकता स्थापित कर महाभाव प्राप्त कर लेता है, जो मन्त्र साधना का चरम लक्ष्य है।

पुरश्चरण एवं अनुष्ठान—मन्त्र प्राप्त करने के पश्चात् साधक के सिद्धि प्राप्त करने के लिए साधना मार्ग पर निरन्तर बढ़ने को पुरश्चरण कहते हैं। पुरश्चरण के द्वारा ही साधक को सिद्धि मिलती है।

दीपनी क्रिया केवल इतनी ही है कि मन्त्र का जप प्रारम्भ करने से पहले मन्त्र को प्रणव से सम्पुटित कर उसका सात बार जप करना।

पुरश्चरण द्वारा मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर उस मन्त्र के द्वारा विविध कामनाओं की पूर्ति हेतु किये जाने वाले प्रयोगों को अनुष्ठान कहते हैं। कामना पूर्ति के लिए अनुष्ठान भी उतना ही अनिवार्य है जितना सिद्धि के पुरश्चरण।

पुरश्चरण का स्थान—योगिनी हृदय में लिखा है कि सिद्ध-पीठ, पुण्य क्षेत्र, नदी, तट, गुफा, पर्वत शिखर, तीर्थ, सङ्म, पवित्र-वन, एकान्त उद्यान, विल्व वृक्ष, पर्वत की तराई, सरोवर, तुलसी कानन, गोशाला, देवालय, पीपल या आंवले के वृक्ष के नीचे या अपने घर में अनुष्ठान करना चाहिए।

पुरश्चरण स्थान वही श्रेष्ठ है जहां बैठ कर चित्त की ग्लानि मिटे,

तथा मन की एकाग्रता एवं प्रसन्नता बढ़े।

पवित्र भोजन—पुरश्चरण और अनुष्ठान के समय साधक को पवित्र भोजन करना चाहिए, क्योंकि भोजन के रस से ही शरीर-प्राण एवं मन का निर्माण होता है। अशुद्ध भोजन से शरीर में रोग, प्राणों को क्षोभ तथा मन में विकार उत्पन्न होते हैं। विकृत मन से मन्त्र साधना नहीं की जा सकती।

भोजन के दोष—मुख्यत: भोजन के तीन दोष माने गये हैं—

1. आश्रय दोष, 2. निमित्त दोष, 3. जाति दोष।

1. **जाति दोष**—स्वभाव से ही भोज्य पदार्थ में रहने वाला दोष जाति दोष कहलाता है। प्याज, लहसुन, मांस, मछली, अण्डा आदि ये जाति दोष हैं।

2. **आश्रय दोष**—पवित्र वस्तुएं भी जब निकृष्ट व्यक्ति या स्थान का आश्रय ले लेती हैं, तो आश्रय दोष होता है।

3. **निमित्त दोष**—पवित्र स्थान पर रखी हुई पवित्र वस्तुएं भी कभी कभी निमित्त दोष से दूषित हो जाती हैं। जैसे देव मन्दिर में पड़े हुए भक्ष्य पदार्थ को कुत्ता, बिल्ली आदि स्पर्श कर जाए।

पुरश्चरण के अन्य नियम—पुरश्चरण में मन में कुटिलता, उद्विग्न नहीं होना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत का दृढ़ता से पालन करना चाहिए। बिना संकल्प के कर्म नहीं करना चाहिए। अपने मन में क्रोध, अहंकार, लोभ, मोह, हिंसा के बारे में कभी भी विचार नहीं करना चाहिए।

जितनी संख्या में जप करना हो—वह नियमित हो, समय की पाबन्दी हो। आसन की शुद्धि हो। भूमि शयन करे, गुरु सेवा, त्रिकाल स्नान, पापकर्म का त्याग, मौन भाव रखे।

मन्त्रसिद्धि के उपाय—यदि विधिवत् मन्त्र का पुरश्चरण करने पर भी सिद्धि न मिले तो पुन: पुरश्चरण करना चाहिए। प्राय: जन्मान्तर से अर्जित पाप सिद्धि में बाधक हो जाते हैं।

मन्त्र सिद्धि के लक्षण—प्रारम्भ में साधक को मन, मन्त्र और देवता की, अथवा ध्याता, ध्यान एवं ध्येय की पृथक्-पृथक् प्रतीति होती है।

परन्तु पुरश्चरण के द्वारा इस त्रिपुटी का नाश हो जाने पर इन तीनों में केवल इस देव का रूप ही दिखाई देता है। इस स्थिति में साधक, साधन एवं साध्य में कोई भेद ही नहीं रह जाता। इस स्थिति के प्राप्त होने पर साधक रोमाञ्चित एवं स्तब्ध हो जाता है तथा उसके नेत्रों से प्रेमाश्रु बहने लग जाते हैं। मन और मन्त्र के देव में विलीन हो जाने से साधक समाधिस्थ हो जाता है और ऐसे साधक को महाभाव की उपलब्धि होती है। जो मन्त्र साधना का चरम फल है।

मन्त्र प्रयोग विधि:

1. गायत्रीमन्त्र पुरश्चरणम्

विनियोग:—ओं तत्सवितुरिति गायत्र्या विश्वा मित्र ऋषि: सविता देवता गायत्री छन्द: जपे विनियोग: ।

अंगन्यास:—ओं विश्वामित्राय ऋषये नम: शिरसि ।
ओं गायत्री छन्दसे नम: मुखे ।
ओं सवितृ देवतायै नम: हृदि ।

करन्यास:—ओं तत्सवितुरिति अंगुष्ठाभ्यां नम: ।
ओं वरेण्यं तर्जनीभ्यां नम: ।
ओं भर्गोदेवस्य मध्यमाभ्यां नम: ।
ओं धीमहि अनामिकाभ्यां नम: ।
ओं धियो योन: कनिष्ठिकाभ्यां नम: ।
ओं प्रचोदयात् करतलकर पृष्ठाभ्यां नम: ।

षडङ्गन्यास:—ओं तत्सवितु: हृदयाय नम: ।
ओं वरेण्यं शिरसे स्वाहा ।
ओं भर्गोदेवस्य शिखायै वषट् ।
ओं धीमहि कवचाय हुम् ।
ओं धियो यो न: नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ओं प्रचोदयात् अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्:—मुक्ता विद्रुम हेम नील धवलच्छायै: मुखैस्त्र्यक्षणै:,
युक्तामिन्दुनिवद्धरत्न मुकुटां तत्त्वार्थ वर्णात्मिकाम् ।
गायत्रीं वरदांभयांकुश कशां शूलं कपालं गुणम् ।
शंखं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

ध्यान करने के पश्चात् माला का पूजन करे—

पीपल के पत्ते पर माला को स्थापित करके—

ओं ह्रीं अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं एं ऐं ओं औं अं अ: कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं वं भं मं यं रं लं वं

शं षं सं हं लं क्षं—इन पचास मातृका अक्षरों का स्थापन कर—ओं सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमो नमः। भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥

इस मन्त्र से पंचगव्यद्वारा माला का प्रक्षालन कर पुनः शुद्ध जल से प्रक्षालन करे।

ओं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

इस मन्त्र से चन्दन-कस्तूरी आदि से माला का लेपन करे।

ओं वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो वलविकरणाय नमः।

इस से पुष्प चढाए

ओं ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिः ब्रह्म शिवो मे अस्तु सदाशिवोम्।

इससे प्रत्येक मनके का पूजन करे—

ओं अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्व शर्वेभ्यः नमस्ते अस्तु रुद्र रूपेभ्यः।

इस मन्त्र से माला के मेरु का पूजन करे।

ओं महामाये महामाले सर्वशक्ति स्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तः तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥

इस मन्त्र से प्रार्थना करे—

ओं अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

मन्त्रः—ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात्।

इस मन्त्र को पढ़ कर माला को ग्रहण करे।

इस प्रकार सविता का ध्यान करता हुआ हृदय के समीप माला को रख कर मध्याह्न तक जप करना चाहिए। जप की समाप्ति पर—

ओं त्वं माले सर्व देवानां प्रीतिदा शुभदा भव।

शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च सर्वदा ।।

इस से माला को शिर पर रखकर मस्तक नवाए । प्राणायाम करके न्यासत्रय कर जप को ईश्वरार्पण कर देना चाहिए ।

प्रतिदिन समान संख्या में जप करना चाहिए । न अधिक करे न कम करे । अभीष्ट जप की पूर्ति पर दशांश हवन करना चाहिए ।

हवन के दिन गणेश-ओंकार-मातृका-नवग्रह आदि का पूजन कर-कुशकण्डिका कर हवन की विधि को करे ।

आक (अर्क) की समिधा में आहुति डालनी चाहिए । यदि इतनी आक की लकड़ी न मिल सके तो पलाश की समिधा में ही हवन करना ।

तिल-जौ-चावल-शक्कर-पांचमेवा-घृत-वालछड़ पीली सरसों से आहुति दे । यदि 24000 जप होता है—तो दशांश 2400 आहुति डालनी होगी । होम का दशांश 240 तर्पण करना चाहिए । तर्पण का दशांश 24 का मार्जन करना चाहिए । मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन होना चाहिएं । ऐसी ही शास्त्र विहित विधि है ।

कार्य की समाप्ति पर समस्त कार्य ईश्वरार्पण करना चाहिए ।

यदि सकाम काम करना है—तब जप से पूर्व संकल्प करना चाहिए । यदि ,स्वयं न कर सकता हो तो योग्य ब्राह्मणों द्वारा करवाएं—उन को आवरणी दें उनका पूजन करे—

संकल्प—देशकालौसंकीर्त्य ओं अमुक गोत्रोऽमुक शर्माहं अमुक शर्मणः यजमानस्य सकलपापक्षय द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं गायत्रीपुरश्चरणान्तर्गत-अमुक संख्या परिमितं गायत्री जपं करिष्ये ।' इति प्रात्याहिकं जपं संकल्पयेत ।

विष्णु शयन मासेषु पुरश्चरणं न कार्यम् । तीर्थादौ शीघ्रं सिद्धिः । विल्ववृक्षाश्रयेण जपे एकाहात् सिद्धिः ।

इति गायत्री पुरश्चरण प्रयोगः

अथ गायत्री शापविमोचनम्

विनियोग:—अस्य श्री ब्रह्मशाप विमोचन मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि: भुक्ति-मुक्ति-प्रदा ब्रह्मशाप विमोचनी गायत्री शक्ति देवता गायत्री छन्द: ब्रह्मशाप-विमोचने विनियोग: ।

ओं गायत्रीं ब्रह्मेत्युपासीत यद्रूपं ब्रह्मविदो विदु: । तां पश्यन्ति धीरा: सुमनसा वाचामग्रत: ।

ओं वेदान्त नाथाय विद्महे हिरण्यगर्भाय धीमहि । तन्नो ब्रह्म प्रचोदयात् । ओं देवी गायत्री त्वं ब्रह्म शापाद्विमुक्ता भव ।।1।।

विनियोग:—अस्य श्री वसिष्ठ शापविमोचन मन्त्रस्य निग्रहानुग्रह कर्ता वसिष्ठ ऋषि: वसिष्ठानुगृहीता गायत्री शक्ति देवता विश्वोद्भवा गायत्री छन्द: वसिष्ठ शाप विमोचनार्थे जपे विनियोग: ।।

ओं सोऽहमर्कमयं ज्योतिरहं शिव: आत्मज्योतिरहं शुक्र: सर्वं ज्योतिरसोऽस्म्यहम् । इत्युक्त्वा योनिमुद्रां प्रदर्श्य गायत्री त्रयं पठित्वा । ओं देवी गायत्री त्वं वसिष्ठ शापाद्विमुक्ता भव ।।2।।

विनियोग:—ओं अस्य श्री विश्वामित्र शाप विमोचन मन्त्रस्य न्यूतन सृष्टिकर्ता विश्वामित्र ऋषि:, विश्वामित्रानुगृहीता गायत्री शक्तिर्देवता वाग्देहा गायत्री छन्द: विश्वामित्र शापविमोचनार्थे जपे विनियोग: ।

ओं गायत्रीं भजाम्यग्निमुखीं विश्वगर्भां यदुद्भवाम् । देवाश्चक्रिरे विश्वसृष्टिं तां कल्याणीमिष्टकरीं प्रपद्ये यन्मुखान्निस्सृतोऽखिलवेदगर्भ: । शापयुक्ता तु गायत्री सफला न कदाचन । शापादुत्तारिता सा तु भुक्ति-मुक्तिफलप्रदा ।

प्रार्थना—अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोनिर्नमोऽस्तुते । ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव । वसिष्ठ शापाद्विमुक्ता भव । विश्वामित्र शापाद्विमुक्ता भव ।

गायत्री कवचम्

विनियोग:—अस्य श्री गायत्री कवचस्य ब्रह्माविष्णु रुद्रा: ऋषय: ऋग्यजु: सामाथर्वाणि छन्दांसि पर-ब्रह्म स्वरूपिणी गायत्री देवता भू: वीजं, भुव: शक्ति: स्व: कीलकं गायत्री प्रीत्यर्थे जपे विनियोग: ।

वर्णास्त्रां कुडिकाहस्तां शुद्ध निर्मल ज्योतिपीम् । सर्व देवी मयीं वन्दे गायत्रीं वर्णास्त्रां वेद मातरम् ।

ध्यानम्—मुक्ताविद्रुम हेमनील धवलच्छायै र्मुखैस्त्र्यक्षणैः । युक्तामिन्दु निबद्धरत्न मुकुटां तत्त्वार्थ वर्णात्मिकाम् । गायत्रीं वरदाभयांकुशकशां शूलं कपालं गुणं शंखं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे ॥

गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे ।
ब्रह्मविद्या च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती ॥1॥
पावकी मे दिशं रक्षेत्पावकोज्ज्वल शालिनी ।
यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधान गणार्दिनीम् ॥2॥
पावमानीं दिशं रक्षेत् पवमान विलासिनी ।
दिशं रौद्रीमवतु मे रुद्राणी रुद्ररूपिणी ॥3॥
ऊर्ध्वंब्रह्माणी रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ।
एवं दशदिशो रक्षेत् सर्वतोभुवनेश्वरी ॥4॥
ब्रह्मास्त्रस्मरणादेव वाचां सिद्धिः प्रजायते ॥
ब्रह्मदण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रास्त्रभक्षकः ॥5॥
ब्रह्म शीर्षस्तथापातु शत्रूणां वधकारकः ।
सप्तव्याहृतयः पान्तु सस्वरा विन्दुसंयुताः ॥6॥
वेदमाता च मां पातु सरहस्याः सदेवता ।
देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षर देवता ॥7॥
चतुष्षष्टिकलाविद्या दिव्याद्याः पातु देवता ।
वीजशक्तिश्च मे पातु पातु बिक्रम देवता ॥8॥
तत्पदं पातु मे पादौ जङ्घे मे सवितुः पदम् ।

वरेण्यं कटि देशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च ।।9।।
देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा ।
धियो मे पातु जिह्वायां यः पदं पातु लोचने ।।10।।
ललाटे न पदं पातु मूर्धानं मे प्रचोदयात् ।
तद्वर्णः पातु मूर्धानं सकारः पातु भालकम् ।।11।।
चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तु कारकः ।
णिकारस्त्वधरोष्ठे च यकारस्तूत्तरोष्ठके ।।
आस्यमध्ये मकारस्तु गोकारस्तु कपोलयोः ।।13।।
देकारस्तु कण्ठ देशे च वकारः स्कन्धदेशयोः ।
स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो वामहस्तके ।।14।।
मकारो हृदयं रक्षेद् हितकारो जठरं तथा ।
धिकारो नाभि देशं तु योकारस्तु कटि द्वयम् ।।15।।
गुह्यं रक्षतु योकारः उरू मे नः पदाक्षरम् ।
प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जङ्देशयोः ।।16।।
दकारो गुल्फ देशं तु यात्कारः पाद युग्मकम् ।
जातवेदेति गायत्री त्र्यम्बकेति शताक्षरा ।।17।।
सर्वतः सर्वदापातु आपो ज्योतिरिति षोडशी ।
इदं तु कवचं दिव्यं बाधाशत विनाशनम् । ।।18।।
चतुष्षष्टिकला विद्या सकलैश्वर्यं सिद्धिदम् ।
जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत् ।।19।।
स्त्री गोब्राह्मणमित्रादि द्रोहाद्यखिलपातकैः ।
मुच्यते सर्व पापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति ।।20।।

भूर्जपत्रे लिखित्वैतत्स्वकण्ठे धारयेद्यदि ॥
शिखायां दक्षिणे वाहौ नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥
इति विश्वामित्र कल्पोक्तं गायत्रीकवचम् ।

नोट—गायत्री जप के समय की जाने वाली मुद्राओं आदि के लिए हमारी प्रकाशित वेदोक्त-नित्य कर्म पद्धति एवं देव पूजा पद्धति देखें।

————

2. शुक्रोपासितमृतसञ्जीवनीमन्त्रः (तन्त्रसारे)

उों तत्सवितुर्वरेण्यं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि-वर्द्धनं भर्गो देवस्य धीमहि उर्वारुकमिव बन्धनात् धियो योनः प्रचोदयात् मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥उों॥

इस मन्त्र के जाप से शारीरिक कष्ट की निवृत्ति होती है।

शतक्षरा गायत्री मन्त्रः

उों तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् । उों जातवेदसे सुनवामसोममारातीयतो निदहातिवेदः । स न पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेवसिन्धुः दुरितात्यग्निः ।उों त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥

द्वितीय प्रकार—उों तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् । उों त्र्यम्बकं यजामहे

सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् । ओं जातवेदसे सुनवाम सोममारातीयतो निदहाति वेदः । सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धु दुरितात्यग्निः ॥

आत्मा की शुद्धि के लिए, शरीरकष्ट के लिए, ग्रह दोष की निवृत्ति के लिए अपूर्व फलदायी मन्त्र है ।

3. महामृत्युञ्जय जप विधिः

आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य—ओं मम आत्मनः श्रुति-स्मृति पुराणोक्तफल प्राप्त्यर्थं (अमुक यजमानस्य वा) शरीरेऽमुकपीडा निरसन द्वारा सद्यः आरोग्य प्राप्त्यर्थं श्रीमहामृत्युञ्जय देवता प्रीतये अमुकसंख्या परिमितं श्री महामृत्युञ्जय मन्त्र जपमहं करिष्ये । इति संकल्प्य शिव पूजां कृत्वा जपं कुर्यात् ।

ऋष्यादिन्यासः—ओं अस्य श्रीमहामृत्युञ्जय मन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिः श्रीमहामृत्युञ्जय रुद्रो देवता अनुष्टुप् छन्दः हौं बीजं जूं शक्तिः सः कीलकं मृत्युञ्जय प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ।।

ओं वसिष्ठ ऋषये नमः शिरसि ।
ओं अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे ।
ओं श्री महामृत्युञ्जयदेवतायै नमः हृदये ।
ओं हौं बीजाय नमः गुह्ये ।
ओं जूं शक्तये नमः पादयोः ।
ओं सः कीलकाय नमः सर्वाङ्गेषु ।।
कराङ्गन्यासः—ओं त्र्यम्बकं अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं यजामहे तर्जनीभ्यां नमः ।
ओं सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनं मध्यमाभ्यां नमः ।
ओं उर्वारुकमिवबन्धनात् अनामिकाभ्यां नमः ।
ओं मृत्योर्मुक्षीय कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ओं मामृतात् करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः ।
एवं हृदयादिन्यासः—ओं त्र्यम्बकं हृदयाय नमः ।
ओं यजामहे शिरसे स्वाहा ।
ओं सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनं शिखायै वौषट् ।
ओं उर्वारुकमिवबन्धनात् कवचाय हुम् ।
ओं मृत्योर्मुक्षीय नेत्रत्रयाय वषट् ।
ओं मामृतात् अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्

चन्द्रोद्भासितमूर्धजं सुरपतिं पीयूष पात्रं महद्, हस्ताब्जेन दधत्सु दिव्यममलं हास्यास्य पङ्केरुहम् । सूर्येन्द्वग्निविलोचनं करतलः पाशाक्षसूत्रां-कुशां, भोजं बिभ्रतमक्षयं पशुपतिं मृत्युञ्जयं तं स्मरे ।।1।।

हस्ताभ्यां कलशद्वयामृतरसैराप्लावयन्तं शिरो, द्वाभ्यां तौ दधतं मृगाक्षवलये, द्वाभ्यां वहन्तं परम् । अङ्क न्यस्त करद्वयममृतघटं कैलास कान्तंशिवं स्वच्छांभोज गतं नवेन्दुमुकटं देवं त्रिनेत्रं भजे ।।2।।

ओं लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि। ओं हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। ओं यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि। ओं रं तेजो रूपं दीपं समर्पयामि। ओं वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि। ओं सं सर्वात्मकं मन्त्र-पुष्पं समर्पयामि।

मन्त्रः—ओं हौं जूं सः ओं भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धना-न्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् स्वः भुवः भूः ओं सः जूं हौं ओं ।। इति पञ्चाशद् वर्णात्मको मन्त्रः मन्त्रमहोदधौ ।।

जपान्ते उत्तरन्यासं कृत्वा—

गुह्याति गुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ।।
मृत्युञ्जय महादेव त्राहि मां शरणागतम्।
जन्म मृत्यु जरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ।।

इति प्रार्थ्य—अनेन महामृत्युञ्जय जपाख्येन कर्मणा श्रीमहा-मृत्युञ्जय प्रीयताम् ।।

त्र्यक्षर मन्त्रः—ओं हौं जूं सः ।।

शिवमन्त्र—ओं हौं ओं जूं सः ओं नमः शिवाय ओं प्रपन्न पारि-जाताय स्वाहा ।।

(शरीर रक्षा के लिए यह मन्त्र बहुत प्रभावशाली है।)

महामृत्युंजय-जपविधिः

(मन्त्रमहोदधौ)

विनियोगः—ओं अस्य श्रीमहामृत्युञ्जय मन्त्रस्य वामदेव कहोलव-सिष्ठा ऋषयः पंक्तिगायत्री अनुष्टुप् छन्दांसि सदाशिव महामृत्युंजयरुद्रो-देवता ह्रीं शक्तिः श्रीं वीजं ममाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यासः—वामदेव कहोल वसिष्ठाः ऋषयः मूर्ध्नि ।

पंक्तिगायत्र्यनुष्टुप् छन्दांसि वक्त्रे ।
सदाशिवमहामृत्युंजयरुद्रदेवतायै नमः हृदि ।
ह्रीं शक्त्यै नमः लिंगे ।
श्रीं वीजाय नमः पादयोः ॥

ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं ओं नमोभगवते रुद्राय शूलपाणये स्वाहा हृदि ।

ओं यजामहे अमृतमूर्तये मां जीवय-शिरसि ।
ओं सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनं ओं चन्द्र शिरसे जटिने स्वाहा शिखायै ।
ओं उर्वारुकमिव वन्धनात् ओं त्रिपुरान्तकाय ह्रां ह्रीं कवचाय ।

ओं ह्रौं मृत्योर्मुक्षीय ओं नमो त्रिलोचनाय ऋग्यजुः साम मन्त्राय नेत्र त्रयाय ।

ओं ह्रौं मामृतात् ओं नमो भगवते अग्नित्रयाय ज्वल मां रक्षरक्ष ओं अघोरास्त्राय अस्त्राय ।

अथ-शिवस्य न्यासः—

ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यं नमः पूर्वमुखे ॥1॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः वं नमः पश्चिम मुखे ॥2॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः कं नमः दक्षिण मुखे ॥3॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः यं नमः उत्तर मुखे ॥4॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः जां नमः उरसि ॥5॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः मं नमः कण्ठे ॥6॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः हें नमः मुखे ॥7॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः सु नमः नाभौ ॥8॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः गं नमः हृदि ॥9॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्व धिं नमः पृष्ठे ॥10॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः पुं नमः कुक्षौ ॥11॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः ष्टिं नमः लिंगें ॥12॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः वं नमः गुदे ॥3॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः र्धं नमः दक्षिणोरुमूले ॥14॥
ओं ह्रौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः नं नमः वामोरुमूले ॥15॥

ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः उं नमः दक्षिणोरुमध्ये ॥16॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः वां नमः वामोरुमध्ये ॥17॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः रुं नमः दक्षिणजानुनि ॥18॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः कं नमः वामजानुनि ॥19॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः मिं नमः दक्षिणजानुवृत्ते ॥20॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः वं नमः वामजानुवृत्ते ॥21॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः वं नमः दक्षिणस्तने ॥22॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः धं नमः वामस्तने ॥23॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुव; स्वः नां नमः दक्षिणपार्श्वे ॥24॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः मृं नमः वामपार्श्वे ॥25॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः त्यों नमः दक्षिणपादे ॥26॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः मुं नमः वामपादे ॥27॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः क्षीं नमः दक्षिणकरे ॥28॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः यं नमः वामकरे ॥29॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः मां नमः दक्षिणनासायाम् ॥30॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः मृं नमः वामनासायाम् ॥31॥
ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः तां नमः मूर्घ्नि ॥32॥

ध्यानम्—हस्ताम्भोज युगस्थ कुंभयुगलादुधृत्यतोयं शिरः सिंचन्तं करयोर्युगेन दधते स्वांके सकुंभौ करौ । अक्षस्रक् सृगहस्तमंबुजगतं मूर्धस्थ चन्द्रंस्रवत् पीयूषोन्नत तनुं भजे सगिरिजं मृत्युंजयं अम्बकम् ॥

मन्त्र—ओं हौं ओं जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्धनम् ॥ उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् भूर्भुवः स्वरोंजूं सः हौं ओं ॥इति पंचाशदर्णः॥

4. वैरीविनाशन दुर्गामंत्र

ओं "सर्वावाधा" इत्यस्य मन्त्रस्य भगवान् वेद व्यास ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः शुम्भासुरविध्वंसिनी दुर्गा देवता रिपुनाशार्थे जपे विनियोगः ॥

अंगन्यासः—ओं सर्वा इत्यंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं वाधा प्रशमनं इति तर्जनीभ्यां स्वाहा ।

दुर्गापूजन यन्त्र

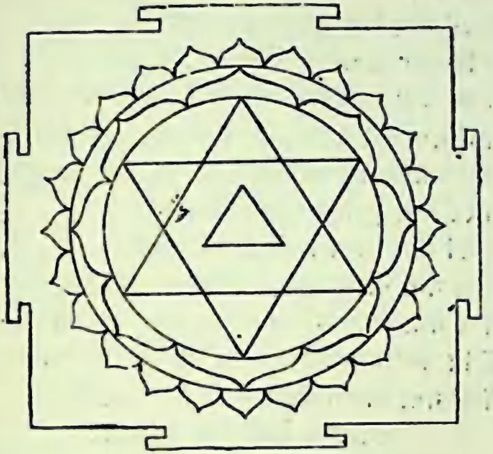

ओं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरी मध्यमाभ्यां वषट् ।
ओं एवमेव इति अनामिकाभ्यां हुम् ।
ओं त्वया कार्यम् इति कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् ।
ओं अस्मद् वैरीविनाशनम् इति करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

हृदयादिन्यास:—ओं सर्वा हृदयाय नम: ।
ओं वाधाप्रशमनं शिरसे स्वाहा ।
ओं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरी शिखायै वषट् ।
ओं एवमेव कवचाय हुम् ।
ओं त्वया कार्यम् नेत्र त्रयाय वौषट् ।
ओं अस्मद्वैरीविनाशनम्—अस्त्रायफट् ॥

ओं सं नम: मूर्ध्नि । ओं वां नम: ललाटे ।
ओं वां रक्ष कर्णे । ओं धां वामकर्णे
ओं प्रं नम: दक्षनासायाम् । ओं शं नम: वामनासायाम् ।
ओं मं नम: उत्तरोष्ठे । ओं नं नम: अधरोष्ठे ।

ॐ त्रैं नमः ऊर्ध्वदन्त पंक्तौ । ॐ लों नमः अधोदन्त पंक्तौ ।
ॐ क्यं नमः जिह्वायाम् । ॐ स्यं नमः कण्ठे ।
ॐ खिं नमः दक्षांसे । ॐ लें नमः वामांसे ।
ॐ श्वं नमः दक्षमणिवन्धे । ॐ रिं नमः वाम मणिवन्धे ।
ॐ एं नमः दक्ष करतले । ॐ वं नमः वाम करतले ।
ॐ मे नमः दक्ष करपल्लवे । ॐ तत् नमः वामकरपल्लवे ।
ॐ त्वं नमः हृदये । ॐ यां नमः जठरे ।
ॐ कां नमः नाभौ । ॐ र्यं नमः गुह्ये ।
ॐ अं नमः दक्षोरू मूले । ॐ स्मत वामोरुमूले ।
ॐ वैं नमः दक्षजानुनि । ॐ रिं नमः वाम जानुनि ।
ॐ वि नमः दक्षवामजंघयोः । ॐ नां नमः दक्षपादांगुलिषु ।
ॐ शं नमः वामपादांगुलिषु । ॐ नं नमः पादयोः ।

समस्त मन्त्रेण व्यापकं सर्वांगे ।

ध्यानम्—पाणि ग्रन्थनमीलितान् रिपुगणान्निघ्नन्त्यभीक्ष्णं मुहुर्विघ्न-
विध्वंसनकारिणी निजपद प्राप्तानवन्ती जनान् ।
भक्तत्राणपरायणा भयकरी विद्वेषिणां सर्वतो
भूयान्मे भवभूतले भगवती दुर्गारि गर्वापहा ॥

मन्त्रः—ॐ सर्वाबाधा प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद् वैरीविनाशनम् ॥

मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए । कालीमिर्च, गुग्गल-घी से दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन ॥ विधिवत् यन्त्र पूजन करके तभी जप करना चाहिए ।

दुर्गा नवसार्ध विधिः

नवसार्ध जपेद्यस्तु मुच्येत् प्राणान्तकाद् भयात् ।
राज्यं श्री सर्वसंपत्तिः सर्वान् कामान् वाप्नुयात् ॥
मधुकैटभनाशं च महिषासुरघातनम् ।
शक्रादि स्तुतिरेवातो देवीसूक्तं पुनस्तथा ।

नारायणी स्तुतिश्चैव फलानुकीर्तनं तथा ।
ततो वरप्रदानं च ह्यर्धपाठोऽयमुच्यते ।
अर्ध पाठस्त्वयं प्रोक्तः सर्वकामफलप्रदः ।
अर्धपाठेन रहितं नवपाठफलं नहि ।

अत्रार्धपाठे पञ्चमाध्याये देवा ऊचुः नमोदेव्यै इत्यारभ्य ऋषिरुवाच इतिपर्यन्तं इति ।

ब्राह्मणास्त्वत्रैकादश । तेषु नव ब्राह्मणाः पूर्णत्रयोदशाध्याय पाठकर्त्तारः, एकोऽर्धपाठकर्ता । एको यजुर्वेदीय षडङ्गाध्याय पाठकः ।

देशकालौ संकीर्त्य अमुकगोत्रोऽमुक शर्माहं राजतो व्यवहारतो वा प्रतिष्ठा श्री वृद्धिकामः सकुटुम्बस्यात्मनो शरीरारोग्य कामश्च एकादशब्राह्मणद्वारा यजुर्वेदीय वाजसनेयी संहितान्तर्गतैक षडङ्गपाठसहितं मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत चण्डी चरित्रस्य श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती दैवतकस्य सार्धनव रूप पुरश्चरणं कारयिष्ये ।

कलशं स्थाप्य तत्र भवानीशंकरौ स्थाप्य षोडशोपचारैः संपूज्य पुस्तकं पूजयेत ।

दुर्गा सप्तशती के विधान में नवसार्ध के पाठ का अत्यधिक महत्त्व है। दुर्गा सप्तशती के षडङ्ग नौ पाठ, तथा षडङ्ग आधा पाठ जैसा कि लिखा गया है तदनुसार किया जाए। इस विधान में शिव पूजन एवं रुद्रीपाठ, "ॐ नमः शिवायः" मन्त्र का जाप होना आवश्यक है ।

5. त्रैलोक्य मोहिनी गौरी मन्त्र

विनियोगः—ॐ अस्य श्री त्रैलोक्य मोहनी गौरी मन्त्रस्य अज ऋषिः निचृद् गायत्री छन्दः, गौरीत्रैलोक्य मोहिनी देवता ह्रीं बीजं स्वाहा शक्तिः ममाखिलकाम सिद्धये जपे विनियोगः ॥

षडङ्गन्यासः—ॐ ह्रां ह्रीं नमो ब्रह्म श्रीराजिते राजपूजिते हृदयाय नमः ।

ॐ ह्रीं जयविजये गौरिगान्धारि शिरसे स्वाहा ।
ॐ ह्रूं त्रिभुवन वशंकरि शिखायै वषट् ।
ॐ ह्रैं सर्वलोकवशंकरि कवचाय हुम् ।

ओं ह्लौं सर्व स्त्री पुरुष वशंकरि नेत्र त्रयाय वौषट ।

ओं ह्लः सु सु दु दु घे घे वा वा ह्लीं स्वाहा अस्त्राय फट् ॥

इस के मूल मन्त्र से सात वार व्यापक न्यास करना चाहिए ।

ध्यानम्—गीर्वाण संघार्चितपाद पंकजारुण प्रभा वाल शशांक शेखरा ।
रक्ताम्वरालेपन पुष्पयुङ्मुदे सृणि सपाशं दधती शिवास्तु नः ॥

जपसंख्या—इस मन्त्र का दस हज़ार जप करना चाहिए ।
घीमिश्रित खीर से एक हज़ार आहुती दें ।

तथा पीठ पर गौरी का पूजन करना चाहिए ।

मन्त्र—ओं ह्रीं नमो ब्रह्मा श्री राजिते जय विजये गौरि गान्धारि त्रिभुवन वशंकरी सर्वलोकवशंकरी सर्वस्त्रीपुरुष वशंकरि सु सु दु दु घे घे वा वा ह्रीं स्वाहा ॥

6. श्री कार्तवीर्यार्जुन मन्त्र—1

विनियोगः—ओं अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुन मन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः ओं वीजं नमः शक्तिः ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ॥

कार्तवीर्यपूजनयन्त्र

हृदयादि न्यास:—ॐ आं फ्रों व्रीं हृदयाय नमः । ॐ ईं क्लीं भ्रूं शिरसे स्वाहा । ॐ हूं शिखायै वषट् । ॐ क्रैं श्रैं कवचाय हुम् । ॐ हुंफट् अस्त्राय फट् ॥

वर्णन्यास:—ॐ फ्रों ॐ हृदये । ॐ व्रीं ॐ जठरे । ॐ क्लीं ॐ नाभौ । ॐ भ्रूं ॐ जठरे । ॐ आं ॐ गुह्ये । ॐ ह्रीं ॐ दक्षपादे । ॐ क्रौं ॐ वामपादे । ॐ श्रीं ॐ ऊर्वोः । ॐ हुं ॐ जानुनोः । ॐ फट् ॐ जंघयोः । ॐ कां मस्तके । ॐ तं ललाटे । ॐ वीं भ्रुवोः । ॐ यां कर्णयोः । ॐ जुं नेत्रयोः । ॐ नां नासिकायाम् । ॐ यं मुखे । ॐ नं गले । ॐ मः स्कन्धे ।

ध्यानम्—उद्यत् सूर्य सहस्र कान्तिरखिल क्षोणी धवैः वन्दितौ ।
हस्तानां शतपंचकेन च दधच्चापानिषूंस्तावता ॥
कण्ठे हाटकमालया परिवृतश्चक्रावतारोहरेः ।
पायात् स्यन्दन गोरुणाभ वसनः श्री कार्तवीर्यो नृपः ।

मन्त्रः—ॐ फ्रों व्रीं क्लीं भ्रूं आं ह्रीं क्रों श्रीं हुम् फट् कार्तवीर्यार्जुनाय नमः ॥

जपसंख्या—हवन-पूजन=इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए । चावल की खीर में तिल मिलाकर दशांश हवन करना चाहिए । तथा वैष्णवी पीठ पर इसका पूजन करना चाहिए ।

कार्तवीर्य का ध्यान करके मानसोपचार से यन्त्र का पूजन कर अर्घ विधिवत् स्थापन कर सामान्य पूजा पद्धति के अनुसार पीठ पूजन करे ।

ओं आधार शक्तये नमः । ॐ प्रकृतये नमः । ॐ कूर्माय नमः । ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः । ॐ शेषाय नमः । ॐ पृथिव्यै नमः । ॐ क्षीर समुद्राय नमः । ॐ श्वेत द्वीपाय नमः । ॐ मणिमण्डपाय नमः । ॐ कल्प-वृक्षाय नमः । ॐ मणिवेदकाय नमः । ॐ रत्नसिंहासनाय नमः ।

इसके बाद आठ दिशाओं में तथा मध्य में वैष्णवी पीठ की शक्तियों का पूजन करे ।

ॐ विमलायै नमः पूर्वे । ॐ उत्कर्षिण्यै नमः आग्नेये ।

ॐ ज्ञानायै नमः दक्षिणे । ॐ शिवायै नमः नैर्ऋत्ये ।

ओं भोगायै नम: पश्चिमे । ओं प्राज्ञ्यै नम: वायव्ये ।
ओं सत्यायै नम: उत्तरे । ओं ईशानायै नम: ऐशान्ये ।
ओं अनुग्रहायै नम: मध्ये ।

इससे आवरण पूजा करे

7. कार्तवीर्य स्तोत्रम्

ओं कार्तवीर्य: खलद्वेषी कृतवीर्य सुतो वली ।
सहस्रवाहु शत्रुघ्नो रक्तवासो धनुर्धर: ॥1॥
रक्त गन्धो रक्तमाल्यो राजा स्मतु ॅरभीष्टद: ।
द्वादशैतानि नामानि कार्तवीर्यस्य य: पठेत ॥2॥
सम्पदस्तस्य जायन्ते जना: सर्वे वशंगता: ।
राजानो दासतां यान्ति रिपवो वश्यतां गता: ॥3॥
आनत्याशु दूरस्थं क्षेमलाभयुत प्रियम् ।
सर्वसिद्धिप्रदं स्तोत्रं जप्तृणां सर्वकामदम् ॥4॥
कार्तवीर्य महावीर्य सर्वशत्रु विनाशन ।
सर्वत्र सर्वदा तिष्ठ दुष्टान् नाशाय पाहि माम् ॥5॥
उत्तिष्ठ दुष्ट दमन सप्तद्वीपैक पालक ।
त्वामेव शरणं प्राप्तं सर्वतो रक्ष रक्ष माम् ॥6॥
दुष्टघ्न किं त्वं स्वपिषि किं तिष्ठसि किं चिरायसि ।
पाहि न: सर्वदा सर्वभयेभ्य: स्वसुतानिव ॥7॥
मतिभंग: स्वरो हीन: शत्रूणां मुखभंजनम् ।
रिपूणां च सदैवास्तु सभायां मे जयं कुरु ॥8॥
यस्य स्मरण मात्रेण सर्व दु:ख क्षयो भवेत ।
तं नमामि महावीरमर्जुनं कृतवीर्यजम् ॥9॥
हैहयाधिपते: स्तोत्रं सहस्रावृत्तिकं कृतम् ।
वाञ्छितार्थप्रदं नृणां शूद्राद्यैर्न: श्रुतं यदि ॥10॥

ओं कार्तवीर्याय नम:, खलद्वेषिणे नम:, कृतवीर्यसुताय नम:, वल्मिने नम:, सहस्रवाहवे नम:, शत्रुघ्नाय नम:, रक्तवाससे नम: । धनुर्धराय नम:, रक्तगन्धाय नम:, रक्तमाल्याय नम: । राज्ञेनम: ।

8. कार्तवीर्य मन्त्र की दूसरी विधि

ओं अस्य श्री कार्तवीर्यार्जुन मन्त्रस्य दत्तात्रेय ऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्री कार्तवीर्यार्जुनो देवता फ्रों वीजं ह्लीं शक्तिः क्लीं कीलकं ममाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि न्यासः—ओं दत्तात्रेय ऋषये नमः शिरसि ।

ओं अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे ।

ओं श्री कार्तवीर्यार्जुन देवतायै नमः हृदये ।

ओं फ्रों वीजाय नमः गुह्ये ।

ओं ह्लीं शक्तये नमः पादयोः ।

ओं क्लीं कीलकाय नमः नाभी ।

करन्यासः—ओं दत्तात्रेय ऋषये नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः

ओं अनुष्टुप् छन्दसे नमः अनामिकाभ्यां नमः ।

ओं कार्तवीर्यार्जुन देवतायै नमः मध्यमाभ्यां नमः ।

ओं फ्रों वीजाय नमः तर्जनीभ्यां नमः ।

ओं ह्लीं शक्तये नमः कनिष्ठिाभ्यां नमः ।

ओं क्लीं कीलकाय नमः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः ।

हृदयादि न्यासः—ओं दत्तात्रेय ऋषये नमः हृदयाय ।

ओं अनुष्टुप छन्दसे नमः शिरसि ।

ओं कार्तवीर्यार्जुन देवतायै नमः शिखायाम् ।

ओं फ्रों वीजाय नमः कवचाय हुम् ।

ओं ह्लीं शक्तये नमः नेत्रत्रयाय वौषट् ।

ओं क्लीं कीलकाय नमः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—ओं सहस्रवाहुं सशरं सचापं
रक्ताम्वरं रक्त किरीट भूषम् ।
चौरादि दुष्टार्ति हरं वरं तं
वन्दे महाशाक्तिकं कार्तवीर्यम् ।

मन्त्रः—ओं फ्रों ह्लीं क्लीं कार्तवीर्यार्जुनाय नमः ।

कार्तवीर्य मन्त्र के जाप से सर्व शत्रुओं का नाश; सर्व सम्पत्तियों की प्राप्ति होती है ।

9. हनुमद् वडवानल स्तोत्रम्

विनियोगः—ओं अस्य श्री हनुमान वडवानल स्तोत्रमन्त्रस्य श्री रामचन्द्र ऋषिः, श्री वडवानल हनुमान देवता मम समस्त रोगप्रशमनार्थम् आयुरारोग्यैश्वर्याऽभि वृद्धयर्थं सीतारामचन्द्रप्रीत्यर्थं च हनुमद् वडवानल स्तोत्रजपमहं करिष्ये ॥

हनुमतयन्त्र

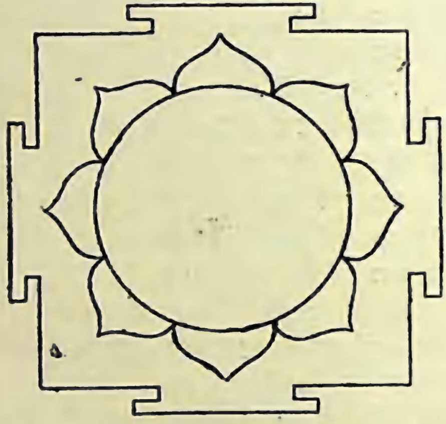

ध्यानम्—मनोजवं मारुततुल्यवेगं, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम ।
वातात्मजं वानर यूथमुख्यं, श्री रामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥

ओं ह्रां ह्रीं ओं नमो भगवते श्री महाहनुमते प्रकटपराक्रम सकलदिङ्मण्डल यशोवितान धवलीकृत जगतत्रितय वज्रदेह रुद्रावतार लंकापुरी दहन उमा अर्गलमन्त्र उदधिवन्धन दशशिरःकृतान्तक सीताश्वसन वायुपुत्र—अञ्जनीगर्भ सम्भूत श्री राम लक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार सुग्रीवसाह्यरण पर्वतोत्पाटन कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीरनाद सर्व पापग्रह वारणसर्वज्वरो-च्चाटनडाकिनीविध्वंसन ओं ह्रां ह्रीं ओं नमो भगवते महावीर वीराय सर्व दुःख निवारणाय ग्रहमण्डल सर्वभूत पिशाचमण्डलो च्चाटन भूत ज्वर-एकाहिक ज्वर-द्वयाहिक ज्वर-त्र्याहिक ज्वर चातुर्थिक

HANUMAN

Subhash Calendar Co.,
1416, Nai Sarak, Delhi-6.

ज्वर—सन्ताप-ज्वरान् छिन्धि-छिन्धि यक्षब्रह्मराक्षस भूत प्रेत पिशाचान् उच्चाटय उच्चाटय ।

ओं ह्रां श्रीं ओं नमो भगवते श्री महाहनुमते ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः आं हां हां हां हां ओं सौं एहि एहि एहि ओं हं ओं हं ओं हं ओं नमो भगवते श्री महाहनुमते श्रवण चक्षुर्भूतानां शाकिनी डाकिनीनां विषम दुष्टानां सर्वविषं हर हर आकाशभुवनं भेदय भेदय छेदय छेदय मारय मारय शोषय शोषय मोहय मोहय ज्वालय ज्वालय प्रहारय प्रहारय शंकलमायां भेदय-भेदयं ।

ओं ह्रां ह्रीं ओं नमो भगवते महाहनुमते सर्वग्रहोच्चाटनं परवलं क्षोभय-क्षोभय सकल-बन्धन मोक्षणं कुरु कुरु शिर:शूल-गुलमशूला न्निर्मूलय निर्मूलय नागपाशानन्त वासुकि तक्षक-कर्कोटक कालियान् यक्ष कुलजगतविलगत रात्रिञ्चर-दिवाचर-सर्पान्निर्विषं कुरु कुरु स्वाहा ।

राजभय—चोरभय-परमन्त्र-परयन्त्र-परतन्त्र-परविद्याश्छेदय स्वमन्त्र-स्वयन्त्र-स्वतन्त्र स्वविद्या: प्रकटय प्रकटय सर्वारिष्टान्नाशय नाशय सर्व शत्रून् नाशय नाशय असाध्यं साधय साधय हुं फट् स्वाहा ।।

यह वडवानल स्तोत्र सर्वसिद्धिप्रदायक है । इसके पाठ से मनुष्य की सभी कामनाएं पूर्ण हों जाती हैं । अत: सर्वप्रथम हाथ में जल लेकर ओं अस्य श्री हनुमानवाडवानलस्तोत्र मन्त्रस्य० आदि पढ़ कर संकल्प करे ।

ध्यान कर—हनुमान प्रतिमा की पूजा कर धूपदीप से अर्चन कर सम्पूर्ण स्तोत्र का पाठ करे । 21 दिन तक निरन्तर इसका पाठ करना चाहिए ।

इति विभीषणकृतं हनुमद्वडवानलस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

10. हनुमत्-तन्त्रम्

ध्यानम्—ध्यायेद् बालदिवाकरद्युतिनिभं देवारि दर्पापहं
देवेन्द्र-प्रमुख-प्रशस्त यशसं देदीप्यमानं रुचा ।
सुग्रीवादि समस्त वानरयुतं सुव्यक्त तत्त्व प्रिय
संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालंकृतम् ।।1।।

उद्यन्मार्तण्डकोटि प्रकटरुचियुतं चारुवीरासनस्थं
मौञ्जी यज्ञोपवीताऽऽभरण रुचिशिखा शोभितं कुण्डलाढ्यम् ।
भक्तानामिष्टदान प्रवण मनुदिनं वेदनाद प्रमोदं
ध्यायेद् देवं विधेयंप्लवग कुलपतिं गोष्पदीभूत वर्धिम् ।।
मनोजवं मारुत तुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्टम् ।
वातात्मजं वानरयूथ मुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ।।3।।

यन्त्रोद्धार:—

वक्ष्ये हनुमतो यन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
वलयत्रितयं लेख्यं पुच्छाकार समन्वितम् ।।
साध्यनाम लिखेन्मध्ये पाशवीजं प्रवेष्टितम् ।
उपर्यष्ट दलं कृत्वा वर्मपत्रेषु संलिखेत् ।।
चतुरस्र रेखाग्रे त्रिशूलानि समालिखेत् ।।
भूपुरस्याष्ट वज्रेषु ह्सौं वीजं लिखेत्ततः ।
कोणेष्वङ्कुश मालिख्य मालामन्त्रेण वेष्टयेत् ।
तत्सर्वं वेष्टयेद् यन्त्रे वलयत्रितयेन च ।
वस्त्रे शिलायां फलके ताम्रपात्रेऽथ कुड्यजे ।
भूर्जे वा ताडपत्रे वा रोचना नाभि कुङ्कुमैः ।
मन्त्रमेतत् समालिख्य त्यक्ताशीर्ब्रह्म चर्यवान् ।।

माला प्रार्थना—ॐ मां माले महामाये सर्वशक्ति स्वरूपिणी ।
चतुर्वर्ग-स्त्वयि न्यस्तंस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ।
अविघ्नं कुरुमाले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जप काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ।।

हनुमन्मालामन्त्रः—

ॐ नमोहनुमते प्रकट पराक्रम आक्रान्त दिङ्मण्डल यशोवितान धवलीकृत जगत्त्रितय वज्रदेह ज्वलदग्नि सूर्य कोटि समप्रभ-तनूरुह रुद्रावतार लङ्कापुरी दहनोदधिलङ्घन दशग्रीव शिरः कृतान्तक सीता श्वासन वायुसुताऽञ्जनीगर्भ सम्भूत श्रीराम लक्ष्मणाऽऽनन्दकर कपिसैन्य-प्राकार सुग्रीव सख्य कारण वालिनिर्वहण कारण द्रोण पर्वतोत्पादनाऽशोक

विदारणाऽक्ष कुमारक छेदनवन रक्षा कर समूह निभञ्जन ब्रह्मास्त्र ब्रह्म-शक्ति ग्रसन लक्ष्मण शक्ति भेद निवारण विशल्योषधिसमानयन वालोदित-भानुमण्डलग्रसन मेघनाद होम विध्वंसन इन्द्रजिद्वध कारण सीता रक्षक राक्षसीसङ्घविदारण कुम्भकर्णादि वध परायण श्री राम भक्ति तत्पर समुद्र व्योम द्रुम लङ्घन महास्तमर्थ्य महातेजः पुञ्ज विराजमान स्वामि वचन सम्पादिताऽर्जुन युगसहाय कुमार ब्रह्मचारिन् शब्दोदय दक्षिणाशा मार्तण्ड मेरु पर्वतपीठिकार्चन सकलमन्त्रागमाचार्य मम सर्वग्रहविनाशन सर्व ज्वरोच्चाटन सर्वविष विनाशनं सर्वापत्ति निवारण सर्वदुष्ट निवर्हण सर्वव्याघ्रादिभयनिवारण सर्व शत्रुच्छेदन मम परस्यच त्रिभुवन-पुम-स्त्री-नपुंसकात्मकं सर्व वीज जातं वशय-वशय ममाज्ञाकारकं सम्पादय सम्पादय नानानामधेयान सर्वान् राज्ञः सपरिवारान् ममसेवकान् कुरु कुरु सर्व-शस्त्रास्त्र विषाणि विध्वंसय विध्वंसय ह्रां ह्रीं ह्रं ह्रां एह्येहि ह् सौं ह् ख्फें ह् स्रौं ख्फें स्फें ह्रीं सर्वशत्रून् हन-हन पर दलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम सर्व कार्य जातं साधय साधय सर्वदुष्ट दुर्जन मुखानि कीलय-कीलय धे-धे-धे हा-हा-हा-हुं-हुं-फट्-फट् स्वाहा ॥

पुरश्चरणम्—पुरश्चर्यस्य मन्त्रस्य प्रोक्ता चार्क सहस्रिका ।
भौमस्य वासरे पूजा कार्या हनुमतो ध्रुवम् ॥
प्रियङ्गवो व्रीहयश्च दध्याज्य क्षीर संयुतैः ।
कदली मातुः लिङ्गाऽम्रफलैर्नानाविधं हुनेत ॥
दशांशेन ततो ब्रह्मचारिणोंभोजयेद् ध्रुवम् ॥

हनुमद-गायत्री मन्त्रः—

ओं अञ्जनी नन्दनाय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमान् प्रचोदयात् ॥

हनुमद् अष्टार्ण मन्त्रः—ओं ह्रां ह्रीं ह्रं ह्रैं ह्रौं ह्रः ओं ॥

द्वादशाक्षरमन्त्रः—ओं हुं हनुमते रुद्रात्मकाय हुं फट् ॥

शावर मन्त्र—लंका कोट समुद्रखाई।
हनुमान की चौकी सीताराम की दुहाई ॥

11. भगवती दुर्गा का सब प्रकार के कष्टों को दूर करने का मन्त्र

ओं दुर्गे स्मृताहरसि भीतिमशेष जन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतीमतीव शुभां ददासि—ओं ह्रीं यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह, पवमानऽवतं जहि। यदुत्थितं भयं भगवति दुर्गे तत्सर्वं शमय स्वाहा दुर्गा देवीं शरणमहं प्रपद्ये-प्रतिकूलं मम नाशय अनुकूलं मे प्रयच्छ ह्रीं ओं दारिद्र्य दुःखभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार-करणाय सदार्द्र चित्ता। नमः श्रीं ओं हुं फट् स्वाहा ॥

इस मन्त्र का भगवती दुर्गा का पूजन करते हुए। ग्यारह हजार जाप करना चाहिए। इस मन्त्र के जाप से भयंकर विपत्ति से भी छुटकारा मिल सकता है। ज्योति जलाकर दुर्गा पूजन सविधि करे।

12. कुबेर मन्त्रः

विनियोगः—ओं अस्य श्री कुबेर मन्त्रस्य विश्रवा ऋषि वृहती छन्दः कुबेर देवता सर्वेष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ॥

अङ्गन्यासः

ओं विश्रवा ऋषये नमः शिरसि।
ओं वृहती छन्दसे नमः मुखे।
ओं कुबेर देवतायै नमः हृदि ॥

करन्यासः—ओं यक्षाय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः
ओं कुबेराय तर्जनीभ्यां नमः।

ॐ वैश्रवणाय मध्यमाभ्यां नम: ।
ॐ धनधान्याधिपतये अनाभिकाभ्यां नम: ।
ॐ धनधान्य समृद्धिर्मे कनिष्ठिकाभ्यां नम: ।
ॐ देहि दापय स्वाहा करतल कर पृष्ठाभ्यां नम: ।

षडंगन्यास:—ॐ यक्षाय हृदयाय नम: ।
ॐ कुवेराय शिरसे स्वाहा ।
ॐ वैश्रवणाय शिखायै वषट् ।
ॐ धनधान्याधिपतये कवचाय हुम् ।
ॐ धनधान्यसमृद्धिं मे—नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ देहि दापय स्वाहा अस्त्राय फट् ।।

ध्यानम्—ॐ मनुजवाह्य विमानवर स्थितं
गरुड रत्ननिभं विधि नायकम् ।।
शिव सखं मुकुटादि विभूषितं
वरगदे दधतं भज तुन्दिलम् ।।

मन्त्र—ॐ यक्षाय कुवेराय बैश्रवणाय धनधान्याधिपतये धन्य धान्य समृद्धि मे देहि दापय स्वाहा ।।

शिव पूजन कर—विल्वपत्रादि चढ़ाकर वहीं कुवेर का पूजन करके इस मन्त्र को करे ।

13. दारिद्र्य-नाशक महालक्ष्मी-मन्त्र

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं त्रिभुवनपालिन्यै महालक्ष्म्यै अस्माकं दारिद्र्यं नाशय प्रचुरं धनं देहि देहि क्लीं ह्रीं श्रीं ॐ ।

दीपावली की रात्रि को इस का जप करें । जपसंख्या—12500 ।
भगवती लक्ष्मी का षोडशोपचार पूजन करके—इस मन्त्र को जपे ।

14. वटुक भैरव मन्त्र

विनियोग :—ॐ अस्य श्री आपदुद्धरण श्रीवटुकभैरव मन्त्रस्य वृहदारण्यको नाम ऋषि: त्रिष्टुप् छन्द: श्री वटुक भैरवो देवता

ह्लीं वीजं स्वाहा शक्तिः भैरवः कीलकं मम कार्यसिद्ध्यर्थें जपे विनियोगः ।

अंगन्यास :—वृहदारण्यक ऋषये नमः शिरसि ।
त्रिष्टुप् छन्दसे नमः मुखे ।
श्री वटुक भैरव देवतायै नमः हृदि ।
ह्लीं वीजाय नमः गुह्ये । स्वाहा शक्तये नमः पादयोः ।
भैरवः कीलकाय नमः नाभौ । विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

करन्यासः—ओं ह्लां वां अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं ह्लीं वीं तर्जनीभ्यां नमः ।
ओं ह्लूं वूं मध्यमाभ्यां नमः ।
ओं ह्लैं वैं अनामिकाभ्यां नमः ।
ओं ह्लौं वौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ओं ह्लः वः करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः अस्त्राय फट् ॥

षडङ्गन्यासः—ओं ह्लां वां हृदयाय नमः ।
ओं ह्लीं वीं शिरसे स्वाहा ।
ओं ह्लूं वूं शिखायै वषट् ।
ओं ह्लैं वैं कवचाय हुम् ।
ओं ह्लौं वौं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ओं ह्लः वः अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—ओं कर कलित कपालः कुण्डलीदण्डपाणिः ।
तरुण तिमिर नील व्याल यज्ञोपवीतिः ।
क्रतुसमयसपर्या विघ्न विच्छेद हेतुः ।
जयति विघ्न नाथः सिद्धिदः साधकानाम् ॥

मन्त्र—ओं ह्लीं वं वटुकाय आपदुद्धारणाय कुरु कुरु वटुकाय ह्लीं ॥

विशेष—कुछ साधक ऐसा कहते हैं कि जिन की पत्नी जीवित हो उसे इस मन्त्र का अनुष्ठान नहीं करना चाहिए ?

विघ्नहर वटुक भैरव यन्त्र

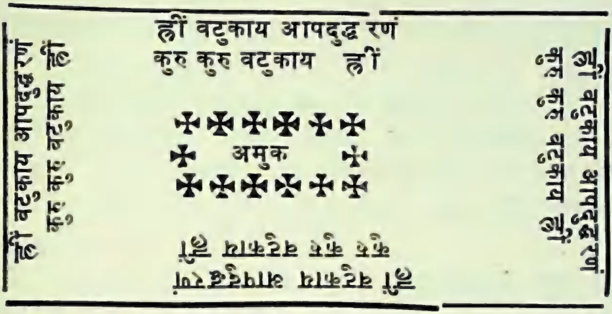

विधि—इस यन्त्र को गोरोचन व कुंकुम से भोज पत्र पर स्वच्छ होकर लिखे। अमुककी जगह जिस पर विपत्ति हो उसका नाम लिखे। धूप-दीप आदि से पूजन करे। वटुक भैरव मन्त्र का जाप कर तावीज में रखकर हाथ में वान्ध ले। इससे आपत्तियों से उद्धार हो। लक्ष्मी बढे, शत्रुका नाश हो। कभी भी अनिष्ट न हो।

15. रुद्रयामलोक्त श्रीसूक्तस्य सम्पुटपुरश्चरणविधिः

ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः ॥

ॐ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तो-स्वस्थैः-स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि—

ॐ हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजत स्रजाम्।

चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह ॥

ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं ॐ महालक्ष्म्यै नमः ॥1॥

दारिद्र्य दुःखभयहारिणी का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ॥

ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः।

ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि।

ओं तांम आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥

दारिद्र्य दुःख भय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं ओं महा लक्ष्म्यै नमः॥2॥

ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महा-लक्ष्म्यै नमः॥

ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि—

ओं अश्व पूर्णां रथ मध्यां हस्तिनाद प्रमोदिनीम्।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥

दारिद्र्य दुःखभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सादार्द्रचित्ता
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः॥3॥

ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः।

ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि।

ओं कांसोस्मितां हिरण्य प्राकारमार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीं
पद्मेस्थितां पद्म वर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्॥

दारिद्रय दुःखभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये, प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः॥4॥

ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः।

ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।
ओं तां पद्मनीमिं शरणं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि ।।

दारिद्र्य दु:खभयहारिणी का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ।।

ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।।5।।

ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।

ओं दुर्गे स्मृताहरसि भीतिमशेषजन्तो: स्वस्थै: स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तववृक्षोऽथ विल्व: ।
तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायारन्तरायाश्च वाह्या अलक्षमी: ।।

दारिद्र्य दु:खभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ।

ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।।6।।

ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।

ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं उपैतु मां देवसख: कीर्त्तिश्च मणिनासह ।
प्रादुर्भूतोऽस्मि राष्ट्रेऽस्मिन् कीर्तिमृद्धि ददातु मे ।

दारिद्र्य दु:खभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सद्रार्द्र चित्ता ।

ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।।

ओं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।

ओं दुर्गेस्मृताहरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम् ।
अभूतिमसमृद्धि च सर्वां निर्णुद मे गृहात् ।।

दारिद्र्य दु:ख भयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ।।
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महा लक्ष्म्यै नम: ।।8।।
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।
ओं दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थैः स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि—

ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्य पुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम् ।।

दारिद्र्य दु:खभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ।
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।।9।।
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै: नम: ।
ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थैः स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि—

ओं मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीयमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीं: श्रयतां यशः ।।

द्रारिद्र्य दु:ख भय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार करणाय सदार्द्र चित्ता
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।।10।।
ओं श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महा-लक्ष्म्यै नम: ।
ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ।।

उों दारिद्रय दु:खभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकार करणाय सदार्द्र चित्ता
उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महा लक्ष्म्यै नम: ॥11॥

उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम:
उों दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृतामतिमतीव शुभं ददासि ।

उों आप: स्रजन्तु स्निग्धानि चिक्लींत वस मे गृहे ।
निच देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥
दारिद्रय दु:खभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ॥
उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महा लक्ष्म्यै नम: ॥12॥

उों दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

उों आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिंगलां पद्ममालिनीम् ।
चन्द्रां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ॥

दारिद्रय दु:खभय हारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता
उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ॥13॥

उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसींद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।
उों दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेप जन्तो: स्वस्थै: स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि ।

उों आर्द्रां य: करिणीं पुष्टि पिङ्गलां पद्ममालिनीम् ।
सूर्यां हिरण्यमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आ वह ॥

दारिद्रय दु:खभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ॥
उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महा-लक्ष्म्यै नम: ॥14॥

उों श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महा-लक्ष्म्यै नम: ।

ओं दुर्गे स्मृताहरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृतामतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं तां म आ वह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥

दारिद्रय दु:खभय हारणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणय सद्रार्द्र चित्ता
ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद ओं श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ॥15॥

ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ।

ओं दुर्गेस्मृता हरसि भीतिमशेष जन्तो: स्वस्थै: स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।

ओं य: शुचि प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।
श्रिय: पञ्चदशर्चं च श्रीकाम: सततं जपेत् ॥

दारिद्रय दु:खमयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्र चित्ता ॥
ओं श्रीं ह्लीं श्रीं कमलेकमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्लीं श्रीं महालक्ष्म्यै नम: ॥

इति श्रीसूक्त सम्पुट विधि

16. उच्छिष्ट गणपति मंत्र

इस मन्त्र के पुरश्चरण में कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी से आरम्भ करके शुक्ल पक्ष की चतुर्थी तक इसका आराधन करे । प्रात: स्नान करके शुद्ध वस्त्र धारण कर पुर्वाभिमुख बैठ कर गणपति प्रतिमा का पूजन कर-मधु (शहद) से प्रतिदिन स्नान करवाए—मिश्री या लड्डू का भोग लगाए । अपने मुख में पान रखकर मन्त्र का जाप करें । कुछ का विचार है भोजन कर विना चूली किए जप करे ।

लाल चन्दन की बनी मूर्ति मिले तो बहुत अच्छा है । मूर्ति अंगुष्ठ प्रमाण होनी चाहिए । चन्दन की न मिले तो लाल पत्थर की मूर्ति से काम लेना चाहिए ।

इस मन्त्र का एक लाख संख्या में जाप करने का विधान है । जप

की समाप्ति पर दशांश हवन करना चाहिए। हरिद्रा तिल एवं चावल मिश्रित चरु से हवन करना चाहिए। हवन के पश्चात् बलि दें। ब्राह्मणों को भोजन करवाएं।

इस मन्त्र के विधान में किसी प्रकार का विशेष नियम नहीं है।

पूजन करते हुए लाल पुष्प चढ़ाते हुए निम्नलिखित नामों से पूजन करे—

पहले आठ विद्याओं का तत्पश्चात् अष्टदल कमल पर पूर्वादि दिशाओं में आठ शक्तियों का पूजन करे। ऊों विद्यायै नमः। ऊों विधात्र्यै नमः। ऊों भोगदायै नमः। ऊों विघ्नघातिन्यै नमः। ऊों निधि प्रदीपायै नमः। ऊों पापघ्न्यै नमः। ऊों पुण्यायै नमः। ऊों शशिप्रभायै नमः।

तत्पश्चात् अष्टदल कमल पर—

ऊों वक्रतुण्डाय स्वाहा, ऊों एकदंष्ट्राय स्वाहा, ऊों लम्बोदराय स्वाहा, ओं विकटाय स्वाहा, ऊों विघ्नेशाय स्वाहा, ऊों गजवक्त्राय स्वाहा, ऊों विनायकाय स्वाहा, ऊों गणपतये स्वाहा।

इसके पश्चात् गणेश पीठ की शक्तियों का पूजन करें—

ऊों ती व्रायै नमः, ऊों चालिन्यै नमः, ऊों नन्दायै नमः, ऊों भोगदायै नमः, ऊों कामरूपिण्यै नमः, ऊों उग्रायै नमः, ऊों तेजोवत्यै नमः।

ऊों सत्यायै नमः, मध्ये—ऊों विघ्ननाशिन्यै नमः॥

फिर ऊों गं सर्व शक्ति कमलासनाय नमः, इस मन्त्र से आसन देकर मूल मन्त्र से गणेश जी की मूर्ति की कल्पना कर उसमें गणेश जी का आवाहन कर आसन, पुष्प. अर्घ्य आदि समस्त उपचारों से पूजन करे।

प्रार्थना—ऊों सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः। लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः। धूम्रकेतुर्धनाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि। विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा। संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥

ऊों वक्रतुण्ड महाकाय सूर्य कोटि समप्रभ।

अविघ्नं कुरु मे देव सर्वविघ्नोप शान्तये॥

ध्यानम्—रक्तमूर्ति गणेशं च सर्वाभरण भूपितम्।

रक्तवस्त्रं त्रिनेत्रं च रक्तपद्मासने स्थितम् ॥
चतुर्भुजम् महाकायं द्विदन्तं सस्मिताननम् ।
इष्टं च दक्षिणे हस्ते दन्तं च तदधः करे ।
पाशांकुशौ च हस्ताभ्यां जटामण्डलवेष्टितम् ।
ललाटे चन्द्ररेखाढ्यं सर्वालंकार भूषितम् ॥
चतुर्भुजं रक्त तनुं त्रिनेत्रं पाशांकुशौ मोदकपात्र दन्तौ ॥
करैर्दधानं सरसीरुहस्यमुन्मत्त मुच्छिष्ट गणेशमीडे ॥

न्यास:—सुघोर ऋषये नमः शिरसि ।
निविडगायत्री हृदये नमः मुखे ।
उच्छिष्ट गणपतये नमः हृदि ॥

करन्यास:—ओं ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं गं तर्जनीभ्यां नमः ।
ओं हस्ति मध्यमाभ्यां नमः ।
ओं पिशाचि अनामिकाभ्यां नमः ।
ओं लिखे कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ओं स्वाहा करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः ॥

अंगन्यास:—ओं ह्रीं हृदयाय नमः
ओं गं शिरसे स्वाहा
ओं हस्ति शिखायैवषट्
ओं पिशाचि कवचाय हुम्
ओं लिखे नेत्र त्रयाय वौषट्
ओं स्वाहा अस्त्रायफट् ।

मन्त्र:—ओं ह्रीं गं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा ।

अथवा—ओं हस्ति पिशाचि लिखे स्वाहा ।

नोट :—कहीं-कहीं पूड़ों से, लड्डुओं से भी हवन करने का लिखा है ।

वलि मन्त्रः—ॐ गं हूं क्लौं ग्लौं उच्छिष्ट गणेशाय महायक्षाय नमः इयं वलिः ॥

विशेष विधान में वलि मन्त्र=ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं फट् स्वाहा—से वलि दें।

विसर्जन करते समय दक्षिण दिशा में लाल पुष्प गिरा दे।

गणपति का विशेष मन्त्रः

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गं गणपतये वर वरद सर्वजनं मे वशमानय स्वाहा।

17. हरिद्रागणेशमन्त्रः

विनियोगः—अस्य श्री हरिद्रागणनायक मन्त्रस्य मदनऋषिः अनुष्टुप छन्दः हरिद्रा गणनायको देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ॥

मन्त्रः—ॐ हुं गं ग्लौं हरिद्रा गणपतये वर वरद सर्वजन हृदयं स्तम्भय स्तम्भय स्वाहा ॥

(द्वात्रिंशद् वर्णात्मक मन्त्रः)

ध्यानम्—पाशांकुशौ मोदक मेकदन्तं
करैर्दधानं कनकासनस्थम्।
हारिद्रखण्डप्रतिमंत्रिनेत्रम्।
पीतांशुकं रात्रि गणेशमीढे ॥

जप—चार लाख की संख्या।

हवन—दशांशहवन—हरिद्रा, तण्डुल—घृत से। ब्राह्मणभोजन। चावल हल्दी मिश्रित हों।

इस मन्त्र से अभीष्टफल की प्राप्ति होती है। कुमारी कन्या को वर की प्राप्ति होती है।

शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां तु कन्यापिष्टहरिद्रया।
विलिप्यांगं जले स्नात्वा पूजयेद् गणनायकम् ॥

तर्पयित्वा पुरस्तस्य सहस्रं साष्टकं जपेत् ।
शतं हुत्वा घृतापूपैः भोजयेद् ब्रह्मचारिणः ।
कुमारीरपिसंतोष्य गुरुं प्राप्नोति वाञ्छितम् ।
लाजैः कन्यामवाप्नोति कन्या लभते वरम् ॥
वन्ध्यानारी रजः स्नात्वा पूजयित्वागणाधिपम् ।
पलप्रमाणगोमूत्रे पिष्टाः सिन्धु-वचा निशाः ।

(निशा—हरिद्रा)

सहस्रं मन्त्रयेत् कन्यावटून संभोज्य मोदकैः ।
पीत्वा तदौषधं पुत्रं लभते गुणसागरम् ॥

18. शत्रुसंहार के लिए चक्रेश्वरीदेवी की आराधना

मन्त्र—ओं नमश्चक्रेश्वरी चक्रवाहिनी रिपुदल भंजिनी काली महाकाली दैत्येन्द्र दमनी राजकुले द्यूते विवादे जले स्थले संकटे विकटे रक्षां कुरु ओं ह्रीं क्लीं ठः ठः ठः स्वाहा ॥

वाम जानुपार्श्वे रिपुनामधेयं छुरिकयोल्लिख्य रक्तासनस्थो निशायां दीपं प्रज्वाल्य गणनाथादीन् संस्मृत्यारभेत् ।

सायंकाल रेत की वेदी बनाकर छुरी से उस पर शत्रु का नाम लिख कर लाल आसन पर बैठकर गणेश आदि का पूजन कर मीठे तेल का दीपक जलाकर प्रतिदिन एक हजार संख्या में जप करना चाहिए । 40 दिन का यह विधान है । इससे शत्रु का नाश हो जाता है ।

चक्रेश्वरी देवी स्तोत्रम्

ओं श्री चक्रे चक्रभीमे ललिताम्बरभुजे लीलया लोल्लयन्ती ।
चक्रं विद्युत् प्रकाशं ज्वलितशितशिखं खे खगेन्द्राधिरूढ़े ॥1॥
तत्त्वैरुद्भूत भावे सकल गुण निधे त्वं महामन्त्रमूर्ते ।

क्रोधादित्य प्रतापे त्रिभुवनमहिते पाहि मां देवि चक्रे ॥2॥
क्लीं क्लीं कलींकार चित्ते कलि कलि वदने दुन्दुभी भीमनादे ।
ह्रां ह्रीं ह्रः सः खः वीजे खगपतिगमने मोहिनी शोषिणीत्वम् ॥3॥
तच्चक्रं चक्रदेवी भ्रमसि जगति दिक्चक्रे विक्रान्त कीर्तिः ।
निर्विघ्नोघं विघ्नयन्ती विजय जयकरी पाहि मां देवि चक्रे ॥4॥
श्रां श्रीं श्रौं श्रः प्रसिद्धे जनित जनमन प्रीति सन्तोष लक्ष्मी ॥
श्री वृद्धिं कीर्ति कान्ति प्रथमयसि वरदे त्वं महामन्त्रमूर्तिः ॥5॥
त्रैलोक्यं क्षोभयन्तीमसुरभिदुर हुंकार नादैक भीमे ।
क्लीं क्लीं क्लीं द्रावयन्ती हुतकनकनिभे पाहि मां देवि चक्रे ॥6॥
वज्रक्रोधे सुभीमे शशधर धवले भ्रामयन्ती सुचक्रे ।
रां रीं रीं हः कराले भगवति वरदे रुद्रनेत्रे सुकान्ते ॥7॥
आं ईं ॐ भीषयन्ती त्रिभुवनमखिलं तत्त्वतेजः प्रकाशि ॥
क्षां क्षीं क्षुं क्षोभयन्ती विषं विषयुते पाहि मां देवि चक्रे ॥8॥
ऊँ ह्लीं ह्लीं ह्लूं सहर्ष हा हसितसिते चक्र संकास वीजे ।
ह्लां ह्लीं ह्लूं क्षीर वर्णे कुवलयनयने विद्रवं द्रावयन्ती ।
ऊँ ह्लीं ह्लः क्षः त्रिलोकीममृत जर जरैः वारणैः प्लावयन्ति ।
ज्वां ज्वीं ज्वौं सत्व वीजे प्रलय विषयुते पाहि मां देवि चक्रे ॥
आं आं आं ह्लीं युगान्ते प्रलयदिनकरे कारकोटि प्रतापे ॥
चक्राणि भ्रामयन्ती विमलवरभुजे पद्ममेकं फलं च ।
सच्चक्रे कुंकुमांकैः विधृत विनिरुहं तीक्ष्ण रौद्र प्रचण्डे ॥
ह्लां ह्लीं ह्लींकार कारीर नरगण तपो पाहि मां देवि चक्रे ॥
श्रां श्रीं श्रूं श्रः सवृत्ति स्त्रिभुवनमहिते नाद विन्दु त्रिनेत्रे ।
वं वं वं वज्रहस्ते लल-लल-ललिते नीलशो नीलकोषे ॥
चं चं चं चक्रधारी चल चलंकलिते नूपुरालीढ लेले ॥
त्वं लक्ष्मीः श्री सुकीर्ति सुरनर विनते पाहि मां देवि चक्रे ॥
ह्रीं ह्रीं ह्रूं यः प्रघोषे प्रलय युग पराजेय शब्दं प्रणादे ॥
याँ याँ याँ क्रोधमूर्ते ज्वल ज्वल ज्वलिते ज्वाल संज्वाल लीढे ।
आँ ईं ॐ अः प्रघोषे प्रकटित दशने पाहि मां देवि चक्रे ॥

चक्रेश्वरी देवी का अन्य मन्त्र—ओं ह्रीं श्रीं चक्रेश्वरी चक्रवारुणी, चक्रधारिणी चक्रवेगेन मम उपद्रवं हन-हन शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ॥

इस मन्त्र की 21 दिन तक दसमाला प्रतिदिन करनी चाहिए। फिर प्रतिदिन एक माला करें—हर प्रकार के उपद्रव शान्त हो।

दूसरा मन्त्र—ओं नमः चक्रेश्वरी चिन्तित कार्य-कारिणी मम स्वप्ने श्रुताश्रुतं कथय कथय दर्शय दर्शय स्वाहा।

शुभ मुहूर्त में जाप करे। 12500 जाप होने के बाद एक माला फेरे। जिज्ञासित का स्वप्न में उत्तर मिले।

19. इन्द्राक्षी स्तोत्रम्

गणेशाय नमः। श्री नर्मदा देव्यै नमः ॥

विनियोगः—ओं अस्य श्री इन्द्राक्षी स्तोत्रमन्त्रस्य पुरन्दर ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः, इन्द्राक्षी देवता, महालक्ष्मी बीजम् भुवनेश्वरी शक्तिः भवानीति कीलकम् मम सर्वाभीष्ट-सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

न्यास—ओं इन्द्राक्षी अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ओं महालक्ष्मी तर्जनीभ्यां नमः।
ओं माहेश्वरी मध्यमाभ्यां नमः
ओं अम्बुजाक्षी अनामिकाभ्यां नमः।
ओं कात्यायनी कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ओं कौमारी करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः ॥

हृदयादि न्यास—ओं इन्द्राक्षी हृदयाय नमः।
ओं महालक्ष्मी शिरसे स्वाहा।
ओं माहेश्वरी शिखायै वषट्।
ओं अम्बुजाक्षी कवचाय हुम्।

ॐ कात्यायनी नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ॐ कौमारी अस्त्राय फट् ॥

ॐ ह्रां हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। ॐ ह्रैं कवचाय हुम्। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रः अस्त्राय फट्।

दिग्बन्धः—ॐ प्राच्यै दिशे नमः। इन्द्राय नमः।
ॐ आग्नेय्यै दिशे नमः। अग्नये नमः।
ॐ याम्यायै दिशे नमः। यमाय नमः।
ॐ नैर्ऋत्यै दिशे नमः। नैर्ऋत्यै नमः।
ॐ प्रतीच्यै दिशे नमः। वरुणाय नमः।
ॐ वायव्यै दिशे नमः। वायवे नमः।
ॐ उदीच्यै दिशे नमः। कुवेराय नमः।
ॐ ईशान्यै दिशे नमः। ईश्वराय नमः।
ॐ ऊर्ध्वायै दिशे नमः। ब्रह्मणे नमः॥
ॐ अधरायै दिशे नमः। अनन्ताय नमः।
ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ओमिति दिग्बन्धनम् ॥

ध्यानम्—इन्द्राक्षीं द्विभुजां देवीं पीतवस्त्र द्वयान्विताम् ॥
वामहस्ते वज्रधरां दक्षिणेन वरप्रदाम् ॥1॥
इन्द्राक्षीं सहस्रयुवतीं नानालंकार भूषिताम् ।
प्रसन्न वदनाम्भोजामप्सरोगण सेविताम् ॥2॥

मन्त्र—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं इन्द्राक्षी क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ स्वाहा ॥

अष्टोत्तर शतं जप्त्वा सर्वसिद्धि प्रदायकम् ॥

इस मन्त्र की एक माला करके स्तोत्र पाठ करे।

स्तोत्रम्

इन्द्राक्षी नाम सा देवी देवतैः समुदाहृता ।
गौरी शाकम्भरी देवी दुर्गा नाम्नीति विश्रुता ॥1॥

कात्यायनी महादेवी चन्द्रघण्टा महातपा ।
सावित्री सा च गायत्री ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी ॥2॥
नारायणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्णपिंगला ।
अग्नि ज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ॥3॥
मेघश्यामा सहस्राक्षी विकटांगी जलोदरी ।
महोदरी मुक्त केशी घोररूपा महावला ॥4॥
आर्द्रजा भद्रजा नन्दा रोग हंता शिवप्रिया ।
शिवदूती कराली च प्रत्यक्ष परमेश्वरी ॥5॥
इन्द्राणी इन्द्ररूपा च इन्द्रशक्ति परायणा ।
सदा सम्मोहिनी देवी सुन्दरी भुवनेश्वरी ॥6॥
एकाक्षरी परब्रह्म स्थूल सूक्ष्म प्रवर्द्धिनी ।
वाराही नारसिंही च भीमा भैरव नादिनी ॥7॥
श्रुतिः स्मृति धृतिर्मेधा विद्या लक्ष्मीः सरस्वती ।
अनन्ता विजया पूर्णा मानस्तोक पराजिता ॥8॥
भवानी पार्वती दुर्गा हैमवत्यम्बिका शिवा ।
शिवा भवानी रुद्राणी शंकरार्द्ध शरीरिणी ॥9॥
एतै र्नाम पदैर्दिव्यैः स्तुता शक्रेण धीमता ।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं ज्ञानवित्तयशोवलम् ॥10॥
शतमावर्तयेद्यस्तु मुच्यते व्याधि वन्धनात् ।
आवर्तन सहस्रं तु लभते वाञ्छितं फलम् ॥11॥
राजानं च समाप्नोति इन्द्राक्षीं नात्रसंशयः ।
नाभिमात्रे जले स्थित्वा सहस्रपरिसंख्यया ॥12॥

जपेत्स्तोत्रमिदं मन्त्रं वाचासिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
सायं प्रातः पठेन्नित्यं षण्मासैः सिद्धिरुच्यते ॥13॥
संवत्सरमुपाश्रित्य सर्वकामार्थ सिद्धये ।
अनेन विधिना भक्ताः मन्त्रसिद्धिः प्रजायते ॥14॥
संतुष्टा च भवेद् देवी प्रत्यक्षं संप्रजायते ।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यामिदं स्तोत्रं पठेन्नरः ॥15॥
धावतस्तस्य नश्यंति विघ्नसंख्या न संशयः ।
कारागृहे यदा वद्धो मध्यरात्रे तदा जपेत् ॥16॥
दिवसत्रयमात्रेण मुच्यते नात्र संशयः ।
सकामो जपते स्तोत्रं मन्त्रपूजाविचारतः ॥17॥
पंचाधिकैर्दशादित्यै रियं सिद्धिस्तु जायते ।
रक्त पुष्पैः रक्तवस्त्रैः रक्तचन्दन चर्चितैः ॥18॥
धूपदीपैश्च नैवेद्यैः प्रसन्ना भगवती भवेत् ।
एवं सम्पूज्य इन्द्राक्षोमिन्द्रेण परमात्मना ॥19॥
वरं लब्धं दितेः पुत्राः भगवत्याः प्रसादतः ॥20॥
हरिः ओं तत्सत् ।

इति इन्द्राक्षीस्तोत्रम् सम्पूर्णम् ॥

इस इन्द्राक्षी स्तोत्र का अधिक महत्त्व है। महान् संकट में, मुकद्दमे में, जेल जाने पर, भीषण विपत्ति आने पर इसका निरन्तर पाठ करने से लाभ होता है।

20. श्रीमहालक्ष्म्यष्टक स्तोत्रम्

श्रीगणेशाय नमः

इन्द्रउवाच— नमस्तेऽस्तु महामाये श्री पीठे सुरपूजिते ।
शंख चक्र गदाहस्ते महालक्ष्मी नमोऽस्तु ते ॥1॥
नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयङ्करी ।
सर्वपाप हरे देवि महालक्ष्मी नमोऽस्तु ते ॥2॥
सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्ट भयंकरी ।
सर्व पाप हरे देवि महालक्ष्मी नमोऽस्तुते ॥3॥
सर्वसिद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्ति प्रदायिनि ।
मन्त्रमूर्ते सदा देवि महालक्ष्मी नमोऽस्तुते ॥4॥
आद्यन्त रहिते देवि आद्यशक्ति महेश्वरि ।
योगजे योग सम्भूते महालक्ष्मी नमोऽस्तुते ॥5॥
स्थूल सूक्ष्मे महारौद्रे महाशक्ति महोदरे ।
महापाप हरे देवि महालक्ष्मी नमोऽस्तु ते ॥6॥
पद्मासन स्थिते देवि परब्रह्म स्वरूपिणि ।
परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥7॥
श्वेताम्बर धरे देवि नानालंकार भूषणे ।
जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥8॥
महालक्ष्यष्टकं स्तोत्रं यः पठेद् भक्तिमान्नरः ।
सर्वसिद्धिमाप्नोति राज्यं प्राप्नोति सर्वदा ॥9॥
एक काले पठेन्नित्यं राज्यं महापाप विनाशनम् ।
द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्य समन्वितः ॥09॥

त्रिकालं य: पठेन्नित्यं महाशत्रुविनाशनम् ।
महालक्ष्मी भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदाशुभा ।।11।।
इति इन्द्रकृतो महालक्ष्म्यष्टकस्तव: संपूर्ण: ।
।। श्रीरस्तु ।।

इस स्तोत्र को करने के पश्चात् इस मन्त्र को करें ।

मन्त्र—उों श्रीं ह्रीं क्लीं त्रिभुवनपालिन्यै महालक्ष्म्यै अस्माकं दारिद्र्यं नाशय प्रचुरं धनं देहि देहि क्लीं ह्रीं श्रीं उों ।

दीपावली की रात्रि को इस इस मन्त्र का एक हजार जाप करके स्तोत्र का 108 बार पाठ करने से विशेप लाभ होता है ।

21. श्री विष्णुपुराणान्तर्गत प्रथमेऽंशे नवमेऽध्याये

महालक्ष्मी स्तोत्रम्

सिंहासनगत: शक्र: संप्राप्य त्रिदिवं पुन: ।
देवराज्ये स्थितो देवीं तुष्टावाब्जकरां तत: ।।1।।
इन्द्र उवाच—नमस्ते सर्व भूतानां जननीमब्जसंभवाम् ।
श्रियमुन्निद्र पद्माक्षीं विष्णु वक्षस्थल स्थिताम् ।।2।।
पद्मालयां पद्मकरां पद्मपत्र निभेक्षणाम् ।
वन्दे पद्ममुखीं देवीं पद्मनाभ प्रियामहम् ।।3।।
त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा सुधा त्वं लोकपावनी ।
सन्ध्या रात्रि: प्रभाभूतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ।।4।।
यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने ।
आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्ति फलदायिनी ।।5।।
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च ।

सौम्या सोम्यैर्जगद्रूपैः त्वयैतद् देवि परितम् ॥6॥
का त्वन्या त्वामृते देवि सर्वयज्ञमयं वपुः ।
अध्यास्ते देवदेवस्य योग चिन्त्यं गदाभृतः ॥7॥
त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् ।
विनष्टं प्रायमभवत्त्वयेदानीं समेधितम् ॥8॥
दाराः पुत्रास्तथाऽऽगारं सुहृद्धान्यं धनादिकम् ॥
भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद् वीक्षणान्नृणाम् ॥9॥
शरीरारोग्यमैश्वर्यमपरिपक्ष क्षयः सुखम् ।
देवि त्वद् दृष्टि दृष्टानां पुरुषाणां च दुर्लभम् ॥10॥
त्वमम्बा सर्वभूतानां देव देवो हरिः पिता ।
त्वयैतद् विष्णुना चाम्बा जगद् व्याप्तं चराचरम् ॥11॥
मानः कोशं तथा कोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम् ।
या शरीरं कलत्रं च त्यजेथाः सर्वपावनि ॥12॥
मा पुत्रान्मा सुहृद्वर्गान्मा पशून्मा विभूषणम् ।
त्यजेथा मम देवस्य विष्णोर्वक्षःस्थलाश्रये ॥13॥
सत्त्वेन सत्य शौचाभ्यां तथा शीलादिभिर्गुणैः ।
त्यजन्ते ते नराः सद्यः संत्यक्ता ये त्वयाऽमले ॥14॥
त्वयाऽवलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलैर्गुणैः ।
कुलैश्वर्यैश्च युज्यन्ते पुरुषाः निर्गुणा अपि ॥15॥
स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान् ।
स शूरः सच विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥16॥
सद्यो वैगण्यमायान्ति शीलाद्याः सकलाः गुणाः ।
पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णु वल्लभे ॥17॥
न ते वर्णयितुं शक्ता गुणाञ्जिह्वापि वेधसः ।
प्रसीद देवि पद्माक्षि माऽस्मांस्त्याक्षीः कदाचन ॥18॥

पराशर उवाच—एवं श्रीः संस्तुता सम्यक् प्राह हृष्टा शतक्रतुम् ।
शृण्वतां सर्वदेवानां सर्व भूतस्थिता द्विज ॥19॥

श्रीरुवाच—परितुष्टास्मि देवेश स्तोत्रेणानेन ते हरे ।
वरं वृणीष्व भद्र त्वं वरदाहं तवागता ॥20॥

इन्द्र उवाच—वरदा यदि मे देवी वरार्हो यदि वाऽप्यहम् ।
त्रैलोक्यं न त्वया त्याज्यमेष मेऽस्तु वर: पर: ॥21॥
स्तोत्रेण यस्तवैतेन त्वां स्तोष्यत्यब्धि संभवे ।
स त्वया न परित्याज्यो द्वितीयोऽस्तु वरो मम ॥22॥
श्रीरुवाच—त्रैलोक्यं त्रिदश श्रेष्ठं न संत्यक्ष्यामि वासव ।
दत्तो वरो मयाऽयं ते स्तोत्राराधन तुष्टया ॥23॥
यश्च सायं तथा प्रात: स्तोत्रेणानेन मानव: ।
मां स्तोष्यति न तस्याहं भविष्यामि पराङ्मुखी ॥24॥
पराशर उवाच—एवं वरं ददौ देवी देवराजाय वै पुरा ।
मैत्रेय श्रीर्महाभागा स्तोत्राराधन तोषिता ॥25॥
भृगो: ख्यात्यां समुत्पन्ना श्री पूर्वमुदधे: पुन: ।
देवदानव यत्नेन प्रसूताऽमृतमन्थने ॥26॥
त्वया जगत्स्वामी देवराजो जनार्दन: ।
अवतारं करोत्येषा तथा श्रीस्तत्सहायिनी ॥27॥
पुनश्च पद्मा संभूता यदाऽदित्योऽभवद् हरि: ।
यदा च भार्गवोरामस्तदाऽभूद् धरणीत्वियम् ॥28॥
राघवत्वेऽभवत्सीता रुक्मिणी कृष्ण जन्मनि ।
अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेषाऽनपायिनी ॥29॥
देवत्वे देवदेहेयं मानुषत्वे च मानुषी ।
विष्णोर्देहानुरूपां वै करोत्येषाऽऽत्मनस्तनुम् ॥30॥
यश्चैतच्छृणुयाज्जन्म लक्ष्म्याश्च पठेन्नर: ।
श्रियो न विच्युतिस्तस्य गृहे यावत्कुलत्रयम् ॥31॥
पठ्यते येषु चैवेष गृहेषु श्रीस्तवो मुने ।
अलक्ष्मी: कलहाधारा न तेष्वास्ते कदाचन ॥32॥
एतत्ते कथितं ब्रह्मन् यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
क्षीराब्धौ श्रीर्यथा जाता पूर्वं भृगुसुता सती ॥33॥

इति सकलविभूत्यावाप्ति हेतु:, स्तुतिरियमिन्द्र मुखोद्गताहि लक्ष्म्या: । अनुदिनमिह पठ्यते नृभिर्यै: वसति न तेषु कदाचिदप्य लक्ष्मी: ॥

22. कृष्णयजुर्वेदीय चाक्षुषोपनिषद्

नेत्ररोग का हरण करने वाली पाठमात्र से सिद्ध होने वाली चाक्षुषी-विद्या की व्याख्या करते हैं। जिससे समस्त नेत्ररोगों का सम्पूर्णतया नाश हो जाता है और नेत्रतेजयुक्त हो जाते हैं। उस चाक्षुषीविद्या के ऋषि अहिर्बुध्न्य हैं, गायत्री छन्द है, सूर्यभगवान देवता हैं, नेत्ररोग की निवृत्ति के लिए इसका जप होता है।

विनियोग—अस्याश्चाक्षुषीविद्यायाया: अहिर्बुध्न्य ऋषि: गायत्री छन्द: सविता देवता चक्षूरोग निवृत्तये जपे विनियोग:।

चाक्षुषीविद्या

उों चक्षुः चक्षुः चक्षुः तेजः स्थिरोभव। मां पाहि पाहि। त्वरितं चक्षूरोगान् शमय शमय। मम जात रूपं तेजो दर्शय दर्शय। यथाहं अन्धो न स्यां तथा कल्पय कल्पय। कल्याणं कुरु कुरु। यानि मम पूर्वजन्मोपार्जितानि चक्षुः प्रतिरोधक दुष्कृतानि तानि सर्वाणि निर्मूलय निर्मूलय। उों नमः चक्षु स्तेजोदात्रे दिव्याय भास्कराय। ओं नमः करुणाकरायाऽमृताय। उों नमः सूर्याय। उों नमो भगवते सूर्यायाक्षितेजसे। खेचराय नमः। महते नमः। रजसे नमः। तमसे नमः। असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मा अमृतं गमय। उष्णो भगवान् शुचि रूपः। हंसोभगवान् शुचिरप्रति-रूपः। य इमां चाक्षुष्मतीविद्यां ब्राह्मणो नित्यमधीते न तस्याक्षिरोगो भवति। न तस्य कुले अन्धो भवति। अष्टौ ब्राह्मणान् ग्राहयित्वा विद्यासिद्धिर्भवति॥

ओं विश्वरूपं घृणितं जातवेदसं हिरण्मयं ज्योति रूपं तपन्तं सहस्ररश्मिभिः शतधा वर्तमानः। पुरःप्रजाता-मुदयत्येष सूर्यः। ओं नमो भगवते आदित्याय अवाग् वादिने स्वाहा।

विशेष विधि—नेत्र रोगपीडित साधकों को चाहिए कि प्रतिदिन प्रातःकाल हल्दी से अनार की कलम के द्वारा कांसे के पात्र में निम्नलिखित यन्त्र लिखे—

८	१५	२	७
६	३	१२	११
१४	९	८	१
४	५	१०	१३

मम चक्षूरोगान् शमयशमय

फिर इसी यन्त्र पर तांबे की कटोरी में चतुर्मुख (चारों ओर चार वत्तियों का) घी का दीपक जला कर रखें। तदनन्तर पुष्पादि यन्त्र का पूजन करे। फिर पूर्व की ओर मुखकरके बैठे। और हल्दी की माला से "ओं ह्रीं हंसः" इस बीजमन्त्र की छः माला जपकर नेत्रोपनिषद के कम से कम बारह पाठ करे। पाठ के पश्चात् फिर उपर्युक्त बीजमन्त्र की पांच मालाएं करे। तदनन्तर सूर्य भगवान् को श्रद्धा पूर्वक अर्घ्य देकर प्रणाम करे और मन से यह निश्चय करे कि मेरा नेत्ररोगशीघ्र ही दूर हो जाएगा। ऐसा करते रहने से इस उपनिषद का नेत्ररोग नाशक अद्भुत प्रभाव

बहुत शीघ्र देखने को मिलता है।

इस चाक्षुषोपनिषद् के पाठ के वाद सूर्यस्तुति को पढ़ना अत्यधिक फलप्रद होगा।

23. वगलामुखी मन्त्र

मन्त्र—ओं ह्लीं वगलामुखी सर्वदुष्टानां वाचं मुखं पदं स्तम्भय जिह्वां कीलय बुद्धिं विनाशय ह्लीं ओं स्वाहा ॥

विनियोग:—ओं अस्य श्री वगलामुखी मन्त्रस्य नारद ऋषि: वृहती छन्द: वगलामुखी देवता शत्रूणां स्तम्भनार्थाय (ममाभीष्ट सिद्धये वा) जपे विनियोग: ॥

षडंगन्यास:—ओं ह्लीं हृदयाय नम:। वगलामुखी शिरसेस्वाहा।

सर्वदुष्टानां शिखायै वषट्। वाचं मुखंपदं स्तम्भय कवचाय हुम्। जिह्वां कीलय नेत्र त्रयाय वौषट्। बुद्धि विनाशय ह्लीं ओं स्वाहा अस्त्राय फट् ॥

ध्यानम्—सौवर्णासन संस्थितां त्रिनयनां पीतांशु कोल्लासिनीम्। हेमाम्भांग रुचिं शशांक मुकुटां सच्चम्पकस्रग्युताम्। हस्तै:मुद्‌गरपाश वज्ररसना: संविभ्रतीं भूषण:, व्याप्तांगीम् वगलामुखीं त्रिजगतां संस्तम्भिनीं चिन्तयेत ॥

जपसंख्या—इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए। चम्पा के फूलों से दस हज़ार आहुतियां देनी चाहिएं। यन्त्र का पूजन करना चाहिए।

विधानम्—एवं ध्यात्वा जपेल्लक्षं अयुतं वा।
चंपकोद्‌भवै. कुसुमै: जुहुयात्।
चन्दनागुरु चन्द्राद्यै: पूजार्थं यन्त्रमालिखेत्।
त्रिकोणषड्‌दलाष्टास्रषोडशारधरापुरम् ॥
मध्ये संपूजयेद् देवीं कोणे सत्त्वादिकान् गुणान्।
षट्कोणेषु षडंगानि मातृभैरव संयुता:।
संपूज्याष्ट दले पद्मे षोडशारे यजेदिमा:।

मंगलास्तम्भिनी चैव जृम्भिणी मोहिनी तथा ।
वश्याचला वलाका च भूधरा कल्मषाभिधा ।
धात्री च कलना कालकर्षिणी भ्रामिकापि च ।
मंद गमना च भोगस्था भाविकाषोडशीस्मृता ॥
भूगृहस्य चतुर्दिक्षु पूर्वादिषु यजेत्क्रमात् ।
गणेशं वटुकं चापि योगिनीं क्षेत्रपालकम् ।
इन्द्रादींश्च ततो वाह्ये निजायुध समन्वितान् ॥
इत्थं सिद्धमनुं मंत्री स्तम्भयेद्देवतादिकान् ।
पीतवस्त्रस्तदासीनः पीतमाल्यानुलेपनः ।
पीत पुष्पैर्यजेत् देवीं हरिद्रोत्थलजा जपन् ।
पीतां ध्यायेत् भगवतीं प्रयोगेषु अयुतं जपेत् ॥
त्रिमध्वक्त तिलै र्होमो नृणां वश्यकरो मतः ।
मधुरत्रितयाक्तैः स्यादाकर्षो लवणैः ध्रुवम् ॥
तैलाभ्यक्तैः निंवपत्रैः होमो विद्वेष कारकः ॥
ताल लोणहरिद्राभिः द्विषां संस्तम्भनं भवेत् ।
अंगारधूमं राजीश्च माहिषं गुग्गुलं निशि ।
श्मशानपावके हुत्वा नाशयेदचिरानरीन् ॥
गरुतोगृध्रकाकानां कटु तैलं विभीतकम् ।
गृहधूमं चितावह्नौ हुत्वा प्रोच्चाटयेदरीन् ।
दूर्वां गुडूचीलाजान् यो मधुरत्रितयान्वितान् ।
जुहोति सोऽखिलान् रोगान् शमयेद् दर्शनादपि ॥
ब्रह्मचर्य व्रतो लक्षं जपेदखिल सिद्धये ।
एक वर्णगवी दुग्धं शर्करामधु संयुतम् ।
त्रिशतं मन्त्रितं पीतं हन्याद् विषपराभवम् ॥
श्वेतपलाश काष्ठेन रचितेरम्य पादुके ।
अलक्त लक्षं मन्त्रयेन्मनुनामुना सदा ॥
तदारूढः पुमान् गच्छेत् क्षणेन शतयोजनम् ॥
पारदं च शिलां तालपिष्टं मधु समन्वितम् ।

मनुनामन्त्रयेल्लक्षं लिपेत्तेनाखिलां तनुम् ।
अदृश्यः स्यान्नृणामेप आश्चर्यं दृश्यतामिदम् ।
षट् कोणे विलिखेत् वीजं माध्यनामान्वितं मनोः ।
हरिताल निशाचूर्णैरुन्मत्तरस संयुतैः ।
शेषाक्षरैः समावीतं धरागेह विराजितम् ।
तद् यन्त्रं स्थापितं प्राणं पीतसूत्रेण वेष्टयेत् ।
भ्राम्यत् कुलालचक्रस्थां गृहीत्वा मृत्तिकां तया ।
रचयेत् वृषभं रम्यं यन्त्रं तन्मध्यतः क्षिपेत ।
हरितालेन संलिप्य वृषं प्रत्यहमर्चयेत् ।
स्तंभयेत् द्विषां वाचं गतिं कार्यपरम्पराम् ।
आदाय वाम हस्तेन प्रेतभूमिस्थ खर्परम् ॥
अंगारेण चितास्थेन तत्र यंत्रं समालिखेत् ।
मन्त्रितं निहितं भूमौ रिपूणां स्तंभयेद् गतिम् ।
प्रेत वस्त्रे लिखेद् यन्त्रं मंगारेणैव तत्पुनः ।
मंडूकवदने न्यस्येत् पीत वस्त्रेण वेष्टितम् ॥
पूजितं पीत पुष्पैः तद् वाचं संस्तम्भयेद् द्विषाम् ॥

आवरण पूजा—यन्त्र के मध्य में देवी का पूजन करना चाहिए तथा त्रिकोण में सत्त्व आदि गुणों की पूजा करनी चाहिए। पट्कोण में षडंगपूजा तथा अष्ट दल में भैरवों के साथ मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। षोडश दल में इन शक्तियों का पूजन करना चाहिए। मंगला, स्तंभिनी, जृम्भिनी, मोहिनी, वश्या, चला, वलाका, भूधरा, कल्मषा, धात्री, कलना, कालकर्षिणी, भ्रामिका, मन्दगमना, भोगस्था एवं भाविका ये 16 शक्तियां कही गई हैं। भूपुर की पूर्व आदि चार दिशाओं में गणेश, वटुक, योगिनी एवं क्षेत्रफल का पूजन करना चाहिए और फिर उसके वाहर अपने आयुधों के साथ इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार पूर्व आदि में पूजा करके सिद्धमन्त्र से मन्त्रित देवता आदि सभी को स्तम्भित कर सकता है।

काम्यप्रयोग—पीले वस्त्र, पीले आसन पर बैठकर पीली माला धारण कर तथा पीला चन्दन लगाकर साधक पीले पष्पों से देवी की पूजा

करे। तथा पीतवर्णा देवी के स्वरूप का ध्यान करते हुए काम्य प्रयोगों में हल्दी की माला पर 10 हजार जप करना चाहिए।

त्रिमधु मिश्रित तिलों के होम से मनुष्यों को वश में किया जाता है। मधुत्रय मिश्रित लवण के होम से निश्चित रूप से आकर्षण होता है। तैल मिलाकर नीम के पत्तों का होम करने से विद्वेषण होता है। लाल लोण एवं हरिद्रा के होम से शत्रुओं का स्तम्भन होता है। श्मशान की अग्नि में रात्रि के समय अंगार, धूप, राजी एवं गुग्गल की आहुतियां देने से शत्रुओं का नाश होता है।

शिवालय, घोर जंगल, नदियों के संगम में एक लाख संख्या में जप करने से सब सिद्धियां मिलती हैं।

हरिताल एवं हल्दी के चूरे में धतूरे का रस मिलाकर उससे षट्-कोण में 'ह्लीं' बीज के साथ शत्रु के नाम के साथ 'स्तम्भय' लिखें। फिर मन्त्र के शेष अक्षरों से उसे वेष्टित कर भूपुर बनावे, उस यन्त्र में प्राण प्रतिष्ठा कर पीले धागे से वेष्टित करे फिर घूमती हुई कुम्हार की मिट्टी लेकर सुन्दर बैल बनावे तथा उसके बीच में इस यन्त्र को रख दें। फिर उस पर हरताल का लेप कर प्रतिदिन बैल का पूजन करें। ऐसा करने से शत्रु का सम्मान होगा।

24. त्रिपुरबाला-मन्त्र

विनियोग:—ओं अस्य श्री त्रिपुर बालामन्त्रस्य दक्षिणामूर्ति: ऋषि: पंक्ति: छन्द: त्रिपुरबाला देवता, क्लीं शक्ति: सौ: बीजम् ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ॥

न्यास—शरीर में नाभि से पैरों तक प्रथम बीज, हृदय से नाभि तक द्वितीय बीज, तथा शिर से हृदय तक तृतीय बीज का न्यास करना चाहिए।

ओं ऐं नम: नाभे: पादान्तम्। ओं क्लीं नम: हृदयान्नाभ्यन्तम्। ओं सौं: नम: मूर्ध्नि हृदन्तम् ॥

इसके बाद बायें हाथ में प्रथम बीज, दाहिने हाथ में द्वितीय बीज,

दोनों हाथों में तृतीय वीज का न्यास करना चाहिए ।

ओं ऐं नम: वाम करे । ओं क्लीं नम: दक्षिण करे, ओं सौ: नम: करयोरुभयो: ।

फ़िर शिर, गुप्तांग, एवं वक्ष स्थल में क्रमश: तीनों वीजों का न्यास करना चाहिए ।

ओं ऐं नम: मूर्ध्नि । ओं क्लीं नम: गुह्ये । ओं सौ: नम: वक्षे ॥

नवयोनि न्यास—

ओं नम: वाम कर्णे । क्लीं नम: दक्षिण कर्णे । सौ: नम: चिवुके ।
ऐं नम: वाम गण्डे । क्लीं नम: दक्षिण गण्डे । सौ: नम: मुखे ॥
ऐं नम: वामनेत्रे । क्लीं नम: दक्षिण नेत्रे । सौ: नम: नासिकायाम् ।
ऐं नम: वाम स्कन्धे । क्लीं नम: दक्षिण स्कन्धे । सौ: नम: उदरे ॥
ऐं नम: वाम कूर्परे । क्लीं नम: दक्षिण कूर्परे । सौ: नभ: नाभौ ॥
ऐं नम: वाम जानौ । क्लीं नम: दक्षिणजानौ । सौ: नम: लिंगोपरि ।

त्रिपुरवाला के मन्त्रों का भेद

1. ह्रीं क्लीं हसौ:=त्र्यक्षर मन्त्र ।
2. ऐं क्लीं सौ: सौ: क्लीं ऐं=षडक्षर मन्त्र ।
3. श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं क्लीं सौ: ह्रीं क्लीं श्रीं=नवार्ण मन्त्र ।
4. ऐं क्लीं सौ: वालात्रिपुरे स्वाहा=दशार्ण मन्त्र ।
5. ऐं क्लीं हसौ: वाला त्रिपुरे सिद्धि देहि नम:=चतुर्दशाक्षर ।
6. ऐं श्रीं क्लीं त्रिपुरा भारती कवित्वं देहि स्वाहा । षोडशाक्षर ।
7. श्रीं ह्रीं क्लीं त्रिपुरामालिनि मह्यं सुखं देहि स्वाहा ।
सप्तदशाक्षर ।
8. ह्रीं ह्रीं ह्रीं प्रौढ त्रिपुरे आरोग्यं ऐश्वर्यं देहि स्वाहा ।
अष्टादशाक्षर ।
9. ह्रीं श्रीं क्लीं त्रिपुरामदने सर्वशुभं साधय स्वाहा ॥ ,,
10. ह्रीं श्रीं वालात्रिपुरे मदायत्तां विद्यां कुरु नम: स्वाहा ॥
विंशत्यक्षर ।
11. ह्रीं श्रीं क्लीं परापरे त्रिपुरे सर्वमीप्सितं साधय स्वाहा । ,,

12. क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं ह्लीं ह्लीं त्रिपुरा ललिते मदीप्सितं योषितं देहि वांछितं कुरु स्वाहा। अप्टाविंशति:।

13. 'क्लीं क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं श्रीं ह्लीं ह्लीं ह्लीं त्रिपुर सुन्दरि सर्वजगन्मम वशं कुरु कुरु मह्यं वलं देहि स्वाहा ॥

॥ पंच त्रिंशदक्षरात्मक:।

ऐं नम: वामपादे।	क्लीं नम: दक्षिणपादे।	सौ: नम: गुह्ये।
ऐं नम: वामपार्श्वे।	क्लीं नम: दक्षिणपार्श्वे।	सौ: नम: हृदि।
ऐं नम: वामस्तने।	क्लीं नम: दक्षिणस्तने।	सौ: नम: कण्ठे।

रत्यादि न्यास:—

ऐं रत्यै नम: गुह्ये।	सौ: अमृतेश्यै: नम: गुह्ये।
सौ: प्रीत्यै नम: हृदि	क्लीं योगेश्यै नम: हृदि।
क्लीं मनोभवायै नम: भ्रूमध्ये।	ऐं विश्वयोन्यै नम: भ्रूमध्ये ॥

मूर्ति न्यास—ह्लीं मनोभवाय नम: शिरसि। क्लीं मकरध्वजाय नम: गुह्ये। ऐं कन्दर्पाय नम: हृदि। ब्लूं मन्मथाय नम: गुह्ये। स्त्रीं कामदेवाय नम: चरणयो: ॥

वाणन्यास:—द्रां द्राविण्यै नम: शिरसि। द्रीं क्षोभिन्यै नम: पादयो:। क्लीं वशीकरण्यै नम: मुखे। ब्लूं आकर्षण्यै नम: गुह्ये। स: सम्मोहिन्यै नम: हृदि ॥

षडङ्गन्यास:—सौ: क्लीं ऐं हृदयाय नम:। सौ: क्लीं ऐं शिरसे स्वाहा। सौ: क्लूं ऐं शिखायै वषट्। सौ: क्लैं ऐं कवचाय हुम्। सौ: क्लीं ऐं नेत्र त्रयाय वौषट्। सौ: क्ल: ऐं अस्त्राय फट् ॥

ध्यानम्—रक्ताम्वरां चन्द्रकलावतंसां।
समुद्यदादित्य निभां त्रिनेत्राम्।
विद्याक्षमालाभय दान हस्तां।
ध्यायामि वालामरुणाम्वुजस्थाम् ॥

मन्त्र—ओं ऐं क्लीं सौ: त्रिपुरवालायै स्वाहा ॥

जपसंख्या—इस मन्त्र का तीन लाख जप करना चाहिए। मधु-सहित टेसू के फूलों या कनरे के फूलों से दशांश होम करना चाहिए। नव

योनि वाले यन्त्र के बाहर अष्टदल और उसे भूपुर से वेष्टित कर यन्त्र का पूजन करे।

---

25. कर्णपिशाचिनी मन्त्र:

विनियोग:—ओं अस्य कर्णपिशाचिनी मन्त्रस्य पिप्पलाद-ऋषि: निचृत् छन्द: कर्णपिशाचिनी देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ।

षडङ्गन्यास:—ओं हृदयाय नम: । ओं ह्लीं शिरसे स्वाहा । ओं कर्ण-पिशचिनि शिखायै वषट् । ओं कर्णे मे कवचाय हुम् । ओं कथय नेत्रत्रयाय वौषट् । ओं स्वाहा अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—चितासनस्थां नरमुण्डमालाम्,
विभूषितामस्थि मणीन् कराब्जै: ।
प्रीतां नरान्त्रैर्दधतीं कुवस्त्रां,
भजामहे कर्णपिशचिनीं ताम् ॥

मन्त्र—ओं ह्लीं कर्णपिशाचिनि कर्णे मे कथय स्वाहा ॥

प्रयोगविधि:—श्मशान में बैठकर या शव पर बैठकर एकाग्रमन से इस 16 अक्षर वाले मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए। तथा विभीतक की समिधाओं द्वारा अग्नि में दशांश होम करना चाहिए।

पूर्वोक्त पीठ पर षडङ्ग पूजा, दिक्पाल एवं उनके आयुध सहित देवी का पूजन करना चाहिए। इस प्रकार मन्त्रसिद्ध हो जाने पर बेर के पेड़ के नीचे अपवित्रता पूर्वक एक लाख मन्त्र का जप करना चाहिए। इससे सन्तुष्ट होकर पिशाचिनी दूसरों के मन की बात तथा भरैवी घटनाओं को कान में बतला देती है।

26. पुत्रप्रदकृष्ण-मन्त्र (सन्तानगोपालमन्त्र)

विनियोग:—ओं अस्य श्री सन्तान गोपाल मन्त्रस्य नारद ऋषि:

अनुष्टुप् छन्द: सुतप्रद: कृष्णो देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ।

मन्त्र:—ओं क्लीं देवकी सुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते । देहिमे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गत: ।।

न्यास:—देवकीसुत गोविन्द हृदयाय नम: । वासुदेव जगत्पते शिरसे स्वाहा । देहि मे तनयं कृष्ण शिखायैवषट् । त्वामहं शरणं गत: कवचाय हुम् । देवीति (संपूर्णपाठ पढ़कर) । अस्त्रायफट् ।

ध्यान—विजयेन युतो रथस्थित: प्रसभानीय समुद्रमध्यत: ।
प्रददत्तनयान् द्विजन्मने स्मरणीयो वसुदेव नन्दन: ।।

जपसंख्या—इस मन्त्र का एक लाख जप करना चाहिए । मधु, घी एवं शक्कर मिश्रित तिलों से दस हजार आहुति डालनी चाहिए । एक हजार तर्पण हो, एक सौ मन्त्र द्वारा मार्जन हो ।

प्रतिदिन भगवान् वासुदेव का विधिपूर्वक पूजन करना चाहिए । श्री वासुदेव कृष्ण पर विश्वास रखते हुए जप करने से कामना सिद्धि होती है ।

27. गारुडमन्त्र प्रयोग:

विनियोग:—ओं अस्य श्री गरुड मन्त्रस्य अनन्त ऋषि: पंक्ति: छन्द: पक्षीन्द्रो देवता ओं बीजं स्वाहा शक्ति: ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ।।

मन्त्र:—क्षिप ओं स्वाहा । इति पंचार्ण: मन्त्र: ।

सर्पभयहर यन्त्र

षडंगन्यास:—ओं ज्वल ज्वल महामति स्वाहा हृदयाय।
ओं गरुड चूडानन स्वाहा शिरसि।
ओं गरुड शिखेस्वाहा—शिखायाम्।
ओं गरुड प्रभंजय प्रभंजय प्रभेदय प्रभेदय।
वित्रासय वित्रासय विमर्दय विमर्दय स्वाहा हुं कवचाय।
उग्ररूपधर सर्व विषहर भीषय भीषय सर्व दहदह भस्मी कुरु कुरु स्वाहा नेत्रत्रयाय।
अप्रतिहतवल्या प्रतिहत शासन हुं फट् स्वाहा अस्त्राय।

ध्यानम्—तप्त स्वर्ण निभं फणीन्द्र निकरैः कलृप्तांग भूषं प्रभुम्।
स्मतृंणां शमयन्तमुग्रमखिलं नृणां विषं तत्क्षणात्।
चंच्वग्र प्रचलद् भुजंगमभयं पाण्योर्वरं बिभ्रतम्,
पक्षोच्चारित सामगीत ममलं श्री पक्षिराजं भजे॥

जपसंख्या—पांच लाख। दशांश तिलों से हवन।

पीठपूजनम्—पूजयेन्मातृका पद्मे गरुडं वेद विग्रहम्।
चतुर्थ्यंत: पक्षिराज: स्वाहा पीठमनुस्मृत:।
इष्ट्वांगं कर्णिका मध्ये नागान् पत्रेषु पूजयेत्।
अनन्तं वासुकिं चापि तृतीयं तक्षकं पुन:।
कर्कोटकं तथा पद्मं महापद्मं समर्चयेत्।
शंखपालं च कुलिकमिन्द्रादीन् वज्र संयुतान्।
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री नाशयेद्गरलद्वयम्।
विष्णु भक्ति परो नित्यं यो भजेत् पक्षिनायकम्।
शत्रून् सर्वान् पराभूय सुखी भोगसमन्वित:।
जीवेदनेक वर्षाणि सेवितोधरणीधवै:।
कलेवरान्ते श्रीनाथ सायुज्यं लभते तु स:॥
गरलद्वयं—विषद्वयं स्थापरं जंगमाख्यम्॥

28. महाविद्यानीलसरस्वतीमन्त्र

मन्त्र—ओं ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौं क्लीं ह्रीं ऐं व्लूं स्त्री नीलतारे सरस्वती द्रां द्रीं क्लीं व्लूं स: ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौ: सौ: ह्रीं स्वाहा।

विनियोग:—ओं अस्य श्री महाविद्यामन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि: अनुष्टुप् छन्द: सरस्वती देवता ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग:।

करांगन्यास:—ओं ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सौं अंगुष्ठाभ्यां नम:॥ हृदयाय नम:।

ॐ क्लीं ह्लीं ऐं ब्लूं स्त्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।। शिरसे स्वाहा ।
ॐ नील तारे सरस्वति मध्यमाभ्यां नमः ।। शिखायै वषट् ।
ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः अनामिकाभ्यां नमः ।। कवचाय हुम् ।
ॐ ऐं ह्लीं श्रीं क्लीं सौः कनिष्ठकाभ्यां नमः । नेत्रत्रयाय वौषट् ।।
ॐ सौं ह्लीं स्वाहा करतल करपृष्ठाभ्यां नमः । अस्त्राय फट् ।।

ध्यान—शवासनां सर्व विभूषणाढयां कर्त्री कपालं चषकं त्रिशूलम् ।
करैर्दधानां नरमुण्डमालां त्र्यक्षां भजे नील सरस्वतीं ताम् ।।

जपसंख्या—इस विद्या का चार लाख जप करना चाहिए । मधु-सहित पलाश पुष्पों (टेसू के फलों) से श्रद्धा एवं मनोक्षोभ सहित दशांश हवन करना चाहिए ।

29. विश्वावसुगन्धर्व-मन्त्र

विनियोग:—ॐ अस्य श्री विश्वावसु गन्धर्व मन्त्रस्य विश्वावसु ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः हरगौरी देवता इष्ट कन्या प्राप्तये जपे विनियोगः ।

न्यास:—विश्वावसु ऋषये नमः शिरसि ।
अनुष्टुप् छन्दसे नमः मुखे ।
हरगौरी देवतायै नमः हृदि ।
विश्वावसु गन्धर्वराजाय अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
कन्यानामाधिपतये तर्जनीभ्याम् ।
लभामहे देवकन्या मध्यमाभ्याम् ।
सुवर्णालंकृतां अनामिकाभ्याम् ।
अमुक नाम्नीं कनिष्ठिकाभ्याम् ।
देहिमे विश्वावसवे स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्याम् ।
एवं हृदयादिन्यासः ।

ध्यानम्—हस्ताब्जैः विविध प्रधानि कमलं ध्यायेत् । सुदीप्ताम्बरां कन्यां प्रार्थयते वराय ददानं सद्वस्त्र भूषार्पितम् । कन्याभिः परिवारितं निजमुखाम्भोजाभिरानन्दितम् । नाना कल्प कला कलाप कलितं विश्वावसुं चिन्तयेत् ।।

मन्त्र—ॐ विश्वावसु र्नाम गन्धर्वः कन्यानामधिपतये लभामहे देवकन्यां सुरूपां स्वर्णालंकृताम् अमुकनाम्नीं देहि

मे नमः स्वाहा ॥

विधि—वटवृक्ष मूले स्थित: देवं सम्पूज्य चत्वारिंशत सहस्र (40000) जपेत । दशांशतर्पणम् । दशांश मार्जनम् । दशांश ब्राह्मण भोजनम् । त्रयोदश्यां कुमारिकायै शर्करापूरितम् कांस्य पात्रम् यच्छेत् ।

कमलवीज मालिकया यजेत् ॥

विवाह के लिए यह उत्तम प्रयोग है । या जिसके साथ विवाह करने की इच्छा हो उसके लिए भी फलप्रद है ।

30. षडक्षर शिवमन्त्र

विनियोग:—ओं अस्य श्री षडक्षर शिव मन्त्रस्य वामदेव ऋषि: पङ्क्ति छन्द: सदाशिवोदेवता पुरुषार्थ चतुष्टय सिद्ध्यर्थे जपे विनियोग: ।

मन्त्र—ओं नमः शिवाय ॥

अंगन्यास:—वामदेवऋषये नम: शिरसि । पङ्क्त छन्दसे नमो मुखे । सदाशिवाय देवतायै नम: हृदये । चतुर्विध पुरुषार्थ सिद्धये जपे विनियोग: इति कृतांजललिर्वदेत् । ओं हृदयाय नम: । न शिरसे स्वाहा । म: शिखायै वषट् । शिवकवचाय हुम् । वा नेत्रत्रयाय वौषट् । य अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—शान्तं पद्मासनस्थं शशिमुकुटधरं मुण्डमालं त्रिनेत्रम् । शूलं खड्गं च वज्रं परशुमुसलके दक्षिणांगे वहन्तम् । नागं घण्टां कपालं नलिनकर युतं सांकुशं पाशमन्ये । नानालंकार युक्तं स्फटिक मणिनिभं नौमि वालं शिवाख्यम् ।

जप—इस मन्त्र का सवा लाख संख्या में जप करे । शिवार्चन समन्त्रक करे । ब्रह्मचर्य का पालन करे ।

ओंकारं विन्दु संयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिन: ।
कामदं मोक्षदं चैव ओंकाराय नमो नम: ॥1॥
न जातिर्न मृतिर्यस्य क्षयो यस्य न विद्यते ।
नमन्ति देवता: सर्वे नकारं तं नमाम्यहम् ॥2॥
महादेवं महावक्त्रं महाध्यान-परायणम् ।
महापापहरं देवं मकारं तं नमाम्यहम् ॥3॥

शिवात् परतरं नास्ति शिवशास्त्रेषु निश्चय: ।
शमन्ति सर्वपापानि शकारं तं नमाम्यहम् ।।4।।
वाहनं वृषभो यस्य वासुकि कण्ठ भूषणम् ।
वामे शक्तिधरं देवं वकारं तं नमाम्यहम् ।।5।।
यत्र यत्र स्थितो देव:सर्वव्यापी महेश्वर: ।
यो गुरु: सर्वदेवानां यकारं तं नमाम्यहम् ।।6।।
इदं षडक्षर स्तोत्रं प्रातरुत्थाय य: पठेत् ।
विमुच्यते सर्वपापेभ्यो शिवलोकं स गच्छति ।।

मन्त्र—ओं अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्य: ।
सर्वेभ्योऽथशर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्य: ।

शिव गायत्री—ओं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि ।। तन्नो रुद्र: प्रचोदयात् ।।

ये दोनों मन्त्र भी भगवान् शिव के फलप्रद हैं ।

31. प्रत्यंगिरा-मन्त्र

विनियोग:—अस्य श्री प्रत्यंगिरा मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि: अनुष्टुप् छन्द: देवी प्रत्यंगिरा देवता ओं बीजं ह्रीं शक्ति: परकृत्यनिवारणे जपे विनियोग: । (ममाखिलावाप्तये वा)

खडङ्गन्यास:—ह्रां हृदये नम: । ह्रीं शिरसे स्वाहा । ह्रूं शिखायै वषट् । ह्रैं कवचाय हुम् । ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ह्र: अस्त्राय फट् ।।

ध्यानम्—सिंहारूढातिकृष्णं त्रिभुवनभयकृद् रूपमुग्रं वहन्ती ज्वाला वक्त्रावसाना नववसन युगं नीलमण्याभ कान्ति: । शूलं खड्गं वहन्ती निजकर युगले भक्तरक्षैक दक्षा । सेयं प्रत्यंगिरा संक्षपयतु रिपुभि: निर्मितं वीभिचारम् ।।

मन्त्र:—ओं ह्रीं नम: कृष्णवाससे शतसहस्र हिंसिनि सहस्रवदने महाबले अपराजिते प्रत्यंगिरे परसैन्य पर-

कर्म विध्वंसिनि परमन्त्रोत्सादिनि सर्वभूतदमनि सर्व-देवान् बन्ध बन्ध सर्व विद्या: छिन्धि छिन्धि क्षोभय क्षोभय परयन्त्राणि स्फोटय स्फोटय सर्वश्रृंखला: त्रोटय त्रोटय ज्वलज्ज्वाला जिह्वे करालवदने प्रत्यंगिरे ह्रीं नमः ॥

जनसंख्या—इस मन्त्र का दस हज़ार जप करना चाहिए। तथा तिल एवं राजिका से एक हज़ार आहुतियां देकर सिद्ध मन्त्र का काम्य प्रयोग में एक सौ वार जप करना चाहिए। ग्रह एवं भूत आदि से ग्रस्त व्यक्ति पर इस मन्त्र का एक सौ वार जप करते हुए जल से मार्जन करना चाहिए।

अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रं तिलराजिका: ।
हुत्वा सिद्धमनुं मन्त्रं प्रयोगेषु शतं जपेत् ॥
ग्रहभूतादिका विर्ष्टि सिंचेन्मन्त्रं जपञ्जलैः ।
विनाशयेत् परकृतं यंत्र मन्त्रादि कर्मणाम् ॥

32. छिन्नमस्तका-मन्त्र

मन्त्र—ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं वज्र वैरोचनीये ह्री ह्रीं फट् स्वाहा।

विनियोग—ॐ अस्य श्री छिन्नमस्तका मन्त्रस्य भैरव ऋषि: सम्राट् छन्द: छिन्न मस्तका भुवनेश्वरी देवता हूं हूं वीजं स्वाहा शक्ति-ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ।

ऋष्यादिन्यास—भैरव ऋषये नम: शिरसि। सम्राट् छन्दसे नम: मुखे। छिन्नमस्तक देवतायै नम: हृदि। हूं हूं वीजाय नम: गुह्ये। स्वाहा शक्तये नम: पादयो:।

करांगन्यास :—

ॐ आं खड्गाय ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा—कनिष्ठयो: हृदयाय।
ॐ ईं सुखड्गाय ,, ,, ,, ,, अनामिकयो:। शिरसे।

ओं ऊं वज्राय ,, ,, ,, ,, मध्यमयो: । शिखायै ।
ओं ऐं पाशाय ,, ,, ,, ,, तर्जन्यो: । कवचाय ।
ओं औं अंकुशाय ,, ,, ,, ,, अंगुष्ठयो: । नेत्रत्रयाय ।
ओं अ: वसुरक्ष ,, ,, ,, ,, करतलकर पृष्ठयो: । अस्त्राय ।।

ध्यानम्—भास्वन्मण्डलमध्यगां निजशिरश्छिन्नं विकीर्णालकम् ।
स्फारास्यं प्रपिबद्गलात्स्वरुधिरं वामकरे विभ्रतीम् ।
याभासक्तरति स्मरोपरिगतां सख्यौ निजे डाकिनी ।
वर्णिन्यौ परिदृश्यमोद कलितां श्री छिन्नमस्तकां भजे ।

जपसंख्या—इस प्रकार देवी का ध्यान करके चार लाख मन्त्र का जप करना चाहिए । पलाश या बेल के पत्र एवं फलों से दशांश होम करना चाहिए ।

ध्यात्वैवं प्रजपेल्लक्षं चतुष्कं तद्दशांशत: ।
पलाशै: विल्वजैर्वापि जुहुयात् कुसुमै: फलै: ।।

पीठ पूजा—आधारशक्तये नम: से लेकर परमात्मने नम: तक पूजित पीठ पर दिशाओं में जया, विजया, अजिता, नित्याविलासिनी, दोग्ध्री, एवं अघोरा तथा मध्य में मंगला का पूजन करना चाहिए ।

ओं आधार शक्तये नम: ।	ओं कल्पवृक्षाय नम: ।
ओं प्रकृतये नम: ।	ओं स्वर्णसिहासनाय नम: ।
ओं कूर्माय नम; ।	ओं आनन्दकन्दाय नम: ।
ओं अनन्ताय नम: ।	ओं संविन्नलाय नम: ।
ओं पृथिव्यै नम: ।	ओं सर्वतत्त्वात्मकपद्माय नम: ।
ओं क्षीर समुद्राय नम:	ओं सत्त्वाय नम: ।
रत्नद्वीपाय नम: ।	ओं रजसे नम:
ओं अं अन्तरात्मने नम: :	ओं तं तमसे नम: ।
ओं पं परमात्मने नम: ।	ओं आत्मने नम: ।
ओं ह्रीं ज्ञानात्मने नम: ।	ओं इति कामाभ्यां नम: ।

इससे पीठ पूजा कर-पूर्वादि दिशाओं में शक्तियों का पूजन करे ।

ओं जयायै नमः। ओं विजयायै नमः। ओं अजितायै नमः। ओं अपराजितायै नमः।

ओं नित्यायै नमः। ओं विलासिन्यै नमः। ओं दोग्ध्र्यै नमः। ओं घोरायै नमः।

मध्यमे-मंगलायै नमः। इसके बाद-सर्व बुद्धिप्रदे वर्णनीये सर्वसिद्धिप्रदे डाकिनीये, ओं वज्रवैरोचनीये एह्येहि नमः।

छिन्नमस्तका मन्त्र—2.

मन्त्र—ओं सर्वसिद्धवर्णनीये सर्वसिद्धि डाकिनीये ओं वज्रवैरोचनीये इहावह, सर्वसिद्धिवर्णनीये सर्वसिद्धि डाकिनीये वज्रवैरोचनीये इह तिष्ठ तिष्ठ इह सन्निधेहि इह सन्निरुद्धस्व, इस प्रकार आवाहन कर ओं वज्रवैरोचनीये देहि देहि एहि एहि गृह्ण गृह्ण स्वाहा मम शत्रून् मारय मारय करालिके हुं फट् स्वाहा।

त्रिकोण में छिन्नमस्तकादेवी और उसके दोनों ओर डाकिनी एवं वर्णिनी नामक दोनों सखियों का प्रणव एवं वाग्बीज सहित नाम मन्त्रों से पूजन करना चाहिए। देवी की आज्ञा लेकर आवरण पूजन करनी चाहिए।

1- वज्राय नमः। शक्तये०। दण्डाय०। खड्गाय०। पाशाय०। अंकुशाय०। गदायै०। शूलाय०। पद्माय०। चक्राय०।

2. इन्द्राय नमः। अग्नये०। यमाय०। निर्ऋतये०। वरुणाय०। वायवे०। सोमाय०। ईशानाय०। ब्रह्मणे०। अनन्ताय०।

3. करालाय०। विकरालाय०। अतिकालाय०। महाकालायै नमः। भूपर के द्वारों पर।

4. एकलिंगायै०। योगिन्यै०। डाकिन्यै०। भैरव्यै०। महाभैरव्यै०। केन्द्राक्ष्यै०। असितांग्यै०। संहारिण्यै नमः। अष्टदल कमल पर।

इन मन्त्रों से पडङ्ग पूजा करके-तदनन्तर त्रिकोण में—

ओं छिन्नमस्तकायै नमः। ऐं डाकिन्यै०। ऐं वर्णिन्यै०। इन मंत्रों से डाकिनी, वर्णिनी एवं छिन्नमस्तका देवी का पूजन कर पांच पुष्पांजलि देकर जप करना चाहिए।

33. आसुरीविद्या

अथर्ववेद में प्रतिपादित आसुरी विद्या का प्रयोग (मन्त्रमहोदधि)

विनियोग:—ॐ अस्य श्री आसुरी मन्त्रस्य अंगिरा ऋषि: विराट् छन्द: आसुरी दुर्गा देवता ॐ वीजं स्वाहा शक्ति: ममाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोग: ।

ऋष्यादि न्यास:—अंगिरसे ऋषये नम: शिरसि ।
विराट् छन्दसे नम: मुखे । आसुरी दुर्गा देवतायै नम: हृदि ।
ॐ ॐ बीजाय नम: गुह्ये । ॐ स्वाहा शक्तये नम: पादयो: ।

षडङ्गन्यास:—ॐ कटुके कटुकपत्रे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नम: ।
ॐ सुभगे आसुरी हुं फट् स्वाहा शिरसे स्वाहा ।
ॐ रक्ते रक्तवाससे हुं फट् स्वाहा शिखायै वषट् ।
ॐ अथर्वणस्य दुहिते हुं फट् स्वाहा कवचाय हुम् ।
ॐ अघोरे अघोर कर्म कारिके हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट् ।
अमुकस्य गतिं दह दह प्रवुद्धस्य हृदयं दह दह हन हन ।
ॐ पच पच तावद् दह तावत् पच यावत् त्वं मे वशमायाति हुं फट् स्वाहा । अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—शरच्चन्द्र कान्तिर्वराभीतिशूलं
सृणिं हस्त पद्मै: दधानाम्बुजस्था ।
विभूषां वराढ्याहि यज्ञोपवीता—
मुदोऽथर्वपुत्री करोत्वासुरी न: ॥

मन्त्र—ॐ कटुके कटुकपत्रे सुभगे आसुरि रक्ते रक्तावससे अथर्वणस्य दुहिते अघोर अघोर कर्मकारिके अमुकस्य गतिं दह दह हन हन पच पच तावद् दह तावत् पच यावन्मे वशमायाति हुं फट् स्वाहा ।

जप एवं हवन—इस मन्त्र का दस हज़ार जप करना चाहिए तथा घी मिलाकर राई से दशांश होम करने पर मन्त्र सिद्ध हो जाता है ।

काम्य प्रयोग—राई के पांचों अंग जड़, शाखा, पत्र, पुष्प एवं फल

को लेकर साधक मूल मन्त्र से 100 वार अभिमन्त्रित करे, फिर उससे स्वयं को धूपित करे ऐसा करने पर जो व्यक्ति उसे सूंघता है, वह वश में हो जाता है।

34. श्री विद्या

श्री विद्या च तथा लक्ष्मीर्महालक्ष्मी स्तृतीयका।
त्रिशक्तिः सर्व साम्राज्या पंच लक्ष्म्यः प्रकीर्तिताः॥
श्री विद्या परं ज्योतिः पर निष्कलशांभवी।
अजपा मातृका चेति पंच कोशा इमे स्मृताः॥
श्री विद्या त्वरिता चैव पारिजातेश्वरी पुनः।
त्रिपुरा पंच वाणेशी पंच कल्पलता इमाः॥
श्रीविद्याऽमृतपीठेशी सुधा श्रीरमृतेश्वरी।
अन्नपूर्णेति विख्याताः पंचैताः कामधेनवः॥
श्री विद्या सिद्धलक्ष्मीश्च मातंगी भुवनेश्वरी।
वाराही च स्मृतं चैतन्मुनिभिरल पंचकम्॥
श्री विद्यां मूलमन्त्रेण मध्ये संयोज्य पूजयेत्।
क्रमतोऽन्याश्चतुर्दिक्षु तासां मन्त्रान् क्रमाद् ब्रुवे।
वकेशो वह्निमारूढो वामनेत्रेन्दु संयुतः।
लक्ष्मीमन्त्रोऽयमेकार्णस्तेन लक्ष्मीं प्रपूजयेत्॥

महालक्ष्मीमन्त्रः—ॐ श्रीं ह्रीं श्रीं कमले कमलालये प्रसीद प्रसीद श्रीं ह्रीं श्रीं महालक्ष्म्यै नमः॥ (अष्टाविंशतिवर्णात्मकः)

35. अथ ऋणमोचन मंगलस्तोत्रम्

यन्त्राग्रे खदिराङ्गारेण समाः दक्षिणोत्तराः तिस्राः रेखा कृत्वा तासु ऋणं विन्यस्य वामपादेनाक्रम्य एकविंशति वारं स्तोत्रं पठेत्।

अस्य श्री ऋणमोचन मङ्गल स्तोत्रमन्त्रस्य भार्गव ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः ऋणहर्ता मङ्गलेश्वर भूमिपुत्रो देवता श्रीं वीजं, ह्रीं शक्तिः ऐं कीलकम्, मम सकल मङ्गल प्रीत्यादि सिद्धयर्थे ऋणमोचनार्थे जपे विनियोगः॥

अथांग न्यास:—ओं भर्गव ऋषये नम: शिरसि, अनुष्टुप् छन्दसे नमो मुखे, मङ्गलेश्वर भूमिपत्र देवतायै नमो हृदि, श्रीं वीजाय नमो नाभौ, ह्रीं शक्त्यै नमो गुह्ये, ऐं कीलकाय नम: पादयो:, मम मङ्गल प्रसाद सिद्धयर्थे जपे विनियोगाय नम: सर्वाङ्गे ।

ओं श्रीं हृदयाय । नम: ह्रीं शिरसे स्वाहा, ऐं शिखायै, वषट् ।

मन्त्र—ॐ अग्निर्मूर्धा दिव: ककुत्पति पृथिव्या अयं, अपा ᳲ रेता ᳲ सिजन्वति ।

गायत्री—ॐ अङ्गारकाय विद्महे शक्ति हस्ताय धीमहि, तन्नो भौम: प्रचोदयात् ।

ॐ दुखदौर्भाग्य नाशाय धन सन्तान हेतवे ।
कृतं रेखा त्रयं वामपादेन मार्जाम्यहम् ॥
ऋण दुख विनाशाय मनोऽभीष्टार्थ सिद्धये ।
मार्जाम्यसिता रेखा: तिस्रो जन्म त्रयोद्भवा: ॥
तत: पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा प्रार्थनां कुर्यात्—
धरणीगर्भ सम्भूतं विद्युत्तेज: समप्रभम् ।
कुमारं शक्ति हस्तं च मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥
ऋण हर्त्रे नमस्तुभ्यं दुखदारिद्रय नाशिने ।
नमस्ते द्योतमानाय सर्व कल्याण कारिणे ॥
देवदानव गन्धर्व यक्षराक्षस पन्नगा: ।
सुखं यान्ति यतस्तस्मै नमो धरणी सूनवे ॥
यो वक्रगतिमापन्नो नृणां दु:खं प्रयच्छति ।
पूजित: सुख सौभाग्यं क्ष्मासूनवे नम: ॥
जपाकुसुम पुष्प निभ काय महीपुत्र महामते ।
वक्रगायोग्रवीर्याय लोहिताङ्गाय ते नम: ॥
लोहिताक्ष नमस्तुभ्यं नमस्ते लोहिताम्बर ।
ग्रहराज महीपुत्र मम शान्तिप्रदो भव ॥
प्रसादं कुरु मे देव मङ्गलप्रद मङ्गल ।

मेषवाहन रुद्रात्मन् पुत्रान् देहि धनं यश: ।
अङ्गारक महाभाग भगवत् भक्तवत्सल ।
त्वां नमामि ममा शेषमृणमाशु विमोचय ।।
ऋणरोगादि द्ररिद्रयं पापं क्षुत्तृडपमृत्यव: ।
भय क्लेश मनस्तापा: नश्यन्त मम सर्वदा ।।
तप्तकाञ्चन संकाश तरुणार्क समप्रभ ।
सुख सौभाग्य धनद ऋण दारिद्रय नाशक ।।
ग्रहराज नमस्तुभ्यं सर्वकल्याण कारक ।
प्रसादात्तव देव देवेश सर्वकल्याण भाजन ।।
उज्जयिन्यां समुत्पन्नो भूमौ भौम: चतुर्भुज: ।
भारद्वाज कुले जात: शूलशक्ति गदाधर: ।।
वालकुमारस्तेजस्वी नित्य प्रहृष्ट मानस: ।
पूर्वज: पृथिवीपुत्र: स भौम: प्रीयतां मम ।।
येनार्जिता जगत्कीर्ति: भूमि पुत्रेण शाश्वती: ।
शत्रवश्च हता येन भौमेन हि महात्मना ।।
स प्रीयतां भौमो मे अद्य तुष्टो भूयात् सदा मम ।
ऋण हर्त्रे नमस्तुभ्यं दु:खदौर्भाग्य नाशक ।।
सुख सौभाग्यदो धनदो भव मे धरणी सुत ।
भावहीनं भक्तिहीनं श्रद्धाहीनं सुरेश्वर ।
पूजनं त्वत्प्रसादेन परिपूर्णं तदस्तु मे ।

पुष्पाञ्जलिं दद्यात्

ध्यानम्

असृजमरुणवर्णं रक्तमाल्याङ्गरागम्,
कनक कमल माला मलिनं विश्व वन्द्यम् ।
अति ललितकराभ्यां विभ्रतं शक्तिशूले,
भजत धरणी सूनुं मंगलं मङ्गलानाम् ।।

ईश्वर उवाच

ओं मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रद: ।

स्थिरासनो महाकायः सर्व कर्मविरोधकः ॥
लोहितो लोहिताक्षश्च सामगानां कृपाकरः ।
धरात्मजः कुजो भौमो भूतिदो भूमि नन्दनः ॥
अङ्गारको यमश्चैव सर्व रोगापहारकः ।
वृष्टिकर्तापहर्ता च सर्वकामफलप्रदः ॥
एतानि कुज नामानि नित्यं य प्रयतः पठेत् ।
ऋणं न जायते तस्य सन्तानं वर्धते सदा ॥
एक कालं द्विकालं वा यः पठेत् सुसमाहितः ।
एवं कृते न सन्देहः ऋणं हित्वा सुखी भवेत् ॥
एकविंशति नामानि पठित्वा तु दिनान्तके ।
रूपवान् धनवान् चैव जायते नात्र संशयः ॥
ऋणरेखा प्रकर्तव्याऽङ्गारेण तदग्रतः ।
ताश्च प्रमार्जयेत् यस्तु वामपाद तलेन तु ॥
ऋणं न जायते तस्य ऋणहर्ता धनी भवेत् ।
पूजितो येन देवेशो मङ्गलो मङ्गल प्रदः ।
उत्पाताः प्रलयं यान्ति ग्रहपीडाश्च दारुणाः ॥
न भयं विद्यते तस्य सदा भौमप्रसादतः ।
रत्नमाल्याम्बरधरः शक्ति शूलगदाधरः ।
चतुर्भुजो मेषगतो वरदः स्याद्धरासुतः ॥
रक्त पुष्पैश्च गन्धैश्च धूपदीप गुडोदकैः ।
मङ्गलं पूजयेत् भव्या मङ्गलेऽह्नि सर्वदा ॥
उज्जयिन्यां समुत्पन्न भो भो भौम चतुर्भुज ।
भारद्वाज कुले जातः शक्तिशूलगदाधर ॥

अथ अर्घ्यम्

मेषनारूढ वरद स्कन्द प्रदातातिविक्रम ।
प्रसीद देव देवेश विघ्नहारन धरात्मज ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं मम शान्तिप्रदो भव ।
भूमिपुत्र महातेजः स्वेदोजभव पिनाकिनः ॥
श्रेयोऽर्थी त्वां प्रपन्नोऽस्मि गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ।
रक्त प्रवाल संकाशं जपापुष्प सन्निभ ।
गृहाणार्घ्यं मया दत्तं प्रसीद त्वं महीसुत ।
भूमि पुत्रो महातेजा ज्वलदङ्गार सन्निभः ।
कुमारो रक्तवासश्च ऋणहर्ता धनप्रदः ।
+सद्यः सर्व ऋणच्छेदः (3) कलौ प्रत्यक्षकारकः ।
नातः परं त्रैलोक्येषु विद्यते ऋण मोचनम् ।
प्रकर्तव्यं प्रयत्नेन पठेन्नित्यं नरः सदा ।
पुत्रं लभते सपदि सर्वज्ञं दीर्घमायुषम् ।
इति स्त्रोत्रपाठं विधाय रेखात्रयं वामपादेन मार्जयेत् ।

नवग्रहाणां मन्त्र जापः

36. सूर्य

विनियोगः—आकृष्णेन इति मन्त्रस्य हिरण्यस्तूपाङ्गिरा ऋषिः सूर्यो देवता त्रिष्टुप् छन्दः सूर्यप्रीतये सूर्यमन्त्रजपे विनियोगः ॥

मन्त्र—ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ओं भूर्भुवः स्वः ओं आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन् । ओं स्वः भुवः भूः ओं सः ह्रौं ह्रीं ह्रां ओं सूर्याय नमः ॥

वीज मन्त्र—ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः ।

मन्त्र संख्या सात हजार । करनी चाहिए । कलि युग में जप संख्या 28000 अट्ठाईस हजार होगी ।

JAIN PICTURE HOUSE, AGRA.

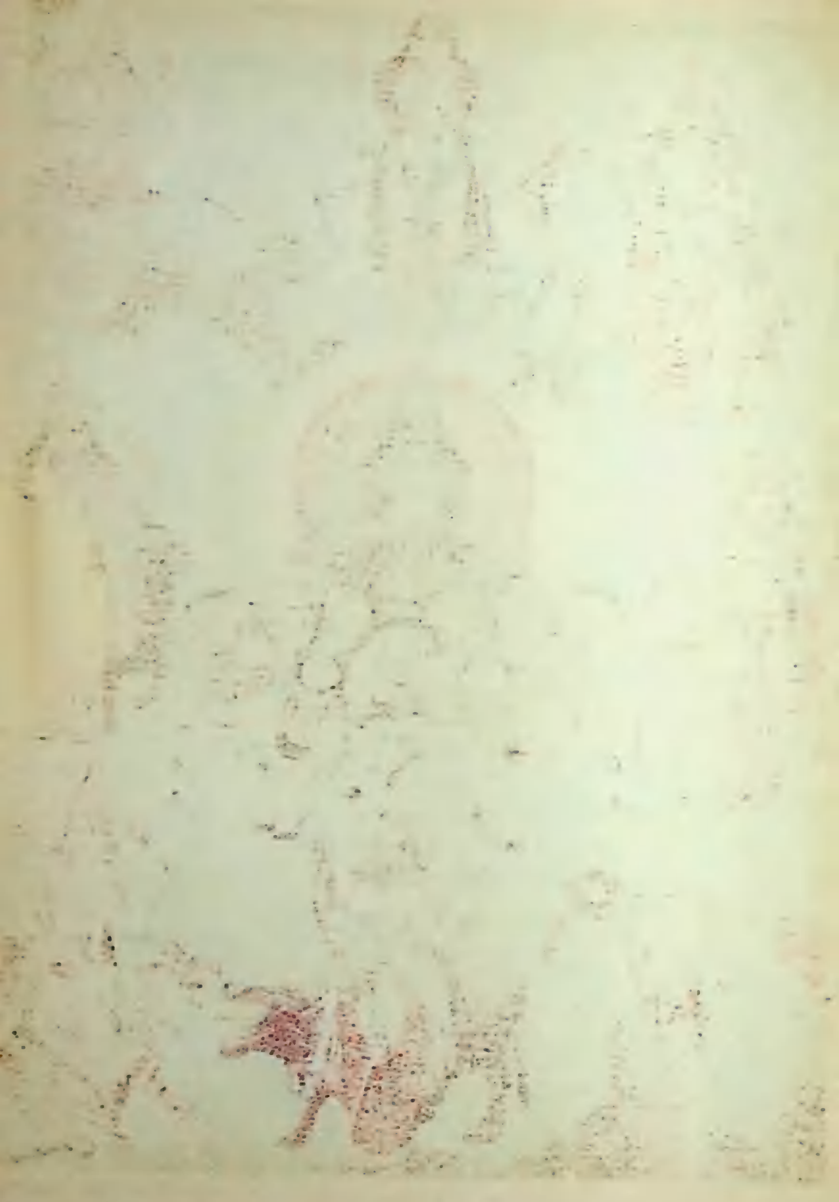

(सोम) चन्द्रमन्त्र

विनियोग:—उों इमं देवा इति मन्त्रस्य वरुण ऋषि: अग्नि: देवता सोमप्रीतये सोममन्त्र जपे विनियोग: ।

मन्त्र—उों श्रां श्रीं श्रौं स: उों भूर्भुव: स्व: उों इमन्देवा असपत्न ꣳ सुवध्वम्महते क्षत्राय महते ज्येष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इमममुष्य पुत्रममुष्यै पुत्रमस्यै विश एष वोमीराजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ꣳ राजा । उों स्व: भुव: भू: उों स: श्रौं श्रीं श्रां उों सोमाय नम: ।

बीजमन्त्र—उों श्रां श्रीं श्रौं स: चन्द्रमसे नम: । जपसंख्या 11000 । कलौ 44000 ॥

भौममन्त्र

विनियोग—उों अग्निर्मूर्धा इति मन्त्रस्य विरूपांगिरस ऋषि: अग्निर्देवता गायत्री छन्द: भौमप्रीतये भौममन्त्रजपे विनियोग: ॥

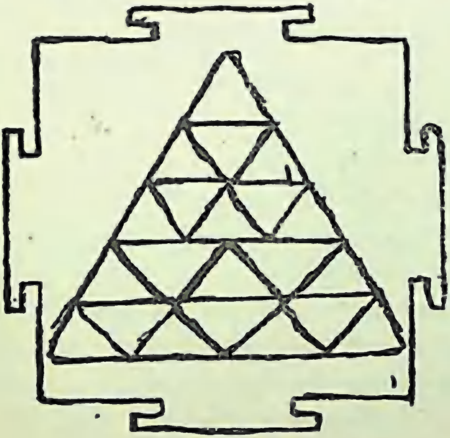

मंगल यन्त्र

मन्त्र—ओं क्रां क्रीं क्रौं सः ओं भूर्भुवः स्वः ओं अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपा ठ रेता ठ सिजिन्वति ।।

ओं स्वः भुवः भूः ओं सः क्रौं क्रीं क्रां ओं भौमाय नमः ।।

वीजमन्त्र—ओं क्रां क्रीं क्रौं सः भौमाय नमः ।।

जपसंख्या 10000 दस हजार । कलौ 40000 ।।

सन्तान प्राप्ति कर—व

ऋणहर्ता मंगलविधानम ।

मन्त्र—ओं हां हं सः खं खः ।।

इस मन्त्र के करने से ऋण समाप्त होकर अभीष्ट फल को देता है ।

ध्यानम्—जपाभं शिव स्वेदजं हस्तपद्मैः
गदाशूल शक्तीर्वरं धारयन्तम् ।
अवंति समुत्थं सुमेषासनस्थं
धरानन्दनं रक्तवस्त्रं समीढे ।।

इस मन्त्र का छः लाख जप होगा ।

शैवे पीठे यजेद्भौमं प्रागंगानि प्रपूजयेत् ।
एकविंशति कोष्ठेषु मंगलादीन् प्रपूजयेत् ।
तद्वहिः ककुभां नाथान् कुलिशादीं स्ततोऽर्चयेत् ।
इत्थं जपादिभिः सिद्धं स्वेष्ट सिद्धौ प्रयोजयेत् ।।
नारी पुत्रमभीप्सन्ती भौमाहे तद् व्रतं चरेत् ।।
मार्गशीर्षेऽथ वैसाखे तस्यारम्भः प्रशस्यते ।।
अरुणोदय वेलायामुत्थाय शुचि विग्रहा ।
दन्तान् धावेदपामार्गसमिधा मौन सेविनी ।।
नद्यादि सलिले स्नात्वा धारयेद् रक्त वाससी ।।

नैवेद्यकुसुमालेपान् रक्तान् संपाद्य संयता ।
रक्तगो गोमयालिप्तदेशे पीठनिषेविणी ।
मंगलादीनि नामानि स्व प्रतीकेषु विन्यसेत ॥
मंगलं विन्यसेदंघ्र्योर्भूमिपुत्रं तु जानुनो: ।
ऊर्वोश्च ऋणहर्तारं कटिदेशे धनप्रदम् ॥
स्थिरासनं गुह्यदेशे महाकायमथोरसि ॥
वाम वाहौ ततो न्यस्येत् सर्व कर्मावरोधकम् ।
लोहितं दक्षिणे वाहौ लोहिताक्षं गले न्यसेत् ।
वदनेविन्यसेत् साध्वी सामगानां कृपाकरम् ।
धरात्मजं नसोरक्ष्णो: कुजं भौमं ललाटत: ।
भूतिदन्तुभ्रुवोर्मध्ये मस्तके भूमिनन्दनम् ॥
अंगारकं शिखादेशे सर्वांगे विन्यसेद्यमम् ।
ततो वाहुद्वये न्यस्येत् सर्वरोगापहारकम् ।
मूर्द्धादिपादपर्यन्तं वृष्टिकर्तारमंगके ।
विन्यसेत् वृष्टिहर्तारं मूर्धान्तं चरणादित: ॥
दिक्षु विन्यसेदंत्यं सर्व कामफलप्रदम् ।
आरं वक्रं भूमिजं च नाभौ वक्षसि मूर्धनि ।
एवं न्यस्तशरीरोऽसौध्यायेद् धरणी नन्दनम् ।
अर्थं संस्थाप्य विधिवत् पूजयेदुपचारकै: ॥
ध्यायंती चरणाम्भोजं पूजा सांगत्व सिद्धये ।
धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्तेज: समप्रभम् ॥
कुमारं शक्तिहस्तं च मंगलं प्रणमाम्यहम् ॥
ऋणहर्त्रे नमस्तुभ्यं दु:खदारिद्रय् नाशिने ।
नभसि द्योतमानाय सर्वकल्याण कारिणे ।
देवदानवगन्धर्व यक्षराक्षस पन्नगा: ।
सुखं यान्ति यतस्तस्मै नमो धरणीसूनवे ॥
यो वक्रगतिमापन्नो नृणां दु:खं प्रयच्छति ।
पूजित: सुखसौभाग्यं तस्मै क्ष्मासूनवे नम: ।

प्रसादं कुरु मे नाथ मंगलप्रद मंगल ।
मेषवाहन रुद्रात्मन् पुत्रान् देहि धनं यशः ।
एवं संस्तूय संपूज्य गृह्णीयाद् ब्राह्मणाशिषः ।
गुरवे दक्षिणां दत्त्वा भुंजीतान्नं निवेदितम् ।
प्रति भौमदिने कुर्यादेवं संवत्सरावधि ।
तिलैः संजुहुयाद् होमं शतार्द्धं भोजयेद्द्विजान् ।
माहेय मूर्ति सौवर्णीमाचार्याय निवेदयेत् ।
मण्डलस्थे घटे अभ्यर्च्य सुतसौभाग्य सिद्धयै ।
एवं व्रतपरा नारी प्राप्नुयात् सुभगान् सुतान ।
धान्याप्त्यै ऋणनाशाय व्रतं कुर्यात् पुमानपि ।।

भौम गायत्री—ओं अंगारकाय विद्महे शक्ति हस्ताय धीमहि तन्नो भौमः प्रचोदयात् ।।

एकविंशति कोष्ठाढ्ये त्रिकोणे ताम्रपात्रगे ।
आवाह्य धरणी पुत्रं शोणैः पुष्पैश्च चन्दनैः ।
अंगानि पूजयेत् वाह्ये शक्रादीनायुधान्यपि ।।
धूपदीपैः विधायाथ गोधूमान्नं निवेदयेत् ।
जल पूर्णे ताम्रपात्रे गन्धपुष्पाक्षतान्विते ।
फलं निधाय मन्त्राभ्यां भौमायार्घ्यं निवेदयेत् ।।
भूमि पुत्र महातेजः स्वेदोद्भव पिनाकिनः ।
सुतार्थिनी प्रपन्ना त्वां गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ।
रक्तप्रवाल संकाश जपाकुसुम सन्निभ ।
महीसुत महावाहो गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ।
एकविंशति कृत्वाथ प्रणमेत् पूर्वं नामभिः ।
प्रदक्षिणा विधातव्यास्तावत्यो वसुधात्मजे ।
खदिरांगारके नाथ कुर्याद् रेखा त्रिकं समम् ।
वामपादेन मन्त्राभ्यामेताभ्यां तत्प्रमार्जयेत् ।
दुःख-दौर्भाग्य नाशाय पुत्रसंतान हेतवे ।
कृतरेखा त्रयं वामपादेनैतत् प्रमार्जयाम्यहम् ।।

ऋण दु:ख विनाशाय मनोऽभीष्टार्थ सिद्धये ।
मार्जयाम्यसिता रेखास्तिस्रो जन्म त्रयोद्भवा: ।
ततः पुष्पांजलिकरा स्तुवीत धरणीसुतम् ।

वुधमन्त्रः

विनियोग:—ओं उद्वुध्य इति मन्त्रस्य परमेष्ठी ऋषिः वुधो देवता त्रिष्टुप् छन्दः वुध प्रीतये वुधमन्त्र जपे विनियोग: ॥

मन्त्र—ओं व्रां व्रीं व्रौं सः ओं भूर्भुवः स्वः ओं उद् वुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहित्वमिष्टापूर्ते स ᳪ सृजेथा-मयञ्च । अस्मिन्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यज-मानश्च सीदत । ओं स्वर्भुवर्भूः ओं सः व्रौं व्रीं व्रां ओं वुधाय नमः ॥

बीजमन्त्र—ओं व्रां व्रीं व्रौं सः वुधाय नमः ।

जपसंख्यां 4000 । कलौ 16000 ॥

वृहस्पतिमन्त्रः

विनियोग:—ओं वृहस्पते इति मन्त्रस्य गृत्समद ऋषिः व्रह्मा देवता त्रिष्टुप्छन्दः वृहस्पतिप्रीतये वार्हस्पत्य मन्त्रजपे विनियोगः ।

मन्त्र—ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ओं भूर्भुवः स्वः ओं वृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद्युमद् विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद् दीद-यच्छवस ऋत प्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् । ओं स्वर्भुवर्भूः ओं सः ह्रौं ह्रीं ह्रां ह्रों ओं वृहस्पतये नमः ॥

वीजमन्त्र:—ओं ह्रां ह्रीं ह्रौं सः वृहस्पतये नमः ।

जपसंख्या—19000 । कलौ 76000 ॥

वृहस्पतिमन्त्रविधानम् (मन्त्रमहोदधौ)

विनियोग—उों अस्य श्री वृहस्पति मन्त्रस्य व्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप छन्दः सुराचार्यो देवता वृं वीजं ममाभीष्ट सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

मन्त्र—उों वृं वृहस्पतये नमः ॥

ध्यानम्—रत्नाष्टापदवस्त्रराशिममलं दक्षात् किरन्तं करादासीनं विपणौ करं निदधतं रत्नादि राशीपरम्, पीतालेपन पुष्पवस्त्रमखिलालंकार संभूषितम् सागर पारगंसुरगुरुं वन्दे सुवर्णप्रभम् ॥

षडंगन्यासः—उों व्रां हृदयाय।

उों व्रीं शिरसे।

उों व्रौं शिखायाम्।

उों सः कवचाय।

उों वृहस्पतये नेत्रत्रयाय।

उों नमः अस्त्रायफट्।

पीठ पर-वृहस्पति का पूजन। 80000 संख्या में जप, पीपल की समिधा में हल्दी, कुंकुम, घृत से हवन। शत्रु, रोग आदि की पीडा में इसका प्रयोग करना चाहिए।

शुक्रमन्त्र

विनियोग—उों अन्नात्परिस्रुत=इतिमन्त्रस्य प्रजापतिः ऋषिः अश्विसरस्वतीन्द्रा देवता जगती छन्दः शुक्रप्रीतये शुक्रमन्त्रजपे विनियोगः।

मन्त्र—उों द्रां द्रीं द्रौं सः उों भूर्भुवः स्वः उों अन्नात् परिस्रुतोरसम्ब्रह्मणा व्यपिवत् क्षत्रम् पयः सोमं प्रजापतिः। ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपान ँ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रिय मिदम्पयोऽमृतं मधु ॥

वीजमन्त्र—उों द्रां द्रीं द्रौं सः शुक्राय नमः।

जपसंख्या—11000। कलौ 44000

शुक्रमन्त्रप्रयोग (मन्त्रमहोददधौ)

विनियोगः—ॐ अस्य श्री शुक्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः विराट् छन्दः दैव्यपूज्यो देवता आं बीजं स्वाहा शक्तिः ममाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे विनियोगः ।

मन्त्र—ॐ भगं मे देहि शुक्राय स्वाहा ।

ध्यानम्—श्वेताम्भोजनिषण्णमापणतटेश्वेताम्वरालेपनम्,
नित्यं भक्तजनाय संप्रददतं वासोमणीन् हाटकम् ॥
वामेनैवकरेण दक्षिण करे व्याद्रयान मुखांकितम्,
शुक्रं दैव्यवरार्चितं स्मितमुखं वन्दे सितांगप्रभम् ॥

जपसंख्या—दस हजार मन्त्र का जाप । दशांशहवन ।

पूजन—श्वेतपद्म पर स्थित, नगेन्द्रादि आयुधों से युक्त पीठ पर शुक्र का पूजन करना चाहिए । श्वेत आसन हो, श्वेतवस्त्रधारण किये हो शुक्रवार को सुगन्धित श्वेत पुष्पों से-दृशांश हवन करना चाहिए । इसके जापसे—सुवर्ण एवं वस्त्र की प्राप्ति होती है ।

शनिमन्त्रः

विनियोगः—ॐ शन्नोदेवी इति मन्त्रस्य दध्यङथर्वण ऋषिः आपो देवता गायत्री छन्दः शनि प्रीतये शनिमन्त्र जपे विनियोगः ॥

मन्त्र—ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ शन्नो-देवीरभिष्टये आपो भवन्तुपीतये शंय्योरभिस्र वन्तु नः ॥ ॐ स्वर्भुवर्भूः ॐ सः प्रौं प्रीं प्रां ॐ शनये नमः ॥

बीजमन्त्र—ॐ प्रां प्रीं प्रौं सः शनये नमः ॥

जपसंख्या—23000 । कलौ 92000 ॥

राहुमन्त्र

विनियोग—ॐ कयानश्चित्र इति मन्त्रस्य वामदेव ऋषिः राहु देवता गायत्री छन्दः राहुप्रीतये राहुमन्त्रजपे विनियोगः ।

मन्त्र—ॐ भ्रां भ्रीं भ्रौं सः ॐ भूर्भुवः स्वः ॐ कया-

नश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा । कयाश चिष्ठया-वृता । उों स्वर्भुवः भूः उों सः भ्रौं भ्रीं भ्रां उों राहवे नमः ॥

वीजमन्त्र—उों भ्रां भ्रीं भ्रौः सः राहवे नमः ॥

केतुः मन्त्रः

विनियोगः—उों केतुं कृण्वन् इति मन्त्रस्य मधुच्छन्दा ऋषिः केतुर्देवता गायत्री छन्दः केतुप्रीतये केतुमन्त्र जपे विनियोगः ॥

मन्त्रः—उों प्रां प्रीं प्रौं सः उों भूर्भुवः स्वः उों केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्या अपेशसे । समुषद्भिरजायथा । उों स्वर्भुवर्भूः उों सः प्रौं प्रीं प्रां उों केतवे नमः ॥

वीजमन्त्र—उों प्रां प्रीं प्रौं सः केतवे नमः ।

जपसंख्या—17000 । कलौ 68000 ॥

नवग्रह पीडा निवारक यन्त्राणि

ग्रहजनित अनिष्ट तथा कष्ट के निवारणार्थ नीचे नौ ग्रहों के यन्त्र दिए जा रहे हैं। जिस ग्रह का अनिष्टकाल हो तदनुसार शुक्लपक्ष के रविवार के दिन सूर्ययन्त्र को, सोमवार को सोम यन्त्र को, मंगलवार को मंगल यन्त्र को, बुधवार को बुध यन्त्र को, गुरुवार को गुरु यन्त्र को, शुक्रवार को शुक्र यन्त्र को, शनिवार को शनि यन्त्र को, बुध को राहु यन्त्र को, रविवार के दिन केतु यन्त्र को अष्ट गन्ध से अनारकी कलम से भोजपत्र पर लिखें। 45 दिन निरन्तर 108 वार एक मन्त्र को लिखें। पंचोपचार से लिखे यन्त्रों का पूजन करें, सभी यन्त्रों को आटे में गोलियां बनाकर मछलियों को खिला दें। तो नेष्ट ग्रहों का अशुभ फल दूर हो जाता है। अन्तिम दिन जिस दिन मन्त्र धारण करना हो—मन्त्र लिखकर पूजन कर चान्दी या तांबे के तवीत में रखकर भुजवन्द पर बान्ध लें। शनि, राहु, केतु के यन्त्रों को काले डोरे में, शेष यन्त्रों को लाल डोरे में बान्धें।

सूर्य

	६	१	८
	७	५	३
१५	२	९	४

चन्द्र

	७	२	९
१८	८	६	४
	३	१०	५

मंगल

८	३	१०	२१
९	७	५	
४	११	६	

बुध

	९	४	११
	१०	८	६
२४	५	११	७

बृहस्पति

	१०	५	१२
२७	११	९	७
	६	१३	८

शुक्र

३०	११	६	१३
	१२	१०	८
	७	१४	९

श

१२	७	१४
१३	११	९
८	१४	१०

३३

राहु

१३	८	१५
१४	१२	१०
९	६	११

३३

केतुः

१४	९	१६	
१५	१३	११	३८
१०	१७	१२	

37. पन्द्रिया-यन्त्र का विधान

मूल मन्त्र—ओं ह्रीं भुवनैश्वर्य्यै नमः ।।

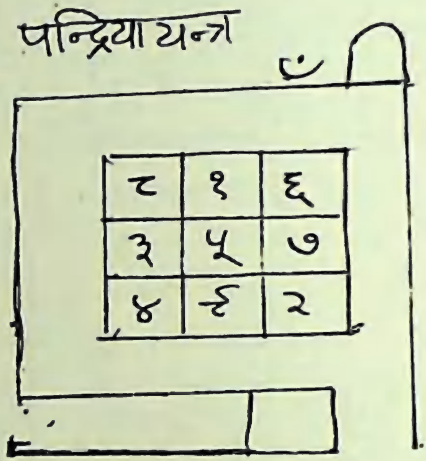

यन्त्र साधना के समय प्रतिदिन मूल मन्त्र की एक माला अवश्य करनी चाहिए ।

विधिः—शुद्ध व एकान्त स्थान में पूर्व दिशा की ओर मुख कर शुद्धासन पर बैठ कर भगवान् पार्श्वनाथ की (या लक्ष्मी की) मूर्ति की स्थापना करनी चाहिए । उस मूर्ति के आगे बैठकर प्रतिदिन यन्त्र लिखना चाहिए । 108 की संख्या प्रतिदिन अवश्य होनी चाहिए । यन्त्र लिखकर दशांगधूप या गुग्गुल की धूप देनी चाहिए, गन्ध, अक्षत, पुष्प, घृतदीपक नैवेद्य से यन्त्र का पूजन करना चाहिए । अलग-अलग संख्या में लिखने पर अलग-अलग फल की प्राप्ति होती है ।

1. 10000 दस हज़ार की संख्या में यन्त्र लिखने से वशीकरण

होता है । केसर या गोरोचन की स्याही से व चमेली की कलम से यन्त्र लिखें ।

2. 20000 बीस हज़ार की संख्या में लोहे की कलम एवं श्मशान के कोयले से लिखे तो शत्रु का उच्चाटन हो ।

3. 40000 चालीस हज़ार की संख्या में केसर की स्याही से लिखनें पर देवदर्शन हो, देवता प्रसन्न हो ।

4. 60000, साठ हज़ार की संख्या में अष्टगन्ध की स्याही से लिखें तो अचल सम्पत्ति प्राप्त हो ।

5. एक लाख की संख्या में अष्टगन्ध की स्याही एवं चमेली की कलम से लिखने पर भगवान् की कृपा हो । सर्व कार्य सिद्धि हो ।

यह यन्त्रविधान बहुत महत्त्वपूर्ण एवं सद्यः फलदायी है ।

इन लिखे यन्त्रों की आटे की गोलियां बनाकर नदी में प्रवाहित करें। एक मन्त्र अपने पास रखकर चान्दी के तावीज में रखकर गले या भुजबन्ध में बान्ध लें ?

पन्द्रियायन्त्र

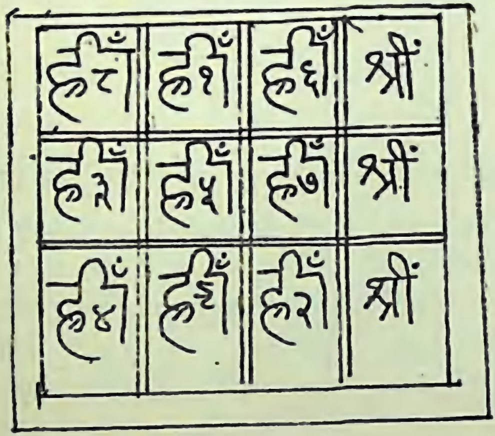

38. वीसा-यन्त्र का विधान

विधिः—रवि-पुष्य योग में शुभ लग्न में यन्त्र लेखन शुरू करना चाहिए। पूर्व की ओर मुंह करके बैठे। भोजपत्र पर या शुद्ध कागज पर अष्टगन्ध, अनार की कलम से प्रतिदिन यन्त्र लिखे। चन्दन, अगर, रक्त चन्दन, कुकुम, पुष्प, धूप-दीप, नैवैद्य, ताम्बूल से प्रतिदिन पूजन करे।

नीचे लिखे मन्त्र का 88 दिन में एक लाख जप करे।

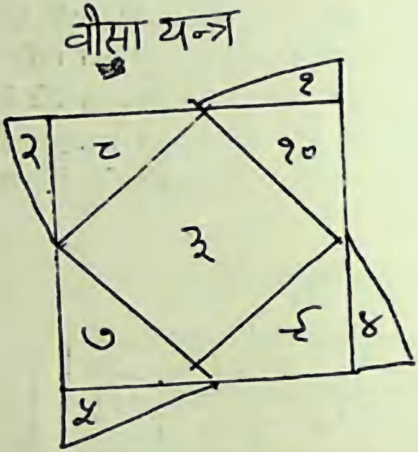

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं मम वाञ्छितं देहि स्वाहा।

अन्तिम दिन वट वृक्ष या नदी के किनारे 21 यन्त्र लिखे। दशांश हवन करे। खीर, खण्ड, मधु, पंचामृत, पंचगव्य से हवन करे।

अर्धरात्रि में पार्वती जी का पूजन कर भोज्य पदार्थ समर्पित करे।

लिखे यन्त्रों को आटे की गोलियों में रखकर नदी में प्रवाहित कर दे। एक यन्त्र रख लें। उसे चान्दी के तावीज में रखकर भुज बन्ध पर वान्ध ले।

धन-धान्य वृद्धिकर, ऐश्वर्यप्रदाता, प्रभावशाली एवं चमत्कार पूर्ण विधान है।

39. दरिद्रतानाशक–सूर्य मन्त्र

विनियोगः—ओं अस्य श्री सूर्यमन्त्रस्य भृगु ऋषिः गायत्री छन्दः दिवाकरो देवता ह्रीं वीजं श्रीं शक्तिः ममाभीष्ट साधने जपे विनियोगः।

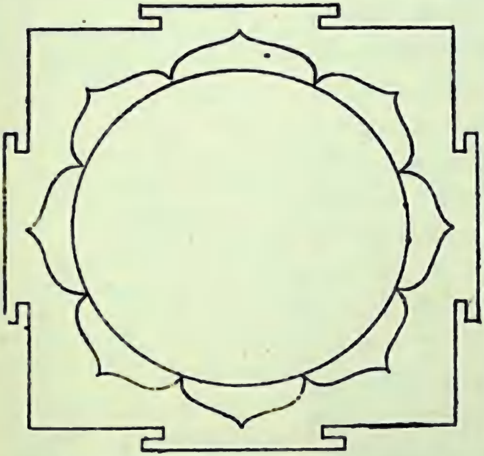

मन्त्र—ओं ह्रीं घृणिः सूर्य आदित्यः श्रीम् ॥ दशार्णः मन्त्रः ॥

षडंगन्यासः—ओं सत्यतेजो ज्वाला मणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय।
ओं ब्रह्मतेजो ज्वाला मणे हुं फट् स्वाहा शिरसि।
ओं विष्णुतेजो ज्वाला मणे हुं फट् स्वाहा शिखायाम्।
ओं शिवतेजो ज्वालामणे हुं फट् स्वाहा कवचाय।
ओं श्री तेजो ज्वालामणे हुं फट् स्वाहा नेत्रत्रयाय।
ओं अग्नितेजो ज्वालामणे हुं फट् स्वाहा अस्त्राय फट्।

पुन: अष्टांग वर्णन्यास:—ओं ह्रीं ओं श्रीं हृदयाय ।
ओं ह्रीं घृं श्रीं शिरसि ।
ओं ह्रीं णिं श्री शिखायाम् ।
ओं ह्रीं सूं श्रीं कवचाय ।
ओं ह्रीं यं श्रीं नेत्रत्रयाय ।
ओं ह्रीं आं श्रीं अस्त्राय ।
ओं ह्रीं दिं श्रीं उदराय ।
ओं ह्रीं त्यं श्रीं पृष्ठाय ।
पुन: पंचमूर्ति न्यास:—ओं लृं आदित्याय नमो मूर्ध्नि ।
ओं ॠं रवये नमो मुखे ।
ओं उं मानवे नमो हृदि ।
ओं इं भास्कराय नमो लिंगे ।
ओं अं सूर्याय नम: पादयो: ।
पुन: न्यास:—ओं ह्रीं ओं श्रीं नमो मूर्ध्नि ।
ओं ह्रीं घृं श्रीं नमो मुखे ।
ओं ह्रीं णिं श्रीं नमोगले ।
ओं ह्रीं सूं श्रीं नमो हृदि ।
ओं ह्रीं यं श्रीं नम: कुक्षौ ।
ओं ह्रीं आं श्रीं नमो नाभौ ।
ओं ह्रीं दिं श्रीं नमो लिंगे ।
ओं ह्रीं त्यं श्रीं नम: पादयो: ।
पुन: मण्डल न्यास:—ओं अं 16 सोममण्डलाय नम: शिखादि कन्ठान्तम् ।
ओं कं 25—सूर्यमण्डलाय नम: कण्ठादि-नाभ्यन्तम् ॥
ओं यं 10 वह्निमण्डलाय नम: नाभ्यादि-पादान्तम् ।
ओं डं—क्षं 23 वह्निमण्डलाय नम: हृदादि-पादान्तम् ॥
ओं अं—क्षं 51 हंस: पुरुषात्मने नम: सर्वांगे ॥
ओं अं आदित्याय भगवते नम: आधारे ।

ओं लृं 8 सोमाय भगवते नमः लिंगे ।
ओं कं 5 अंगारकायभगवते नमः नाभौ ।
ओं चं 5 बुधाय भगवते नमः हृदि ।
ओं टं 5 बृहस्पतये भगवते नमः गले ।
ओं तं 5 शुक्राय भगवते नमः मुखमध्ये ।
ओं पं 5 शनैश्चराय भगवते नमः भ्रूमध्ये ।
ओं यं 4 राहवे भगवते नमः भाले ।
ओं शं 4 केतवे भगवते नमः ब्रह्मरन्ध्रे ॥
ओं हं सः
ओं अग्निः
ओं सोमः

ध्यानम्=शोणांभोरुह संस्थितं त्रिनयनं वेदत्रयी विग्रहम् ।
दानाम्भोज युगाभयानि दधतं हस्तैः प्रवाल प्रभम् ।
केयूरांगदहारकंकणधरं कर्णोल्लसत् कुण्डलम् ।
लोकोत्पत्तिः विनाशपालन करं सूर्यं गुणाब्धिं भजे ॥

जप संख्या=दश लाख । दशांश हवन ।
पद्म एवं तिलों से हवन । तर्पण एवं ब्राह्मण भोजन ।
फल=इस मन्त्र के जप से ऐश्वर्य, यश, विद्या की प्राप्ति होती है ।

40. विशिष्ट सूर्य-मन्त्र

पीठ पूजा

पीठ पूजा में धर्म आदि आठ देवताओं के स्थान पर कोणों में प्रभूत, विमल, सार, एवं समाराध्य का तथा मध्य में परम सुख का पूजन करना चाहिए । फिर पूर्वोक्त रीति से अनन्त आदि का पूजन कर सूर्य मण्डल का पूजन करना चाहिए ।

फिर सोममण्डल और वह्नि मण्डल का पूजन कर सूर्य मण्डल का पूजन करना चाहिए ।

तत्पश्चात् आठों दिशाओं में तथा मध्य में इन नौ शक्तियों का पूजन करना चाहिए। दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, भद्रा, विभूति, विमला, अमोघा, वि द्यु ता और सर्वतोमुख में पीठ शक्तियां हैं।

ह्रस्वत्रय (अ, इ, उ) तथा क्लीव (ऋ ॠ, ऌ ॡ) को छोड़कर शेष स्वरों और अनुस्वार को वह्नि (र) में लगाने से (रां रीं रूं रें रैं रों रौं र रः) ये पीठ शक्तियों के बीज बन जाते हैं। इन्हें प्रारम्भ में लगाकर उनका पूजन करना चाहिए।

'ब्रह्मविष्णु शिवात्मक' के पाद "कायसौरायो" फिर स्मृति (ग) तथा "पीठात्मने नमः" और उसके प्रारम्भ में तार (ओं) लगाने से यह पीठ मन्त्र बन जाता है।

तार (ओं) सेन्दु वियत् (हं) विन्दु सहित और विन्दु रहित कान्तं (खं खः) फिर खोल्काय एवं हृदय में (नमः) मूर्ति कल्पना के लिए यह नवार्ण मन्त्र बतलाया गया है। इससे मूर्ति कल्पित कर भगवान् सूर्य का पूजन करना चाहिए।

(ओं ब्रह्म विष्णु शिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नमः)

सूर्य मन्त्र में पीठ पूजा

सर्वप्रथम ध्यान में वर्णित भगवान् सूर्य के स्वरूप का ध्यान कर मानसोपचार से पूजन कर ताम्र आदि पात्र में अर्घ्य स्थापन कर विधिवत् गुरुभ्यो नमः से गुरु पूजन कर सामान्य पूजा के अनुसार वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल, और भूपुर सहित बने मन्त्र पर नाम मन्त्रों से पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए।

यथा—पीठमध्ये—ओं मं मंडूकाय नमः। ओं कं कालाग्निरुद्राय नमः। ओं आधार शक्तये नमः। ओं प्रकृतये नमः। ओं कूर्माय नमः। ओं शेषाय नमः। ओं पृथिव्यै नमः। ओं क्षीर समुद्राय नमः। ओं श्वेत द्वीपाय नमः। ओं मणिमण्डपाय नमः। ओं कल्पवृक्षाय नमः। ओं मणि-वेदिकायै नमः। ओं रत्नसिंहासनाय नमः।

फिर पूर्व आदि दिशाओं में तथा मध्य में प्रभूत आदि का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए।

यथा—ओं प्रभूताय नम: पूर्वे। ओं विगलाय नम: दक्षिणे। ओं साराय नम: पश्चिमे। ओं समाराध्याय नम: उत्तरे। ओं परमसुखाय नम: मध्ये।

तत्पश्चात् पीठ के मध्य में नाममन्त्रों से अनन्त आदि देवताओं का पूजन करना चाहिए।

यथा—ओं अनन्ताय नम:। ओं पद्माय नम:। ओं आनन्दकन्दाय नम:। ओं संविन्नलाय नम:। ओं विकारमय केसरेभ्यो नम:। ओं प्रकृत्यात्मक पत्रेभ्यो नम:। ओं पञ्चाशद्वर्ण कर्णिकायै नम:।

पुनस्तत्रैव—ओं उं षोडश कलात्मने सोममण्डलाय नम:। ओं रं दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नम:। ओं अं द्वादश कलात्मने सूर्यमण्डलाय नम:।

इसके वाद केसरों में पूर्व आदि 8 दिशाओं में तथा मध्य में निम्न-लिखित मन्त्रों से दीप्ता आदि नौ पीठ शक्तियों का पूजन करना चाहिए।

यथा—रां दीप्तायै नम:। रीं सूक्ष्मायै नम:। रुं जयायै नम:। रें भद्रायै नम:। रैं विभूत्यै नम:। रों विमलायै नम:। रौं अमोघायै नम:। रं विद्युतायै नम:। रं: सर्वतोमुख्यै नम:।

फिर "ब्रह्मविष्णु शिवात्मकाय सौराय योगपीठात्मने नम:" इस पीठमन्त्र से आसन देकर अं हं खं ख:खोल्काय नम: इस मन्त्र से मूर्ति की कल्पना कर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से जगत्पति सूर्य का विधिवत् पूजन करना चाहिए।

आवरण पूजा—पूर्वोक्त रीति से षडंग पूजनकर दिशाओं में अष्टांग पूजन करना चाहिए। आदि में प्रणव तथा पंचह्रस्व (लृं ऋं उं इं अं) लगाकर आदित्य का मध्य में तथा रवि, भानु भास्कर और सूर्य का दिशाओं में पूजन करना चाहिए। विदिशाओं में अपने आद्य वर्ण सहित उषा, प्रज्ञा, प्रभा, और सन्ध्या का पूजन करना चाहिए। पूर्व आदि दिशाओं में दलों पर ब्राह्मी आदि मातृकाओं का पूजन करना चाहिए। किन्तु महालक्ष्मी के स्थान पर अरुण की पूजा करनी चाहिए। फिर दिशाओं में सोम, वुध, गुरु, और शुक्र का तथा कोणों में मंगल, शनि,

राहु और केतु का पूजन करना चाहिए। और फिर आयुधों सहित इन्द्र आदि रवि के पार्षदों का पूजन करना चाहिए।

टिप्पणी—आवरण पूजाविधि—सर्वप्रथम केसरों में आग्नेय आदि चार कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में निम्नलिखित से षडंग पूजा करनी चाहिए।

यथा—ओं सत्यतेजो ज्वालामणे हुं फट् स्वाहा हृदयाय नमः। ओं ब्रह्मतेजो०—स्वाहा शिरसे नमः। ओं विष्णु तेजो०—स्वाहा, शिखायै नमः। अं रुद्र तेजो० स्वाहा—कवचाय नमः। ओं अग्नि तेजो०—स्वाहा नेत्र-त्रयाय नमः। ओं सर्वतेजो० स्वाहा—अस्त्राय नमः।

इसके बाद पूर्व आदि आठ दिशाओं में अनुलोम क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से अष्टांग पूजन करना चाहिए।

ह्रीं ओं श्रीं हृदयाय। ह्रीं घृं श्रीं शिरसे नमः। ह्रीं णि श्रीं शिखायै नमः। ह्रीं सूं श्रीं कवचाय नमः। ह्रीं यं श्रीं नेत्रत्रयाय नमः। ह्रीं आं श्रीं अस्त्राय नमः। ह्रीं दिं श्रीं उदराय नमः उदरे। ह्रीं त्यं श्रीं पृष्ठाय नमः पृष्ठे।

तत्पश्चात् मध्य में आदित्य का, पूर्व-आदि चारों दिशाओं के दलों में रवि आदि का तथा आग्नेय आदि कोणों के दलों में उषा आदि का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए।

ओं लृं आदित्याय नमः मध्ये। ओं ॠं रवये नमः पूर्वदले। ओं उं भानवे नमः दक्षिणदले। ओं इं भास्क-राय नमः पश्चिम दले। ओं अं सूर्याय नमः उत्तर दले। ओं उं उषायै नमः आग्नेय दले। ओं प्रं प्रज्ञायै नमः

नैर्ऋत्यदले। प्रं प्रज्ञायै नमः वायव्यदले। ओं सं संन्ध्यायै नमः ईशानदले।

फिर अष्टदल के अग्रभाग पर पूर्व आदि अनुलोमक्रम से नाममन्त्रों से ब्राह्मी आदि शक्तियों का आवरण के साथ पूजन करना चाहिए।

यथा—ओं ब्राह्म्यै नमः। माहेश्वर्यै नमः। कौमार्यै नमः। वैष्णव्यै नमः। वाराह्यै नमः। इन्द्राण्यै नमः। चामुण्डायै नमः। ओं अरुणाय नमः।

तत्पश्चात् मण्डल के वाहर पूर्व आदि दिशाओं में सोम आदि का तथा आग्नेय आदि कोणों में अंगारक आदि ग्रहों का इन मन्त्रों से पूजन करना चाहिए।

यथा—ओं सों सोमाय नमः पूर्वे। वुं वुधाय नमः दक्षिणे। गुं गुरवे नमः पश्चिमे। ओं शुं शुक्राय नमः उत्तरे। अं अंगारकाय नमः आग्नेय्ये। शं शनये नमः नैर्ऋत्ये। रां राहवे नमः वायव्ये। कें केतवे नमः ईशान्ये।

तदनन्तर भूपुर में अपनी-अपनी दिशाओं में निम्न मन्त्रों से इन्द्र आदि रवि के पार्षदों का पूजन करना चाहिए।

यथा—ओं लं इन्द्राय नमः। रं अग्नये नमः। मं यमाय नमः। क्षं निर्ऋतये नमः। वं वरुणाय नमः। यं वायवे नमः। सं सोमाय नमः। इं ईशानाय नमः। आं ब्रह्मणे नमः। ह्रीं अनन्ताय नमः।

और फिर भूपुर के वाहर पूर्व आदि दश दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से वज्र आदि आयुधों की पूजा करनी चाहिए।

ओं वं वज्राय नमः। शं शक्तये नमः। दं दण्डाय

नमः। खं खड्गाय नमः। पां पाशाय नमः। अं अंकुशाय नमः। गं गदायै नमः। शूं शूलाय नमः। पं पद्माय नमः। चं चक्राय नमः।

इसी रीति से आवरण पूजा कर धूप-दीप आदि उपचारों से भगवान् सूर्य का विधिवत् पूजन करना चाहिए।

अर्घ्यदानं—इस प्रकार मन्त्र सिद्ध हो जाने पर उस दिन भगवान् भास्कर को अर्घ्य देना चाहिए। यथा—

प्राणायाय, षडंगन्यास और पूर्वोक्त अन्य न्यासों को करने के बाद अपने मण्डल में भगवान् सूर्य का मानसोपचार से पूजन करना चाहिए।

सुन्दर तांवे से बने हुए एक प्रस्थ (16 पल या 64 तोला) जल की क्षमता वाले, रक्त चन्दन से चर्चित सुन्दर पात्र को मण्डल में रखना चाहिए। फिर विलोमक्रम से मातृका और मूलमन्त्र को पढ़ते हुए रवि मण्डल से निकलती हुई अमृतधारा की भावना से उसमें जल भर कर मूलमन्त्र वोलते हुए 13 वस्तुएं डालनी चाहिएं—

1. तिल, 2. तण्डुल, 3. कुशाग्र, 4. शालि धान, 5. श्यामाक, 6. राई, 7. लाल कनेर, 8. लाल चन्दन, 9. श्वेत चन्दन, 10. गोरोचनन, 11. कुंकुम, 12. जाई, 13. वेणुयव।

उस जल में पीठ पूजा कर अपने मण्डल से सूर्य का आवाहन कर समस्त उपचारों से आवरण देवताओं के साथ सूर्य का पूजन करना चाहिए। फिर—तीन बार प्राणायाम कर षडंगन्यास करना चाहिए। चन्दन से सुधावीज (वं) का दाहिने हाथ पर न्यास करना चाहिए। वायें हाथ में गृहीत अर्घ्यपात्र को दाहिने हाथ से ढंकना चाहिए। 108 बार मूल मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित करना चाहिए। और मूल मन्त्र से षोडशोपचार से उसका पूजन करना चाहिए।

तत्पश्चात् दोनों हाथों में पात्र लेकर घुटनों को जमीन में रखकर शिर तक पात्र को ऊंचा उठाकर रवि मण्डल में दृष्टि लगाकर वहां अपने आवरण सहित सूर्य का ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन करनी चाहिए।

और रक्तचन्दन से चर्चित मण्डल में रवि का ध्यान कर अर्घ्य देना चाहिए। तत्पश्चात् मण्डल में स्थित सूर्य को पुष्पांजलि देनी चाहिए। तथा आसन पर बैठकर 108 वार मूलमन्त्र का जप करना चाहिए।

प्रतिदिन प्रातःकाल उदीयमान सूर्य को जो व्यक्ति इस रीति से अर्घ्य देता है वह लक्ष्मी, यश, पुत्र, विद्या एवं ऐश्वर्य को प्राप्त करता है।

गायत्री की उपासना में आसक्त सन्ध्या वन्दन में तत्पर और इस दशाक्षर मन्त्र का जप करने वाला ब्राह्मण कभी भी दुःखी नहीं होता। यह मन्त्र दरिद्रता को नाश कर सुख-समृद्धि को प्रदान करता है। इसके करने से सभी ग्रहों की पीड़ा का भी समाधान हो जाता है। जीवन सुखों में व्यतीत होता है।

चण्डिका विधानम्

41. नवार्णमन्त्र प्रयोगः

अथ नवाक्षरं मन्त्रं वक्ष्ये चण्डी प्रवृत्तये।
वाङ्माया सदनो दीर्घा लक्ष्मीस्तन्द्री श्रुतीन्दुयुक्॥
डायै सदृग्जलं कूर्मद्वयं झिंटीश संयुतम्।
नवाक्षरोऽस्य ऋषयो ब्रह्मविष्णु महेश्वराः॥

मन्त्र—ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे॥

विनियोगः—छन्दांसि उक्तानि मुनिभिः गायत्र्युष्णिगनुष्टुभः।
देव्यः प्रोक्ताः महापूर्गः काली लक्ष्मी सरस्वती॥
नन्दा शाकम्भरी भीमा शक्तयोऽस्य मनोः स्मृताः।
स्याद् रक्तदंतिका दुर्गा भ्रामर्य्यो वीजसंचयः।
अग्निर्वायुभगस्तत्त्वं फलं वेदत्रयोद्भवम्।
सर्वाभीष्ट प्रसिद्धयर्थं विनियोगः उदाहृतः।
ऋषिश्छन्दो दैवतानि शिरोमुख हृदि न्यसेत्॥
शक्ति वीजानि स्तनयोः तत्त्वानि हृदये पुनः।
न्यासविधिः—ततः एकादशन्यासान् कुर्वीतेष्ट फल प्रदान्।

(1) प्रथमोमातृकान्यास: कार्य: पूर्वोक्त मार्गत: ।
कृतेन येन देवस्य सारूप्यं याति मानव: ।
(2) अथ द्वितीयं कुर्वीत न्यासं सारस्वताभिधम् ॥
वीज त्रयं तु मन्त्राद्यं तारादि हृदयान्तिकम् ॥
यथा—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां नम:=इत्यादि ।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं हृदयाय नम: इत्यादि अंगेषु ॥
क्रमादंगुलिषुन्यस्य कनिष्ठाद्यासु पंचसु ।
करयो: मध्यत: पृष्ठे मणिवंधे च कर्पूरे ॥
हृदयादि षडंगेषु विन्यसेत् जाति संयुतम् ॥
फलम्—अस्मिन् सारस्वते न्यासे कृते जाड्यंविनश्यति ।

(3) तत: तृतीय कुर्वीत न्यासं मातृ गणान्वितम् ।
माया वीजादिका ब्राह्मी पूर्वत: पातु मां सदा ।
माहेश्वरी तथाऽऽग्नेय्यां कौमारी दक्षिणेऽवतु ॥
वैष्णवीपातु नैर्ऋत्ये वाराही पश्चिमेऽवतु ॥
इन्द्राणी पावके कोणे चामुण्डा चोत्तरेऽवतु ॥
ऐशाने तु महालक्ष्मीरूर्ध्वं व्योमेश्वरी तथा ।
सप्त द्वीपेश्वरी भूमौ रक्षेत् कामेश्वरी तले ।
तृतीयेऽस्मिन् कृते न्यासे त्रैलोक्य विजयीभवेत् ॥

(4) न्यासं चतुर्थं कुर्वीत नन्दजादि समन्वितम् ॥
नन्दजा पातु पूर्वांगं कमलांकुश मण्डिता ।
खड्गपात्रकरा पातु दक्षिणे रक्त दंतिका ।
पृष्ठे शाकम्भरी पातु पुष्पपल्लवसंयुता ।
धनुर्वाण करादुर्गा वामे पातु सदैव माम् ।
शिर: पात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणावधि ।
फलम्—तुर्य्यं न्यासं नर: कुर्याज्जरामृत्यु व्यपोहति ।
(5) अथ कुर्वीत ब्रह्माख्यं न्यासं पंचमुत्तमम् ॥
पादादि नाभि पर्यन्तं ब्रह्मापातु सनातन: ।
नाभेर्विशुद्धि पर्यन्तं पातु नित्यं जनार्दन: ।

विशुद्धे ब्रह्मरन्ध्रान्तं पातुरुद्रस्त्रिलोचन: ।
हंसं पातु पदद्वन्द्वं वैनेतेयकरद्वयम् ।
चक्षुषी वृषभ: पातु सर्वांगानि गजानन: ।
परापरौ देहभागौ पातु आनन्दमयो हरि: ।

फलम्—कृतेऽस्मिन् पंचमे न्यासे सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।

(6) षष्ठं न्यासं तत: कुर्यात् महालक्ष्म्यादि संयुतम् ।
मध्यं पातु महालक्ष्मीरष्टादश भुजान्विता ।
ऊर्ध्वं सरस्वती पातु भुजैरष्टाभि रूर्ज्जिता ।
अध: पातु महाकाली दशवाहु समन्विता ।
सिंहो हस्त द्वयं पातु परंहंसोऽक्षियुग्मकम् ।।
महिषं दिव्यमारूढो यम: पातु पदद्वयम् ।
महेशश्चण्डिका युक्त: सर्वांगानि ममावतु ।

फलम्—षष्ठेऽस्मिन् विहिते न्यासे सद्गतिप्राप्नुयान्नर: ।

(7) मूलाक्षरन्यासं रूपं न्यासं कुर्वीत सप्तमम् ।
ब्रह्मरन्ध्रे नेत्रयुग्मे श्रुत्योर्नासिकयोर्मुखे ।
पायौ मूलमनो वर्णान् ताराद्यान्नमसान्वितान् ।

फलम्—विन्यसेत् सप्तमेन्यासे कृते रोग क्षयोभवेत् ।

(8) पायुतोब्रह्मरन्ध्रान्तं पुनस्तानेव विन्यसेत् ।
(पायुमारभ्य ब्रह्मरन्ध्रान्तं वर्ण न्यासोऽष्टम:) ।।

फलम्—कृतेऽस्मिन् अष्टमे न्यासे सर्व दु:खं विनश्यति ।।

(9) कुर्वीत नवमं न्यासं मन्त्रव्याप्ति स्वरूपकम् ।।
मस्तकाच्चरणं यावत् चरणान् मस्तकावधि ।
पुरोदक्षे पृष्ठदेशे वामभागेऽष्टशोन्यसेत् ।
मूलमन्त्र कृतोन्यासो नवमो देवताप्ति कृत् ।।
शिरस: पादान्तं अष्टवारं मूलं विन्यसेत् ।

एवं पादाच्छिरोऽन्तम् अष्टश: एवं पुरो दक्षिणभागे पृष्ठे वामभागेऽप्येवं प्रत्यहम् अष्टशो मूलं न्यसेत् ।।

(10) तत: कुर्वीत दशमं षडंगन्यासमुत्तमम् ।

मूलमन्त्रं जातियुक्तं हृदयादिषु विन्यसेत् ।।
कृतेऽस्मिन् दशमे न्यासे त्रैलोक्यं वशगं भवेत् ।।
मूलं हृदयाय नमः इत्यादिकं जातियुक्तं षडंगेषु न्यसेत् ।।
(11) दशन्यासोक्त फलदं कुर्यादेकादशं ततः ।
खड्गिनी शूलिनीत्यादि पठित्वा श्लोकपंचकम् ।
आद्यं कृष्णतरं वीजं ध्यात्वा सर्वांगतः न्यसेत् ।
शूलेन पाहि नो देवीत्यादि श्लोक चतुष्टयम् ।
पठित्वा सूर्यसदृशं द्वितीयं सर्वतो न्यसेत् ।
सर्वस्वरूपे सर्वेशे इत्यादि श्लोकपंचकम् ।।
पठित्वा स्फटिकाभासं तृतीयं स्वस्तनौ न्यसेत् ।
ततः षडंगं कुर्वीत विभक्तैः मूल वर्णकैः ।
एकेनैकेन चैकेन चतुर्भिर्युगलेन च ।
समस्तेन च मन्त्रेण कुर्यादंगानि षट्सुधीः ।।
शिखायां नेत्रयोः श्रुत्योर्नसोर्वक्त्रे गुदे न्यसेत् ।।
मन्त्र वर्णान् समस्तेन व्यापकं त्वष्टशश्चरेत् ।।

महाकालीध्यानम्—खड्गं चक्रगदेषु चापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः,
शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वांगभूषावृताम् ।
यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुकैटभम्,
नीलाश्मद्युतिमास्यपाद दशकां सेवे महाकालिकाम् ।।

महालक्ष्मी—अक्षस्रक्परशूं गदेषु कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकाम् ।
दंडं शक्तिमसिं च चर्मजलजं घंटासुराभाजनाम् ।
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभाम् ।
सेवे सैरिभमर्दिनीमिहमहा लक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ।।

महासरस्वतीध्यानम्—घंटाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकम् । हस्ताब्जैः दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशु तुल्यप्रभाम् । गौरीदेह समुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीं मनुभजे शुम्भादि दैत्यार्दिनीम् ।।

एवं ध्यात्वा जपेत् लक्षं चतुष्कं तद्दशांशतः ।

पायसान्नेन जुहुयात् पूजितेहेमरेतसि ॥
जयादि शक्तिभियुंक्ते पीठे देवीं यजेत्ततः ।
तत्त्व पत्रावृतत्र्यस्त्र पट्कोणाष्ट दलान्विते ॥
त्रिकोणमध्ये संपूज्य ध्यात्वा तां मूलमन्त्रतः ।
पूर्वं कोणे विधातारं सुरया सह पूजयेत् ॥
विष्णुं श्रिया च नैर्ऋत्ये वायव्ये तूमया शिवम् ।
उदग् दक्षिणयोः सिंहं महिषं चक्रमाद्यजेत् ।
षटसु कोणेषु पूर्वादि नन्दजाम् रक्तदन्तिकाम् ।
शाकम्भरीं तथा दुर्गां भीमां च भ्रामरीं यजेत् ॥
सविंदुनादाद्यर्णाद्यास्ताराद्याश्च नमोऽन्तिकाः ।
नंदजाद्याः यजेच्छक्तीर्वध्यमाना अपीदृशीः ।
अष्टपत्रेषु ब्रह्माणी पूज्या माहेश्वरी परा ।
कौमारी वैष्णवी चाथ वाराही नारसिंह्यपि ।
पश्चादैन्द्री च चामुण्डा तथा तत्त्वदलेष्विमाः ।
विष्णु चेतना च बुद्धिर्निद्रा क्षुधा ततः ।
छाया शक्तिः परा तृष्णा क्षांतिर्जातिश्च लज्जया ।
शान्तिः श्रद्धाकान्ति लक्ष्म्यौ धृतिः वृत्तिः श्रुतिस्मृतिः ।
तुष्टिः पुष्टिर्दयामाता भ्रांतिः शक्तिरिति क्रमात् ।
बहिः भूगृहकोणे गणेशः क्षेत्रपालकः ।
वटुकश्चापि योगिन्यः पूज्याः इन्द्रादिका अपि ॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री भवेत् सौभाग्य भाजनम् ॥

नवार्णमन्त्र प्रयोग की विधिः

नवार्णमन्त्र का विनियोग—ऊँ अस्य श्री नवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णू-रुद्रा ऋषयः, गात्र्युष्णिगनुष्टुप छन्दांसि श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वत्यो देवता नन्दाशाकंभरी भीमाः शक्तयः रक्तदन्तिका भ्रामर्यो बीजानि अग्नि वायु सूर्यः तत्त्वानि ऋग्यजुः सामवेदाः ध्यानानि सर्वाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

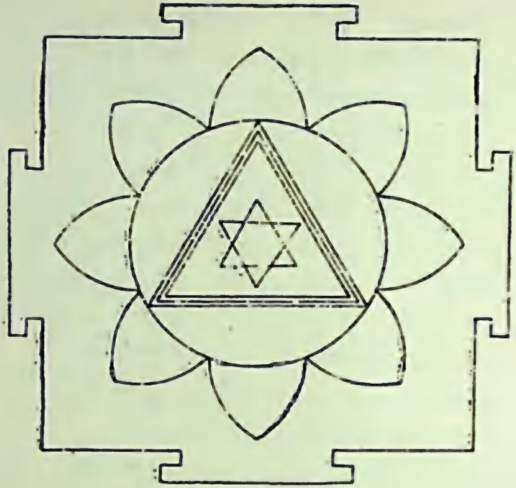

चण्डिका यन्त्रम्

ऋष्यादिन्यासः—ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषिभ्यो नमः शिरसि। गायत्र्युष्णिगनुष्टुप छन्दोभ्यः नमः मुखे। महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवताभ्यो नमः हृदि। नन्दाशाकम्भरी भीमा शक्तिभ्यो समः दक्षिणस्तेन। रक्तदन्तिका दुर्गाभ्रामरी बीजेभ्यो नमः वामस्तनौ। अग्निवायु सूर्य तत्त्वेभ्यो नमः हृदि।

प्रथमन्यासः—ओं अं नमः शिरसि। आं नमः मुखे। ईं नमः दक्षिणनेत्रे। ईं नमः वामनेत्रे। उं नमः दक्षिणकर्णे। ऋं नमः दक्षिणनासापुरे। ॠं नमः वाम नासापुरे। लृं नमः दक्षिण कपोले। ॠं नमः वामकपोले। एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ऐंनमः अधरोष्ठे। ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। औं नमः अधोदन्त पंक्तौ। अं नमः मूर्ध्नि। अः नमः मुखवृत्ते।

कं नमः दक्षिणवाहुमूले। खं नमः दक्षिण कर्पूरे। गं नमः दक्षिणमणिवन्धे। घं नमः हस्तांगुलिमूले। ङं नमः दक्षिणहस्तांगुल्यग्रे। चं नमः वामवाहुमूले। छं नमः वामकर्पूरे। जं नमः वाममणिवन्धे।

ञं नमः वामहस्तांगुलिमूले । ञं नमः वामहस्तांगुल्यग्रे । टं नमः दक्षिणपादमूले । ठं नमः दक्षिणजानुनि । डं नमः दक्षिण गुल्फे । ढं नमः दक्षिणपादांगुलिमूले । णं नमः दक्षिणपादांगुल्यग्रे । तं नमः वामपादमूले । थं नमः वामजानुनि । दं नमः वामगुल्फे । धं नमः वामपादांगुलिमूले । नं नमः वामपादांगुल्यग्रे । पं नमः दक्षिणपार्श्वे । फं नमः वामपार्श्वे । वं नमः पृष्ठे । भं नमः नाभौ । मं नमः उदरे । यं त्वगात्मने नमः हृदि । रं असृगात्मने नमः दक्षिणांसे । लं मांसात्मने नमः ककुदि । वं मेदात्मने नमः हृदयादि वामहस्तान्तम् । सं शुक्रात्मने नमः हृदयादि दक्षपादान्तम् । हं आत्मने नमः हृदयादि वामपादान्तम् । अं ॐ परमात्मने नमः जठरे । क्षं प्राणात्मने नमः मुखे ॥

2. **सारस्वतन्यासः**—ऐं ह्रीं क्लीं नमः कनिष्ठयोः । ऐं ह्रीं क्लीं नमः अनामिकयोः । इसी प्रकार ओं ह्रीं क्लीं नमः लगाते हुए अंगन्यास करना होगा—मध्यमयोः । तर्जन्योः । अंगुष्ठयोः । करतलयोः । कर पृष्ठयोः । मणिवन्धयोः । कर्पूरयोः । हृदयाय नमः । शिरसे स्वाहा । शिखायै वषट् । कवचायहुम् । नेत्रत्रयाय वौषट् । अस्त्राय फट् ॥

3. **मातृका गणन्यास**—ओं ह्रीं ब्राह्मी पूर्वत; मां पातु । ह्रीं माहेश्वरी आग्नेय्यां मां पातु । ह्रीं कौमारी दक्षिणे मां पातु । ह्रीं वैष्णवी नैर्ऋत्ये मां पातु । ह्रीं वाराही पश्चिमे मां पातु । ह्रीं इन्द्राणी वायव्ये मां पातु । ह्रीं चामुण्डा उत्तरे मां पातु । ह्रीं महालक्ष्मी ऐशान्ये मां पातु । ह्रीं व्योमेश्वरी ऊर्ध्वं मां पातु । ह्रीं सप्त द्वीपेश्वरी भूमौ मां पातु । ह्रीं कामेश्वरी पाताले मां पातु ॥

4. **षड्देवतान्यासः**—कमलांशुकमण्डितानन्दजा पूर्वांगं मे पातु । खड्गपात्रकरा रक्तदन्तिका दक्षिणांगं मे पातु । पुष्पपल्लव संयुता शाकम्भरी पृष्ठांगं मे पातु । धनुर्वाणकरा दुर्गा वामांगं मे पातु । शिरः पात्रकरा भीमा मस्तकाच्चरणान्तं मे पातु । चित्रकान्तिभृद्भ्रामरी पादादिमस्तकान्तं मे पातु ।

5. **ब्रह्मन्यासः**—ब्रह्मा सनातनः पादादि नाभि पर्यन्तं मां पातु । जनार्दनः नाभेर्विशुद्धिपर्यन्तं मां पातु । रुद्रस्त्रिलोचनः विशुद्धे ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तं

मां पातु । हंस: पादद्वयं मे पातु । वैनतेय: करद्वये मे पातु । वृषभश्चक्षुषी मे पातु । गजानन: सर्वांगाणि मे पातु । आनन्दमयो हरि: परापरौ देह भागौ मे पातु ।।

6. **महालक्ष्म्यादि न्यास:**—अष्टादश भुजा युक्ता महालक्ष्मी मध्यं मे पातु । अष्टभुजान्विता सरस्वती ऊर्ध्वं मे पातु । दक्षबाहु-समन्विता महाकाली अध: मे पातु । सिंह: हस्तद्वयं मे पातु । परहंसोऽक्षियुग्मं मे पातु । दिव्य महिषारूढो यम: पदद्वयं मे पातु । महेश्चण्डिका युक्त: सर्वांगांनि मे पातु ।।

7. **वर्णन्यास:**—ऐं नम: ब्रह्मरन्ध्रे । ह्रीं नम: दक्षिण नेत्रे । क्लीं नम: वामनेत्रे । चां नम: दक्षिण कर्णे । मुं नम: वामकर्णे । डां नम: दक्षनासापुटे । यैं नम: वामनासापुटे । विं नम: मुखे । च्चें नम: मूलाधारे ।।

8. **विलोमवर्णन्यास**—च्चें नम: मूलाधारे । विं नम: मुखे । यैं नम: वामनासापूरे । डां नम: दक्षिणनासापूरे । मुं नम: वामकर्णे । चां नम: दक्षिणकर्णे । क्लीं नम: वामनेत्रे ह्रीं नम: दक्षिणनेत्रे । ऐं नम: ब्रह्मरन्ध्रे ।

9, **मन्त्रव्याप्तिन्यास:**—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे—इस प्रकार सभी अंगन्यासों के साथ इस मन्त्र को लगाकर वोलना चाहिए ।

मस्तकाच्चरणान्तंपूर्णांगे । मस्तकाच्चरणान्तं दक्षिणांगे । मस्तकाच्चरणान्तं पृष्ठे । मस्तकाच्चरणान्तं वामांगे । मस्तकाच्चरणान्तम् । चरणात्मस्तकानाम् ।।

10. **षडंगन्यास:**—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे—इस पूर्ण मन्त्र को वोलते हुए अंगन्यास करे—

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे हृदयाय नम: । शिरसे स्वाहा । शिखायै वषट् । कवचाय हुम । नेत्रत्रयाय वौषट् । अस्त्राय फट् ।

11. खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शंखिनी चापिनी वाण भुशुण्डीपरिघायुधा ।

सौम्या सौम्यतरा शेष सोमेभ्यस्त्वति सुन्दरी ।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ।
यच्चकिंचित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ।
तस्य सर्वस्य या शक्ति: सा त्वं किं स्तूयसे मया ।
यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत् पाताति यो जगत् ।
सोऽपिनिद्रावशं नीता कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वर: ।
विष्णुशरीर ग्रहणमहमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां क: स्तोतु शक्तिमान् भवेत् ।
आद्यं ऐं वीजं कृष्णतरं ध्यात्वा सर्वांगे विन्यसेत ।
ओं शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन न:पाहि चापज्या नि:स्वनेन च ।
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्षदक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै:रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥
खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसंगीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वत: ।
द्वितीयं ह्रीं वीजं सूर्यसदृशं ध्यात्वा सर्वांगे विन्यसामि ।
ओं सर्व स्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते ।
भयेभ्य: त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोस्तुते ।
एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूपितम् ।
पातु न: सर्व भूतेभ्य: कात्यायनी नमोऽस्तु ते ।
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषा सुरसूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीते: भ्रद्रकालि नमोऽस्तुते ।
ज्वालाकरालमत्युग्रमशेपासुर सूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीते: भ्रद्रकालि नमोऽस्तुते ।
हिनस्ति दैत्य तेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टापातु नो देवि पापेभ्यो न: सुतानिव ।

असुरा सृग्वसापकंचर्चितस्ते करोज्ज्वला।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम्।
तृतीये क्लीं वीजंस्फटिकाभ्रं ध्यात्वा सर्वांगे न्यसामि।
एकेनैकेन चैकेन चतुर्भियुगलेन च।
समस्तेन च मन्त्रेण कुर्यादङ्गाणि षट् सुधी:।

मूलषडंगन्यास:—ऐं हृदयाय नम:। ह्रीं शिरसे स्वाहा। क्लीं शिखायै वषट्। चामुण्डायै कवचाय हुम्। विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्। ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्रायफट्।

अक्षरन्यास:—ऐं नम: शिखायाम्। ह्रीं नम: दक्षिणनेत्रे।
क्लीं नम: वामनेत्रे। चां नम: दक्षिण कर्णे।

मुं नम: वामकर्णे। डां नम: दक्षिणनासायाम्। यें नम: वाम-नासायाम्। विं न मुखे। च्चे नम: गुह्ये॥

पीठ पूजा—इसके वाद जया आदि शक्तियों का पीठ पर त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल, तत्त्वदल वाले यन्त्र पर पूजन करे। चण्डीके तीनों स्वरूपों का ध्यानकर अर्घ्य स्थापित कर पीठ के देवताओं का पूजन करे। पूजन करने के पश्चात् आवरण पूजा करें।

पीठमध्ये-ओं आधार शक्तये नम:। ओं प्रकृतये नम:। ओं कूर्माय नम:। ओं शेषाय नम:। ओं पृथिव्यै नम:। ओं सुधाम्बुधये नम:। ओं मणिद्वीपाय नम:। ओं चिन्तामणिगृहाय नम:। ओं श्मशानाय नम:। ओं पारिजाताय नम:।

तत: कर्णिकाया: मूले-ओं रत्नवेदिकायै नम:।

कर्णिकोपरि-ओं मणिपीठाय नम:।

चतुर्दिक्षु-ओं नानामुनिभ्यो नम:। ओं नानादेवेभ्यो नम:। ओं शवेभ्यो नम:। ओं सर्वमुण्डेभ्यो नम:। ओं धर्माय नम:। ओं ज्ञानाय नम:। ओं वैराज्ञाय नम:। ओं ऐश्वर्याय नम:।

कोणेषु—ओं अधर्माय नम:। ओं अज्ञानाय नम:। ओं अवैराज्ञाय नम:। ओं अनैश्वर्याय नम:।

मध्ये—ओं आनन्दकन्दाय नम:। ओं संविन्नलाय नम:। ओं

सर्वतत्वात्मक पद्माय नम: । ओं प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नम: । ओं विकारमय केसरेभ्यो नम: । ओं पञ्चाशद्वीजाद्यकर्णिकायै नम: । ओं अं द्वादश कलात्मने सूर्यमण्डलाय नम: । ओं वं षोडश कलात्मने सोममण्डलाय नम: । ओं सं दश कलात्मने वह्निमण्डलाय नम: । ओं सं सत्वाय नम: । ओं रं रजसे नम: । ओं तं तमसे नम: । ओं आं आत्मने नम: । ओं अं अन्तरात्मेने नम: । ओं पं परमात्मने नम: । ओं ह्रीं ज्ञानात्मने नम: ।

इसके वाद पूर्व आदि 8 दिशाओं में तथा मध्य में जया आदि पीठ शक्तियों का उनके नाममन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा—

ओं जयायै नम: । ओं विजयायै नम: । ओं अजितायै नम: । ओं अपराजितायै नम: । ओं नित्यायै नम: । ओं विलासिन्यै नम: । ओं दोग्ध्र्यै नम: । ओं अघोरायै नम: । ओं मङ्गलायै नम: ।

और इसके वाद 'ह्रीं चण्डिकायोगपीठात्मने नम:'—इस पीठ मन्त्र से आसन देकर मूलमन्त्र से मूर्ति कल्पित कर ध्यान, आवाहन आदि उपचारों से पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्त चण्डी का विधिवत पूजन करने के वाद आवरण पूजा करनी चाहिए ।

आवरणपूजा—त्रिकोण के मध्य (विन्दु) में देवी का ध्यान कर मूलमन्त्र से उसका पूजन करना चाहिए । (फिर त्रिकोण के) पूर्व कोण में सरस्वती के साथ ब्रह्मा का, नैऋत्य कोण में लक्ष्मी के साथ विष्णु का तथा वाव्यकोण में उमा के साथ शिव का पूजन करना चाहिए । उत्तर एवं दक्षिण दिशा में क्रमश: सिंह एवं महिष का पूजन करना चाहिये ।

(षट्कोण के) पूर्व आदि 6 कोणों में नन्दजा, रक्तदन्तिका, शाकम्भरी दुर्गा, भीमा एवं भ्रामरी का पूजन करना चाहिए । नन्दजा आदि शक्तियों तथा वक्ष्यमाण अन्य शक्तियों का प्रारम्भ में प्रणव, फिर अनुस्वार सहित उनके नाम का आदिवर्ण और अन्त में 'नम:' लगाकर वने मन्त्रों से पूजन करना चाहिए ।

अष्टदल में ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही ऐन्द्री तथा चामुण्डा का पूजन करना चाहिए ।

फिर चतुर्विंशतिदल में विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया

शक्ति, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, धृति, वृत्ति, धृति, स्मृति, तुष्टि, पुष्टि, दया, माता एवं भ्रान्ति का पूजन करना चाहिए।

भूपुर के बाहर कोणों में गणेश, क्षेत्रपाल, वटुक एवं योगनियों का पूजन करना चाहिये। तथा (पूर्व आदि दिशाओं में) इन्द्र आदि का भी पूजन करना चाहिए। इस प्रकार मन्त्र के सिद्ध हो जाने पर साधक सौभाग्यवान बन जाता है।

आवरण पूजाविधि : त्रिकोण के मध्य में बिन्दु पर देवी का ध्यान कर मूलमन्त्र से पूजन करने के बाद हाथों में पुष्पाञ्जलि लेकर ओंसंविन्मये परे देवि परामृतरस प्रिये। अनुज्ञां चण्डिके देहि परिवारार्चनाय मे॥'-इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ाकर देवी से आज्ञा लेकर आवरण पूजा करनी चाहिए।

तन्त्रशास्त्र के प्राय: सभी ग्रन्थों में आवरण पूजा में सर्वप्रथम षडङ्ग-पूजा करने का विधान है। अत: त्रिकोण के बाहर आग्नेय आदि चारों कोणों में, मध्य में तथा दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से षडङ्गपूजा करनी चाहिए, यथा—

ऐं हृदयाय नम:-आग्नेये। ह्रीं शिरसे स्वाहा-ईशान्ये। क्लीं शिखायै वषट् नैर्ऋत्ये। चामुण्डायै कवचाय हुम्-वायवे। विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्—मध्ये। ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्—दिक्षु।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र पढ़कर "अभीष्टसिद्धि मे देहि शरणागत वत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्।"—इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए।

द्वितीय आवरण में त्रिकोण के पूर्व आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से सरस्वती सहित ब्रह्मा आदि का पूजन करना चाहिए, यथा—

ओं सरस्वतीब्रह्माभ्यां नम: पूर्वे। ओं लक्ष्मी हृषीकेशाभ्यां नम:-नैर्ऋत्ये। ओं गौरीरुद्राभ्यां नम:-वायव्ये। ओं सिं सिंहाय नम:-उत्तरे। ओं मं महिषाय नम:-दक्षिणे।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र पढ़कर "अभीष्टसिद्धि···द्वितीया-

वरणार्चनम् । मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

तृतीय आवरण में षट्कोण में निम्नलिखित मन्त्रों से नन्दजा आदि 6 शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा—:

ओं नं नन्दजायै नमः। ओं रं रक्तदन्तिकायै नमः। ओं शां शाकंभर्यै नमः। ओं दुं दुर्गायै नमः। ओं भीं भीमायै नमः। ओं भ्रां भ्रामर्यै नमः।

तदनंतर पुष्पाञ्जलि लेकर मूल मन्त्र बोलकर "अभीष्ट सिद्धिं०··· तृतीयावरणार्चनम्"—मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

चतुर्थ आवरण में अष्टदल में ब्रह्माणी आदि 8 मातृकाओं का निम्नलिखित मन्त्रों से पूजन करना चाहिए, यथा—:

ओं ब्रं ब्रह्माण्यै नमः। ओं मां माहेश्वर्यै नमः। ओं कों कौमार्यै नमः। ओं वैं वैष्णव्यै नमः। ओं वां वाराह्यै नमः। ओं नां नारसिंह्यै नमः। ओं ऐं ऐन्द्र्यै नमः। ओं चां चामुण्डायै नमः।

तत्पश्चात् पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्ट सिद्धि··· चतुर्थावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

पञ्चम आवरण में चतुर्विंशतिदल में पूर्व-आदि क्रम से निम्नलिखित मन्त्रों से विष्णुमाया आदि 24 शक्तियों का पूजन करना चाहिए, यथा— :

ओं विं विष्णुमायायै नमः। ओं चें चेतनायै नमः। ओं बुं बुद्ध्यै नमः। ओं निं निद्रायै नमः। ओं क्षुं क्षुधायै नमः। ओं छां छायायै नमः। ओं शं शक्त्यै नमः। ओं तृं तृष्णायै नमः। ओं क्षां क्षान्त्यै नमः। ओं जां जात्यै नमः। ओं लं लज्जायै नमः। ओं शां शान्त्यै नमः। ओं श्रं श्रद्धायै नमः। ओं कां कान्त्यै नमः। ओं लं लक्ष्म्यै नमः। ओं धृं धृत्यै नमः। ओं वृं वृत्यै नमः। ओं श्रुं श्रुत्यै नमः। ओं स्मृं स्मृत्यै नमः। ओं तुं तुष्ट्यै नमः। ओं पुं पुष्ट्यै नमः। ओं दं दयायै नमः। ओं मां मात्रे नमः। ओं भ्रां भ्रान्त्यै नमः।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धि···पञ्चमावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

षष्ठ आवरण में भूपुर के बाहर आग्नेय आदि कोणों में निम्नलिखित मन्त्रों से गणेश आदि का पूजन करना चाहिए, यथा— :

गं गणपतये नम: । क्षं क्षेत्रपालाय नम: । वं वटुकाय नम: । यां योगिनीभ्यो नम: ।

तत्पश्चात् पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धि··· षष्ठावरणार्चनम्"—मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

सप्तम आवरण में पूर्व आदि अपनी अपनी दिशाओं में निम्नलिखित मन्त्रों से इन्द्र आदि दिक्पालों का पूजन करना चाहिये, यथा—:

ओं लं इन्द्राय नम: । ओं रं अग्नये नम: । ओं मं यमाय नम: । ओं क्षं निर्ऋतये नम: । ओं वं वरुणाय नम: । ओं यं वायवे नम: । ओं सं सोमाय नम: । ओं हं ईशानाय नम: । ओं अं ब्रह्मणे नम: । ओं ह्रीं अनन्ताय नम: ।

तदनन्तर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धि··· सप्तमावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

अष्टम आवरण में भूपुर के बाहर पूर्व आदि दिशाओं में दिक्पालों के पास वज्र आदि आयुधों का पूजन करना चाहिए, यथा—:

ओं वं वज्राय नम: । ओं शं शक्त्यै नम: । ओं गं गदायै नम: । ओं खं खड्गाय नम: । ओं पं पाशाय नम: । अं अंकुशाय नम: । ओं गं गदायै नम: । ओं शं शूलाय नम: । ओं चं चक्राय नम: । ओं पं पाशाय नम: ।

फिर पुष्पाञ्जलि लेकर मूलमन्त्र बोलकर "अभीष्टसिद्धि···अष्टमावरणार्चनम्" मन्त्र से पुष्पाञ्जलि चढ़ानी चाहिए ।

तन्त्रशास्त्र के अन्य ग्रन्थों में पञ्चम आवरण में असिताङ्ग आदि 8 भैरवों के पूजन का विधान मिलता है। उनकी पूजा के मन्त्र इस प्रकार हैं :

ओं ह्रीं असिताङ्ग भैरवाय नम: । ओं ह्रीं रुरु भैरवाय नम: । ओं ह्रीं चण्ड भैरवाय नम: । ओं ह्रीं क्रोधभैरवाय नम: । ओं ह्रीं उन्मत्त भैरवाय नम: । ओं ह्रीं कपाल भैरवाय नम: । ओं ह्रीं भीषण भैरवाय नम: । ओं ह्रीं संहार भैरवाय नम: ।

और फिर आवरण पूजा के बाद धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि उपचारों से विधिवत् भगवती का पूजन करना चाहिए ।

42. कालरात्रि-वशीकरण मन्त्र

निशारसेन रचिते मध्य लाजा समन्विते ।
कालरात्रि ततो दीपे समावाह्य प्रपूजयेत् ।
युक्तामावरणैः पश्चान्नवीनं खर्परं न्यसेत ।
दीपोत्थपात्र पतितं दद्यात् कज्जलं सुधीः ।
पश्चिमाभिमुखे मन्त्री कज्जलं तत्तु मन्त्रयेत् ।
वक्ष्यमाणेन मनुना शतत्रितयसंमितम् ।
तारो वाङ्मदनोमायारमा भूमिर्वलूं ह्सौः ।
नमः काह्लेश्वरीपदं सर्वान् मोहय मोहय ।
कृष्णेऽन्ते कृष्णवर्णे च कृष्णां वरं समन्विते ।
सर्वानाकर्षय द्वन्द्वं शीघ्रं वशं कुरु द्वयम् ।।

प्रयोगः—साधकः शनिवासरे सन्ध्या काले तडागं गत्वा ओं नमो जलूकायै जलूकायै सर्वजनं वशं कुरु हुम् इति मन्त्रेण हरिद्राक्षतपुष्पैः जलं संपूज्य गृहं गत्वा देवीं स्मरन् निशि भूमौ शयीत ।

प्रातः तस्मात् सरसो जलौकाद्वयमादाय छायायां शुष्कं कृत्वा संचूर्ण्य तच्चूर्ण युक्तेन कृष्ण कार्पास सूत्रेण वर्तिकांकृत्वा कुलाल चक्रादानीत मृन्निर्मिते पात्रे तां निधाय भ्रमतः तैल यन्त्रात् तिल तैलमादाय तत्र निःक्षिपेत् । वेश्यागृहात् अग्निमानीय कुचिला कुचिला काष्ठैः तं प्रज्वाल्य तेन तत्पात्रे दीपं कृत्वा हरिद्रारस कृते त्रिकोण षट्कोण चतुष्कोणात्मके यन्त्रे मध्ये लाजान् प्रक्षिप्य तदुपरि दीपपात्रं स्थापयित्वा दीपे कालरात्रिमावाह्य सावरणां इष्ट्वा खर्परं दीपोपरि धृत्वा अंजनं पातयेत् । तदंजनमादाय पश्चिमाभिमुखः शतत्रयम् अनेन मन्त्रेण मन्त्रयेत् ।

मन्त्र—ओं ऐं क्लीं ह्रीं श्रीं ग्लौं व्लूं ह्लसौ नमः काह्लेश्वरि सर्वान् मोहय मोहय कृष्णे कृष्णवर्णे कृष्णाम्वर समन्विते सर्वान् आकर्षय आकर्षय शीघ्रं वशं कुरु ऐं ह्रीं क्लीं श्रीम् ।।

ततो दीपात् देवीं आत्मनि संयोज्य तत्कज्जलं भौमवारे नवनीतमर्दितं पात्रे संस्थाप्य तदग्रे वह्नि संस्थाप्य संस्कृत्य मधूक पुष्पै: अष्टोत्तर शतं मूलेन हुत्वा कुमारी वटुक: स्त्रियो भोजयेत् । तदंजनकृत तिलको जगद् वशयेत् ।

कुमारी-वटुक-स्त्री तीनों को भोजन कराए ।
कुमारीं वटुकं नारीं भोजयेन्मधुरान्वितम् ।
तेनांजनेन रचितं तिलको मन्त्रिसत्तम् ।।
दर्शनादेववशयेन्नरनारी नरेश्वरान् ।
दुग्धेनादौ प्रदत्तं तन्नराणां वशकारकम् ।।
तेन स्पृष्टो नरो नूनं दास: स्प्रष्टुर्भवेत् सदा ।।

शनिवार सायंकाल रमणीक सरोवर पर जाना चाहिए और हल्दी अक्षत एवं पुष्प से इस मन्त्र से उसका पूजन करना चाहिए । घर आकर रात्रि में देवी का स्मरण करता हुआ सो जाए । प्रात: उसी सरोवर से दो जलौका लाकर छाया में सुखाकर उनका चूरा वना लें । इस चूरे के साथ काले कपास के सूत्र की वत्ती वनाकर उसे कुम्हार की चाक से लाई गयी मिट्टी से वनाये गये पात्र में डालना चाहिए । फिर चलते हुए कोल्हू से निर्मल एवं शुद्ध तेल लाकर दीपक में डालना चाहिए । तत्पश्चात् वेश्या के घर से अग्नि लाकर कुचला की लकड़ियों से जलाकर उससे दीपक को प्रज्वलित कर, हल्दी के रस से त्रिकोण षट्कोण एवं भूपुर सहित वने मन्त्र पर वीच में लाजा रखकर उस पर दीपक को स्थापित करना चाहिए ।

तदनन्तर दीपक पर काल रात्रि का आवाहन कर आवरण सहित पूजन करना चाहिए । फिर दीपक पर नवीन खप्पर रख कर दीपक की ज्योति से उत्पन्न काजल लेकर साधक को पश्चिमाभिमुख बैठ कर वक्ष्यमाण 300 मन्त्रों से उस काजल को अभिमन्त्रित करना चाहिए ।

अंजनाभिमन्त्रण मन्त्र—

ॐ ऐं क्लीं ह्लीं श्रीं ग्लौं ब्लूं ह्‌लसौ: नम:। काह्‌नेश्वरी सर्वान् मोहय कृष्णे कृष्णवर्णे कृष्णाम्बर समन्विते सर्वानाकर्षय आकर्षय शीघ्रं वशं कुरु कुरु ह्लीं क्लीं श्रीं ॥

तत्पश्चात् दीपक से देवी को अपनी आत्मा में स्थापित कर मंगलवार को पुन: देवी एवं अंजन का पूजन कर उस अंजन को मखन में मिलाना चाहिए। फिर सुसंस्कृत अग्नि में महुआ के फूलों से मूल मन्त्र से 108 आहुति देनी चाहिए। तथा कुमारी वटुक एवं स्त्रियों को मिष्ठान्न का भोजन कराना चाहिए।

इस प्रकार करते हुए अंजन का तिलक लगाकर नर-नारी राजा को वश में कर लेता है।

---

43. कालरात्रि स्तम्भनमन्त्र

रवौ हरिद्रारोचनाकुष्ठतगरै: गोमूत्रपिष्टै: हरिद्रा रंजिते वस्त्रेऽष्टदलं कृत्वा अमुकं स्तम्भय इति मध्ये लिखेत्।

ॐ ॐ ग्लौं ग्लौं ग्लौं चट चटेति वर्णान्दलेषु लिखेत्। तद्वस्त्रं पीतवस्त्रं सूत्रेण संवेष्ट्य कोकिलतरो: सप्तकंटकै: विद्धर्कपत्रै: संवेष्ट्य वल्मीकरन्ध्रे प्रक्षिप्य मेषमूत्रं उपरि सिक्त्वा रन्ध्रोपरि शिलां संस्थाप्य तत्रस्थितोऽमुं मन्त्रं हरिद्रा मणिभि: सहस्रं जपेत् नैर्ऋत्याभिमुख:।

मन्त्र—ॐ ह्‌लां ह्‌लीं ह्‌लूं कामाक्षि माया रूपिणि सर्वमनोहारिणी स्तम्भय स्तम्भय रोधय रोधय मोहय मोहय क्लां क्लीं क्लूं कामाक्षि काह्‌नेश्वरि हुं हुं हुम् ॥

एवं कृते रिपुस्तम्भ:।

हल्दी, गोरोचन, कूठ एवं तगर को गोमूत्र मे पीसकर उससे हल्दी से रंगे वस्त्र पर अष्टदल लिखें। उसकी कर्णिका में शत्रु का नाम

"अमुकंस्तम्भय" तथा दलों में दो प्रणव, दो भूवीज तथा दो बार चट लिखना चाहिए। फिर इस मन्त्र को पीले वस्त्र से वेष्टित करना चाहिए। फिर कुचला की लकड़ी को सात कीलों से बांध कर आम के पत्ते में लपेट कर उन यन्त्रों को बॉवी में डाल देना चाहिए, और वांवी को भेड के मूत्र से भर देना चाहिए। और वॉवी के मुंह पर पत्थर रखकर उसी पत्थर पर बैठ कर साधक नैऋ॑त्य कोण की ओर मुख करके हल्दी के दानों से बनी माला पर मल मन्त्र का एक हजार जप करे। पांच दिन पर्यन्त ऐसा ही करना चाहिए। दशांश हवन करे।

44. कालरात्रि मोहनमन्त्र

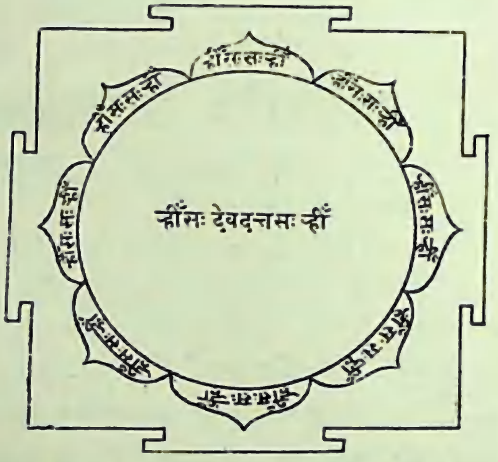

रविवारे हरिद्रां नारी दुग्धेन पिष्ट्वा तद्रसेन भूर्जपत्रमध्ये कामवीज युतं वृत्तं कृत्वा षोडशकाम वीजैः संवेष्टय उपरिकामवीजयुक् षट् कोणं कृत्वा सर्ववाग्वीजं मध्यस्थं कुर्यात्। तद्यन्त्रोपरि स्थित्वा पंचदिनं प्रत्यहं सहस्रं दशाक्षरं जपेत्।

मन्त्र—ओं कामाय क्लीं क्लीं कामिन्यै क्लीम् ॥

जपदशांशेन तिल तैलेनैव जुहुयात् ।।
तद्भस्मना तिलकेन तद्यन्त्र धारणेन च विश्वं-मोहयेत् ।।

रविवार को हल्दी लाकर उसे स्त्री के दूध में पीसकर उसके रस से भोजपत्र पर एक वृत्त और उसके भीतर काम वीज लिखना चाहिए। उस वृत्त को 10 काम वीजों से वेष्टित करना चाहिए। उसके ऊपर वृत्त वनाकर 12 कामवीजों को वेष्टित करना चाहिए। उसके ऊपर पुनः वृत्त वनाकर 16 काम बीजों को वेष्टित करना चाहिए। उसके ऊपर षट्-कोण लिखना चाहिए; कोणों में बीज लिखे। उस पूरे यन्त्र को वाग बीज के मध्य में करने से यह यन्त्र मोहन होगा। इसके वाद इस यन्त्र पर वैठ कर दशाक्षर मन्त्र का जप करे।

इस मन्त्र का प्रतिदिन क्रुद्ध मानस से पांच दिन तक जप करना चाहिए तथा घी मिला कर तिलों से दशांश हवन करना चाहिए। हवन की भस्म से तिलक लगाकर, उस यन्त्र को धारण कर साधक समस्त विश्व को मोहित कर लेता है।

कालरात्रि स्तम्भन

45. कालरात्रि आकर्षण मन्त्र प्रयोगः

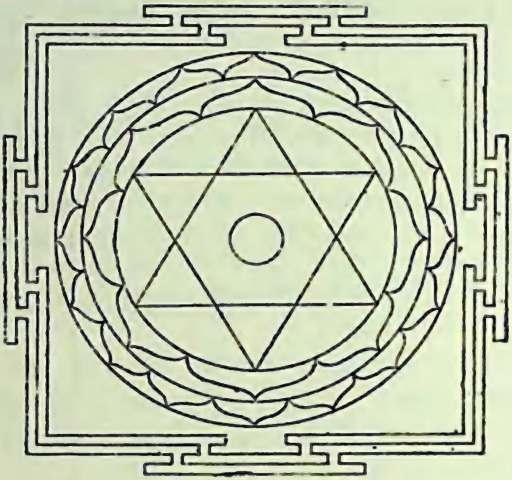

प्रयोगः—कृष्णाष्टम्यां कृष्ण चतुर्दश्याम् वा कुज-रवि-अन्यतर-युक्तायां प्रातः नाभिमात्रे जले स्थित्वा मूलं एकादश शतं प्रजप्य गृहमागत्य शरीरं तैलेन अभ्यज्य पीठे नराकारं योषिदाकारं वा विलिख्य लज्जावती पत्रैः तं संपूज्य लज्जावती मूलेन सम्प्रोक्ष्य तदग्रे अमुं मन्त्रं षष्ट्यधिकं शतं जपेत् ।

मन्त्र—ओं नमः कालिकायै सर्वाकर्षण्यै अमुकीं आकर्षय आकर्षय शीघ्रमानय आनय आं ह्रीं क्रों भद्रकाल्यै नमः ॥

ततः पञ्चाशत् करवीरैः पुष्पैः अं अमुकीं आकर्षय आकर्षय नमः आं अमुकीम् इति पंचाशद् वर्ण पूर्वकम् एतत् जपन् तमाकारं पूजयेत् । धूप दीप नैवेद्यं कृत्वा तदग्रे अग्निं प्रतिष्ठाप्य तत्राज्याक्त चणकैः शतमष्टुनोक्तमनुना हुत्वा कुमारी कर्त्तितेन कृष्ण कार्पास सूत्रेण अष्टाविंशति,

तंतुनिर्मितं स्वदेहमितं दोरकं कृत्वा आकर्षण मन्त्रेण अष्टोत्तर शत ग्रन्थीन् दत्त्वा तद्धारणात् नरं वा नारीं वा आकर्षति ॥

कृष्ण पक्ष की अष्टमी को मंगल या रविवार होने पर प्रात: नाभि-पर्यन्त जल में खड़े होकर मूलमन्त्र का ग्यारह सौ जप करना। फिर घर आकर शरीर पर तेल लगाकर पीठ पर अंजन से स्त्री या पुरुष की आकृति बनाकर उसका लाजवन्ती के पत्तों से पूजन कर उसके जड़ के रस से प्रोक्षण कर उसके आगे 44 अक्षर वाले मन्त्र का जप करना चाहिए। इस मन्त्र का 160 बार जप करके साधक 50 लाल कनेर के फूलों से पूर्व लिखित आकृति का पूजन करे। वर्णमाला का एक-एक अक्षर बोलकर साध्य का द्वितीयान्त नाम, दो बार आकर्षय-आकर्षय तथा अन्त में नम: लगाकर इस प्रकार बने मन्त्रों से 1-1 पुष्प चढ़ाना चाहिये। फिर धूप, दीप एवं नैवेद्य आदि से पूजन कर आकर्षण मन्त्र से घी मिश्रित चनों से 100 आहुतियां देनी चाहिएं, उसके बाद कुमारी के हाथ से कते काले सूत्र को 28 गुणाकर अपने शरीर जितने लम्बे धागे में आकर्षण मन्त्र से 108 गांठ लगाए। इस गण्डा को धारण करने से अपने गांव, नगर में रहने वाले स्त्रीपुरुष तीन दिन में वश में हो जाते हैं।

46. सर्ववशंकरकालरात्रि मन्त्र

मन्त्र—ॐ ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काह्नेश्वरि सर्वजन-मनोहरि सर्वमुखस्तंभनि सर्वराजवशंकरि सर्वदुष्ट निर्दलनि सर्व स्त्रीपुरुषाकर्षिणी बंदी शृंखलास्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून् भंजय भंजय द्वेष्टृन् निर्दलय सर्व स्तम्भय मोहनास्त्रेण द्वेषिण: उच्चाटय उच्चाटय सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहा देहि देहि सर्वकालरात्रि कामिनि गणेश्वरि नम:।

ध्यानम्—उद्यन्मार्तण्ड कान्ति विगलित कवरीं कृष्णवस्त्रावृतांगी।

दंडं लिंगं कराब्जैः वरमथभुवनं संदधानां त्रिनेत्राम् ।
नाना कल्पौघभासां स्मितमुख कमलां सेवितां देवसंघैः ।
मायां राज्ञीं मनोभूशर विकलतनूमाश्रये कालरात्रिम् ।।

विनियोगः—अस्य कालरात्रिमन्त्रस्य दक्ष ऋषिः जगतीछन्दः अलर्क निवासिनी कालरात्रिः देवता क्रीं बीजं माया राज्ञीति शक्तिः ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोगः ।

जपसंख्या—अयुतं प्रजपेन्मन्त्रम् ।
दशांशं जुहुयात् तिलैः । पयोरुहैः विप्रान् भोजयेत् ।
यन्त्रविधिः—तां यजेत् कालिका पीठे पूजार्थं यंत्रमुच्यते ।
विन्दु त्रिकोण षट्कोण वृत्ताष्ट दल वृत्तकम् ।।
(षोडशदलम्)—कला पत्रं पुनर्वृत्तं त्रिरेखं धरणीगृहम् ।
(चतुष्कोणं)—चतुर्द्वारयुतं कृत्वा विन्दौ देवीमथार्चयेत् ।
(क्षीरवृक्षस्य)—तद् यन्त्रं विलिखेद् भूर्जे क्षीर द्रोः फलकेऽपिवा ।
शान्तये त्वष्ट गन्धेन लेखिन्यां चंपकोत्थया ।
कर्चूरा गुरु कर्पूर रोचनारक्त चन्दनम् ।
कुंकुमं चन्दनं चापि कस्तूरीत्यष्ट गन्धकम् ।।
सिन्दूरहिंगुलाभ्यां च वश्याय विलिखेत् सुधीः ।
(कोकिल पक्षैः)—सारसोद्भव लेखिन्या स्तंभने कोकिलच्छदैः ।
हरिताल हरिद्राभ्यां मारणे वायसच्छदैः ।
(भानुरर्करसः)—धत्तूर भानु निर्गुण्डी खराश्व महिषा सृजा ।
एवं विलिखेत यन्त्रे कुर्यादावरणार्चनम् ।।
त्रिकोणे देवतास्तिस्रोवामावर्तेन पूजयेत् ।
संमोहिनी मोहिनीं च तृतीयां च विमोहिनीम् ।।
षट्सु कोणेषु वह्न्यादि षडंगानि ततो यजेत् ।
(स्वराः—अंनमः इत्यादयः)—वृत्ते स्वराः समभ्यर्च्य मातरोऽष्टौ वसुच्छदैः ।
(षोडशपत्रे)—कादि क्षांताहलोवृत्ते उर्वश्याद्याः कलादले ।

उर्वशी मेनका रम्भा घृताची मंजुघोषया ।
सह जन्यासु केशी स्यादष्टमी तु तिलोत्तमा ।।
गन्धर्वी सिद्धकन्या च किन्नरी नाग कन्यका ।
विद्याधरी किम्पुरुषा यक्षिणीति पिशाचिका ।
पुनर्वृत्ते यजेन्मन्त्री देवता दशकं यथा ।
मन्त्रादिमं पंचवीजं स्व-स्व देवता युतम् ।
पंच वाणान् स्ववीजाद्यान् इत्युक्त्वा दशदेवताः ।
भूगृहांतः समभ्यर्च्या अणिमाद्यष्ट सिद्धयः ।
भूगृहस्य त्रिरेखासु संपूज्या नव देवताः ।
इच्छा शक्तिः क्रिया शक्तिः ज्ञान शक्ति रितित्रयम् ।
आद्यरेखा गतं पूज्यं द्वितीयायाः शिवाजकाः ।
तृतीयायां तु रेखायां सत्त्वमुख्यं गुण त्रयम् ।
पूर्वादिषु चतुर्द्वार्षु गणेशं क्षेत्रपालकम् ।
वटुकं योगिनीश्चापि यजेदिन्द्रादिकानपि ।।
एवं वाह्यार्चनं कृत्वा देवी पार्श्वं गताः पुनः ।
देव्यो द्वादश संपूज्याः प्रतिदिक् त्रितयं त्रयम् ।।

ॐ परमात्मने नमः । ऐं सरस्वत्यै नमः । ह्रीं गौर्यै नमः । क्लीं कामायै नमः । श्रीं रमायै नमः ।।

द्रां द्रावण वाणाय नमः । शिवाजका रुद्रविष्णु ब्रह्माणः । सत्त्व-रजस्तमांसि ।।

मायाद्या काल रात्रिश्च तृतीय वट वासिनी ।
गणेश्वरी च काह्लाख्या व्यापिकालार्क वासिनी ।
माया राज्ञी च मदनप्रिया स्याद् दशमी रतिः ।
लक्ष्मी काह्लेश्वरी चेति देव्यो द्वादश कीर्तिताः ।
नैवेद्यांतार्चनं कृत्वा दद्यान् मद्यादिना वलिम् ।
एवं संपूजिता स्वेष्टं कालरात्रिः प्रयच्छति ।।
शनिवारे तु सन्ध्यायां गच्छेद् रम्यं सरोवरम् ।
हरिद्राऽक्षतपुष्पैस्तन्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ।

तारा नमो जलोकायै द्वितयं सर्वत: परम् ।
जनं वशं कुरु द्वन्द्वंहुमंतो मनु रीरित: ।
गृहमागत्य गोत्रायां स्वप्याद् देवीं स्मरन्निशि ॥
प्रात स्तत्रैव गत्वाथ जलौका द्वितीयं तत: ।
गृहीत्वा तत्प्रशोष्याथ छायायां चूर्णयेतु पुन: ।
जलूका चूर्ण मुक्तेन कृष्णकार्पास सूत्रत: ।
वर्तिविधाय मुंचेत भाजनेनिर्मित मृदा ।
कुलाल चक्रोत्थितया तत्र तैलं पुन: क्षिपेत् ।
तैलं यंत्रात् समानीतं भ्रमतो निर्मलं शुचि ।
वार स्त्री सदनाद् वह्निमानीय ज्वालयेत्तु तम् ।
दारुभि: कोकिलाक्षस्य प्रकुर्यात् तत्रदीपकम् ॥
वह्ने: पुर द्वयं क्षोणीपुर यंत्रे निधापनम् ॥

विनियोग:—अस्य कालरात्रिमन्त्रस्य दक्ष ऋषि: अति जगति छन्द: अलर्क निवासिनी कालरात्रि देवता क्रींवीजम् मायाराज्ञी शक्ति: ममाभीष्ट सिद्धये जपे विनियोग: ।

ऋष्यादिन्यास:—दक्षाय ऋषये नम: शिरसि । अति जगती छन्दसे नम: मुखे । कालरात्रि देवतायै नम: हृदि । क्रीं वीजाय नम: गुह्ये । माया-राज्ञी शक्तये नम: पादयो: ।

करन्यास:—ओं अंगुष्ठाभ्यां नम: । ऐं तर्जनीभ्यां नम: । ह्रीं मध्यमाभ्यां नम: । क्लीं अनामिकाभ्यां नम: । श्रीं कनिष्ठकाभ्यां नम: । ओं ह्रीं श्रीं क्लीं करतलकर पृष्ठाभ्यां नम: ।

षडंगन्यास:—ओं ऐं ह्रीं क्लीं श्रीं काह्लेश्वरी सर्वजनमनोहारि सर्वमुखस्तंभिनी हृदयाय नम: । सर्वराजवशंकरि सर्व दुष्टदलनि सर्व-स्त्रीपुरुषाकर्षिणी शिरसे स्वाहा । वन्दीश्रृंखलास्त्रोटय त्रोटय सर्वशत्रून् भंजय भंजय शिखायै वषट् । द्वेष्टृन निर्दलय सर्वंस्तम्भय स्तम्भय कवचाय हुम् । मोहनास्त्रेण द्वेषिण उच्चाटय उच्चाटय सर्वं वशं कुरु कुरु स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट् । देहि देहि सर्वं कालकामिनि गणेश्वरि नम: अस्त्राय फट् ।

जप संख्या—इस मन्त्र का दस हजार जप करना चाहिए। तिल या कमलों से दशांश होम करना चाहिए। श्रेष्ठ ब्राह्मणों को भोजन खिलाना चाहिए।

काली यन्त्र को—पीपल, वट, गूलर आदि वृक्षों के पत्ते पर अष्ट गन्ध से चम्पा की कलम से लिखना चाहिए। कर्चर, अगर, कपूर, गोरोचन, लाल चन्दन, कुंकम, श्वेत चन्दन, कस्तूरी ये अष्टगन्ध हैं।

वश्य के लिए यह यन्त्र सिन्दूर एवं हिंगुल की कलम से, स्तम्भन के लिए हरिताल और हल्दी से कोयल के पंख से लिखना चाहिए।

मारण में धतूरा, अर्क और सिन्धूआर के रस से कौआ के पंख से लिखना चाहिए।

कालरात्रि देवी का ध्यान कर मानसोपचार से विधिवत पूजन कर अर्घ्य स्थापन कर पीठ देवताओं का पूजन करना चाहिए।

पीठमध्ये—आंधार शक्तये नमः। प्रकृतये नमः। कमठाय नमः। शेषाय नमः। पृथिव्यै नमः। सुधाम्बुधये नमः। मणिद्वीपाय नमः। चिन्तामणिगृहाय नमः। श्मशानाय नमः। पारिजाताय नमः। कर्णिका मूले—रत्नवेदिकायै नमः।

चर्तुदिक्षु—मुनिभ्यो नमः। देवेभ्योनमः। शिवाभ्यो नमः। कर्णि-कोपरि-मणिपीठाय नमः। मुण्डेभ्यो नमः। धर्माय नमः। ज्ञानाय नमः। वैराग्याय नमः। ऐश्वर्याय नमः। अधर्माय नमः। अज्ञानाय नमः। अवैराग्याय नमः। अनैश्वर्याय नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।

केसरों में तथा मध्य में—जयायै नमः। विजयायै नमः। अजितायै नमः। अपराजितायै नमः। नित्यायै नमः। विलासिन्यै नमः। दोग्ध्र्ये नमः। अघोरायै नमः। मंगल मूर्तये नमः।

इसके बाद 'ह्रीं कालिका योग पीठात्मने नमः' से आसन देकर मूल-मन्त्र से मूर्ति कल्पित कर ध्यान आवाहन आदि उपचारों से पत्र पुष्पांजलि दानपर्यन्त कालरात्रि देवी का विधिवत पूजन करे॥ यह क्रम प्रतिदिन का होना चाहिए।

47. अथ शतचण्डीविधानम्

अथप्रयोगः—शास्त्रोक्त विधिना शंकरालये भवान्यालये वा मण्डपं वेदिमध्ये निर्माय प्रतीच्यां कुंडं मध्ये वा कृत्वा कृतनित्य क्रियोऽमुककामः

शतचण्डीविधानमहं करिष्ये इति संकल्पं विधाय मातृस्थापनं नान्दी श्राद्धं विधाय स्वस्ति वाचनं कृत्वा उक्तलक्षणान् दश विप्रान् मधुपर्कवस्त्र हेमदानादिना वृणुयात् । ते च यजमान दत्तासनेषु दत्तमालाभिः समाहिता सुमनसो भगवतीं स्मरन्तः सप्तशतीमूलमन्त्रेण वेद्यां कुम्भं स्थापयित्वा तत्र दुर्गां आवाह्य षोडशोपचारैः संपूज्य तदग्रे प्रत्येकं दश कृत्वः सप्तशतीं, अयुतं च नवार्णं जपेयुः ।

हविष्य भोजन ब्रह्मचर्य भूशयनास्पृश्यास्पर्शादि नियमांश्चरेयुः । यजमानश्च द्विवर्षाद्या उक्त लक्षणां अधिकांगीं—इत्यादि दुर्लक्षण रहिताः कुमारी—त्रिमूर्ति कल्याणादि नाम्नीः दशकन्या भोजन वस्त्र हेमदानादि-नाम मन्त्रेण आवाह्य जगत्पूज्या इत्यादि स्व-स्व-मन्त्रैः पूजयेत् । एवं चत्वारि दिनानि जपं कुमारी पूजनं च समाप्य पंचमेऽह्नि कुंडे आगमोक्त पूर्व-विधिना वह्निं संस्थाप्य पायसान्नादिभिः उक्तैः द्रव्यैः जुहुयुः । सप्तशत्याः प्रतिश्लोकं दशवारं, नवार्णेन च अयुतं च होमसंख्या । एकैको द्विजः सकृत सप्तशती प्रतिश्लोकं सहस्रं मूलेन च जुहुयात् । ततः आवरण देवतानां नाम मन्त्रैस्तारादिस्वाहान्तैः एकैकामाहुतिं हुत्वा पूर्णाहुतिं कृत्वा देवीं कुम्भस्थां संपूज्य बलिदानं विधाय ऋत्विग्भ्य : प्रत्येकं निष्क-शक्तौ सुवर्णमितं सुवर्णं दद्यात् ।। ततः विप्राः कलशोदकेन यजमानं निगम पुराणोक्त मन्त्रैरभिषिंचेयुः आशिषश्च दद्युः ।। ततः शतं विप्रान् नानाविधै-रन्नैः भोजयेत् । तेभ्योऽपि यथाशक्ति दक्षिणां दद्यात् ।।

विधानविधिः—शतचण्डी विधानं तु प्रवक्ष्ये प्रीतये नृणाम् ।
नृपोपद्रव आपन्ने दुर्भिक्षे भूमि कम्पने ।
अति वृष्ट्याम् अनावृष्टौ परचक्रभये क्षये ।
सर्वे विघ्नाः विनश्यन्ति शतचण्डी विधौ कृते ?
रोगाणां वैरिणां नाशो धनपुत्र समृद्धयः ।
शंकरस्य भवान्या वा प्रासादान्निकटे शुभम् ।
मण्डप द्वारवेद्याद्यं कुर्यात् सध्वज तोरणम् ।
तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ।
स्नात्वा नित्य कर्ति कृत्वा वृणुयाद् दश वाड्वान् ।

जितेन्द्रियान् सदाचारान् कुलीनान् सत्यवादिनः ॥
व्युत्पन्नान् चाण्डिका पाठ रतान् लज्जादयावतः ।
मधुपर्कं विधानेव वस्त्र स्वर्णादि दानतः ।
जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम् ॥
ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ।
भूमौ शयानः प्रत्येकं जपेयुः चण्डिकास्तवम् ।
मार्कण्डेय पुराणोक्तं दशकृत्वः सुचेतसः ।
नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं पृथक् ।
यजमानः पूजयेच्च कन्यानां दशकं शुभम् ।
द्विवर्षाद्याः दशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् ।
नाधिकांगीं न हीनांगीं कुष्ठिनीं च व्रणांकिताम् ।
अन्धां काणां केकरां च कुरूपां रोमयुक्तनुम् ॥
दासी जातां रोमयुक्तां दुष्टां कन्यां न पूजयेत् ।
विप्रान् सर्वेष्ट संसिद्धयै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् ।
वैश्यानां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ।
द्विवर्षा सा कुमार्युक्ता त्रिमूर्ति हायनत्रिका ।
चतुरब्दा तु कल्याणी पंचवर्षा तु रोहिणी ।
षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्त हायनी ।
अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद् दुर्गा च नव हायनी ।
सुभद्रा दशवर्षोक्तास्ता मन्त्रैः परिपूजयेत् ।
एकाब्दायाः प्रीत्यभावो रुद्राब्दास्तु विवर्जिताः ।
तासामावाहने मन्त्राः प्रोच्यन्ते शंकरोदिताः ।
मन्त्राक्षर मयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् ।
नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यामावाहयाम्यहम् ॥
कुमारिकादि कन्यानां पूजा मन्त्रान् ब्रुवेऽधुना ॥
जगत्पूज्ये जगद् वन्द्ये सर्वदेव स्वरूपिणि ।
पूजां गृहाण कौमारी जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ।
त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्ग ज्ञानरूपिणीम् ।

त्रैलोक्य वन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ।
कलात्मिकां कलातीतां कारुण्य हृदयां शिवाम् ।
कल्याण जननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥
अणिमादि गुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् ।
अनन्त शक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥
कामचारां शुभां कान्तां काल चक्रस्वरूपिणीम् ।
कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ॥
चण्डवीरां चण्डमायां चण्डमुंड प्रभंजनीम् ।
पूजयामि महादेवीं चण्डिकां चण्डविक्रमाम् ।
सदानन्दकरीं शान्तां सर्वदेव नमस्कृताम् ।
सर्वभूतात्मिकां देवीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥
दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवार्णव विनाशिनि ।
पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥
सुन्दरीं स्वर्ण वर्णाभां सुखसौभाग्य दायिनीम् ।
सुभद्र जननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्यहम् ॥
एतैः मन्त्रैः पुराणोक्तैः स्नातां कन्यां प्रपूजयेत् ।
गन्धैः पुष्पैः भक्ष्य-भोज्यैः वस्त्रैराभरणै रपि ॥
वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमण्डले ।
घटं संस्थाप्य विधिवत् तत्रावाह्यार्चयेत् शिवाम् ।
तदग्रे कन्यकाश्चापि पूजयेद् ब्राह्मणानपि ।
उपचारैस्तु विविधैः पूर्वोक्त वरणान्यपि ।
एवं चतुर्दिनं कृत्वा पंचमे होममाचरेत् ।
पायसान्नैस्त्रिमध्वक्तैर्द्राक्षारंभाफलैरपि ।
मातुलिंगैरिक्षुखण्डै र्नारिकेलैः पुरैस्तिलैः ।
जाती फलैराम्रफलैरन्यैर्मधुर वस्तुभिः ।
सप्तशत्या दशावृत्या प्रतिश्लोकं हुतं चरेत् ।
अयुतं च नवार्णेन स्थापिताग्नौविधानतः ।
कृत्वावरण देवानां होमं तन्नाम मन्त्रतः ।

कृत्वा पूर्णाहुतिं सम्यग् देवमग्निं विसर्ज्य च ।
अभिषिचेच्च यष्टारं विप्रौघ: कलशोदकै: ।
निष्कं सुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् ।
भोजयेच्च शतं विप्रान् भक्ष्य भोज्यै: पृथग्विधै: ।
तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्त्वा गृह्णीयादाशिषास्तत: ।
एवं कृते जगद् वश्यं सर्वे नश्यन्ति उपद्रवा: ।
राज्यं धनं यश: पुत्रानिष्टमन्यल्लभेत स: ।
एतद् दशगुणं कुर्याच्चण्डी साहस्रजं विधिम् ।
विद्यावत: सदाचारान् ब्राह्मणान् वृणुयाच्छतम् ।
प्रत्येक चण्डिका पाठान् विदध्युस्ते दिशामितान् ।
अयुतं प्रजपेयुस्ते प्रत्येकं नव वर्णकम् ॥
पूर्वोक्ता: कन्यका: पूज्या: पूर्वं मन्त्रै: शतं शुभा: ।
एवं दशाहं सम्पाद्य होमं कुर्यु: प्रयत्नत: ।
सप्तशत्या: शतावृत्या प्रति श्लोकं विधानत: ।
लक्ष्यसंख्यं नवार्णेन पूर्वोक्त द्रव्यसंचयै: ।
होतृभ्यो दक्षिणां दत्त्वा पूर्वोक्तान् भोजयेद्द्विजान् ॥
सहस्रंसंमितान् साधून् देव्याराधन तत्परान् ।
एवं सहस्रसंख्याके कृते चण्डीविधौ नृणाम् ।
सिद्धयत्यभीप्सितं सर्वदु:खौघश्च विनश्यति ॥

सहस्रचण्डी विधानम्—शतविप्रा: प्रत्येकं दश-दश सप्तशती पाठान् कुर्यु:। अयुतं अयुतं नवार्ण जपं कुर्यु:। शतकन्याश्च भोज्या:। एवं दशदिनेषु संपाद्य एकादशेऽह्नि सप्तशती शतावृत्या प्रतिश्लोकं तल्लक्ष-संख्याकं नवार्णेन च होम: ॥

प्रदक्षिणा—विष्णौ चतस्र: प्रदक्षिणा। ईशेऽर्धम्। शक्तौ एका। गणेशस्य तिस्र:। रवे: सप्त।

विशेष—भगवती दुर्गा के विशेष विधानों के लिए देखें—श्री दुर्गार्चन सृति:।

प्रकाशक—भारती संस्कृत भवन; जालन्धर शहर।

शतचण्डीविधान

राजा पर उपद्रव होने पर, दुर्भिक्ष एवं भूकम्प होने पर, अतिवृष्टि अनावृष्टि, शत्रु का आक्रमण तथा हानि होने पर शतचण्डी करने से सब विघ्न नष्ट हो जाते हैं । रोग और शत्रु का नाश होता है तथा धन और पुत्रों की वृद्धि होती है ।

भगवान् शंकर या देवी के मन्दिर के समीप ध्वज और तोरण सहित सुन्दर मण्डप बनाना चाहिए । उसमें द्वार एवं वेदी आदि बनाकर पश्चिम भाग में या मध्य में कुण्ड बनाना चाहिए ।

स्नान आदि नित्यकर्म करने के बाद जितेन्द्रिय, सदाचारी, कुलीन, सत्यवादी, व्युत्पन्न, चण्डीपाठ करने वाले, लज्जा और दयावान् दस ब्राह्मणों का वरण करना चाहिए । मधुपर्क की विधि से उनका पूजन करना चाहिए, जप करने के लिए आसन, माला आदि देना चाहिए ।

वे ब्राह्मण हविष्यान्न का भोजन करें, पृथ्वी पर शयन करते हुए दत्तचित्त होकर, जाग्रत रह कर दुर्गासप्तशती के दस-दस पाठ करें । तथा प्रत्येक ब्राह्मण को नवार्णमन्त्र का दस-दस हजार जप करना चाहिए । उपयुक्त, अनुकूल, कन्याओं का लिखे अनुसार पूजन करना चाहिए । सर्वतोभद्र मण्डल पर कलशस्थापन करते हुए पीठ पूजा को करे । विधिवत् हवन कुण्ड बनाकर पूजन करके पांचवें दिन दस हजार नवार्ण-मन्त्र की आहुति दे । तथा दुर्गासप्तशती के पाठ से आहुति डाले । हवन पूर्णाहूति, बलिविधान, अभिषेक आदि कार्य करे । ब्राह्मण को दक्षिणा देकर आशीर्वाद ग्रहण करे ।

सहस्रचण्डी विधि में इससे दस गुणा अधिक कार्य करना होगा । ब्राह्मण भी संख्या में दस गुणा अधिक होंगे, अर्थात् दस के स्थान पर एक सौ ब्राह्मण होंगे । एक सौ कन्या का पूजन होगा । सप्तशती की एक सौ आवृत्तियां से हवन होगा । शेष कार्य शतचण्डी विधान के अनुसार होगा ।

48. स्वर्णाकर्षण भैरवमन्त्र:

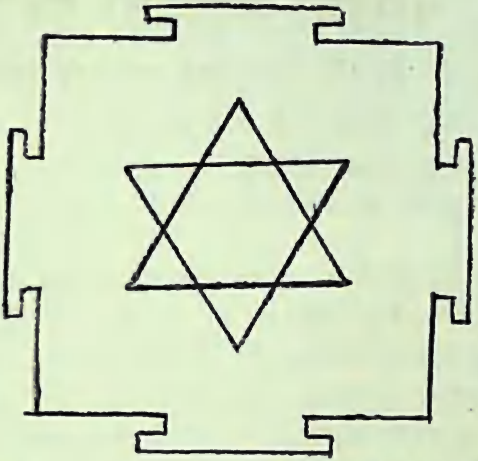

विनियोग:—ॐ अस्य स्वर्णाकर्षण भैरव मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि: पंक्ति: छन्द: स्वर्णाकर्षण भैरवो देवता ममाभीष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोग: ।

मन्त्र:—ॐ ऐं क्लां क्लीं क्लूं ह्रां ह्रीं ह्रूं स: वं आपदुद्धरणाय क्षजामलवद्धाय लोकेश्वराय स्वर्णाकर्षण भैरवाय ममदारिद्रय विद्वेषणाय ॐ श्रीं महाभैरवाय नम: ॥

ध्यानम्—गांगेयपात्रं डमरुं त्रिशूलं वरं करै: संदधतं त्रिनेत्रम् ।
देव्यायुतं तप्त सुवर्ण वर्णं स्वर्णाकृषं भैरवमाश्रयाम: ॥

जपसंख्या—लक्ष संख्याकं जपम् । दशांशेन पायसै: जुहुयात् ।
शैवे पीठे यजेद् देवं अंगदिक्पाल हेतिभि: ।
सिद्धं मनुं जपेन्नित्यं त्रिशतीमंडलावधि ॥
दारिद्र्यंदुरमुत्क्षिप्य जायते धनदोपम: ॥
जपादिभिर्मनौ सिद्धे यन्त्रेभ्य: सिद्धिमाप्नुयात् ।
सुवर्णमेधते गेहे नैवारे: स्यात् पराभव: ॥

(अरे: शत्रो: सकाशात् पराभवो न स्यात्)

मंडलावधि—एकोन पंचाशद् दिनानि ।

49. वाग्देवी सरस्वती का मन्त्र

मन्त्र—ओं ह्रीं श्रीं सिद्धमाता सरस्वती विद्या वारिधनी मम वाक् सिद्धिं देहि देहि स्वाहा ।

दीपावली के समय—त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावस्या के दिनों में 12500 की संख्या में तीनों दिन बराबर की संख्या में जप होना चाहिए ।

या—होली के दिनों में—चौदस, पूर्णिमा—प्रतिपदा के दिनों में ।

या विजयादशमी के अवसर पर अष्टमी, नवमी, दशमी के दिनों में ।

या ग्रहण के अवसर पर जप करें ।

इन दिनों में भूमिशयन, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन, सर्वथा मौन रहकर आराधना करनी चाहिए । इन दिनों में सफेद वस्तुओं का भोजन होना चाहिए ?

50. वाग्देवी सरस्वती का अन्य मन्त्र

मन्त्र—ओं नमो ब्रह्माणी ब्रह्मपुत्री सरस्वती वद-वद वाचा सिद्धि कुरु कुरु स्वाहा ।

प्रारम्भ में इसका 12500 जप नियमपूर्वक करे । मन्त्र संख्या पूरी हो जाने पर प्रतिदिन 27 वार जप करना आवश्यक है ।

51. पति-प्राप्ति का मन्त्र:

**मन्त्र—ओं कात्यायनी महामाये महायोगिन्यधीश्वरी ।
नन्दगोपसुते देवि पतिं में कुरु ते नमः ॥**

जिस लड़की के विवाह में विघ्न पड़ रहा हो, उसको इस मन्त्र का

अनुष्ठान पौष मास की संक्रान्ति से आरम्भ करना चाहिए। प्रतिदिन नौ माला करे। सवालाख का विधान है। हविष्यान्न का भोजन करे। मनोवांछित लाभ हो।

52. सर्वमनोकामनासिद्धिमन्त्र

मन्त्र—ओं ह्रीं श्रीं श्रीं त्रिनेत्राय सर्व शत्रुविमर्दनाय सर्वजनवश्याय सर्वसिद्धिप्रदाय कामत्रिनेत्र नमोऽस्तु ते।

ग्यारह हजार की संख्या में जप करके प्रतिदिन दस बार मन्त्र का जप करने से वांछित फल की प्राप्ति होती है।

53. गोपाल सुन्दरी (कामेशी) मन्त्र

मन्त्र—ओं कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजन वल्लभाय स्वाहा॥

न्यास—कृष्णाय नम: मूर्ध्नि। गोविन्दाय नम: मुखे। गोपीजन-वल्लभाय नम: हृदये।

षडंगन्यास—कृष्णाय हृदयाय नम:। गोविन्दाय शिरसे स्वाहा। गोपी जन वल्लभाय शिखायै वषट्। कृष्णाय कवचाय हुम्। गोविन्दाय नेत्रत्रयाय वौषट्। गोपी जन वल्लभाय अस्त्राय फट्॥

ध्यान—क्षीराम्भोधिस्थ कल्पद्रुमवनविलसद् रत्नयुङ्मण्डपान्त:। प्रोद्यच्छ्री पीठसंस्थं करधृतजलजारीक्षु चापांकुशेपुम्। पाशं वीणां सुवेणुं दधतमवनिमाशोभितं रक्तकान्तिं ध्यायेद् गोपालमीशं विधिमुखविबुधैरीड्य-मानं समन्तात्॥

जपसंख्या—ऐसा ध्यान कर एक लाख संख्या में जप करना चाहिए। खीर से दशांश होम करना चाहिए। वैष्णव पीठ पर गोपाल (सुन्दरी का पूजन करना चाहिए।

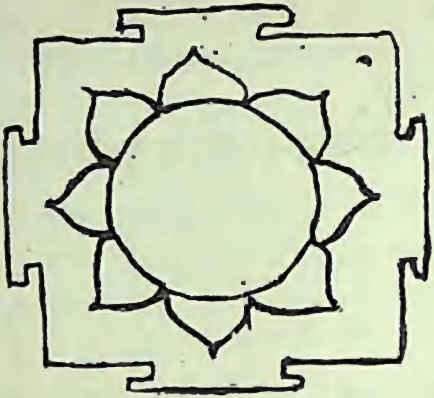

आवरण पूजा—वृत्ताकार कर्णिका, अष्टदल एवं भूपुर सहित बने मन्त्र पर पूजन करना चाहिए। सर्वप्रथम आग्नेय आदि कोणों में षडंग-पूजा करे। ह्लीं श्रीं क्लीं हृदयाय नमः। कृष्णाय शिरसे स्वाहा। गोविन्दाय शिखायै वषट्। गोपीजन कवचाय हुम्। वल्लभाय नेत्रत्राय वौषट्। स्वाहा अस्त्राय फट्। फिर चारों दिशाओं में चारों पत्रों के मूल में—ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ संकर्षणाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अनिरुद्धाय नमः। फिर आग्नेय आदि चार कोणों में—

ॐ शान्त्यै नमः। ॐ श्रियै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ रत्यै नमः। फिर अष्टदल के पत्रों पर—ॐ रुक्मिण्यै नमः। ॐ सत्यभामायै नमः। ॐ कालिन्द्यै नमः। ॐ जाम्ववत्यै नमः। ॐ मित्रविन्दायै नमः। ॐ सुनन्दायै नमः। ॐ सुलक्षणायै नमः। ॐ नाग्निजित्यै नमः। फिर दलों के बाहरी भागों में—ॐ महापद्माय नमः। ॐ पद्माय नमः। ॐ शंखाय नमः। ॐ मकराय नमः। ॐ कच्छपाय नमः। ॐ मुकुन्दाय नमः। ॐ कुन्दाय नमः। ॐ नीलाय नमः। ॐ खर्वाय नमः। इसके बाद त्रिपुर सुन्दरी की पूजा के अनुसार आवरण पूजा करनी चाहिए। इस प्रकार आवरण पूजा करने के बाद धूप दीप आदि से पूजन करना चाहिए। इस प्रकार जो व्यक्ति गोपाल सुन्दरी की उपासना करता है उस की समस्त कामनाएं पूरी होती हैं, तथा वह अन्त में ब्रह्म स्वरूप को प्राप्त करता है।

द्वितीय भाग

जैनधर्म के उत्कृष्टतम सिद्धि-दायक मन्त्र

1. सकलीकरण

किसी भी मन्त्र की साधना अर्थात् जप शुरू करने से पहले जो आवश्यक क्रिया करनी होती है उसे सकलीकरण कहते हैं। कई विद्वान् इसे अंगन्यास व भूतशुद्धि कहते हैं। ज्वालामालिनी कल्प के रचयिता इन्द्रमणि व भैरव पद्मावती कल्प के रचनाकार मल्लिषेण मुनि इसे सकलीकरण कहते हैं।

जो असकल है, अपूर्ण है, उसे पूर्ण करने वाली क्रिया को सकलीकरण कहते हैं। साधक का शरीर मन्त्रबीजों की धारणा के विना अपूर्ण है। उसको मन्त्रबीजों की स्थापना द्वारा सकल करना होता है। इसलिए सकलीकरण संकेत यथार्थ है। इस क्रिया के द्वारा आत्मरक्षा होती है।

सकलीकरण क्रिया में सबसे पहले करन्यास करना चाहिए, अर्थात् करन्यास अंगुलियों के पौरों पर ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रौं ह्रः बीजों की स्थापना करनी चाहिए। अंगुष्ठ, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका एवं कनिष्ठा ये पांच संज्ञाएं हाथ की अंगुलियों की हैं।

फिर अंगन्यास करना होगा—

उदाहरण—ओं णमो अरहन्ताणं ह्रां मम शीर्ष रक्ष रक्ष।

ओं णमो सिद्धाणं ह्रीं मम मुखं रक्ष रक्ष।

ओं णमो आयरियाणं ह्रूं मम हृदयं रक्ष रक्ष।

ओं णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम नाभिं रक्ष रक्ष।

ओं णमो सव्वसाहूणं ह्रः, मम पादौ रक्ष रक्ष स्वाहा।

उपरोक्त क्रिया के बाद क्षिप ओं स्वाहा से भूत शुद्धि करनी चाहिए।

इस प्रकार शरीर की रचना करने वाले पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पांच भूत बीजों की विशिष्ट रंग की धारणा करने से भूत शुद्धि पूर्ण होती है।

इस क्रिया के बाद "ओं आं ईं ऊँ औं अः क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः" इस

मन्त्र से पूर्वादि दिशाओं का बन्धन करे ।

इस प्रकार दिशा बन्धन करने के वाद ऐसी धारणा (कल्पित) करे कि जिस जगह बैंठ कर मैं जप करने लगा हूं वहां स्वर्णमय किला है। उसमें एक खाई है—जो पूरी पानी से भरी हुई है । उसमें समस्त जलचर जीव हैं—और ऐसी कल्पना करे कि उस जल से मैं अमृत स्नान कर रहा हूं ।

ओं ह्लीं अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणी अमृतं स्रावय-स्रावय सं सं क्लीं क्लीं ब्लूं ब्लूं द्रां द्रीं द्रावय द्रावय सं हं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः असि आ उ सा सर्वमिदं अमृतं भवतु स्वाहा ।

इस मन्त्र से भ० पार्श्व नाथ की मूर्ति का अभिषेक करे, फिर अपने मस्तक पर जल का सिंचन करके मस्तक पर तिलक धारण करे ।

इसके पश्चात् वज्र पंजर रूप आत्मरक्षा कारक नमस्कार स्तोत्र का पाठ करें ।

ओं परमेष्ठि नमस्कारं सारं नवपदात्मकम् ।
आत्मरक्षा करं वज्र पञ्जराभं स्मराम्यहम् ।।1।।
ओं णमो अरहन्ताणं शिरस्कं शिरसि स्थितम् ।
ओं णमो सव्वसिद्धाणं मुखे मुखपटं वरम् ।।2।।
ओं णमो आयरियाणं अंगरक्षातिशायिनी ।
ओं णमो उवज्झायाणं आयुधं हस्तयोर्दृढम् ।।3।।
ओं णमो लोए सव्व साहूण मोचके पादयोः शुभे ।
एसो पंच नमुक्कारो शिला वज्रमयी तले ।।4।।
सव्वपावपणासणो वप्रो वज्रमयोवहिः ।
मंगलाणं च सव्वेसिं खादिराङ्गार खातिका ।।5।।
स्वाहान्तं च पदं ज्ञेयं पढमं हवई मंगलम् ।
वप्रोपरि वज्रमयं पिधानं देहरक्षणे ।।6।।
महाप्रभावा रक्षेयं क्षुद्रोपद्रवनाशिनी ।
परमेष्ठि पदोद्भूता कथिता पूर्व सूरिभिः ।।7।।
यश्चैवं कुरुते रक्षां परमेष्ठि पदैः सदा ।
तस्य न स्याद् भयं व्याधिराधिश्चापि कदाचन ।।8।।

नमस्कारमहामन्त्र

मानव जीवन में नमस्कार को बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त है। मनुष्य के हृदय की कोमलता, सरसता, गुण ग्राहकता एवं भावुकता का पता तभी चलता है, जब वह अपने से श्रेष्ठ एवं पवित्र महान् आत्माओं को भक्तिभाव से गद्‌गद होकर नमस्कार करता है। गुणों के समक्ष अपनी अहंता का त्याग कर गुणों के चरणों में अपने आपको सर्वतोभावेन अर्पण कर देता है।

नमस्कार के दो भेद हैं, एक द्वैत, दूसरा अद्वैत। जहां उपास्य एवं उपास्य में भेद की प्रतीति हो वह द्वैत नमस्कार है। जहां राग-द्वेष के विकल्प नष्ट हो जाने पर चित्त में अत्यधिक स्थिरता आने पर आत्मा अपने आपको ही अपना उपास्य अरहन्त आदि रूप समझता है और स्व-स्वरूप का ही ध्यान करता है, वह अद्वैत नमस्कार हैं। यही सर्व-श्रेष्ठ है।

जैन परम्परा नवकार मन्त्र को महान् मंगल के रूप में बहुत आदर का स्थान देती है। नवकार मन्त्र के नमस्कार मन्त्र, परमेष्ठी मन्त्र आदि अनेक नाम हैं। इसमें नौ पद हैं। पांच पद तो मूलपदों के हैं और चार पद चूलिका के।

नवकार मन्त्र जैन धर्म का सबसे बड़ा प्रभावशाली अनादि सिद्ध मन्त्र है। जैन साहित्य का प्रत्येक क्षेत्र नवकार मन्त्र के गौरव-गान से गुंजित है।

नवकार मन्त्र के द्वारा साधक की आत्मा में आध्यात्मिक शक्तियां जागृत होती हैं, वासनाओं का वेग क्षीण होता है। मन विशुद्ध होता है। नवकार में अपारशक्ति है।

नवकार मन्त्र के एक पद का भी जप किया जाए तो सात सागरो-पम का पाप नष्ट हो जाता है।

विधिपूर्वक मन, वचन, और शरीर की शुद्धि के साथ एक लाख बार नवकार जपने वाला अजर-अमर मोक्षधाम में पहुंच सकता है।

2. नमस्कार महामन्त्र का कल्प

नमस्कार मन्त्र की साधना विधिपूर्वक करनी चाहिए। अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य के अनुसार इसका अनुष्ठान करे।

मन्त्र विशारद कहते हैं कि इस मन्त्र का नौ लाख जाप कर लेने से नरक गति का वन्ध-निवारण होता है। अनेक प्रकार की सिद्धियां व संपत्तियां प्राप्त होती हैं। यदि प्रतिदिन पांच मालाएं की जाएं तो पांच वर्ष में, दस माला प्रतिदिन की जाएं तो अढाई वर्ष में जाप पूर्ण हो जाता है।

विधि—पूर्व की ओर मुख करें, पद्मासन या सुखासन से बैठें, सफेद माला हो, भूमि पर शयन करें।

सुगन्धित धूप, गौघृत का दीपक जलाना चाहिए। पांच परमेष्ठी की पांच प्रतिमाओं की स्थापना करनी चाहिए। पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करें। प्रातः सामायिक एवं सायं को प्रतिक्रमण करते हुए 24 लोगस्स का ध्यान करे। जप की संख्या निश्चित होनी चाहिए, आसन ऊनी या सफेद हो। वस्त्र सफेद हों। लकड़ी के पट्टे पर भी बैठा जा सकता है।

मन्त्रः—ओं णमो अरहन्ताणं।
ओं णमो सिद्धाणं।
ओं णमो आयरियाणं।
ओं णमो उवज्झायाणं।
ओं णमो लोए सव्व साहूणम्।

इन पांच पदों की ही माला पढ़ें।

कुछ लोग वीज—अक्षर लगाकर भी नवकार मन्त्र को कहते हैं—

ओं ह्रीं णमो अरहन्ताणं, ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं, ओं ह्रीं णमो आयरियाणं, ओं ह्रीं णमो उवज्झायाणं, ओं ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं॥

माला जपने के पश्चात् इसके माहात्म्य को पढ़ें ।
एस्सो पंच नमुक्कारो सव्वपाव पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवई मंगलं ॥

3. उवसग्गहर स्तोत्र

विनियोग:—ॐ अस्य श्रीपार्श्व चिन्तामणि मन्त्रस्य पार्श्व ऋषि: गायत्री छन्द: श्री धरणेन्द्र देवता मायाबीजं श्री शक्ति: अर्हं कीलकं मम सकल कार्य सिद्ध्यर्थे जपे विनियोग: ॥

करन्यास:—ॐ अर्हं ह्रीं श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम: ।
ॐ नमिऊण पासविसहर तर्जनीभ्यां नम: ।
ॐ वसहजिन मध्यमाभ्यां नम: ।
ॐ फुलिंग अनामिकाभ्यां नम: ।
ॐ ह्रीं श्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नम: ।
ॐ अर्हं नम: करतल कर पृष्ठाभ्यां नम: ॥

अंगन्यास:—ॐ अर्हं ह्रीं श्रीं हृदयाय नम: ।
ॐ नमिऊण पासविसहर शिरसे स्वाहा ।
ॐ वसहजिन शिखायै वषट् ।
ॐ फुलिंग कवचाय हुम् ।
ॐ ह्रीं श्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् ॥
ॐ अर्हं नम: अस्त्राय फट् ।

ध्यानम्—कमठे धरणेन्द्रे च स्वोचितं कर्म कुर्वति ।
प्रभुतुल्य-मनोवृत्ति: पार्श्वनाथ: श्रियोऽस्तु न: ॥

मन्त्र:—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं नमिऊण पास विसहर वसह जिण फुलिंग ह्रीं श्रीं अर्हं नम: ॥

माला जप कर स्तोत्र पाठ करे ।

उवसग्गहर स्तोत्रम्

ॐ उवसग्गहरं पासं, पासं वंधामि कम्मघणमुक्कं ।

विसहर विस निण्णासं मगल कल्लाण आवासं ॥1॥
विसहर फुलिगमन्तं कंठे धारेइ जो सया मणुओ ।
तस्स गहरोग मारी दुट्ठजरा जंति उवसामं ॥2॥
चिट्ठउ दूरे मन्तो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होई ।
नर तिरिएसु वि जीवा: पावंति न दुक्ख दोहग्गं ॥3॥
तुह सम्मत्ते लद्धे चिंतामणि कप्पपाय वब्भहिए ।
पावंति अविग्घेणं जीवा अयरामरं ठाणं ॥4॥
इस सन्थुओ महायस भत्तिब्भर निब्भरेण हियएण ।
तादेवदिज्ज बोहिं भवे भवे पास जिण चद ॥
इति भद्रबाहु स्वामिविरचितं उवसग्गहर स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

नोट—23वें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ का यह महान् प्रभावशाली मन्त्र है । कोई भी संकट आ जाए तो पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठें । श्री भद्रबाहुस्वामिप्रसादात् एष योग: फलतु ॥ ऐसा कहकर बीजमन्त्र की एक माला करे—बाद में 27 बार उव्वसग्गहर स्तोत्र का पाठ करे । 27 दिन तक निरन्तर इसकी साधना करने से सब संकट दूर हो जाते हैं । यह मन्त्र सुख समृद्धि को देने वाला है ।

4. पद्मावती स्तोत्र

श्रीमद् गीर्वाणचक्रस्फुट-मुकुटतटी दिव्य माणिक्य माला ।
ज्योतिर्ज्वाला कराल स्फुरित मुकुरिका घृष्ट पादारविन्दे ।
व्याघ्रोरोल्का सहस्रज्वलदनलशिखा लोल पाशांकुशाद्ये ।
ॐ क्रीं ह्रीं मन्त्र रूपे क्षपितकलिमले रक्ष मां देवि पद्मे ॥1॥
भित्वापातालमूलं चलचल चलिते व्याललीला कराले ।
विद्युद्दण्डप्रचण्ड प्रहरणसहिते सद् भुजैस्तर्जयन्ती ।
दैत्येन्द्रं क्रूर दंष्ट्रा कटकटघटित स्पष्ट भीमाट्टहासे ।
मायाजीमूतमाला कुहरित गगने रक्ष मां देवि पद्मे ॥2॥
कूजत् कोदण्ड काण्डोड्डमर विधुरित क्रूरघोरोपसर्गं ।
दिव्यं वज्रातपत्रं प्रगुण मणिरणत् किङ्किणीक्वाण रम्यम् ।
भास्वद् वैडूर्यदण्डं मदनविजयिनो बिभ्रतो पार्श्वभर्तुः ।

सा देवी पद्महस्ता विघटयतु महा डामरं मामकीनम् :।3।।
भृंगी कालीकराली परिजनसहिते चण्डि चामुण्डि नित्ये ।
क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षणार्द्धं क्षतरिपुनिवहे ह्लौं महामन्त्रवश्ये ।
भ्रां भ्रीं भ्रूं भृंगसंग भ्रकुटिपुटतट त्रासितोद्दाम दैत्ये ।
स्रां स्रीं स्रूं स्रौं प्रचण्डे स्तुतिशत मुखरे रक्ष मां देवि पद्मे ।।
चञ्चत्कांचीकलापे स्तनतटविलुठत तार हारावलीके ।
प्रोत्फुल्लत् पारिजातद्रुमकुसुममहा मञ्जरी पूज्यपादे ।
ह्लां ह्लौं क्लीं ब्लूं समेतैर्भुवनवशकरी क्षोभिणी द्राविणी त्वं ।
आं इं ओं पद्महस्ते कुरु कुरु घटने रक्ष मां देवि पद्मे ।।5।।
लीला व्यालोल नीलोत्पलदलनयने प्रज्वलद् वाडवाग्नि ।
त्रुट्यज्ज्वालास्फुलिंगस्फुरदरुण कणोदग्र वज्राग्रहस्ते ।
ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लौं हरन्ती हर हर हर हुंकार भीमैक नादे ।
पद्मे पद्मासनस्थे अपनय दुरितं देवि देवेन्द्रवन्द्ये ।।6।।
कोपं वं झं सं हंस: कुवलय कलितोद्दाम लीला प्रबन्धे ।
ह्लां ह्लीं ह्लूं पक्ष बीजै: शशिकरधवले प्रक्षरत क्षीर गौरे ।
व्याल व्याबद्ध कूटे प्रबलबलमहा कालकूटं हरन्ती ।
हा हा हुंकार नादे कृत कर मुकुलं रक्ष मां देविपद्मे ।।7।।
प्रातर्वालार्क रश्मिच्छुरितघनमहासान्द्र सिन्दूरधूली ।
सन्ध्यारागारुणाङ्गी त्रिदशवरवधूवन्द्य पादारविन्दे ।
चञ्चच्चण्डासिधाराप्रहतरिपुकुले कुण्डलोद्घृष्ट गल्ले ।
श्रां श्रीं श्रूं श्रौं स्मरन्ती मदगजगमने रक्ष मां देविपद्मे ।।8।।
दिव्यं स्तोत्रं पवित्रं पटुतरपठतां भक्तिपूर्वं त्रिसन्ध्यं ।
लक्ष्मी सौभाग्य रूपं दलितकलिमलं मंगलं मंगलानाम् ।
पूज्यं कल्याणमालां जनयति सततं पार्श्वनाथप्रसादात् ।
देवीपद्मावतीत: प्रहसितवदना या स्तुता दानवेन्द्रै: ।।9।।

5. पद्मावती की साधना

व्यक्ति संयमित होकर आयम्बिल करते हुए—भगवती पद्मावती का पूजन करे ।

आवाहनमन्त्र—उों नमो भगवती पद्मावती एहि एहि ह्लीं स्वाहा ।।

स्थापनमन्त्र—उों नमो भगवति देवि पद्मे अत्र सन्निहिता भव ।

अर्चन मन्त्र—उों नमो भगवति देवि पद्मावती ह्लीं गन्धादीन् गृहण-गृह्ण ।

चतुर्भुजां ध्यायेद् देवीं अभयवरद पाशांकुशा हंमुद्रा ।

मन्त्र—उों आं क्रों ह्लीं ऐं क्लीं ह्सौ देवि पद्मे मम सर्वं जगद्वश्यं कुरु कुरु सर्वविघ्नान् नाशय नाशय परक्षोभं कुरु कुरु ह्लीं सं वौषट् ।।

मुद्रां वध्वा पूजानन्तरं परिजाप्य मूलममन्त्रेण नैवैद्यं समर्पयेत् ।।

अग्नि कार्ये तु स्वाहा । शान्तिके वौषट् ।

पौष्टिके संवौषट् ।। वशीकरणे वषट् ।।

पूजायां रक्तकरवीर पुष्पैः द्वादशसहस्रपूजा ।

त्रिसन्ध्यं जपेत् । सिद्धि र्भवेत् ।। वेला 7ध्यायेत् ।

विसर्जन मन्त्रः—उों नमो भगवति देवि पद्मावती स्वस्थानं गच्छ गच्छ फट् ।।

इमां देवीं पद्मावतीं रात्रौ ताम्बूल भृताननः स्वांगे विन्यस्य यादृग्विधा देवी तादृग्विधां देवीं तृादृग्विधात्मानं परिकल्पयेत् ।।

जलाभिमन्त्रणम्—उों अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणी अमृतं स्त्रावय स्त्रावय स्वाहा ।

उों अरजे विरजे अशुद्धविशोधिनी मां शोधय शोधय स्वाहा ।

पूजामन्त्र—उों नमो भगवते पार्श्वेन्द्राय ह्लीं स्वाहा ।

गुरूपादुक मन्त्रः—उों ह्लीं गुरुपादुकाभ्यां नमः ।

क्षेत्रपालमन्त्रः—उों ह्लीं अत्र स्वक्षेत्रपालाय नम; ।

क्षिप उों स्वाहा हा स्वा उों पक्षि:।

ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्लः दक्षिणकर्णे ।

उों ह्लूं शिरेः पश्चिम भागे ।

उों ह्लः मस्तकोपरि । उों क्ष्मों नेत्रयोः ।

ओं क्ष्मीं मुखे । ओं क्ष्मूं कण्ठे । ओं क्ष्मों हृदये ।

ओं आं क्रों देवि पद्मे ओं ह्लीं स्क्ल ह्लीं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: ।। एभिर्वर्णै: अमुकं वशमानय आनय ह्लीं वषट् ।।

ओं क्ष्म: बाह्वो: । ओं क्रां उदरे , ओं ह्लीं कट्यां ।

ओं ह्लं जंघयो: । ओं क्ष्में पादयो: । ओं क्ष: हस्तयो: । पृष्ठे मणिभद्रो रक्षतु ।

अंगन्यासमन्त्र:—ओं अस्त्राय फट् फट् अस्त्राय नम: ।

पद्मावती का दूसरा मन्त्र

ओं आं क्रों देवि पद्मे ओं ह्लीं स्क्ल ह्लीं द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं स: ।। एभिर्वर्णै: अमुकं वशमानय आनय ह्लीं वषट् ।

इमां देवीं पद्मावतीं रात्री ताम्बूलभृताननः स्वांगे विन्यस्य यादृग्विधा देवि तादृग्विधां देवीं तादृग्विधात्मानं परिकल्पयेत ।

अन्यमन्त्र

मूलमन्त्र—ओं ह्लां ह्लीं ह्लूं ह्लैं ह्लौं ह्ल: पद्मावत्यै नम:।

6. घण्टाकर्णमन्त्र का विशेषविधान

दीपावली के समय में—त्रयोदशी, चतुर्दशी एवं अमावस्या=इन तीन दिनों में—इस मन्त्र का अनुष्ठान करे । इन दिनों उपवास करे, या एकाशना करे । ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे, भूमि पर शयन करे, वाह्यप्रवृत्तियों को छोड़ दे, मौनव्रती होकर कार्य करे, क्रोधादि विकारों का त्याग करे ।

मन्त्र:—ओं ह्लीं श्रीं क्लीं क्रौं ओं घण्टाकर्ण महावीर लक्ष्मीं पूरय पूरय सुखसौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा ।।

आसन—सफेद हो, माला, लालरंग की हो, उत्तरदिशा की ओर मुख करे ।

त्रयोदशी के दिन 40 माला करे ।

चतुर्दशी को 42 ,, ,, ।

अमावस्या को 43 माला करनी चाहिए।

जप की कुल संख्या 12500 होगी। फिर प्रतिदिन एकमाला अवश्य करे इससे धन-धान्य की वृद्धि होगी। वर्षभर लक्ष्मी की कृपा बनी रहेगी।

7. घण्टाकर्णस्तोत्र

ॐ घण्टाकर्णो महावीर: सर्वव्याधि: विनाशक: ।
विस्फोटक भयं प्राप्ते रक्ष रक्ष महाबल: ॥1॥
यत्र त्वं तिष्ठसे देव ! लिखितोऽक्षर पंक्तिभि: ।
रोगास्तत्र प्रणश्यन्ति, वातपित्त कफोद्भवा: ॥1॥
तत्र राज भयं नास्ति यान्तिकर्णे जपात्क्षयम् ।
शकिनी भूतवेताला:, राक्षसा: प्रभवन्ति नो ॥3॥
नाकाले मरणं तस्य नच सर्पेण दश्यते ।
अग्निचौर भयं नास्ति ॐ ह्रीं श्रीं घण्टाकर्ण नमोऽस्तुते ॥
ॐ नर वीर ठ: ठ: ठ: स्वाहा ।

मूलमन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ॐ घण्टाकर्ण महावीर लक्ष्मीं पूरय पूरय सुखसौभाग्यं कुरू कुरू स्वाहा ॥

घण्टाकर्णमन्त्र का 21 वार जप करने से राजभय, चोर भय, अग्निभय और सर्पभय दूर हो जाता हैं। भूत प्रेतबाधा भी दूर हो जाती है। इस की आराधना करने से सुखसमृद्धि की प्राप्ति होती है। यह मन्त्र सिद्ध है।

8. सरस्वती की आराधना का मन्त्र

मन्त्र 1. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं वाग्वादिनि देवी सरस्वती मम जिह्वाग्रे वासं कुरु कुरु स्वाहा ॥

त्रिकाल एक-एक माला का जप करना चाहिए। इस विद्यादेवी सरस्वती के जप से ज्ञान में वृद्धि होती है।

मन्त्र 2. ओं ह्रीं श्रां श्रीं श्रूं श्रः हं सं यः यः ठः ठः सरस्वती भगवती विद्या प्रसादं क्रुरु कुरु स्वाहा ।

प्रातःकाल शुद्ध पवित्र वस्त्रधारण करके 21 दिन तक निरन्तर 1000 संख्या में प्रतिदिन जाप करना चाहिए। 21 दिनों के पश्चात् प्रतिदिन त्रिकाल 108 वार अवश्य करे।

मन्त्र 3. ओं ह्रीं श्रीं क्लीं क्लूं वद वद वाग्वादिनि सरस्वति नमः स्वाहा ।

40 दिन तक प्रतिदिन 1000 वार जप करना चाहिए। तदन्नन्तर प्रतिदिन 108 वार जप करना चाहिए।

मन्त्र—4. ओं अर्हं मुख कमल वासिनि पापात्मा-क्षयंकरि श्रुतज्ञान ज्वाला सहस्र ज्वलिते भगवति सर-स्वति मत्पापं हन हन, दह-दह, क्षां क्षीं क्षौं क्षः क्षीर-धवले अमृतसंभवे वद वद हल हल क्लीं ह्रीं क्लीं हसौ वद वद वाग्वादिनि ह्रीं स्वाहा ।

प्रातः काल भगवती सरस्वती का ध्यान कर एकाग्र मन होकर 40 दिन तक 21 हज़ार की संख्या में जप की पूर्ति करे। तदनन्तर प्रति दिन एक सौ आठ वार जप प्रातः काल करना चाहिए।

ये सभी मन्त्र एक-एक से बढ़ कर हैं। तथा सिद्ध हैं। विद्या को देने वाले हैं। इसमें किसी प्रकार की शंका की बात नहीं।

9. स्वप्न में शुभाशुभ ज्ञान-प्राप्त करने के मन्त्र

मन्त्र 1. ओं ह्रीं कूष्माण्डिनि कनक प्रभे सिंह-मस्तक समारूढे जिनधर्म सुवत्सले महादेवि मम चिन्तित

कार्येषु शुभाशुभं कथय कथय अमोघवागीश्वरि सत्य-वादिनि सत्यं दर्शय दर्शय स्वाहा।

इस मन्त्र का 108 वार जप करके मौन होकर सोने से, स्वप्न में चिन्तित शुभाशुभ कार्य के विषय में जानकारी प्राप्त हो सकती है।

मन्त्र—2. ॐ नमः चिन्तामणिपार्श्वनाथ चक्रेश्वरि देवि शान्तिः शान्तिः कारिणि मम शुभाशुभं दर्शय दर्शय कर्णपिशाचिनि स्वाहा।

आठ आयम्बिल करके 12000 की संख्या में जाप करना चाहिए। भूमि पर शयन करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है। इससे होने वाली बात का स्वप्न में ज्ञान हो जाता है।

10. सर्वसिद्ध लक्ष्मीप्राप्ति के मन्त्र

मन्त्र 1. ॐ आं क्रौं क्ष्वीं ह्रीं क्लीं ब्लूं द्रां द्रीं ज्वालामालिनि नमः॥

प्रतिदिन 40 दिन तक निरन्तर इस मन्त्र का 108 वार निरन्तर जप करने से सर्वसिद्धि, वृद्धि, ऋद्धि प्राप्त होती है।

मन्त्र—2. ॐ आं क्रौं ह्रीं ऐं क्लीं ह्रौं देवि श्री पद्मावति त्रिपुर काम साधिनि दुर्जनमति विनाशिनि त्रैलोक्य क्षोभिणि श्री पार्श्वनाथ उपसर्ग निवारिणि क्लीं क्लीं मम दुष्टान् हन हन क्लीं क्लीं मम सर्वकार्याणि साधय-साधय कुरु स्वाहा॥

21 दिन में 12500 जाप करना, पश्चात् प्रतिदिन एक माला करने से ऋद्धि-वृद्धि की प्राप्ति होती है।

मन्त्र—3. ॐ ह्रीं श्रीं धरणेन्द्र पद्मावती सहि-

ताय श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः ।।

तेला का तप करके 12500 मन्त्र का जाप करे । पश्चात् त्रिकाल एक-एक माला करने से सर्व कार्यसिद्धि होती है ।

मन्त्र—4. ऊों ह्रीं श्रों क्लींश्री पार्श्वनाथाय नमः पद्मावती सहिताय नमः धरणेन्द्रपूजिताय नमः लक्ष्मीं देहि देहि फट् स्वाहा ।।

इस मन्त्र का 1100 जाप 21 दिन तक नियम वद्ध करना चाहिए। पश्चात् कार्यसिद्धि तक एक माला प्रतिदिन करे । यह मन्त्र लक्ष्मी प्राप्ति में सहायक होगा ।

11. भूत-प्रेत वाधा को दूर करने का सर्व सिद्धमन्त्र

मन्त्र—ऊों नमो भगवते श्री पार्श्वनाथाय ह्रीं धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय अट्टे मट्टे भूतविघट्टे भूतान् स्तम्भय स्तम्भय, क्षुद्रान् स्तम्भय स्तम्भय, दुष्टान् निग्रह-निग्रह चोरान् बन्धय-बन्धय मम सर्व वशी कुरु कुरु स्वाहा ।।

पार्श्वनाथ के जन्म दिन पर पवित्र होकर पार्श्वनाथ की प्रतिमा को सामने पट्टे पर बैठाकर चमेली के फूलों से, अष्ट द्रव्यों से पूजाकर पांच माला फेरे । कुल संख्या 21 हज़ार हो। इससे यह मन्त्रसिद्ध हो जाएगा । पूजन-जब तक मन्त्र संख्या पूरी न हो तब तक प्रतिदिन करना चाहिए ।

जब किसी को कोई वाधा उत्पन्न हो जाए—इस मन्त्र से 108 वार अभिमन्त्रित जल को पिलाने से भूत वाधा दूर होगी ।

मन्त्र—2. ऊों नमो भगवते श्री पार्श्वनाथाय श्री

धरणेन्द्र पद्मावती सहिताय अट्टे मट्टे भूतविघट्टे भूतान् स्तम्भय स्तम्भय छिन्धि छिन्धि भिन्दि भिन्दि मारय मारय स्वाहा।

तीन आयम्विल करके 12500 संख्या में जप करना चाहिए।

जव भी किसी की भूत वाधा हो तो इस मन्त्र से अभिमन्त्रित जल पिलाने से, या अभिमन्त्रित सात इलायची खिलाने से भूतवाधा से छुटकारा मिल जाता है।

12. शत्रु-उच्चाटन मन्त्र

मन्त्र—ओं आं क्रों ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं ह्नौं देवि पद्मावति अमुकं (यहां उस शत्रु का नाम देना चाहिए) उच्चाटनं कुरु कुरु स्वाहा।

राई, सरसों, धोसा, आंवली, नमक, शत्रु के पैरों की धूल, चौराहे की धूल। इन सव को मिला कर शत्रु का रूप वनाएं, उस पर शत्रु का नाम अंकित करें।

सवा लाख की संख्या में जाप करें। मीठे तेल का दीपक जलाएं।

जाप के पूरा होने पर—हवन कुण्ड वनाएं। हवन कुण्ड के नीचे शत्रु का नाम लिखें।

सेती सरसों, गुग्गल, लाल कनेर के फूलों को मिलाकर गोलियां वनाएं। उन गोलियों को मीठे तेल में भिगोकर—आक की लकड़ियों पर आहुति डालें।

खैर की लकड़ी का कीला 12 अंगुल लम्वा वनाकर रविवार की सन्ध्या के समय दक्षिण दिशा में कीला गाढ देवे। फिर प्रतिदिन 108 वार इस मन्त्र का जप कर लाल कनेर के फूलों से पूजा करे। प्रतिदिन एक-एक अंगुल कील जमीन में गाडता जाए। 12 दिन में समाप्त करके शत्रु का उच्चाटन निश्चय होगा।

13. शान्तिकारक-मृत्युंजय मन्त्र

मन्त्र—ओं ह्रीं णमो अरहन्ताणं, ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं, ओं ह्रीं णमो आयरियाणं, ओं ह्रीं णमो उवज्झायाणं, ओं ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं मम सर्व-ग्रहारिष्टान् निवारय निवारय अपमृत्युं घातय सर्वं शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

जैन शास्त्रों में नवकार मन्त्र की बहुत महिमा है। उस मन्त्र का जाप प्रायः सभी जैन सम्प्रदाय भक्तिभावना से करता है। उसी मन्त्र से वेष्टित यह मन्त्र है—जिससे सभी प्रकार के अरिष्ट ग्रहों का प्रभाव दूर होता है—तथा अपमृत्यु को दूर करता है।

इस मन्त्र का 31000 जाप करना चाहिए। जप की समाप्ति पर दशांश हवन करना चाहिए।

14. धनवृद्धिकर मन्त्र

मन्त्र—ओं णमो अरहन्ताणं ओं णमो सिद्धाणं ओं णमो आयरियाणं ओं णमो उवज्झायाणं ओं णमो लोए सव्वासाहूणं ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः स्वाहा।

पुष्य नक्षत्र के दिन पीले वस्त्र पहन कर, पीले आसन पर बैठकर पीली माला से इस मन्त्र का सवा लाख जाप करना चाहिए।

पुष्य नक्षत्र वाले दिन से आरम्भ कर पुष्य नक्षत्र वाले दिन ही समाप्त करना चाहिए। 27 दिन के अनुष्ठान का विधान है।

मन्त्र जाप के समय धूप-दीप जलाए। मन्त्र के जप की समाप्ति पर दशांश हवन करे।

अतुलधन-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। इस मन्त्र को करने से पूर्व अंगन्यास करना चाहिए—

करन्यासः

ओं ह्रीं णमो अरहंताणं स्वाहा=अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
ओं ह्रीं णमो सिद्धाणं स्वाहा=तर्जनीभ्यां नमः ।
ओं ह्रीं णमो आयरियाणं स्वाहा=मध्यमाभ्यां नमः ।
ओं ह्रीं णमो उवज्झायाणं स्वाहा अनामिकाभ्यां नमः ।
ओं ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं स्वाहा—कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः—करतल करपृष्ठाभ्यां नमः ।।

अंगन्यास

ओं ह्रां हृदयाय नमः ।
ओं ह्रीं शिरसे स्वाहा ।
ओं ह्रूं शिखायै वषट् ।
ओं ह्रैं कवचाय हुम् ।
ओं ह्रौं नेत्रंत्रयाय वौषट् ।
ओं ह्रः अस्त्राय फट् ।

ओं ह्रीं क्रौं स्वर्ण वर्णे सर्वलक्षण सम्पूर्णे स्वायुधवाहन, वधूचिन्ह परिवार सहितं पद्मावती देवी अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ—ठः ठः मम सन्निहतो भव वषट्=इस मन्त्र से भगवती पद्मावती देवी का आवाहन करे ।

ओं ह्रीं क्रौं स्वर्ण वर्णे सर्वलक्षण सम्पूर्णे स्वायुध वाहन वधूचिन्ह परिवार सहित पद्मावती देवी जलं गृह्ण गृह्ण स्वाहा ।

इस मन्त्र को पढ़ते हुए जल, चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, अक्षत नैवेद्य फल, वस्त्र, अलंकार चढ़ाए ।

15. रोगनिवारण मन्त्र

मन्त्रजाप आरम्भ करने से पूर्व—

ओं श्री गणधर प्रसादात् एष योगः फलतु—ऐसा पढ़ें ।

मन्त्र—ओं णमो आमोसहि लद्धिणं ओं णमो विप्पो-सहि लद्धिणं ओं णमो खेलोसहि लद्धिणं ओं णमो जल्लो-

सहि लद्धिणं ओं णमो सव्वोसहि लद्धिणं एर्णसि रोगोप-समणे पसिज्ज उ स्वाहा ।

सर्वप्रथम 12500 इस मन्त्र का जाप कर इसे सिद्ध करना चाहिए। फिर जिस रोगी के निमित्त करना हो—उस दिन 108 बार इस मन्त्र का जप कर अभिमन्त्रित दूध या अभिमन्त्रित जल पिलावे। 7 दिन या 14 दिन निरन्तर इस विधि को करने से रोग शान्त हो जाता है।

16. मनोवाञ्छित कार्यसिद्धि मन्त्र

मन्त्र—ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः असि आउसाय नमः ॥

इस मन्त्र का त्रिकाल जाप करने से सब प्रकार की मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

17. शत्रुनिवारणमन्त्र

मन्त्र—ओं ह्रीं असिआउसा सर्वदुष्टान् स्तंभय स्तंभय मोहय मोहय अंधय अंधय मूकवत्कारय कुरु कुरु ह्रीं दुष्टान् (शत्रून्) ठः ठः ठः स्वाहा ।

इस मन्त्र का सवा लाख जप करने से शत्रुओं का नाश होता है।

सर्वसिद्धिकरमन्त्र

नवकार मन्त्र का यह संक्षिप्त रूप है। प्रत्येक पद का प्रथम अक्षर अ, सि, आ, उ, सा के मेल से इसका निर्माण हुआ है।

यह अनेक सिद्धियों को देने वाला और आपत्तिकाल में हर प्रकार की सहायता पहुंचाने वाला महाप्रभावी मन्त्र है।

उक्त मन्त्र की साधना में इस ढंग को अपनाया जाए—कि प्रथम अक्षर अकार का नाभिकमल में ध्यान किया जाए, दूसरे अक्षर सि का मस्तक में, तीसरे आ का मुखकमल में, चौथे उ का हृदय कमल में पांचवें स का कण्ठ में ध्यान करना चाहिए।

मन को एकाग्र करने में यह प्रक्रिया विशेष शक्ति प्रदान करती है।

नोट—विशेष विपत्ति में इस मन्त्र का जाप प्रतिदिन तीन काल करना चाहिए। प्रातः, सायं, मध्यान्ह, तीनों समय 1100-1100 संख्या में जाप हो।

40 दिन तक यह प्रक्रिया चलनी चाहिए। यह अभूतपूर्व फल-प्रद है।

मन्त्र—ओं ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसाय नमः।

18. कर्णपिशाचिनी देवी का मन्त्र

मन्त्र—ओं ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं, लोगुत्तमाणं लोग नाहाणं, लोग हियाणं लोग पईवाणं लोग पज्जोयगराणं मम शुभाशुभं दर्शय दर्शय, कर्णपिशाचिनी नमः स्वाहा ॥

प्रतिदिन स्नान कर, शुद्ध वस्त्र पहनकर पूर्व की ओर मुख करके, रुद्राक्ष की माला पर जाप करें। दशों दिशाओं में एक एक माला करें, 21 दिन तक यही क्रम रहे। तथा रात्रि को एक माला कर जमीन पर सोएं। चन्दन घिस कर कान पर लगाएं। स्वप्न में प्रश्न का पूर्ण उत्तर प्राप्त होगा।

दूसरा मन्त्र—ओं कर्णपिशाचिनी महादेवी रति प्रिये स्वप्न कामेश्वरी पद्मावती त्रैलोक वार्ता कथय कथय स्वाहा।

विधि—एकान्त कमरे का चयन करें, उसमें अगरबत्ती जलाएं, पूर्व की ओर मुख करके बैठ जाएं। प्रतिदिन एक माला फेरें। माला करते समय अगरबत्ती अवश्य जलती रहे। जिस दिन साधना प्रारम्भ करें उस दिन उपवास रखना चाहिए। नौ दिन साधना करनी है। अन्तिम दिन खाण्ड व गुग्गल से हवन करें। उसी कमरे में सोना चाहिए। प्रतिदिन

कुंआरी लड़की को खीर-रोटी से भोजन कराएं। तीसरे दिन उस लड़की को एक चुनरी, एक कांचली, व कुछ दक्षिणा देनी चाहिए।

फिर प्रतिदिन एक माला करनी चाहिए। जब कोई प्रश्न पूछे तो दाहिना हाथ दाहिने कान पर रखकर सात बार मन्त्र को पढ़ें, प्रश्न का उत्तर मिल जाएगा।

19. रोगनिवारकनमस्कारमन्त्र

मन्त्र—उों णमो आमो सहि पत्ताणं उों णमो खेलो-सहि पत्ताणं, उों णमो जल्लो सहि पत्ताणं उों णमो सव्वो-सहि पत्ताणं स्वाहा ॥

इस मन्त्र की प्रतिदिन एक माला करने से सर्व प्रकार के रोगों की पीड़ा शान्त हो जाती है।

नवग्रह पीड़ा निवारण नमस्कार मन्त्र

सूर्य—उों ह्रीं णमो सिद्धाणम्।
दस माला का जाप प्रतिदिन।
चन्द्र—उों ह्रीं णमो अरहन्ताणं।
दस माला का जाप प्रतिदिन।
मंगल—उों ह्रीं णमो सिद्धाणं।
उों ह्रीं वासु पूज्य प्रभवे नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
बुध—उों ह्रीं णमो उवज्झायाणं।
श्री शान्तिनाथ प्रभवे नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
गुरु—उों ह्रीं णमो आयरियाणं।
उों ह्रीं ऋषभदेव प्रभवे नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
शुक्र—उों ह्रीं णमो अरहन्ताणं।
उों ह्रीं सुविधिनाथ प्रभवे नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
शनि—उों ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं।
उों ह्रीं मुनिसुव्रत प्रभवे नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।

राहु—ओं ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं ।
ओं ह्रीं नमिनाथ प्रभवे नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।
केतु—ओं ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणम् ।
ओं ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथाय नम: मम शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

श्री परमात्म-द्वात्रिंशिका

20. स्तोत्रम्

(आचार्य अमितगति)

जैन सम्प्रदाय में आचार्य अमित गति का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे अपने समय में लब्धिधारी वेद-वेदांग पारंगत मनीषी थे। उन द्वारा रचित यह स्तोत्र मनुष्य के अन्तर्मन को शुद्ध कर. प्रायश्चित्त रूप में सर्वकषायों को धोकर—प्रभु चरणों में समर्पित होने की प्रेरणा देता है। यह एक ऐसा स्तोत्र है जो सम्प्रदाय से बद्ध नहीं। अपितु उदार हृदय की पराकाष्ठा है। प्रतिदिन शुद्ध हृदय से इसका पाठ करने से मनुष्य के समस्त कषाय धुल जाएंगे, वह निर्मल आत्मा होकर प्रभुस्वरूप को प्राप्त करने में समर्थ हो सकेगा।

1. सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्त्वम् ।
माध्यस्थ भावं विपरीत वृत्तौ,
सदा ममात्मा विदधातु देव ॥

2. शरीरत: कर्तु मनन्तशक्तिं
विभिन्नमात्मानमपास्त दोषम् ।
जिनेन्द्र ! कोषादिव खड्ग यष्टिं,
तव प्रसादेन ममास्तु शक्ति: ॥

3. दु:खे सुखे वैरिणी वन्धुवर्गे
योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेषममत्व बुद्धे:,
समं मनो मेऽस्तु सदाऽपि नाथ ॥

4. मुनीश । लीनाविव कीलिताविव,
स्थिरौ निखाताविव विम्वताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा,
तमो धुनानौ हृदि दीपकाविव ॥

5. एकेन्द्रियाद्या: यदि देव! देहिन:,
प्रमादत: संचरता यतस्तत: ।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीड़िता,
ममास्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तद् ॥

6. विमुक्ति मार्ग प्रतिकूल वर्तिना,
मया कपायाक्ष वशेन दुर्धिया ।
चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं,
तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं विभो ॥

7. विनिन्दनालोचन-गर्हणै रहं,
मनो वच: काय-कषाय निर्मितम् ।
निहन्मि पापं भवदु:ख कारणं
भिषग् विषं मन्त्र गुणैरिवाखिलम् ॥

8. अतिक्रमं यं यमपि व्यतिक्रमं,
जिनातिचारं स्व चारित्रकर्मण: ।
व्यधामनाचारमपि प्रमादत:,
प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥

9. क्षतिं मन: शुद्धि-विधेरतिक्रमं
व्यतिक्रमं शील वृतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनम्,
वदन्त्यनाचारमिहाति सक्तताम् ॥

10. यदर्थ मात्रा-पद-वाक्यहीनं
मया प्रमादाद् यदि किंचनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी,
सरस्वती केवल-बोध लब्धिम् ॥

11. वोधि: समाधि: परिणाम शुद्धि:,
स्वात्मोपलब्धि: शिवसौख्यसिद्धि: ।
चिन्तामणिं चिन्तित वस्तुदाने,
त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवी ।।

12. य: स्मर्यते सर्वमुनीन्द्र-वृन्दैर
य: स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रै: ।
यो गीयते वेद पुराण शास्त्रै:,
स देव-देवो हृदये ममास्ताम् ।।

13. यो दर्शन-ज्ञान-सुखस्वभाव:,
समस्तसंसार-विकार-वाह्य: ।
समाधिगम्य: परमात्म संज्ञ:,
स देव देवो हृदये ममास्ताम् ।।

14. निषूदते यो भव दु:ख जालं,
निरीक्षते यो जगदन्तरालम् ।
योऽन्तर्गतो योगि-निरीक्षणीय:,
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।

15. विमुक्त मार्गं प्रतिपादको यो,
यो जन्म-मृत्यु व्यसनाद् व्यतीत: ।
त्रिलोक लोकी सकलोऽकलंक:,
स देव देवो हृदये ममास्ताम् ।।

16. क्रोडीकृताशेष शरीरि-वर्गा:,
रागादयो यस्य न सन्ति दोषा: ।
निरीन्द्रियो ज्ञान मयोऽनपाय:,
स देव देवो हृदये ममास्ताम् ।।

17. यो व्यापको विश्वजनीन वृत्ति:,
सिद्धो विवुद्धो धुतकर्म वन्ध: ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं,
स देव देवो हृदये ममास्ताम् ।।

18. न स्पृश्यते कर्मकलंक दोषैर्,
यो ध्वान्त संघैरिव तिग्मरश्मिः ।
निरंजनं नित्य मनेकमेकं
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

19. विभासते यत्र मरीचि मालि-
न्यविद्यमाने भुवनावभासि ।
स्वात्मस्थितं वोधमय-प्रकाशं,
तं देवमाप्त शरणं प्रपद्ये ॥

20. विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं,
विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् ।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं,
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

21. येन क्षता मन्मथ-मान मूर्च्छा-
विषाद-निद्रा-भय-शोक-चिन्ताः ।
क्षय्योऽनलनेव तरु-प्रपंचस्,
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥

22. न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी,
विधानतो नो फलको विर्निमितः ।
यतो निरस्ताक्ष—कषाय विद्विषः,
सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥

23. न संस्तरो भद्र ! समाधि साधनं,
न लोक पूजा नच संघमेलनम् ।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं,
विमुच्य सर्वामपि वाह्यवासनाम् ॥

24. न सन्ति वाह्या मम केचनार्था,
भवामि तेषां न कदाचनाऽहम् ।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्यवाह्यं,
स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र ! मुक्त्यै ॥

25. आत्मानमात्मन्यवलोक्य मानस् ।
त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः ।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र,
स्थितोऽपि साधुर्लभते समाधिम् ॥

26. एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा,
विनिर्मलः साधिगमस्वभावः ।
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता,
न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥

27. यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्धं,
तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः ।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः,
कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये ॥

28. संयोगतो दुःखमनेकभेदं,
यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी ।
तत स्त्रिधाऽसौ परिवर्जनीयो,
यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ॥

29. सर्वं निराकृत्य विकल्प जालं,
संसारकान्तार-निपात हेतुम् ।
विविक्त मात्मानमवेक्ष्यमाणो
निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वैः ॥

30. स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा,
फलं तदीयं लभते शुभाशुभम् ।
परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं,
स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं सदा ॥

31. निजार्जितं कर्मविहाय देहिनो,
न कापि कस्याऽपि ददाति किंचन ।

विचारयन्नेव मनन्यमानस:,
परो ददातीति विमुंच शेमुषीम् ॥

32. यै: परमात्माऽमितगतिवन्द्य:,
सर्वविविक्तो भृशमनवद्य: ।
शश्वदधीतो मनसि लभन्ते,
मुक्तिनिकेतं विभववरं ते ॥

मुस्लिम मन्त्र

विस्मिल्ला रहमान नीर रहीम

मन्त्र—ख्वाजा खिज्र जिन्द पीर मैदर, मादर दस्त-गीर मदत मेरा पीरान पीर करो, घोड़े पर भीड़ चढ़ो, हजरत पीर हाजर सो हाजर ॥

विधि:—आधी रात को या सुवह पश्चिम की ओर मुख करके उल्टी माला से (माला के मनके पीछे से आगे को सरकाते हुए) 21 दिन तक रोज एक माला फेर कर मन्त्र सिद्ध कर लें। फिर जिस दिन हाजरात चढ़ानी हो, उस दिन सवेरे आठ बजे से पहले-पहले सीधे, सच्चे वालक को लाकर उसके दाहिने हाथ के अंगूठे पर काली स्याही लगा देवें। वालक स्नान आदि किया हो, पवित्र हो, नाखून पर लगाई गई काली स्याही में लड़के को देखने को कहें, जब लड़का साधक से यह कहे कि मुंह दीखने लग गया है, तो कहा जाए दो आदमी आए, तब दो और फिर दो और फिर दो। इस प्रकार आठ आदमी आ जाएं तो उनसे कहे झाड़ू वाले को वुलाओ, चिश्ती को वुलाओ, पानी छिड़काओ, गद्दी बिछवाओ, फर्श वाले से फर्श मंगवाओ विछवाओ दो कुर्सी और तख्त मंगवाओ, यह सब हो जाने पर कहा जाए कि पीरान के पीर साहब से जाकर अर्ज करो कि आपका भक्त (साधक का नाम) आपको याद करता है। मुंशी साहब

को साथ लेकर पधारें। जब पीरान पीर साहब आकर कुर्सी पर बैठ जाएं, तो मुंशी साहब से कहें कि पीरान पीर साहब से अर्ज करें कि आपका भक्त आपसे प्रश्न पूछता है। लड़के को उत्तर मिलेगा। अगर लड़का वह उत्तर न समझ सके तो मुंशी साहब से कहें कि हमें अमुक भाषा में लिखकर समझाए या दिखाए। मुंशी साहब लड़के को इच्छित भाषा में लिख कर समझा देंगे। काम पूरा होने पर पीरान पीर साहब से जाने की अर्ज करें और तकलीफ देने के लिए माफी मांगे। फिर लड़के के अंगूठे को धो दे। 8-9 वर्ष के बच्चे को हाजरात अच्छी चढ़ती है।

मन्त्र सिद्ध करने के समय—लौंग, इलायची, लोबान डालता जाए।

———

श्री रामचरितमानस के सिद्ध प्रयोग

गोस्वामी तुलसीदास विरचित "श्री रामचरितमानस" एक अद्‌भुत रचना है। इसकी प्रत्येक चौपाई, दोहा, सोरठा में र, म अक्षरों को स्थान मिला है। अर्थात् समस्त रचना 'राम' नाम से सुशोभित है। जहां इस में राम कथा का विस्तार है वहीं अत्यधिक रचना मन्त्रमय हो गई है। इन मन्त्रमय रचना का कार्यसिद्धि के लिए विधान है। अत्यधिक संख्या में जनता ने अपने सांसारिक दुःखों के निवारण के लिए इन का प्रयोग किया है। उन अनुभूत योगों को जहां दिया जा रहा है।

जिस दिन भी रामचरितमानस की चौपाई आदि का मन्त्र जाप करना हो उस दिन नित्यक्रिया से निवृत्त हो राम परिवार का विधिवत पूजन करे। मौन रह कर व्रत का आचरण करे। जिस कार्य के लिए जिस चौपाई का जाप करना हो, रात्रि के समय पूर्वाभिमुख शुद्ध आसन पर, शुद्ध वस्त्र पहन कर बैठ जाए। 1008 वार मनोऽनुकूल चौपाई का जप करे। अपनी श्रद्धाएवं पूर्ण विश्वास रखना चाहिए। यह दृढ़ भावना हो कि इस प्रयोग से मेरा कार्य अवश्य सिद्ध होगा।, श्री राम की कृपा मुझ पर अवश्य होगी।

जप करने के पश्चात् 108 वार मन्त्र पढ़ते हुए आहुति दें।

सामग्री—श्वेत चन्दन	पाव भर
काले तिल	पाव भर
जौं	एक छटांक
शक्कर	सौ ग्राम
पंच मेवा	सौ ग्राम

अगर, तगर, कपूर, केसर, नागरमोथा 3-3 माशे, घी पाव भर, चावल 200 ग्राम।

इन सभी वस्तुओं को साफ कर एक साथ मिला लें। स्थण्डिल का पूजन कर इस सामग्री से मन्त्र पढ़ते हुए आहुति दें। आहुति देते समय

स्वाहा शब्द को अवश्य बोलना चाहिए। इस के वाद प्रतिदिन प्रात: काल एक माला उस मन्त्र की अवश्य करे, जव तक कार्य सिद्धि न हो।

1. विपत्ति नाश के लिए—

राजीव नयन धरें धनुसायक।
भगतविपत्ति भंजन सुखदायक॥

2. संकट नाश के लिए—

जो प्रभू दीनदयालु कहावा।
आरति हरन वेद जसु गावा॥ 1/59

अथवा—दीनदयाल विरिद संभारी।
हरउनाथ मम संकट भारी॥

3. मंगल कार्य के लिए—

जव ते राम व्याही घर आये।
नित नव मंगल मोद वधाए॥ 2/1

4. उपद्रवं नाश के लिए—

दैहिक दैविक भौतिक तापा।
रामराज नहिं काहुहि व्यापा॥ 7/21

5. खोई गई वस्तु की प्राप्ति के लिए—

गई वहोर गरीव नेवाजू।
सरल सवल साहिव रघुराजू॥ 1/13

6. सम्पत्ति के लिए—

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहि।
सुख सम्पत्ति नानाविधि पावहिं॥ 7/15

7. पुत्र प्राप्ति के लिए—

प्रेम मग्न कौसल्या निसिदिन जात न जान।
सुतसनेह वस माता वाल चरित कर गान॥ 1/200

8. लक्ष्मी प्राप्ति के लिए—

जिमिसरिता सागर महुं जाहीं
जद्यपि ताहि कामना नाहीं।

तिमि सुखसंपति विनहिं बोलाएं
धरमसील पहिं जाहिं सुभाए ॥ 1/294

9. आजीविका के लिए—
विस्वभरन पोषण कर जोई ।
ताकर नाम भरत अस होई ॥ 1/197

10. मुकद्दमा जीतने के लिए—
पवन तनय बल पवन समाना ।
बुद्धि विवेक विग्यान निधाना ॥ 4/30

11. मनोरथ सिद्धि के लिए—
सुनहु देव सचराचर स्वामी, प्रनपताल उर अन्तर्जामी ॥
मोर मनोरथु जानहु नीके बसहु सदा उर पुर सबही के ॥

12. पाप नाश के लिए—
राम राम कहिं जे जमुहाहिं, तिन्हहि न पाप पुंज समुहाहिं ॥
1/113

13. श्री राम की भक्ति के लिए—
दानि सिरोमनि कृपानिधि, नाथ कहहुं सतिभाउ ।
चाहहुं तुम्हहि समानसुत प्रभु सन कवन दुराउ ॥ 1/149

15. अकाल मृत्यु के लिए—
नाम पाहरु दिवसनिशि ध्यान तुम्हार कपाट ।
लोचन निज पद जन्त्रित, जाहिं प्रान केहिं वाट ॥ 5/30

16. रक्षा के लिए—
मामभिरक्षय रघुकुलनायक, धृतवरचाप रुचिर कर सायक ।
6/114

17. परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए—
मोरि सुधारिहि सो सब भान्ति, जासु कृपा नहिं कृपा अघाती ॥ 1/27

18. रोग नाश के लिए—

राम कृपा नासहिं सब रोगा, जौं एहि भांति बनै संयोगा।
7/121

19. सर्व संकट निवारण के लिए—
महावीर विनवउं हनुमाना, राम जासु जस आप बखाना।
कवन सों काज कठिन जगमाहिं जो नहिं होई तात तुम पाहिं।
प्रनवऊं पवन कुमार खलवन पावक ज्ञानघन।
जासु हृदयं आगार बसहिं राम सरचापधर॥

20. संकट निवारण के लिए दूसरा मन्त्र—
कहइ रीछपति सुनहु हनुमाना का चुपसाधि रहेहु बलवाना।
पवनतनय बल पवनसमाना, बुद्धि विवेक विग्यान निधाना।
कवन सो काज कठिन जग माहिं जो नहिं होइ तात तुम्ह पाहिं॥ 4/30

21. भवभीर नाश के लिए—
मो समदीन न दीन हित तुम्ह समान रघुवीर।
अस विचारि रघुबंस मनि हरहु विषम भवभीर॥ 7/130

22. कृपा दृष्टि के लिए—
मामवलोकय पंकज लोचन, कृपा विलोकिनि सोच विमोचन॥
7/20

23. जीवन सुधार के लिए—
मोरि सुधारिहि सो सब भांति, जासु कृपा नहीं कृपा अघाती॥ 1/27

24. भ० शंकर की प्रसन्नता प्राप्ति के लिए—
आसुतोष तुम्ह अवढर दानी, आरति हरहु दीन जनु जानी॥
2/43

25. मंगल कार्य के लिए—
मंगलभवन अमंगलहारी द्रवउ सो दसरथ अजिरविहारी॥
1/111

26. स्नेही की प्राप्ति के लिए—
जेहि के जेहिं पर सत्य सनेहु सो तेहिं मिलइ न कछु सन्देहु ॥
1/258

27. विद्या प्राप्ति के लिए—
गुर गृह गए पढन रघुराई, अल्पकाल विद्या सब आई ॥
1/203

28. मुकद्दमा जीतने के लिए—
पवनतनय बल पवनसमाना, बुद्धि विवेक विग्यान निधाना ।

29. खोई हुई वस्तु की प्राप्ति के लिए—
गई बहोर गरीब नेवाजू, सरल सबल साहिब रघुराजू ॥

30. लक्ष्मी प्राप्ति के लिए—
जिमि सरिता सागर महुं जाहिं जद्यपि ताहि कामना नाहिं ।
तिमि सुखसंपति बिनहि बोलाए धरमसील पहि जाहिं सुभाए ॥ 1/293

31. मनोरथसिद्धि के लिए—
भव भेषज रघुनाथ जसु, सुनहि जे नर अरु नारि ।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्धि करहिं त्रिसरारि ॥ 4/30

32. श्रीराम के प्रत्यक्ष दर्शन के लिए—
जो अनाथ हित हम पर नेहु तौ प्रसन्न होइ यह वर देहूं ।
जो सरूप बस सिव मन माहिं, जेहि कारन मुनि जतन कराहि ।
जो भुसंडि मनमानस हंसा सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा ।
देखहि हम सो रूपभरि लोचन, कृपा करहु प्रनतारति मोचन ॥ 1/145

सुयोग्य वर प्राप्ति के लिए अनुभव सिद्ध मन्त्र प्रयोग

यह मन्त्र पाठ उन कुमारी कन्याओं के लिए हैं, जिनको योग्य वर नहीं मिलते, मिलते भी हैं तो विवाह के बाद उन कन्याओं को अनेक प्रकार की यातनाएं सहन करनी पड़ती हैं । इसलिए इस को समय से पहले सुलझाने के लिए नीचे लिखी चौपाइयों का पाठ करें ।

विधि—सोमवार को शुभ मुहूर्त में पाठ आरम्भ करें। भगवती कात्यायनी-दुर्गा की मूर्ति को आसन पर स्थापित कर शुद्ध वस्त्र गहन कर, शुद्ध पीले आसन पर बैठें। आसन ऊनी हो तो अच्छा है। मुख पूर्व की ओर करें। भगवती दुर्गा का सविधि पूजन करें। पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि चढ़ाएं। गुड़ या मिश्री का भोग लगाएं। प्रतिदिन ग्यारह पाठ करने है, इस प्रकार इक्कीस दिन तक करना होगा। दिन में एक वार शुद्ध-सात्विक आहार करना होगा। झूठ नहीं बोलना, गलत वात नहीं करनी, झगड़ना नहीं, मन को शान्त रखें। रात्रि को प्रभु का स्मरण करते हुए जमीन पर विस्तर बिछाकर सो जाएं। इस पाठ के करने से समुचित वर मिलेगा, एवं दाम्पत्य जीवन सुखी रहेगा। जिनका दाम्पत्य जीवन सुखी नहीं वे भी इस पाठ को कर सकते हैं।

जानि कठिन सिव चाप विसूरति, चली राखो उर स्यामलमूरति।
प्रभु जव जात जानकी जानी सुख सनेह सोभा गुण खानी।
परम प्रेममय मृदु मसि कीन्हि, चारु चित्त भीति लिखी लीन्ही।
गई भवानी भवन वहोरी। वंदि चरन बोली कर जोरी।
जय जय गिरिवर राज किसोरी। जयमहेस मुखचन्द चकोरी।
जयगज वदन षडाननमाता। जगत जननी दामिनि दुति गाता।
नहिं तव आदि मध्य अवसाना। अमित प्रभाउ वेदु नहिं जाना।
भव भव विभव पराभव कारिनि। विस्व विमोहनि स्ववस विहारिनि॥

पतिदेवता सुतीय महुं मातु प्रथम तवरेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेष॥वा० 235॥
सुनहि सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी॥
सेवत तोहि सुलभ फलचारी। वरदायनी पुरारि पिआरी।
देवि पूजिपद कमल तुम्हारे। सुरनरमुनि सव होहिं सुखारे।
मोर मनोरथु जानहु नीकें। वसहु सदा उर पुर सवही कें।
कीन्हेउं प्रगट न कारन तेहीं। अस कहि चरन गहे वैदेहीं।
विनय प्रेम वस भई भवानी। खसी माल मूरति मुसुकानी।

सादर सियं प्रसादु सिर धरेऊ । बोली गौरि हरषु हियं भरेऊ ।।
सुनुसिय सत्य असीस हमारी पूजिहि मन कामना तुम्हारी ।
नारद वचन सदा सुचि साचा । सोवरु मिलिहि जाहिं मनु राचा ।
छन्द—मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो वरु सहज सुंदर सांवरो ।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहू जानत रावरो ।
एहि भांति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियं हरषी अली ।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मन्दिर चली ।।
जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जांइ कहि ।
मंजुल मंगल मूल वाम अंग फरकन लगे ।।236।।
सुनि सिय असीस हमारी पूजिहि मन कामना तुम्हारी ।।

इन दो चोपाइयों के साथ—नीचे लिखी अर्धाली का सम्पुट है—
सुनिसिय असीस हमारी पूजिहि मन कामना तुम्हारी ।।

पाठ आरम्भ करते समय भी इसे बोलें । ऐसे ग्यारह पाठ प्रतिदिन करने, और 21 दिन तक निरन्तर करते जाएं । 22वें दिन इस पाठ का भोग डालें । इन्हीं चोपाइयों को पढ़ते हुए 108 बार अग्नि में आहुतियां डाल देवें । हवन विधि स्वयं न कर सकें तो किसी पण्डित का सहारा लें । पाठ स्वयं ही करना है । स्वयं ही इस पाठ को बोलते हुए आहुति डालनी है ।

श्री राम चरित मानस के सुन्दर कांड का महत्त्व

श्री राम चरित मानस के सुन्दर काण्ड का पाठ करने से व्यक्ति के सभी प्रकार के कष्ट दूर हो जाते हैं । यह सिद्धविधान है । इसका पाठ किष्किन्धा काण्ड के 29वें दोहे के बाद "कहउं रीछपति सुनु हनुमाना" से आरम्भ कर संपूर्ण सुन्दर काण्ड का पाठ करे । किसी कार्य की पूर्ति के लिए सम्पुट भी लगाया जा सकता है । पाठ करने से पूर्व श्री रामपरिवार का पूजन करें । घी का दीप, धूप आदि जलाएं । भोग भी लगाएं । पाठ के आदि और अन्त में हनुमान चालीसा का पाठ आवश्यक है ।

श्री रामचन्द्र पर विश्वास करने वाले के लिए महत्त्वपूर्ण मन्त्र

उँ आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम् ।

(लोका) रामाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥

इस मन्त्र का भगवत् पूजन करते हुए 1100 संख्या में प्रतिदिन जाप करें। इकतालीस दिन का यह विधान है। जप के वाद दशांश हवन करें।

सब प्रकार की आपदाएं दूर हों। सर्व संपदाओं की प्राप्ति हो। शुद्ध भाव से, शुद्ध वस्त्र धारण कर. ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए— पूर्ण श्रद्धा-भक्ति से इस के अनुष्ठान को करें।

———

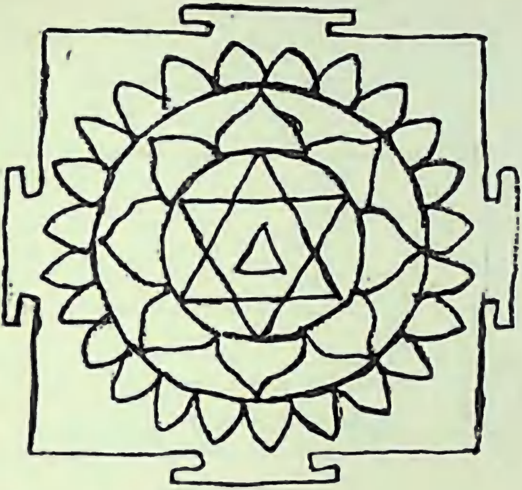

वगला मुखी यन्त्र

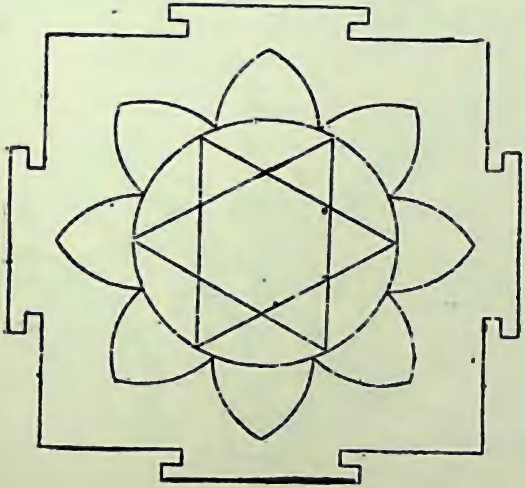

गणपतिपूजन यन्त्र

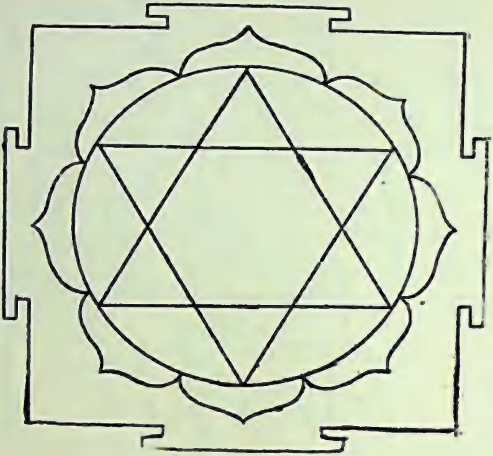

तारापूजनयन्त्र

सद्योऽभीष्टकर मृत्युंजय
यन्त्र

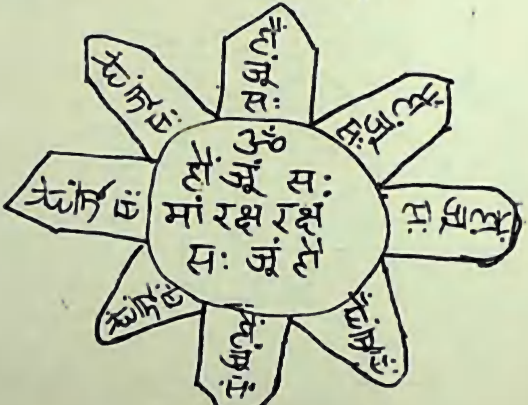

मृत्युजय यन्त्र

तृतीय भाग

महाविद्या प्रकरण

1. कालीतन्त्रम्

कालीध्यानम्

शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां हसन्मुखीम्,
चतुर्भुजां खड्गमुण्डवराभयकरां शिवाम् ।
मुण्डमालां धरां देवीं ललज्जिह्वां दिगम्बराम् ।
एवं संचिन्तयेत् कालीं श्मशानालय वासिनीम् ॥

अथ यन्त्रोद्धार:

आदौ त्रिकोणमालिख्य त्रिकोणन्तद्वहिर्लिखेत् ।
ततो वै विलिखेन्मन्त्री त्रिकोणत्रयमुत्तमम् ॥ १ ॥
ततस्त्रिवृत्तमालिख्य लिखेदष्टदलं ततः ।
वृत्तं विलिख्य विधिवल्लिखेद्भूपुरमेककम् ॥ २ ॥

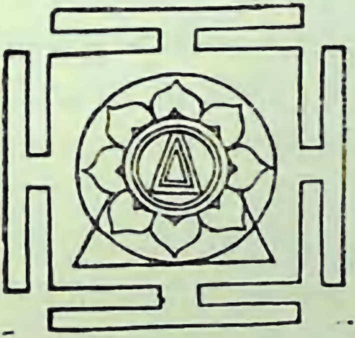

अथ मन्त्रोद्धारः

कालीबीजत्रयम्प्रोक्त्वा लज्जाबीजद्वयन्ततः ।
हूँकारौ द्वौ ततः पश्चाद्दक्षिणे कालिके ततः ॥ १ ॥
कालीबीजत्रयन्तस्माल्लज्जाबीजद्वयं पठेत् ।
द्वौ च स्वाहान्तहूङ्कारौ कालीमन्त्र उदाहृतः ॥ २ ॥

अथ मन्त्रः

ॐ क्रींक्रींक्रींह्रींह्रीं हूं हूँ दक्षिणे कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ स्वाहा ॥

अथ श्रीदक्षिणकालीसपर्यापद्धतिः

प्रथमम्पञ्चवर्णरजश्चित्रं शुद्धं स्थानं गत्वा पूजावेद्याः वहिः स्थित्वा गुरुम्प्रणम्य इष्टदेवताम्प्रणम्य दिक्पालाँश्च प्रणम्य आचम्य ततः कुशहस्तो मौनी पापशमनार्थं श्लोकद्वयम्पठेत् । तद्यथा--"ॐ देवि त्वत्प्रकृतञ्चित्तम्पापाक्रान्तमभून्मम ॥ तन्निस्सरन्तु चित्तान्मे पापं हूं फट् च ते नमः ॥ १ ॥ सूर्यस्सोमो यमःकालो महाभूतानि पञ्च च ॥ एते शुभाशुभस्येह कर्मणो नव साक्षिणः" इति पठित्वा सम्प्रार्थ्य गृहे प्रविशेत् । मौनी मूलेनाचम्य "ओं वज्रोदके हूं फट्स्वाहा" इतिजलं गृहीत्वा "हुं स्वाहा" इति करे आदाय 'ओं ह्रींविशुद्धसर्वपापानिशमयाशेषविकल्पमपनय हुँफट्स्वाहा" इत्यनेन पादौ प्रक्षाल्य "ॐ ह्रींस्वाहा" इति पुनराचम्य "ऐंकालिकायैनमः, ऐंकपालिन्यैनमः, ऐंकुल्लायै नमः" इति त्रिराचम्य ततो मूलेन हस्तौ

No. 4

KALI MATA

JAIN PICTURE PUBLICATION

प्रक्षाल्य "ॐ कालिकायै नमः । ॐ कपालिन्यैनमः" इति-दशहस्ताङ्गुलीभिरोष्टौ द्विरुन्मृज्य "ॐ कुल्लायैनमः" इति करं प्रक्षाल्य मूलेनसङ्कुचिताङ्गुलीभिर्मुखतर्जन्यङ्गुष्ठाभ्यां नासिकां मूलेन अनामिकाङ्गुष्ठाभ्याङ्कर्णमङ्गुष्ठ-कनिष्ठाभ्यान्नाभिन्तलेनहृदयं सर्वाङ्गुलीभिर्मस्तकं भुजौ च स्पृशेत् । ततस्तिलकङ्कलचन्दनादिना ललाटोदरहृत्कण्ठदक्षपार्श्वांसकण्ठपृष्ठककुदि भुजद्वन्द्वे मूर्द्धनिद्वादशस्वपि स्थानेषु कुर्यात् ॥ ततो "देव्यस्त्रंविलिखेद्भाले कालीवीजन्ततो हृदि शक्तिम्मध्यगताङ्कृत्वाकूर्चवीजन्न्यसेत्सुधिः" ततः सामान्यार्घ्यस्थापनङ्कुर्य्यात् ॥ तद्यथा —स्ववामेत्रिकोणवृत्तभूपुरात्मकम्मण्डलंविलिख्य ततः "उँ आधारशक्तिभ्यो नमः" इति पुष्पाक्षतादिभिरभ्यर्च्य "ॐ हःद्वारार्घ्यंसाधयामि" इत्युक्त्वा "फट्" इतिप्रक्षालितं शङ्खादिपात्रत्रिपादिकोपरि निधाय "नमः" इति जलेनापूर्य "गङ्गे चयमुनेचैव गोदावरि-सरस्वति ॥ नर्मदे सिन्धुकावेरिजलेऽस्मिन्सन्निधिङ्कुरु" इतिमन्त्रेणाङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्तीर्थन्तज्जले आवाह्य, गन्धादिकम्प्रणवेन निक्षिप्य, धेनुमत्स्यमुद्रे दर्शयित्वा, प्रणवेनाष्टादशकृत्वोवाभिमन्त्र्यफडिति मन्त्रेणद्वारमभिषेचयेत् । "उँ मणिधरिणि वज्रिणि शिखरिणी सर्वलोकवशङ्करि हूँ फट्स्वाहा" इति शिखाम्वध्नीयात् ॥ ततो द्वारदेवताः पूजयेत् "गंगणेशायनमः बंवटुकायनमः, क्षंक्षेत्रेशायनमः, यंयोगिनीभ्योनमः" इति ऊर्ध्वे वामेदक्षे

अधइतिचतुर्दिक्षु पूजयेत् "गंगङ्गायैनमः, यंयमुनायै नमः" इति शाखापार्श्वयोः "लंलक्ष्म्यैनमः, संसरस्वत्यैनमः" इति ऊर्ध्वे अधरश्चपूजयेत् ।। "ॐ ब्रह्माण्याद्यष्टमातृभ्योनमः" इतिदेहल्याम् गन्धपुष्पादिनाभ्यर्च्यततोदक्षिणङ्गं सङ्कोचयन् दक्षचरणमग्रे निधाय वामशाखामस्पृशन् मण्डलाभ्यन्तरे गत्वा "ॐ रक्षरक्षहुँफट्स्वाहा" इति जलेनाभिषिच्य "ॐ पवित्र वज्र भूमेहूँफट्स्वाहा" इत्यभिमंत्र्य "ह्रींआधारशक्तिकमलासनायनमः" इत्यासनमभ्यर्च्यत्रिकोणं विलिख्य "आसुरेखेवज्ररेखेहुंफटस्वाहा" इति मण्डलंविलिख्य तत्र "हसौ" इतिप्रेतवीजंविलिख्य "ह्रीं आधारशक्तिकमलासनायनमः" इत्यासनमभ्यर्च्य ।। "ॐ अनन्तायनमः, विमलासनायनमः, पद्मासनायनमः" इति कुशानास्तीर्य्य व्याघ्राजिनकृष्णसारमृगाजिनङ्कम्वलासनं वा प्रकल्पयेत् ।। तदभावेतुपञ्चविंशतिकुशनिर्मितविष्ठरं शवरूपं वा प्रकल्पयेत् ।। "हसौमहाप्रेतपद्मासनायनमः" इत्यभ्यर्च्य तत्रासने आत्ममन्त्रेण उपविश्यवामोरूपरिदक्षिणपादङ्कृत्वावद्धवीरासनः वामपादोपरि दक्षिणोरुं धृत्वाविपरीतंवा पूर्वाभिमुख उत्तराभिमुखो वाआसनं धृत्वा मन्त्रम्पठेत् ।।

आसनमन्त्रस्यमेरुपृष्ठऋषिः सुतलंछन्दः कूर्मोदेवता आसनपरिग्रहेविनियोगः "ॐ पृथ्वित्वयाधृतालोका देवित्वंविष्णुनाधृता ।। त्वञ्च धारयमांनित्यम्पवित्रङ्कुरुचासनम् इति "ॐ वास्तुपुरुषायनमः, ॐ ब्रह्मणेनमः" इतिनैर्ऋत्ये

सम्पूज्य "ॐ धर्मायनमः, ॐ ज्ञानायनमः, ॐ वैराग्याय नमः ॐ ऐश्वर्यायनमः" इति दिक्षुसम्पूज्य " ॐ अधर्मायनमः, "ॐ अवैराग्यायनमः, ॐ अनैश्वर्यायनमः" इतिविदिक्षुसम्पूजयेत् ।। "ॐ हुँफट्स्वाहा" इति मन्त्रेण "ॐ क्लींस्वाहा" इतिमन्त्रेण वा कायवाक्चित्तशोधनंकृत्वा "रक्षरक्षहुँफट्स्वाहा" इत्यात्मानमभिरक्षयेत् " ॐ शताभिषेके शताभिषेकेपदे हुँफट्स्वाहा, ॐ पुष्पकेतुराजार्हत् पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पसम्भवे पुष्पचयावकीर्णेहुँफट्स्वाहा" इतिपुष्पमभिमन्त्रयेत् । अन्यानि पूजावस्तूनिसर्वाणि सामान्यार्घ्योदकेनाभिषिच्यधेनुमुद्रामत्स्यमुद्रे दर्शयित्वा पुष्पाणि शुद्धानि विभावयेत् ।। वमितिजलधाराम्प्रक्षिप्य वह्निवीजेनवह्निप्राकारं विचिन्त्य "हुँफट" इतिमन्त्रेण चतुर्दिक्षुक्रोधदृष्टयानिरीक्ष्य सर्वान् विघ्नानुत्सारयेत । तद्यथा—"सर्वविघ्नानुत्सारयहुँफट्स्वाहा" इतिमन्त्रेण ऊर्ध्वमवलोक्य दिव्याँश्चतुर्दिक्षुजलक्षेपेणान्तरिक्षगान् वामपार्ष्णिघातत्रयेण भौमान विघ्नानुत्सार्य्य लाजचन्दनसिद्धार्थतिलदधिदूर्वाक्षतानामन्यतममादाय "ॐ अपसर्प्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।। ये चात्रविघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया" इतिपठँश्चतुर्दिक्षु क्षिपेत । ततो वामे "ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्योनमः, ॐ परात्परगुरुभ्योनमः, ॐ परमेष्ठिगुरुभ्योनमः, दक्षिणे "ॐ गणेशायनमः पुरतः "ॐ दक्षिणकालिकायैनमः" इतिप्रणमेत् ।। ततः

करशुद्धिङ्कुर्यात् ।। तद्यथा—"हुँ" इतिमन्त्रेणचन्दनाक्तानि कुसुमान्यङ्गुल्यग्रेणादाय"हौ" इतिमन्त्रेण कराभ्यांमर्दयित्वा "क्लीं" इति वीजेन दक्षहस्तेन सम्मृज्य "ॐ तत्सत्" इतिमन्त्रेणवामहस्तेनाघ्राय "हौं" इति मन्त्रेण ऐशान्यां दिशिपुष्पम्परित्यजेत "ॐ ते सर्वेविलयं यान्तु येमांहिंसन्तिहिंसकाः ।। मृत्युरोगभयक्रोधाः पतन्तुरिपुमस्तके" इतिमन्त्रेण वा परित्यजेत । परित्यागश्चनाराच मुद्रया ।।

अथ भूतशुद्धिः

शिरसि भैरवायऋषयेनमः मुखे । उष्णिक्छन्दसेनमः । हृदये ॐ दक्षिणकालिकायैनमः । गुह्ये क्रींवीजायनमः । पादयोः हुँ शक्तयेनमः सर्वाङ्गे । क्रोंकीलकायनमः ।।

अथ षडङ्ग न्यासः

ॐ क्रां हृदयाय नमः । ॐ क्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ क्रूं शिखायै वषट् । ॐ क्रैं कवचाय हुम् । ॐ क्रैं नेत्र त्रयाय वौषट् । ॐ क्रः अस्त्राय फट् ।

करन्यास :—ॐ क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा । ॐ क्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । ॐ क्रैं अनामिकाभ्यां हुम् । ॐ क्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ॐ क्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।

ततः प्राणायामं कुर्यात् ।

ॐ संविदे ब्रह्म सम्भूते ब्रह्मपुत्रिसदानघे ।

भैरवानन्दतृप्त्यर्थं पवित्रा भव सर्वदा । ॐ ब्राह्म्यै

नमः स्वाहा । ॐ सिद्धमूल क्रिये देवि हीनवोध प्रवोधिनि । राज़ प्रजावशंकरि शत्रुकण्ठ निषूदिनि । ऐं क्षत्रियायै नमः स्वाहा । ॐ अज्ञानेन्धन दीप्ताग्नि ज्वालाग्नि ज्ञान रूपिणि । आनन्दस्यागम प्रीतिं सम्यग्ज्ञानं प्रयच्छ मे । ॐ ह्रीं वश्यायै नमः स्वाहा । ॐ नमस्यामि नमस्यामि योगमार्गप्रदर्शिनि । त्रैलौक्य-विजये मातः समाधिफलदाभव । क्लींशूद्रायै नमः स्वाहा । इत्येतैः मन्त्र्यैः संशोध्य—ततः ॐ अमृते अमृतोद् भवे अमृतवर्षिणि अमृतमाकर्षय आकर्षय सिद्धिं देहि सर्वं मे वशमानय स्वाहा—इति मन्त्रेणाभिमन्त्रयेत ।। ॐ ह्रीं ह्लीं लूं अः अं डं एं महाघोरेशाय नमः इत्यघोर-मन्त्रेण चाभिमन्त्र्यमूलमन्त्रं सप्तवारं जप्त्वा श्रेष्ठ देवीं आवाह्य धेनुमुद्रां च प्रदर्श्य छोटिकाभिः दिग्वन्धनं तालत्रयं च कृत्वा तत्र श्रीष्टदेवीं मानसोपचारैः सम्पूज्य-ऐं गुरुपादु-काभ्यो नमः "इतिमन्त्रेण ब्रह्मरन्ध्रे श्रीगुरुं त्रिधा तर्पयेत् । मूलेन हृत्कमले श्रीष्ट देवतां पञ्चधा तर्पयेत् । ततः स्वीकारः—ऐं आत्म तत्त्वेन आत्म तत्त्वं शोधयामि स्वाहा । ऐं विद्यातत्त्वेन विद्या तत्त्वं शोधयामि स्वाहा, ऐं शिव-तत्त्वेन शिव तत्त्वं शोधयामि स्वाहा, मूलमुच्चार्य सर्व तत्त्वेन सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा । ऐं वदवद वाग्वादिनि ममजिह्वाग्रे स्थिराभव सर्वतत्त्ववशंकरो स्वाहा । इति मुखेन जठराग्नौ जहुयात् मूलमन्त्रेण सर्वं पिवेत ।

इस प्रकार विधि करके काली का षोडशोपचार

पूजन कर-मन्त्र जाप करें। सवालक्ष मन्त्र जाप की समाप्ति पर हवन करें। तदनन्तर वलिविधान करें।

अथ कालीकवचम्

भैरवी उवाच

कालीपूजा श्रुता नाथ भावाश्च विविधा प्रभो।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्वं सूचितम् ॥१॥
त्वमेव स्रष्टा पाता च संहर्ता त्वमेव हि।
त्वमेव शरणं त्राहि मां दुःखसंकटात् ॥२॥

भैरव उवाच

रहस्यं शृणु वक्ष्यामि भैरवि प्राणवल्लभे॥ श्रीजगन्मङ्गलन्नाम कवचम्मन्त्रविग्रहम् ॥३॥ पठित्वा धारयित्वा च त्रैलोक्यम्मोहयेत्क्षणात् ॥ नारायणोऽपि यद्धृत्वा नारी भूत्वा महेश्वरम् ॥ ४ ॥ योगिनङ्क्षोभमनयद्यद्धृत्वा च रघूत्तमः ॥ वरतृप्तो जघानैव रावणादिनिशाचरान् ॥ ५ ॥ यस्य प्रसादादीशोऽहं त्रैलोक्यविजयी विभुः ॥ धनाधिपः कुवेरोऽपि सुरेशोऽभूच्छचीपतिः ॥६॥ एवं हि सकला देवास्सर्वद्धीश्वरा प्रिये ॥ श्रीजगन्मङ्गलस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः ॥७॥ छन्दोऽनुष्टप्देवा च कालिका दक्षिणेरिता ॥ जगताम्मोहने दुष्टविजये भुक्तिमुक्तिषु ॥८॥ योषिदाकर्षणे चैव विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ शिरो मे कालिका पातु क्रींकारैकाक्षरी परा ॥९॥ क्रींक्रींक्रीं मे ललाटञ्च कालिका खड्गधारिणी

हूं हूं पातु नेत्रयुगं ह्रींह्रींपातु श्रुती मम ॥ १० ॥ दक्षिणे कालिका पातु घ्राणयुग्मम्महेश्वरी ॥ क्रींक्रींक्रीं रसनाम्पातु हूं हूं पातु कपोलकम् ॥ ११ ॥ वदनं सकलम्पातु ह्रीँ ह्रीँ स्वाहा स्वरूपिणी ॥ द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्या सुखप्रदा ॥ १२ ॥ खड्गमुण्डधरा काली सर्वाङ्ग-मभितोऽवतु ॥ क्रींहूँह्रीँ त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदय-म्मम ॥ १३ ॥ ऐंहूँओंऐं स्तनद्वन्द्वं ह्रींफट्स्वाहा ककु-त्स्थलम् । अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्तृका ॥१४॥ क्रींक्रींहूंहूंह्रींह्रींकारीं पातु षडक्षरी मम ॥ क्रीं नाभिमध्य-देशञ्च दक्षिणे कालिकाऽवतु ॥ १५ ॥ क्रींस्वाहा पातु पृष्ठञ्च दक्षिणे कालिका सा दशाक्षरी ॥ क्रीं मे गुह्यं सदा पातु कालिकायै नमस्ततः ॥१६॥ सप्ताक्षरी महा-विद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥ ह्रींह्रीं दक्षिणे कालिके हूं हूं पातु कटिद्वयम् ॥१७॥ काली दशाक्षरी विद्या स्वाहा मामूरुयुग्मकम् ॥ ॐ क्रींक्रीं मे स्वाहा पातु कालिका जानुनी सदा ॥१८॥ कालीहृन्नामविद्येयञ्चतुर्वर्गफलप्रदा ॥ क्रींह्रींह्रीं पातु सा गुल्फन्दक्षिणे कालिकाऽवतु ॥१९॥ क्रींहूंह्रींस्वाहा पदम्पातु चतुर्दशाक्षरी मम ॥ खड्गमुण्डधरा काली वरदाभयधारिणी ॥२०॥ विद्याभिस्सकलाभिः सा सर्वाङ्गमभितोऽवतु ॥ काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी ॥२१॥ विप्रचित्ता तथोग्रोग्रप्रभा दीप्ता घनत्विषा ॥ नीला घना वलाका च मात्रा मुद्रा मिता च माम्

॥२२॥ एतास्सर्वा खड्गधरा मुण्डमालाविभूषणाः । रक्षन्तु दिग्विदिक्षु मां ब्राह्मी नारायणी तथा ॥ २३ ॥ माहेश्वरी च चामुण्डा कौमारी चापराजिता ॥ वाराही नारसिंही च सर्वाश्चामितभूषणाः ॥ २४ ॥ रक्षन्तु स्वायुधैर्दिक्षु माँ यथा तथा ॥ इति ते कथितन्दिव्यङ्कवचम्परमाद्भुतम् ॥२५॥ श्रीजगन्मङ्गलन्नाम महाविद्यौघविग्रहम् ॥ त्रैलोक्याकर्षणम्ब्रह्मन्कवचम्मन्मुखोदितम् ॥ २६ ॥ गुरुपूजाँ विधायाथ विधिवत्प्रपठेत्ततः ॥ कवचन्त्रिस्सकृद्वापि यावज्जीवाञ्च वा पुनः ॥२७॥ एतच्छतार्द्धमावृत्य त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥ त्रैलोक्यङ्क्षोभयत्येव कवचस्य प्रसादतः ॥२८॥ महाकविर्भवेन्मासं सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥ पुपाञ्जलीन्कालिकायै मूलेनैवार्पयेत् सकृत् ॥२९॥ शतवर्षसहस्राणाम्पूजाया फलमाप्नुयात् ॥ भूर्जे विलिखितञ्चैतत्स्वर्णस्थन्धारयेद्यदि ॥३०॥ विशाखायान्दक्षवाहौ कण्ठे वा धारयेद्यदि ॥ त्रैलोक्यम्मोहयेत्क्रोधात्त्रैलोक्यञ्चूर्णयेत्क्षणात् ॥३१॥ पुत्रवान्धनवान् श्रीमान्नानाविद्यानिधिर्भवेत् ॥ ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रस्पर्शनात्ततः ॥३२॥ नाशमायाति या नारी वन्ध्या वा मृतपुत्रिणी ।; वह्वपत्या जीवतोका भवत्येव न संशयः ॥ ३३ ॥ न देयम्परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः ॥ शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात् ॥३४ ॥ स्पर्द्धामुद्धूय कमला वाग्देवी मन्दिरे सुखे ॥ पौत्रान्तं स्थैर्य्यमास्थाय निवसत्येव निश्चितम् ॥३५॥

इदङ्कवचमज्ञात्वा यो भजेद्घोरदक्षिणाम् ।। शतलक्षम्प्रजप्त्वापि तस्य विद्या न सिद्ध्यति ।। सहस्रघातमाप्नोति सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ।।३६।। इति कवचम् ।

अथ हृदयम्

श्री महाकाल उवाच ।। महाकौतूहलस्तोत्रं हृदयाख्यम्महोत्तमम् ।। शृणु प्रिये महागोप्यन्दक्षिणायाः सुगोपितम् ।।१।। अवाच्यमपि वक्ष्यामि तव प्रीत्या प्रकाशितम् ।। अन्येभ्यं : कुरु गोप्यञ्च सत्यं सत्यञ्च शैलजे ।।२।। श्रीदेव्युवाच ।। कस्मिन्युगे समुत्पन्नङ्केन स्तोत्रङ्कृतम्पुरा ।। तत्सर्वङ्कथ्यतां शम्भो महेश्वर दयानिधे ।।३।। श्रीमहाकाल उवाच ।। पुरा प्रजापतेः शीर्षश्छेदनङ्कृतवानहम् ।। ब्रह्महत्याकृतैः पापैर्भैरवत्वम्ममागतम् ।।४।। ब्रह्महत्याविनाशाय कृतं स्तोत्रम्मया प्रिये ।। कृत्याविनाशकं स्तोत्रम्ब्रह्महत्यापहारकम् ।।५।।'ॐ अस्य श्रीदक्षिणकाल्या हृदयस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीमहाकालऋषिरुष्णिक्छन्दः ।। श्रीदक्षिणकालिकादेवता क्रींवीजं, ह्रींशक्तिः, नमः कीलकम् ।। सर्वत्र सर्वदा जपे विनियोगः ।। ॐ क्रांहृदययानमः । ॐक्रींशिरसेस्वाहा । ॐ क्रूँशिखायैवषट् । ॐक्रैंकवचायहुम् ।। ॐक्रोंनेत्रत्रयायवौषट् । ॐक्रःअस्त्रायफट् ।। अथ ध्यानम् । ध्यायेत्कालीम्महामायान्त्रिनेत्राम्वहुरूपिणीम् ।। चतुर्भुजाँ ललज्जिह्वाम्पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ।।१।। नीलोत्पलदलप्रख्यां शत्रुसघंविदारिणीम् ।। नरमुण्डन्तथा खड्गङ्कमलं वरदन्तथा ।।२ ।।

बिभ्राणां रक्तवदनान्दंष्ट्रालींघोररूपिणीम् ।। अट्टाट्टहासनिरतां सर्वदा च दिगम्वराम् ।।३।। शवासनस्थितान्देवीम्मुण्डमालाविभूषिताम् ।। इति ध्यात्वा महादेवीन्ततस्तु हृदयम्पठेत् ।।४ ।। ॐकालिका घोररूपाद्या सर्वकामफलप्रदा ।। सर्व्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशङ्करोतु मे ।।५।। ह्रींह्रींस्वरूपिणी श्रेष्ठा त्रिषु लोकेषु दुर्लभा ।। तव स्नेहान्मयाख्यातन्न देयं यस्य कस्यचित् ।।६।। अथ ध्यानम्प्रवक्ष्यामि निशामय परात्मिके ।। यस्य विज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भविष्यति ।।७।। नागयज्ञोपवीताञ्च चन्द्रार्द्धकृतशेखराम् ।। जटाजूटाञ्च सञ्चिन्त्य महाकालसमीपगाम् ।।८।। एवन्न्यासादयस्सर्व्वे ये प्रकुर्वन्ति मानवाः ।। प्राप्नुवन्ति च ते मोक्षं सत्यं सत्यं वरानने।।९।। यन्त्रं शृणु परन्देव्यास्सर्वार्थ सिद्धिदायकम् ।। गोप्याद्गोप्यतरं गोप्यङ्गोप्याद्गोप्यतरंमहत् ।।१०।। त्रिकोणम्पञ्चकञ्चाष्टकमलम्भूपुरान्वितम् ।। मुण्डपङ्क्तञ्च ज्वालाञ्च कालियन्त्रं सुसिद्धिदम् ।।११।। मन्त्रन्तु पूर्व्वकथितन्धारयस्व सदा प्रिये ।। देव्या दक्षिणकाल्यास्तु नाममालान्निशामय ।। १२ ।। काली दक्षिणकाली च कृष्णरूप परात्मिका ।। मुण्डमाली विशालाक्षी सृष्टिसंहारकारिका ।।१३ ।। स्थितिरूपा महामाया योगनिद्रा भगात्मिका ।। भगसर्पि पानरता भगोद्योता भगाङ्गजा ।। १४ ।। आद्या सदा नवा घोरा महातेजा करालिका ।। प्रेतवाहा सिद्धिलक्ष्मी-

रनिरुद्धा सरस्वती ॥१५॥ एतानि नाममाल्यानि ये पठन्ति दिने दिने ॥ तेषान्दासस्य दासोऽहं सत्यं सत्यम्महेश्वरि ॥१६॥ कालीङ्कालहरान्देवीङ्कङ्कालवीजरूपिणीम् ॥ काकरूपाङ्कलातीताङ्कालिकान्दक्षिणाम्भजे ॥१७॥ कुण्डगोलप्रियान्देवीं स्वयम्भूकुसुमेरताम् ॥ रतिप्रियाम्महारौद्रीङ्कालिकाम्प्रणमाम्यहम् ॥१८॥ दूतीप्रियाम्महादूतीन्दूतीयोगेश्वरीम्पराम् ॥ दूतीयोगोद्भवरतान्दूतीरूपान्नमाम्यहम् ॥१९॥ क्रींमन्त्रेण जलञ्जप्त्वा सप्तधा सेचनेन तु ॥ सर्वे रोगा विनश्यन्ति नात्र कार्य्या विचारणा ॥२०॥ क्रींस्वाहान्तैर्महामन्त्रैश्चन्दनं साधयेत्ततः ॥ तिलकङ्क्रियते प्राज्ञैर्ल्लोको वश्यो भवेत्सदा ॥२१॥ क्रींहूँह्रींमन्त्रजप्तेन चाक्षतं सप्तभिः प्रिये ॥ महाभयविनाशश्च जायते नात्र संशयः ॥ २२ ॥ क्रींह्रींहूँस्वाहामन्त्रेण श्मशानाग्निञ्च मन्त्रयेत् ॥ शत्रोर्गृहे प्रतिक्षिप्त्वा शत्रोर्मृत्युर्भविष्यति ॥ २३ ॥ हूँह्रींक्रीं चैव उच्चाटे पुष्पं संशोध्य सप्तधा ॥ रिपूणाञ्चैव चोच्चाटन्नयत्येव न संशयः ॥२४॥ आकर्षणे च क्रींक्रींक्रीं जप्त्वाऽक्षतम्प्रतिक्षिपेत् ॥ सहस्रयोजनस्था च शीघ्रमागच्छति प्रिये ॥ २५ ॥ क्रींक्रींक्रींहूँहूँह्रींह्रीं च कज्जलं शोधितन्तथा ॥ तिलकेन जगन्मोहं सप्तधा मन्त्रमाचरेत् २६ ॥ हृदयम्परमेशानि सर्वपापहरम्परम् ॥ अश्वमेधादिदानानाङ्कोटिकोटिगुणोत्तरम् ॥२७॥ कन्यादानादिदानानाङ्कोटिकोटिगुणम्फलम् ॥ दूतीयागादियागानाङ्कोटिकोटिफलं स्मृतम् ॥ २८ ॥ गङ्गादिसर्वतीर्था-

नाम्फलङ्कोटिगुणं स्मृतम् ।। एकधा पाठमात्रेण सत्यं सत्यम्मयोदितम् ।।२९।। कौमारीं स्वेष्टरूपेण पूजाङ् कृत्वा विधानतः ।। पठेत्स्तोत्रम्महेशानि जीवन्मुक्तस्स उच्यते ।।३०।। रजस्वलाभगन्दृष्ट्वा पठेदेकाग्रमानसः । लभते परमं स्थानन्देवीलोके वरानने ।।३१।। महादुःखे महारोगे महासङ्कटके दिने ।। महाभये महाघोरे पठेत्स्तोत्रं महोत्तमम् ।। सत्यं सत्यम्पुनस्सत्यङ्गोपयेन्मातृजारवत् ।। ३२ ।। इति हृदयं समाप्तम् ।।

अथोपनिषद्

अथ हैनाम्ब्रह्मरन्ध्रे ब्रह्मस्वरूपिणीमाप्नोति सुभगाङ्कामरेफेन्दिराँ समष्टिरूपिणीमादौ तदन्वकर्तु र्वीजद्वयकूर्चवीजन्तद्धोमषष्ठस्वरविन्दुमेलनं रूपन्तदनुभुवना द्वयभुवना तु व्यौमज्वलनेन्दिराशून्यमेलनरूपा दक्षिणे कालिके वेत्यभिमुखङ्गता तदनु वीजसप्तकमुच्चार्य्यं वृहद्भानुजामुच्चरेत । अयं सर्वमन्त्रोत्तमोत्तम इमं सकृज्जपन् स तु विश्वेश्वरः स तु नारीश्वरः स तु वेदेश्वरः स सर्वगुरुः सर्वनमस्यः सर्वेषु वेदेष्वधिश्रितो भवति स सर्वेषु तीर्थेषु स्नातो भवति सर्वेषु यज्ञेषु दीक्षितो भवति स स्वयं सदाशिवः त्रिकोणन्त्रिकोणम्पुनश्चैव त्रिकोणन्त्रिकोणन्ततो वसुदलं सार्द्धचन्द्रकेसरं युग्मशो विलिख्य सम्भृतम्भूपुरैकेन युतं सर्वज्ञेनाभ्यर्च्य तस्मिन् देवोदले रेखायां विन्यस्य ध्येया अभिनवजलदवदना घनस्तनी कुटिलदंष्ट्रा शवासना वराभयखङ्गमुण्डमण्डितहस्ता कालिका

ध्येया काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी विप्रचित्तेति षट्कोणगाः । उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता नीला घना वलाका मात्रा मुद्रा मितेति नवकोणगाः इत्थम्पञ्चदशकोणगाः । ब्राह्मी नारायणी माहेश्वरी चामुण्डा कौमारी अपराजिता वाराही नारसिंहीत्यष्टपत्रगाः । चतुष्कोणगाश्चत्वारो देवाः माधव-रुद्र-विनायक-सौराः ।। चतुर्दिक्षु इन्द्र-यम-वरुणकुबेराः । देवीं सर्वाङ्गेनादौ सम्पूज्य भगोदकेन तर्पणम्पञ्चमकारेण पूजनमेतस्याः सपर्य्यायाः किमधिकन्नो शक्यम्ब्रह्मादि पदं हेयं हेलया प्राप्नोति एतस्याः एकद्वित्रिक्रमेण मनवो भवन्ति नारिमित्रादिलक्षणमत्र वर्त्तते अमुष्यमन्त्रपाठकस्य गतिरस्ति नान्यस्येह गतिरस्ति एतस्यास्तारा मनोर्दुर्गा मनोर्वा सिद्धिः इदानीन्तु सर्वाः स्वप्नभूता असितैव जागर्ति इमामसिताज्ञामुपनिषदं यो वाऽधीते सोऽपुत्रः पुत्रीभवति निर्धनो धनायति धर्मार्थकाममोक्षाणाम्पात्रीयत्यन्यस्य वरदः दृष्ट्वा जगन्मोहयति क्रोधस्तञ्जहाति गङ्गादितीर्थक्षेत्राणामग्निष्टोमादि यज्ञानां फलभागीयति ।। इत्यथर्वणवेदे सौभाग्यकाण्डे कालिकोपनिषत्समाप्ता ।।

अथ शतनाम

भैरव उवाच

शतनाम प्रवक्ष्यामि कालिकाया वरानने ।। यस्य प्रपठनाद्वाग्मी सर्वत्र विजयी भवेत् ।।१।। काली कपालिनी कान्ता कामदा काकसुन्दरी ।। कालरात्रिः कालिका च

कालभैरवपूजिता ॥२॥ कुरुकुल्ला कामिनी च कमनीयस्वभाविनी ॥ कुलीना कूलकर्त्री च कुलवर्त्मप्रकाशिनी ,।३॥ कस्तूरीरसनीला च काम्या कामस्वरूपिणी ॥ ककारवर्णनिलया कामधेनुः करालिका ॥ ४ ॥ कुलकान्ता करालास्या कामार्त्ता च कलावती ॥ कृशोदरी च कामाख्या कौमारी कुलपालिनी ॥ ५ ॥ कुलजा कुलकन्या च कलहा कुलपूजिता ॥ कामेश्वरी कामकान्ता कुञ्जरेश्वरगामिनी ॥ ६ ॥ कामदात्री कामहर्त्री कृष्णा चैव कपर्द्दिनी ॥ कुमुदा कृष्णदेहा च कालिन्दी कुलपूजिता ॥ ७ ॥ काश्यपी कृष्णमाता च कुलिशाङ्गी कला तथा ॥ क्रींरूपा कुलगम्या च कमला कृष्णपूजिता ॥ ८ ॥ कृशाङ्गी किन्नरी कर्त्री कलकण्ठी च कार्तिकी ॥ कम्बुकण्ठी कौलिनी च कुमुदा कामजीविनी ॥ ९ ॥ कुलस्त्री कीर्त्तिका कृत्या कीर्तिश्च कुलपालिका ॥ कामदेवकला कल्पलता कामाङ्गवर्द्धिनी ॥ १० ॥ कुन्ता च कुमुदप्रीता कदम्बकुसुमोत्सुका ॥ कादम्विनी कमलिनी कृष्णानन्दप्रदायिनी ॥११॥ कुमारीपूजनरता कुमारीगणशोभिता ॥ कुमारीरञ्जनरता कुमारीव्रतधारिणी ॥ १२ ॥ कङ्काली कमनीया च कामशास्त्रविशारदा ॥ कपालखट्वाङ्गधरा कालभैरवरूपिणी ॥१३। कोटरी कोटराक्षी च काशी कैलासवासिनी ॥ कात्यायिनी कार्य्य-करी काव्यशास्त्रप्रमोदिनी ॥१४॥ कामाकर्षणरूपा च कामपीठनिवासिनी ॥ कङ्गिनी काकिनी क्रीडा कुत्सिता

कलहप्रिया ॥१५॥ कुण्डगोलोद्भावप्राणा कौशिकी कीर्ति-वर्द्धिनी ॥ कुम्भस्तनी कटाक्षा च काव्या कोकनद-प्रिया ॥ १६ ॥ कान्तारावासिनी कान्तिः कठिना कृष्ण-वल्लभा ॥ इति ते कथितन्देवि गुह्याद्गुह्यतरम्परम् ॥१७॥ प्रपठेद्यः इदन्नित्यङ्कालीनाम शताष्टकम् ॥ त्रिषु लोकेषु देवेशि तस्यासाध्यन्न विद्यते ॥ १८ ॥ प्रातःकाले च मध्याह्ने सायाह्ने च सदा निशि ॥ यः पठेत्परया भक्त्या कालीनाम शताष्टकम् ॥ १९ ॥ कालिका तस्य गेहे च संस्थानंकुरुते सदा ॥ शून्यागारे श्मशाने वा प्रान्तरे जल-मध्यतः ॥ २० ॥ वह्निमध्ये च सङ्ग्रामे तथा प्राणस्य संशये ॥ शताष्टकञ्जपन्मन्त्री लभते क्षेममुत्तमम् ॥२१॥ काली संस्थाप्य विधिवत्स्तुत्वा नामशताष्टकैः ॥ साधक-स्सिद्धिमाप्नोति कालिकायाः प्रसादतः ॥ २२ ॥

इत्यष्टोत्तरशतनाम समाप्तम् ॥

अथ भुवनेश्वरीतन्त्रम्

भुवनेश्वरी ध्यानम्

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दु किरीटां तुंग कुचां नयनत्रय-युक्ताम् ।। स्मेरमुखीं वरदांकुशपाशभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ,।

अथ यन्त्रोद्धार:

पद्ममष्टदलवाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः ।। विलिखेत्कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम् ।। चतुरस्रञ्चतुर्द्वारमेवम्मण्डलमालिखेत् ।।

अथ मन्त्रोद्धार:

नकुलीशोऽग्निमारूढो वामनेत्रार्द्धचन्द्रवत् ।। वीजं तस्याः समाख्यातं सेवितं सिद्धिकाङ्क्षिभिः ।।

अथ मन्त्र: । ॐ "ह्रीं"

अथ पूजाप्रयोग:

प्रातःकृत्यादिपीठन्यासान्तङ्कर्म विधाय केसरेषु मध्ये च पीठशक्तिन्न्यसेत् ।। ॐ जयायैनमः एवं विजयायैनमः । अजितायै० अपराजितायै० नित्यायै० विलासिन्यै० दोग्ध्र्यै०

अघोरायै० मङ्गलायै० कर्णिकायां ह्रीँ सर्वशक्तिकमलासा-
नाय नमः । ततः

अस्य भुवनेश्वरीमन्त्रस्य शक्तिः ऋषिर्गायत्री छन्दो भुवनेश्वरी देवता ह्कारो वीजम् ईकारः शक्ति रेफः कीलकं चतुर्वर्गसिद्ध्यर्थे विनियोगः । ऋष्यादिन्यासः । शिरसि शक्तये ऋषयेनमः । मुखे गायत्रीछन्दसे नमः । हृदि भुवनेश्वर्यै देवतायै नमः । गुह्ये ह्कराय वीजाय नमः । पादयोः ईकाराय शक्तये नमः । सर्वांगे रकाराय कीलकाय नमः । ततो न्यासः । शिरसि ॐ हृल्लेखायै नमः । वदने एँगगनायै नमः । हृदये ॐ रक्तायै नमः । गुह्ये ईंकरालिकायै नमः । पादयोःअं महोच्छुष्मायै नमः । ऊर्ध्वप्राग्दक्षिणोदीच्यपश्चिमेषु मुखेषु ताः विन्यसेत् । हृल्लेखाम्मूर्द्ध्नि वदने गगनां हृदयाम्बुजे ॥ रक्ताङ्करालिकाङ्गुह्ये महोच्छुष्माम्पदद्वये ॥ सत्यादिपञ्चह्रस्वाढ्या न्यस्तव्या भूत सप्रभाः ।

ततः कराङ्गन्यासौ ॥ ह्रां अगुष्ठाभ्यां नमः । ह्रीं-तर्जनीभ्यां स्वा० ।ह्रूंमध्यमाभ्यां वषट्।हैंअनामिकाभ्यां हुमः। ह्रौंकनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । हःकरतलकरपृष्ठाभ्याम्फट् ।। एवं हृदयादिषु ।। षड्दीर्घभाजा वीजेन कुर्यादङ्गक्रियाम्मनोः ।। स्वच्छन्दसङ्ग्रहे ।। स्वरं विहाय वीजन्तु दीर्घषट्केन योजयेत् । षडङ्गानि विधेयानि सर्वत्रायं विधिः स्मृतः ।।

अङ्गुलीनियमस्तु पूर्व एवोक्तः । कराङ्गन्यासे एवं क्रमः । ततः भाले ॐ गायत्रीसहितब्रह्मणे नमः । दक्षिणकपोले ॐ सावित्रीसहितविष्णवे नमः । वामकपोले ॐवागीश्वरीसहितमहेश्वराय नमः । वामकर्णे ॐश्रीसहितधनपतये नमः । मुखे ॐरतिसहितस्मराय नमः । दक्षिणकर्णोपरि ॐपुष्टिसहितगणपतये नमः । इतिन्यसेत् । एवङ्कण्ठमूले दक्षस्तनवामांसहृदयदक्षिणांसदक्षिणपार्श्ववामपार्श्वनाभिदेशेषु ब्राह्म्यादि न्यसत् ॥ वर्णभिन्नन्यासो विश्वसारे ॥ ॐकारादिनमोऽतञ्च विन्यसेत्तु यथास्थितिः ॥ विधिना विन्यसेत्सर्वं शङ्करस्य मतेन च ॥ एवं सर्वत्र । ततो ललाटे ॐ ब्राह्म्यैनमः । वामांसे ॐमाहेश्वर्यै नमः । वामपार्श्वे ॐकौमार्यै नमः । जठरे ॐवैष्णव्यै नमः । दक्षिणपार्श्वे ॐ वाराह्यै नमः । दक्षिणांसे ॐइन्द्राण्यै नमः । ककुदि ॐचामुण्डायै नमः । हृदि ॐमहालक्ष्म्यै नमः । इति विन्यस्य मूलेन व्यापकत्रयङ्कुर्यात् ॥

ततो ध्यानम् ॥ "उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ॥ स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशभीतिकराम्प्रभजे भुवनेशीम् ॥ १ ॥

एवन्ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य वहिः पूजामारभेत् ॥ पूजा यन्त्रम् ॥ पद्ममष्टदलम्वाह्ये वृत्तं षोडशभिर्दलैः ॥ विलिखेत्कर्णिकामध्ये षट्कोणमतिसुन्दरम् ॥ चतुरस्रञ्चतुर्द्वारमेवम्मण्डलमालिखेत् ॥ ततो दीक्षापद्धत्युक्तपीठ-

पूजां कृत्वा पीठशक्तीः पूजयेत् । तद्यथा । पूर्वादिकेसरेषु जयायै० विजयायै० अजितायै० अपराजितायै० नित्यायै० विलासिन्यै० दोग्ध्र्यै० अघोरायै० मध्ये मङ्गलायै० प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत् ।। तदुपरि ह्रींसर्वशक्तिकमलासनाय-नमः ।। जयाख्यां विजयां पश्चादजितां चापराजिताम् ।। नित्यां विलासिनीन्दोग्ध्रीमघोराम्मङ्गलामपि । बीजाद्य-मासनं दत्त्वा मूर्त्ति तत्रैव कल्पयेत् ।। ततः पूर्ववद्ध्यात्वाऽऽवाहनादि पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्य्यन्तं विधाय । केसरेषु ऐशान्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च । ततो ह्रीं हृदयायनमः इत्यादिना षडङ्गेन पूजयित्वा पञ्चपुष्पाञ्जलीन्दद्यात् ।।

ततः आवरणपूजा । कर्णिकामध्ये ॐहृल्लेखायैनमः ।। पूर्वे ऐंगगनायै० । दक्षिणे ॐ रुक्तायै० । उत्तरे ईंकरालिकायै० । पश्चिमे हूंमहोच्छुष्मयै० । षट्कोणे पूर्वे ॐगायत्र्यैनमः ॐब्रह्मणेनमः । नैर्ऋत्ये ॐसावित्र्यैनमः विष्णवे नमः ।। वायव्ये ॐसरस्वत्यै नमः ॐरुद्राय नमः । वह्निकोणे ॐ श्रियै नमः ॐधनपतये नमः । पश्चिमे ॐरत्यै नमः ॐस्मराय नमः । ऐशान्याम् ॐपुष्ट्यै नमः ॐगणपतये नमः । षट्कोणस्योभयपार्श्वयोः ॐ शङ्खनिधये नमः ॐपद्मनिधये-नमः । केसरेषु अग्निनैर्ऋतिवाय्वीशानाग्रेषु । चतुर्दिक्षु च ह्राँहृदयाय नम इत्यादिना षडङ्गेन पूजयेत् ।। केसरेष्वग्निकोणादि हृदयादीनि पूजयेत् । नेत्रमग्निदिशाद्यन्तं ध्यातव्याश्चाङ्गदेवता । एवं सर्वत्र ।। भैरव्यादौ तु विशेषो

वक्तव्यः । अष्टदलेषु पूर्वादिक्रमेण । ॐअनङ्गकुसुमायैनमः एवमनङ्गकुमुमातुरायै नमः अनङ्गमदनातुरायै० भुवनपालायै० गगनवेगायै० शशिरेखायै० । षोडशदलेषु पूर्वादिदिक्षु ॐकरालिन्यै० एवं विकरालिन्यै० उमायै० सरस्वत्यै० श्रियै० दुर्गायै० उषायै० लक्ष्म्यै० श्रुत्यै० स्मृत्यै० धृत्यै० श्रद्धायै० मेधायै० मत्यै० कान्त्यै० आर्य्यायै० । पद्मादबहिः पूर्वादिदिक्षु अनङ्गरूपायै अनङ्गमदनायै० मदनातुरायै० भुवनवेगायै० भुवनपालिकायै० सर्वशिशिरायै० अनङ्गवेदनायै० अनङ्गमेखलायै० प्रणवादिनमोऽन्तेन पूजयेत् । तद्बहिः गृहे पूर्वादि ॐलां इन्द्राय देवाधिपतये सायुधायेत्यादि० । रं अग्नये तेजोधिपतये सायुधायेत्यादि० । यं यमाय प्रेताधिपतये सायुधायेत्यादि० । क्षां निर्ऋतये रक्षोऽधिपतये सायुधायेत्यादि । वं वरुणाय जलाधिपतये सायुधायेत्यादि० । वां वायवे प्राणाधिपतये सायुधायेत्यादि० । सं सोमाय ताराधिपतये सायुधायेत्यादि० । हां ईशानाय गणाधिपतये सायुधायेत्यादि० । इन्द्रेशानयोर्मध्ये आब्रह्मणे प्रजाधिपतये सायु० । निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये ह्रीं अनन्ताय नागाधिपतये सायु० । तथा च लोकपाला बहिः पूज्याः समस्ताश्चतुरस्रके ॥ पुरुहूतेशयोर्मध्ये रक्षोवरुणयोस्तथा । ब्रह्मविष्णु सदा पूज्यौ दिगीशार्चां विदुर्बुधाः ॥ इन्द्रादिलोकपालानां ये मन्त्रास्ते ध्रुवादिकाः। स्वस्वबीजान्विताः सर्वे चतुर्थ्यन्तनमोऽन्तकाः ॥ इति वच-

नात् । सर्वत्र प्रणवादि । एतेषाम्बीजान्याहुः क्रियासारे । पृथ्व्यग्निपवनाद्यन्तवरुणानिलसेश्वरैः ॥ अनन्तबिन्दुसंयुक्तैरर्च्या पाशेन मायया ॥ तथा च यामले । अन्ते यज्ञे लोकपालान् मूलपारिदधान्वितान् ॥ हेतिजात्याधिपोपेतान् दिक्षु पूर्वादितो यजेत् ॥ सर्वाह्वनायेति दीपिका । तद्वहिः पूर्वादि वज्राय शक्तये दण्डाय खड्गाय पाशाय अङ्कुशाय गदायै शूलाय पद्माय चक्राय प्रणवादि नमोऽन्तेन पूजयते । ततो धूपादिविसर्जनान्तंकर्म समापयेत् । अस्य पुरश्चरणंद्वात्रिंशल्लक्षजपम्प्रजपेत् । मन्त्रद्वात्रिंशल्लक्षमानसः । त्रिस्वादुयुक्तैर्जुहुयादष्टद्रव्यैर्दशांशतः ॥ अष्टद्रव्याणि यथा । अश्वत्थोदुम्बर-प्लक्ष-न्यग्रोध-समिधस्तिलाः । सिद्धार्थ-पायसाज्यानि द्रव्याण्यष्टौ विदुर्बुधाः ॥ त्रिस्वाद्विति घृत-मधु-शर्करेति ॥ इति भुवनेश्वरी पूजापद्धतिः ॥

अथ स्तोत्रम्

अथानन्दमयीं साक्षाच्छब्दब्रह्मस्वरूपिणीम् ॥ ईडे सकलसम्पत्त्यै जगत्कारणमम्बिकाम् ॥ १ ॥ विद्यामशेषजननीमरविन्दयोनेर्विष्णोः शिवस्य च वपुः प्रतिपादयित्रीम् ॥ सृष्टिस्थितिक्षयकरीञ्जगतांत्रयाणां स्तुत्वा गिरं विमलयाम्यहमम्बिके त्वाम् ॥ २ ॥ पृथ्व्या जलेन शिखिना मरुताम्बरेण होत्रेन्दुना दिनकरेण च मूर्त्तिभाजः ॥ देवस्य मन्मथरिपोरपि शक्तिमत्ताहेतुस्त्वमेव खलु पर्वतराजपुत्रि ॥ ३ ॥ त्रिस्रोतसः सकलदेवसमर्चितायाः वैशिष्ट्यका-

रणमवैमि तदेव मातः ॥ त्वत्पादपङ्कजपरागपवित्रितासु शम्भोर्जटासु सततम्परिवर्तनं यत् ॥ ४ ॥ आनन्दयेत्कुमुदिनीमधिपः कलानान्नान्यामिनः कमलिनीमथनेतरां वा ॥ एकस्य मोदनविधौ परमेकमीष्टे त्वन्तु प्रपञ्चमभिनन्दयसि स्वदृष्टया ॥ ५ ॥ आद्याप्यशेषजगतान्नवयौवनासि शैलाधिराजतनयाप्यतिकोमलासि ॥ त्रय्याः प्रसूरपि तया न समीक्षितासि ध्येयासि गौरि मनसो न पथि स्थितासि ॥ ६ ॥ आसाद्य जन्म मनुजेषु चिराद्दुरापंतत्रापि पाटवमवाप्य निजेन्द्रियाणाम् ॥ नाभ्यर्चयन्ति जगताञ्जनयित्रि ये त्वान्निश्रेणिकाग्रमधिरुह्य पुनः पतन्ति ॥७ ॥ कर्पूरचूर्णहिमवारिविलोडितेन ये चन्दनेन कुसुमैश्च सुजातगन्धैः ॥ आराधयन्ति हि भवानि समुत्सुकास्त्वान्ते खल्वखण्ड-भुवनाधिभुवः प्रथन्ते ॥ ८ ॥ आविश्य मध्यपदवीम्प्रथमे सरोजे सुप्ता हि राजसदृशी विरचय्य विश्वम् ॥ विद्युल्लतावलयविभ्रममुद्वहन्ती पद्मानि पञ्च विदलय्य समश्नुवाना ॥ ९ ॥ तन्निर्गतामृतरसैरभिषिच्य गात्रम्मार्गेण तेन विलयम्पुनरप्यवाप्ता ॥ येषां हृदि स्फुरसि जातु न ते भवेयु र्मातर्महेश्वरकुटुम्बिनिगर्भभाजः ॥१०॥ आलम्बिकुण्डलभरामभिरामवक्त्रामापीवरस्तनतटीतनु-वृत्तमध्याम् ॥ चिन्ताक्षसूत्रकलशालिखिताढ्यहस्तामावर्त्तयामि मनसा तव गौरि मूर्तिम् ॥ ११ ॥ आस्थाय योगमविजित्य च वैरिषट्कमा-

वध्यचेन्द्रियगणम्मनसि प्रसन्ने ।। पाशाङ्कुशाभयवराढ्य-
करांशुवक्त्रामालोकयंति भुवनेश्वरि योगिनस्त्वाम्।। १२ ।।
उत्तप्तहाटकनिभीङ्करिश्चतुर्भिरावर्त्तितामृतघटैरभिषिच्य -
मानाहस्तद्वयेन नलिने रुचिरे वहन्ती पद्मापि साभयकरा भ-
वसित्वमेव ।। १३ ।। अष्टाभिरुग्रविविधायुधवाहिनीभिर्दोर्व-
ल्लरीभिरधिरुह्य मृगाधिवासम् ।। दूर्वादलद्युतिरमर्त्यविप-
क्षयक्षान्न्यक्कुर्वती त्वंमसि देवि भवानि दुर्गे ।। १४ ।।
आविर्निदाघजलशीकरशोभिवक्त्राङ्गुञ्जाफलेन परिकल्पि-
तहारयष्टिम् ।। रत्नांशुकामसितकान्तिमलङ्कृतान्त्वामा-
द्याम्पुलिन्दतरुणीमसकृन्नमामि ।। १५ ।। हंसैर्गति क्वणितनू-
पुरदूरदृष्टे मूर्तेरिवाप्तवचनैरनुगम्यमानौ ।। पद्माविवो
र्ध्वमुखरूढसुजातनालौ श्रीकण्ठपत्नि शिरसैव दधे
तवाङ्घ्री ।। १६ ।। द्वाभ्यां समीक्षितुमतृप्तिमतेव दृग्भ्या-
मुत्पाद्यता त्रिनयनं वृषकेतनेन ।। सान्द्रानुरागभवनेन
निरीक्ष्यमाणे जंघे उभे अपि भवानि तवानतोऽस्मि ।।१७।।
उरू स्मरामि जितहस्तिकरावलेपौ स्थौल्येन मार्दवतया
परिभूतरम्भौ ।। श्रोणीभरस्य सहनौ परिकल्प्य दत्तौ
स्तम्भाविवाङ्गवयसा तव मध्यमेन ।। १८ ।। श्रोण्यौ स्तनौ
च युगपत्प्रथयिष्यतोच्चैर्बाल्यात्परेण वयसा परिकृष्णसारः ।।
रोमावलीविलसितेन विभाव्यमूर्त्तिर्मध्यन्तव स्फुरतु मे
हृदयस्य मध्ये ।। १९ ।। सख्यास्स्मरस्य हरनेत्रहुताशभीरो-
र्लावण्यवारिभरितन्नवयौवनेन ।। आपाद्यदत्तमिव पल्लव-

मप्रविष्टन्नाभिङ्कदापि तव देवि न विस्मरेयम् ॥ २० ॥ ईशोपि गेहपिशुनम्भसितन्दधाने काश्मीरकर्दममनुस्तनपङ्कजे ते ॥ स्नानोत्थितस्य करिणः क्षणलक्षफेनौ सिन्दूरितौ स्मरयतः समदस्य कुम्भौ ॥ २१ ॥ कण्ठातिरिक्तगलदुज्ज्वलकांतिधारा शोभौ भुजौ निजरिपोर्मकरध्वजेन कण्ठग्रहाय रचितौ किलदीर्घपाशौ मातर्मम स्मृतिपथन्न विलज्येताम् ॥ २२ ॥ नात्यायतं रुचिरकम्बुविलासचौर्य्यं भूषाभरेण विविधेन विराजमानम् ॥ कण्ठमनोहरगुणङ्गिरिराजकन्ये सञ्चिन्त्य तृप्तिमुपयामि कदापि नाहम् ॥२३॥ अत्यायताक्षमभिजातललाटपट्टम्मन्दस्मितेन दरफुल्लकपोलरेखम् ॥ विम्बाधरं खलु समुन्नतदीर्घनासं यत्ते स्मरत्यसकृदम्ब स एव जातः ॥२४॥ आविस्त्वयारकरलेखमनल्पगन्धपुष्पोपरिभ्रमदलिव्रजनिर्विशेषम् ॥ यश्चेतसा कलयते तव केशपाशं तस्य स्वयङ्गलति देवि पुराणपाशः ॥२५॥ श्रुतिसुरचितपाकन्धीमतां स्तोत्रमेतत् पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा ॥ स भवति पदमुच्चै-स्सम्पदाम्पादनम्रक्षितिपमुकुटलक्ष्मीर्लक्षणानाञ्चिराय ॥२६॥

इति भुवनेश्वरीस्तोत्रं समाप्तम् ॥

अथ कवचम्

देव्युवाच ॥ भुवनेश्याश्च देवेश या या विद्याः प्रकाशिताः ॥ श्रुताश्चाधिगताः सर्वाः श्रोतुमिच्छामि साम्प्रतम् ॥१॥ त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कवचं यत्पुरोदितम् ॥

ईश्वर उवाच । श्रृणु पार्वती वक्ष्यामि सावधानाऽव-
धारय ॥२॥ त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कवचम्मन्त्रविग्रहम् ।
सिद्धविद्यामयन्देवि सर्वैश्वर्यप्रदायकम् ॥३॥ पठनाद्धार-
णान्मर्त्त्यस्त्रैलोक्यैश्वर्यभाग्भवेत् ॥ ४ ॥ त्रैलोक्यमङ्गल-
स्यास्य कवचस्य ऋषिश्शिवः ॥ छन्दोविराड् जगद्धात्री
देवता भुवनेश्वरी ॥ ५ ॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः
प्रकीर्तितः ॥ ह्लींबीजम्मेशिरः पातु भुवनेशी ललाट-
कम् ॥६॥ ऐंपातु दक्षनेत्रम्मे ह्लींपातु वामलोचनम् ॥
श्रींपातु दक्षकर्णम्मे त्रिवर्णात्मा महेश्वरी ॥७॥ वामकर्णं
सदा पातु ऐंघ्राणम्पातु मे सदा ॥ ह्लींपातु वदनन्देवी
ऐंपातु रसनाम्मम ॥८॥ वाक्पुटा च त्रिवर्णात्मा कण्ठम्पातु
पराम्बिका ॥ श्रीं स्कन्धौ पातु नियतं ह्लीं भुजौ पातु
सर्वदा ॥ ९ ॥ क्लीं करौ त्रिपुटेशानो त्रिपुटैश्वर्य्यदायिनी ।
ओम्पातु हृदयं ह्लीं मे मध्यदेशं सदाऽवतु ॥ १० ॥ क्रौंपातु
नाभिदेशं सा त्र्यक्षरी भुवनेश्वरी । सर्वबीजप्रदा पृष्टं
पातु सर्ववशङ्करी ॥ ११ ॥ ह्लीं पातु गुददेशम्मे नमो
भगवती कटीम् । माहेश्वरी सदा पातु सक्थिनी जानु-
युग्मकम् ॥ १२ ॥ अन्नपूर्णा सदा पातु स्वाहा पातु
पदद्वयम् । सप्तदशाक्षरी पायादन्नपूर्णात्मिका पुरा ॥ १३ ॥
तारम्माया रमा कामः षोडशार्णा ततः परम् ॥ शिरःस्था
सर्वदा पातु विंशत्यर्णात्मिका परा ॥ १४ ॥ तारदुर्गे युगं
रक्षिणी स्वाहेति दशाक्षरी ॥ जय दुर्गा घनश्यामा पातु

माम्पूर्वती मुदा ॥ १५ ॥ मायाबीजादिका चैषा दशार्णा परा तथा ॥ उत्तप्तकाञ्चनाभासा जयदुर्गाननेऽवतु ॥१६॥ तारं ह्रीं दुन्दुर्गायै नमोऽष्टार्णात्मिका परा ॥ शंङ्खचक्रधनुर्बाणधरामांदक्षिणेऽवतु ॥ १७ ॥ महिषामर्दिनी स्वाहा वसुवर्णात्मिका परा । नैर्ऋत्यां सर्वदा पातु महिषासुरनाशिनी ॥ १८ ॥ मायापद्मावती स्वाहा सप्तार्णा परिकीर्त्तिता । पद्मावती पद्मसंस्था पश्चिमे मां सदावतु ॥ १९ ॥ पाशाङ्कुशपुटा माये हि परमेश्वरी स्वाहा ॥ त्रयोदशार्णा ताराद्या अश्वारूढाननेऽवतु ॥ २० ॥ सरस्वतीपञ्चशरे नित्यक्लिन्ने मदद्रवे ॥ स्वाहारव्यक्षरीविद्या मामुत्तरे सदावतु ॥ २१ ॥ तारम्माया तु कवचं खे रक्षेत्सततं वधूः ॥ हूँ क्षे ह्रीं फट् महाविद्या द्वादशार्णाखिलप्रदा ॥ २२ ॥ त्वरिताष्टाहिभिः पायाच्छिवकोणे सदा च माम् ॥ ऐंक्लींसौःसा ततो वाला मामूर्ध्वदेशतोऽवतु ॥ २३ ॥ विन्द्वन्ता भैरवी वाला भूमौ च मां सदावतु ॥ इति ते कथितम्पुण्यं त्रैलोक्यमङ्गलम्परम् ॥ २४ ॥ सारं सारतरम्पुण्यम्महाविद्यौघ विग्रहम् ॥ अस्यापि पठनात्सद्यः कुबेरोपि धनेश्वरः ॥ २५ ॥ इन्द्राद्याः सकला देवा पठनाद्धारणाद्यतः ॥ सर्वसिद्धीश्वराः सन्तः सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः ॥ २६ ॥ पुष्पाञ्जल्यष्टकंदत्त्वा मूलेनैव पठेत्सकृत ॥ सवंत्सरकृतायास्तु पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥ २७ ॥ प्रीतिमन्योन्यतः कृत्वा कमला निश्चला

गृहे ॥ वाणी च निवसेद्वक्त्रे सत्यं सत्यन्न संशयः ॥ २८ ॥ यो धारयति पुण्यात्मा त्रैलोक्यमङ्गलाभिधम् । कवचं-परमम्पुण्यं सोऽपि पुण्यवतां वरः ॥ २९ ॥ सर्वैश्वर्य्ययुतो भूत्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥ पुरुषो दक्षिणे बाहौ नारी वामभुजे तथा ॥ ३० ॥ बहुपुत्रवती भूत्वा वन्ध्यापि लभते सुतम् । ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तं जनम् ॥३२॥ एतत्कवचमज्ञात्वा यो जपेद्भुवनेश्वरीम् ॥ दारिद्र यम्परमम्प्राप्य सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात् ॥ ३२ ॥ इति रुद्रयामले देवीश्वरसंवादे त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम भुवनेश्वरीकवचं समाप्तम् ॥

अथ हृदयम्

देव्युवाच ॥ भगवन्ब्रूहि तत्स्तोत्रं सर्वकामप्रसाधनम् ॥ तस्यश्रवणमात्रेण नान्यच्छ्रोतव्यमिष्यते ॥ १ ॥ यदि मेऽनुग्रहः कार्य्यः प्रीतिश्चापि ममोपरि ॥ तदिदंकथय ब्रह्मन् विमलं यन्महीतले ॥ २ ॥ ईश्वर उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि सर्वकामप्रसाधनम् ॥ हृदयम्भुवनेश्वर्यास्स्तोत्रमस्ति यशोद-यम् ॥ ३ ॥

ॐ अस्य श्रीभुवनेश्वरीहृदयस्तोत्रमन्त्रस्य शक्तिऋर्षि-र्गायत्रीच्छन्दो भुवनेश्वरी देवता हकारो बीजं ईकारः शक्तिः रेफः कीलकं सकलमनोवाञ्छितसिद्धयर्थे पाठे विनियोगः ॥

अथाङ्गन्यासः ॥ ॐ ह्रीं हृदयाय नमः । ॐश्रीं शिरसे-

स्वाहा । ॐ ऐं शिखायै वषट् । ॐ ह्रीं कवचाय हुम् । ॐ ऐं-अस्त्राय फट् ।। एवङ्करन्यासः ।।

अथ ध्यानम् ।। ध्यायेद्ब्रह्मादिकानांकृतजनि जननीं योगिनीं योगयोनिंदेवानाञ्जीवनायोज्ज्वलितजयपरज्योतिरुग्राङ्गधात्रीम् ।। शङ्खञ्चक्रञ्च बाणान्धनुरपि दधतीं-दोश्चतुष्काम्बुजातैर्मायामाद्यां विशिष्टाम्भवभवभुवनाम्भूभवाभारभूमिम् ।। ४ ।। यदाज्ञया यो-जगदाद्यशेषं सृजत्यजरश्रीपतिरौरसं वा ।। बिभर्त्ति संहन्ति भवस्तदन्ते भजामहे श्रीभुवनेश्वरीन्ताम् ।। ५ ।। जगज्जनानन्दकरीञ्जयाख्यां यशस्विनीं यन्त्रसुयज्ञयोनिम् ।। जितामितामित्रकृतप्रपञ्चाम्भजामहे श्रीभुवनेश्वरीन्ताम् ।। ६ ।। हरौ प्रसुप्ते भुवनत्रयान्ते अबातरन्नाभिजपद्मजन्मा ।। विधिस्ततोऽन्धे विदधारयत्पदम्भजामहे श्रीभुवनेश्वरीन्ताम् ।। ७ ।। न विद्यते कापि तु जन्म यस्याः न वा स्थितिस्सान्ततिकीह यस्याः ।। न वा निरोधेऽखिलकर्म यस्याः भजामहे० ।।८।। कटाक्षमोक्षाचरणोग्रवित्ता निवेशितार्णाः करुणार्द्रचित्ता सुभक्तये एति समीप्सितं या भजामहे० ।। ९ ।। यतो जगज्जन्म बभूव योनेस्तदेव मध्ये प्रतिपाति यां वा । तदत्ति यान्तेऽखिलमुग्रकाली भजामहे० १०।। ।। सुषुप्तिकाले जनमध्ययन्त्या यया जनस्वप्नमवैति किञ्चित् ।। प्रबुद्धयते जाग्रति जीव एष भजामहे० ।। ११ ।। दयास्फुरत्कोरकटाक्षलाभान्न के त्रयस्याः प्रलभन्ति सिद्धाः ।। कवि-

त्वमीशित्वमपि स्वतन्त्रा भजामहे० ॥ १२ ॥ लसन्मुखा-
म्भोरुहमुत्फुरन्तं हृदि प्रणिध्याय दिशि स्फुरन्तः ॥ यस्याः
कृपार्द्रम्प्रविकाशयन्ति भजामहे० ॥ १३ ॥
यदानुरागानुगतालिचित्राश्चिरन्तनप्रेमपरिप्लुताङ्गाः ॥
सुनिर्भयास्सन्ति प्रमुद्य यस्याः भजामहे० ॥ १४ ॥ हरि-
विरञ्चिहर्हर ईशितारः पुरोऽवतिष्ठन्ति परंनताङ्गाः ॥
यस्यास्समिच्छन्ति सदानुकूल्यम्भजामहे० ॥ १५ ॥ मनुं
यदीयं हरमग्निसंस्थंततश्च वामश्रुतिचन्द्रशक्तम् ॥ जपन्ति
ये स्युस्सुरवन्दितास्ते भजामहे० ॥ १६ ॥ प्रसीदतु प्रेम-
रसार्द्रचित्ता सदा हि सा श्रीभुवनेश्वरी मे ॥ कृपाकटाक्षेण
कुवेरकल्पा भवन्ति यस्या पदभक्तिभाजः ॥ १७ ॥ मुदा
सुपाट्यम्भुवनेश्वरीयं सदा सतां स्तोत्रमिदं सुसेव्यम् ॥
सुखप्रदं स्यात्कलिकल्मषघ्नं सुश्रृण्वतां सम्पठताम्प्र-
शस्यम् ॥ १८ ॥ एतत्तु हृदयस्तोत्रम्पठेद्यस्तु समाहितः ॥
भवेत्तस्येष्टदा देवी प्रसन्ना भुवनेश्वरी ॥ १९ ॥ ददाति
धनमायुष्यम्पुण्यमतिन्तथा ॥ नैष्ठिकींदेवभक्तिञ्च गुरु-
भक्तिं विशेषतः ॥ २० ॥ पूर्णिमायाञ्चतुर्दश्यांकुजवारे
विशेषतः ॥ पठनीयमिदं स्तोत्रन्देवसद्मनि यत्नतः ॥ २१ ॥
यत्र कुत्रापि पाठेन स्तोत्रस्यास्य फलम्भवेत् ॥ सर्वस्थानेषु
देवेश्याः पूतदेहस्सदा पठेत् ॥ २२ ॥ इति नीलसरस्वती-
तन्त्रे भुवनेश्वरीपटले श्रीदेवीश्वरसंवादे श्रीभुवनेश्वरी-
हृदयस्तोत्रं समाप्तम् ॥

अथ शतनाम

कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नोपशोभिते ।। नरनारी-हितार्थाय शिवम्पप्रच्छ पार्वती ।। १ ।। देव्युवाच ।। भुवनेश्वरी महाविद्यानाम्नामष्टोत्तरं शतम् । कथयस्व महादेव यद्यहं तव वल्लभा ।। २ ।। ईश्वर उवाच ।। श्रृणु देवि महाभागे स्तवराजमिदं शुभम् ।। सहस्रनाम्ना-मधिकं सिद्धिदम्मोक्षहेतुकम् ।। ३ ।। शुचिभिः प्रातरुत्थाय पठितव्यं समाहितैः ।। त्रिकालं श्रद्धया युक्तैः सर्वकाम-फलप्रदम् ।। ४ ।।

ॐ अस्य श्रीभुवनेश्वर्य्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रस्य शक्तिर्ऋषिर्गायत्री छन्दो भुवनेश्वरी देवता चतुर्वर्ग-साधने जपे विनियोगः ।। महामाया महाविद्या महायोगा महोत्कटा ।। माहेश्वरी कुमारी च ब्रह्माणी ब्रह्मरूपिणी ।। ५ ।। वागीश्वरी योगरूपा योगिनीकोटि-सेविता ।। जया च विजया चैव कौमारी सर्वमङ्गला ।। ६ ।। हिङ्गुला च विलासी च ज्वालिनी ज्वालरूपिणी ।। ईश्वरी क्रूरसंहारी कुलमार्गप्रदायिनी ।। ७ ।। वैष्णवी सुभगाकारी सुकुल्या कुलपूजिता ।। वामाङ्गा वामचारा च वामदेवप्रिया तथा ।। ८ ।। डाकिनीयोगिनीरूपा भूतेशी भूतनायिका ।। पद्मावती पद्मनेत्रा प्रबुद्धा च सरस्वती ।। ९ ।। भूचरी खेचरी माया मातङ्गी भुवने-श्वरी ।। कांता पतिव्रता साक्षी सुचक्षुः कुंडवासिनी ।।१०।।

उमा कुमारी लोकेशी सुकेशी पद्मरागिणी ।। इन्द्राणी ब्रह्मचाण्डाली चण्डिका वायुवल्लभा ।। ११ ।। सर्वधातृमयीमूर्त्तिर्जलरूपा जलोदरी ।। आकाशी रणगा चैव नृकपालविभूषणा ।। १२ ।। नर्मदा मोक्षदा चैव कामधर्मार्थदायिनी ।। गायत्री चाथ सावित्री त्रिसन्ध्या तीर्थगामिनी ।। १३ ।। अष्टमी नवमी चैव दशम्येकादशी तथा। पौर्णमासी कुहूरूपा तिथिमूर्त्तिस्वरूपिणी ।। १४ ।। सुरारिनाशकारी च उग्ररूपा च वत्सला ।। अनला अर्द्धमात्रा च अरुणा पीतलोचना ।। १५ ।। लज्जा सरस्वती विद्या भवानी पापनाशिनी ।। नागपाशधरा मूर्त्तिरगाधा धृतकुण्डला ।।१६।। क्षत्ररूपी क्षयकरी तेजस्विनी शुचि स्मिता। अव्यक्ताव्यक्तलोका च शम्भुरूपा मनस्विनी ।। १७ ।। मातङ्गी मत्तमातङ्गी महादेवप्रिया सदा।। दैत्यहा चैव वाराही सर्वशास्त्रमयी शुभा ।। १८ ।। य इदम्पठते भक्त्या शृणुयाद्वा समाहितः ।। अपुत्रो लभते पुत्रं निर्धनो धनवान् भवेत् ।। १९ ।। मूर्खोपि लभते शास्त्रञ्चौरोपि लभते गतिम् ।। वेदानाम्पाठको विप्रः क्षत्रियो विजयी भवेत् ।। २० ।। वैश्यस्तु धनवान्भूयाच्छूद्रस्तु सुखमेधते। अष्टम्यांच चतुर्दश्यां नवम्यां चैव चेतसः ।। २१ ।। ये पठन्ति सदाभक्त्या न ते वै दुःखभागिनः। एककालं द्विकालं वा त्रिकालं वा चतुर्थकम् ।।२२।। ये पठन्ति सदा भक्त्या स्वर्गलोके च पूजितः। रुद्रं दृष्ट्वा यथा देवाः पन्नगाः गरुडं यथा। शत्रवः प्रपलायन्ते तस्य वक्त्रविलोकनात् ।।

इति श्रीरुद्रयामले देवीशंकर संवादे भुवनेश्वरी अष्टोत्तर शत नामस्तोत्रसमाप्तम् ।।

3. अथछिन्नमस्तकातन्त्रम्

ध्यानम्

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्तृकाम् । दिग्वस्त्रां स्वकवन्धशोणितसुधाधारांपिवन्तीं मुदा । नागावद्धशिरोमणित्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां । रत्यासक्त मनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जवासन्निभाम् । दक्षे चातिसितावियुक्तचिकुराकर्त्री तथा खप्परं हस्ताभ्यां दधती रजोगुणभवा नाम्नापि सा वर्णिनी । देव्याः छिन्नकवन्धतः पतदसृग्धारां पिवन्ती मुदा । नागाबद्ध शिरोमणिः मनुविदा ध्येया सदा सा सुरैः । प्रत्यालीढपदा कवन्धविगलद्रक्तं पिवन्ती मुदा । सैषा सा प्रलये समस्तभुवनं भोक्तुं क्षमा तामसी । शक्तिः सापि परात्परा भगवती नाम्नापरा डाकिनी । ध्येया ध्यानपरा सदा सविनयं भक्तेष्ट भूतिप्रदा ॥

अथ यन्त्रोद्धारः

त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम् ॥ तन्मध्ये विन्यसेद्योनिंद्वारत्रयसमन्विताम् ॥ बहिरष्टदलंपद्मम्भूबिम्बत्रियतयम्पुनः ॥ कूर्चंबीजं लिखेन्मध्ये त्रिकोणे फट्समन्वितम् ॥

अथ मन्त्रोद्धारः

लक्ष्मी प्रथमबीजेऽस्ति लज्जाबीजे मनोभवः ।। तृतीयेऽस्मिन्सदा देवी महापातकनाशिनी ।। चतुर्थे तु गुणातीता मुक्तिविद्याप्रदायिका ।। वकारे वरुणः साक्षाज्जकारे तु सुराधिपः ।। रेफे हुताशनो देवो वकारे वसुधाधिपः ।। ऐकारे त्रिपुरादेवी रेफे त्रिपुरसुन्दरी ।। त्रैलोक्यविजया देवी सदै वौकारसंस्थिता ।। चकारे चन्द्रमा देवो नकारे हि विनायकः ।। ईकारे कमला साक्षाद्यकारे च सरस्वती । मायायुग्मे सदा देवी प्रकृत्या सह सङ्गता ।। वैखरी चैव फट्कारे स्वाकारे कुसुमायुधः ।। हाकारे च रतिस्तिष्ठेदेवं मन्त्रसमुच्चये ।।

अथ मन्त्रः

ओं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं वैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा ॥

अथ पूजाविधिः

प्रातः कृत्यादिकङ्कृत्वा मन्त्राचमनं कुर्य्यात् ॥ यथा । लक्ष्मीमायाकूर्च्चवीजैस्त्रिभिः पीत्वाम्वुसाधकः ॥ वाग्भवेनोष्ठौ सम्मृज्य मायाभ्यान्तु द्विरुन्मृजेत् ॥ कूर्च्चेन क्षालयेत्पाणी एभिमन्त्रैश्च विन्यसेत् ॥ श्रीमायाकूर्च्चवाक्कामत्रिपुटाभगवर्णकैः ॥ कामकलाकुशाभ्याञ्च वक्त्रनासाक्षिकर्णकान् ॥ नाभिहृन्मस्तकञ्चांसौ स्पृष्टा शम्भुर्भवेत्क्षणात् ॥ आचम्यैवछिन्नस्तं वत्सरानाम्प्रपश्यति ॥ ततः प्राणायामान्तं विधाय षोढान्यासङ्कुर्यात् ॥ मन्त्रषोढान्ततः कुर्यात्त्रैलोक्यवशकारिणीम् ॥ श्रीवालात्रिपुटायोनी प्रसादप्रणवैस्तथा ॥ कालीवध्वङ्कुशैः कामकलाकूर्चास्त्रकैः क्रमात् ॥ षोडशी मनुवर्णैश्च पृथगष्टादशाक्षरी ॥ एभिर्वीजैर्मातृकार्णां स्वेषु स्थानेषु विन्यसेत् । एषा ब्रह्मस्वरूपा हि वीजषौढा प्रकीर्तिता ॥ अस्याः संन्यसनात्सर्वे वज्रदेहा भवन्ति हि ॥ सर्वैश्वर्ययुतास्ते हि जीवनमुक्ताः दशाब्दतः ॥ ततः विनियोगः ॥

अस्य मन्त्रस्य भैरव ऋषिः सम्राट्छन्दः छिन्नमस्ता देवता हूंकारद्वयं बीजं स्वाहा शक्तिरभीष्टार्थसिद्धये विनियोगः । ऋष्यादिन्यासः यथा ॥ शिरसि भैरवऋषये-नमः । मुखे सम्राट्छन्दसेनमः । हृदि छिन्नमस्तादेवतायै

नमः । गुह्ये हूं हुंवीजायनमः । पादयोः स्वाहाशक्तयेनमः ॥ ततः कराङ्गन्यासौ । ओं आंखड्गायहृदयायस्वाहा इति कनीयस्योः । ओंईंसुखड्गायशिरसे स्वाहा इतिपवित्राङ्गुल्योः । ओंऊँसुवज्रायशिखायैस्वाहा इतिमध्यमयोः । ओंऐंपाशाय कवचाय स्वाहा इतितर्जन्योः । ओंऔंअङ्कुशायनेत्रत्रयाय स्वाहा इत्यङ्गुष्ठयोः । ओंअः सुरक्षारक्षासुरक्षायास्त्रायफट्इतिकरतलकरपृष्ठयोः । एवं हृदयादिषु ॥ तदुक्तम्भैरवतन्त्रे । उच्चरेत्पूर्वमाकारम्विन्दुलाञ्छितमस्तकम् । खड्गायहृदयायेति स्वाहा युक्तङ्कनीयसि ॥ ईंकारश्च ततो देवि चन्द्रकोटिसमप्रभम् ॥ सुखड्गाय ततो वाच्यं शिरसे तदनन्तरम् ॥ स्वाहायुक्तन्ततो वाच्यम्पवित्राङ्गुलिसँयुतम् ॥ ओंकारञ्च ततो वाच्यम्विन्दुलाञ्छितमस्तकम् ॥ सुवज्राय ततो वाच्यं शिखायै तदनन्तरम् ॥ स्वाहान्तंमध्यमायाञ्च विन्यसेत्तदनन्तरम् ॥ मात्रांद्वादशिकांदेवीं विन्यसेच्च ततः परम् ॥ पाशायेति समुच्चार्य्य प्रवदेत्कवचाय च । स्वाहान्तं विन्यसेन्मन्त्रन्तर्जन्यान्तदनन्तरम् ॥ ओंकारञ्च ततो देवि चाङ्कुशन्तदनन्तरम् ॥ नेत्रत्रयायस्वाहान्तमङ्गुष्ठे करयोः द्वयोः ॥ अकारश्च विसर्गान्तं सुरक्षारक्षसँयुतम् ॥ अःसुरक्षायसंय्युक्तमस्त्रायेति ततः परम् ॥ षडक्षरसमायुक्तं विन्यसेत्करयोर्द्वयोः ॥ हृदि मूर्ध्नि शिखायाञ्च कवचे नेत्रमण्डले ॥ यावदस्त्रश्चतुर्दिक्षु विदिक्षु च यथाक्रमम् ॥ त्रिशक्तितन्त्रे भैरववाक्यम् ॥

उच्चरेत्प्रणवम्पूर्वमाकारंबिन्दुसँयुतम् । इत्यादिवाक्यात् कराङ्गेषु प्रणवसंवलितो न्यासः ॥ ततो मूलेन मस्तकादिपादपर्यन्तम्पादादिमस्तकपर्य्यन्तं वारत्रयन्न्यसेत् ॥ ततो ध्यानम् ॥ स्वनाभौ नीरजंध्यायेदर्द्धं विकसितं सितम् ॥ तत्पद्मकोशमध्ये तु मण्डलञ्चण्डरोचिषः ॥ जपाकुसुमसङ्काशं रक्तबन्धूकसन्निभम् ॥ रजःसत्त्वतमोरेखा योनिमण्डलमण्डितम् ॥ मध्ये तु ताम्महादेवीं सूर्यकोटिसमप्रभाम् ॥ छिन्नमस्ताङ्करे वामे धारयन्तीं स्वमस्तकम्। प्रसारितमुखीन्देवीं लेलिहानाग्रजिह्विकाम् ॥ पिवन्तीं रौधिरीन्धारान्निजकण्ठविनिर्गताम् ॥ विकीर्णकेशपाशाञ्च नानापुष्पसमन्विताम् ॥ दक्षिणे च करे कर्त्रीम्मुण्डमालाविभूषिताम् ॥ दिगम्वराम्महाघोराम्प्रत्यालीढपदे स्थिताम् ॥ अस्थिमालाधरान्देवीन्नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥ रतिकामोपरिष्ठाञ्च सदा ध्यायन्ति मन्त्रिणः ॥ सदा षोडशवर्षीयाम्पीनोन्नतपयोधराम् ॥ विपरीतरतासक्तो ध्यायेद्रतिमनोभवौ ॥ डाकिनीवर्णिनीयुक्तं वामदक्षिणयोगतः ॥ देवीगलोच्छलद्रक्तधारापानम्प्रकुर्वतीम् ॥ वर्णिनीलोहितां सौम्याम्मुक्तकेशीन्दिगम्बराम् ॥ कपालकर्तृकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ॥ नागयज्ञोपवीताढ्यांज्वलत्तेजोमयीमिव ॥ प्रत्यालीढपदां विद्यान्नानलाङ्कारभूषिताम् ॥ सदा द्वादशवर्षीयामस्थिमालाविभूषिताम् ॥ डाकिनी वामपार्श्वे तु कल्पसूर्य्यानलोपमाम् ॥ विद्युज्ज-

जटान्त्रिनयनान्दन्तपङ्क्तबलाकिनीम् ।। दंष्ट्राकरालवदना-
म्पीनोन्नतपयोधराम् ।। महादेवीम्महाघोराम्मुक्तकेशी-
न्दिगम्बराम् ।। लेलिहानमहाजिह्वाम्मुण्डमालाविभूषिताम् ।।
कपालकर्तृकाहस्तां वामदक्षिणयोगतः ।। देवीङ्गलोच्छ-
लद्रक्तधारापानम्प्रकुर्वतीम् ।: करस्थितकपालेन भीषणे
नातिभीषणाम् ।। आभ्यान्निषेवमाणान्तान्ध्यायेद्देवीं
विचक्षणः ।। ध्यानस्यावश्यकत्वमाह तन्त्रे । प्रचण्डचण्डि-
कामेवमध्यात्वा यस्तु पूजयेत् । सद्यस्तस्य शिरश्छित्त्वा
देवी पिवति शोंणितम् ।। पिवति तेन मुखेनेति शेषः ।
तथा च । स्वमस्तकं सखप्परं रक्तधाराभिपूरितम् ।।
ललज्जिह्वम्महाभीमन्धृतं वामभुजे तथा ।। इति भैरव-
तन्त्रे । तत्रैव । सितङ्कुर्यादलम्पूर्वमाग्नेयं रक्तर्णकम् ।।
याम्यङ्कृष्णमत पीतं शुक्लं रक्तं सितासितम् ।। तत
पीताम्प्रकुर्वीत कर्णिकान्तस्य मध्यगाम् ।। तन्मध्ये तु
प्रकुर्वीत मण्डलञ्चडंरोचिषः ।। रजःसत्त्वतमोरेखा रक्ता
शुक्लाऽसिता क्रमात् ।। मायायुग्मन्ततो न्यस्य षडक्षरसम-
न्वितम् ।। वाह्यन्तस्य च चक्रस्य कुर्यात्प्राकारवेष्टितम् ।।
पूर्वरक्तन्ततः कृष्णं सितम्पीतं यथाक्रमम् ।। चतुर्द्वार-
समायुक्तङ्क्षेत्रपालैरधिष्ठितम् ।। इत्यस्या पूजायन्त्रम् ।।
यथा वा ।। त्रिकोणं विन्यसेदादौ तन्मध्ये मण्डलत्रयम् ।।
तन्मध्ये विन्यसेद्योनिन्द्वारत्रयसमन्विताम् ।। बहिरष्ट-
दलम्पद्ममम्भूबिम्बत्रितयम्पुनः ।। कूर्चबीजं लिखेन्मध्ये

त्रिकोणे फट्समन्वितम् ॥ यद्वा एतद्ध्यानोक्तँ यन्त्रम् ॥ तथाच । अपरञ्च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथा-क्रमम् ॥ स्वनाभौ नीरजं ध्यायेद्भानुमण्डलसन्निभम् ॥ योनिचक्र-समायुक्तङ्गुणत्रितयसंज्ञितम् ॥ तत्र मध्ये महादेवीञ्छिन्नमस्तां स्मरेद्यतिः ॥ प्रदीपकलिकाकारामद्वितीयव्यवस्थिताम् ॥ योनि-मुद्रासमायुक्तां हृदयस्थितलोचनाम् ॥ ध्येयमेतद्यतीनाञ्च गृहस्थानान्निशामय ॥ यथा । अन्तरे स्वशरीरस्य नाभिनीरजसङ्गताम् ॥ निर्लेपान्निर्गुणां सूक्ष्माम्बालचन्द्रसमप्रभाम् ॥ समाधिमात्रगम्यां तु गुणत्रितयवेष्टिताम् ॥ कलातीताङ्गुणातीताम्मुक्तिमात्रप्रदायिनीम् ॥ एवन्ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य तारिणीवच्छङ्खस्थापनङ्कुर्य्यात् ॥ ततः पीठपूजा ॥ आधारशक्तयेनमः प्रकृतयेनमः कूर्म्माय० अनन्ताय० पृथिव्यै० क्षीरसमुद्राय० रत्नद्वीपाय० कल्पवृक्षाय० । तदधः स्वर्णसिंहासनाय० आनन्दकन्दाय० सम्बिल्वलाय० सर्व्व- तत्त्वात्मकपद्माय० संसत्त्वाय० रंरजसे० तंतमसे० आँआत्मने० अंअन्तरात्मने० पंपरात्मने० ह्रींज्ञानात्मने नमः । पद्ममध्ये रति-कामार्त्ता । भैरवमते तु । आधारशक्तिङ्कूर्म्मन्तु नागराजमतः परम् ॥ पद्मनालञ्च पद्मञ्च पूजयेन्मन्त्रविन्नरः ॥ मण्डलञ्चतुरस्रन्तु रजस्सत्त्वन्तमस्तथा ॥ रतिकामौ च सम्पूज्य शक्तिपूजां समाचरेत् ॥ रतिकामोपरि वज्रवैरोचनीये देहि २, एहि २,

गृह्ण २, मम सिद्धिन्देहि २, मम शत्रून् मारय २, करालिके हूँ फट्स्वाहा इति पीठमन्त्रस्सर्वत्र प्रणवादिनमोन्तेन पूजयेत् ॥ पुनर्ध्यात्वा-ऽऽवाहयेत् सर्वसिद्धिडाकिनीये वज्रवैरोचनीये-इहावह आवह ॥ पुनस्तन्मन्त्रमुच्चार्य्यं इहतिष्ठ २, इह सन्निधेहि, इह सन्निरुध्यस्व इत्यनेनावाह्य ॐआँह्रींक्रोंहंसः इत्यनेन प्राणप्रतिष्ठां कृत्वा । ॐआंषडङ्गाय हृदयायस्वाहा ॥ इत्यादिना षडङ्गँ विन्यस्य यथाशक्ति पूजांकृत्वा वलिन्ददद्यात् । तथा । वज्रवैरोचनीये देहि २ , एहि २, गृह्ण २, वलिम्मम सिद्धिन्देहि २, मम शत्रून्मारय मारय, करालिके हूँ फट्स्वाहा ॥ २ इतिमन्त्रेण ततो देव्या दक्षिणे ॐडाकिन्यै० ॥ ततो देव्यङ्गे षडङ्गं सम्पूज्य दक्षिणे ॐशङ्खनिधयेनमः, वामे ॐपद्मनिधयेनमः, पूर्वादिदिक्षु लक्ष्मीं लज्जाम्मायाँ वाणीञ्च पूजयेत् । विदिक्षु ब्रह्मविष्णुरुद्रेश्वरान्, मध्ये सदाशिवं, सर्वत्र प्रणवादिनमोन्तेन पूजयेत् । ततः पञ्चपुष्पाञ्जलीन्दत्वा आवरणान्पूजयेत् ॥ अग्नीशासुरवायुषु मध्ये दिक्षु च ॐ आँखड्गायहृदयायस्वाहा इत्यादिना षडङ्गानि सम्पूज्य अष्टपत्रेषु पूर्वादिक्रमेण ॐह्रींकाल्यैनमः एवं वर्णिन्यै० डाकिन्यै० भैरव्यै० महाभैरव्यै० इन्द्राक्ष्यै० पिङ्गाक्ष्यै० । सर्वत्र प्रणवादिनमोन्तेन पूजयेत् । यथा एकान्नामाभिधाङ्कालीँ वर्णिनींडाकिनींतथा ॥ भैरवीञ्च महापूर्वां भैरवीन्तदनन्तरम् ॥ इन्द्राक्षीञ्च सपिङ्गाक्षीन्ततः संहार-

कारिणीम् ॥ पूर्वादिके दले पूज्याः शक्तयश्च यथाक्रमम् ॥ प्रणवादिनमोन्तेन लज्जावीजं समुच्चरन् ॥ पद्ममध्ये हूँ हूँ-फट नमः स्वाहा नमः देव्या दक्षिणे सम्राट्छन्दसे नमः, देव्या उत्तरे सर्ववर्णेभ्यो नमः, पुनर्दक्षिणे ॐवीजशक्तिभ्यान्नमः। पद्माग्रेषु पूर्वादिक्रमेण ब्राह्म्यै० माहेश्वर्य्यै० वैष्णव्यै० वाराह्यै० इन्द्राण्यै० चामुण्डायै० महालक्ष्म्यै० सर्वत्र प्रणवादिनमोन्तेन पूजयेत् : ततश्चतुर्दिक्षु द्वारेषु ॐकरालाय नमः विकरालाय नमः। एवम् अतिकरालाय० महाकरालाय० ॥ यथा भैरवीये। पूर्वद्वारे करालश्च विकरालश्च दक्षिणे ॥ पश्चिमेऽतिकरालश्च महाकरालमुत्तरे ॥ ततो धूपादिविसर्जनान्तङ्कर्म समापयेत्। विसर्जने त्वयं विशेषः। संहारमुद्राम्प्रदर्श्य अञ्जलावारोप्य वामनासापुटेन । योनिमुद्रा समारूढाम्प्रदीपकलिकोज्ज्वलाम्। कृष्णपक्षे विधुमिव क्रमेण क्षीणताङ्गताम् ॥ इमम्मन्त्रं समुच्चार्य्य चण्डरश्मिंनिवेशयेत् ॥ उत्तरे शिखरेइत्यादि। अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः सिद्धविद्यात्वात्। वलिदाने तु भैरवीये। रात्रौ वलिः प्रदातव्यो मत्स्यमांससुरादिभिः ॥ अथवा मधुपानाद्यैर्मधुरैर्विभवक्रमैः । मन्त्रस्तु उच्चरेत्प्रणवम्पूर्वं सर्वसिद्धिप्रदेऽन्वितम् ॥ वर्णिनीये ततो वाच्यं सर्वसिद्धिप्रदे ततः ॥ डाकिनीये ततो वाच्यंदेवीनाम् ततः परम् ॥ एह्येहीति ततो वाच्यमिमम्वलिमनन्तरम् ॥ गृह्ण गृह्ण ततः प्रोक्त्वा मम सिद्धिमनन्तरम्। देहि देहीति

माया च ततः फट्स्वाहया युतः ॥ बलिमन्त्रः समाख्यातः पूजितोऽयं सुरेश्वरि ॥ इति पूजा ॥

अथ स्तोत्रम्

ईश्वर उवाच ॥ स्तवराजमहं वन्दे वैरोचन्याः शुभप्रदम् । नाभौ शुभ्रारविन्दन्तदुपरि विलसन्मण्डलञ्चण्डरश्मेः संसारस्यैकसारान्त्रिभुवनजननीन्धर्मकामार्थदात्रीम् । तस्मिन् मध्ये त्रिभागे त्रितयतनुधराञ्छिन्नमस्ताम्प्रशस्तान्तां वन्दे छिन्नमस्तां शमनभयहरां योगिनीं योगमुद्राम् ॥१॥ नाभौ शुद्धसरोजवक्त्रविलसद्बन्धूकपुष्पारुणम्भा स्वद्भास्करमण्डलंतदुदरे तद्योनिचक्रम्महत् ॥ तन्मध्ये विपरीतमैथुनरतप्रद्युम्नसत्कामिनीपृष्ठस्थान्तरुणार्ककोटि-विलसत्तेजः स्वरूपांभजे ॥२॥ वामे छिन्नशिरोधरान्तदितरे पाणौ महत्कर्त्तृकाम्प्रत्यालीढपदान्दिगन्तवसनामुन्मुक्तकेशव्रजाम् ॥ छिन्नात्मीयशिरस्समुच्छलदसृग्धाराम्पिबन्तीम्पराम्बादित्यसमप्रकाशविलसन्नेत्रत्रयोद्भासिनीम् ॥ ३ ॥ वामादन्यत्र नालम्बहु गहनगलद्रक्तधाराभिरुच्चैर्गायन्तीमस्थिभूषाङ्करकमललसत्कर्त्तृकामुग्ररूपाम् ॥ रक्तामारक्तकेशीमपगतवसनां वर्णिनीमात्मशक्तिम्प्रत्यालीढोरुपादामरुणितनयनां योगिनीं योगनिद्राम् ॥४॥ दिग्वस्त्राम्मुक्तकेशीम्प्रलयघनघटाघोररूपाम्प्रचण्डाँदंष्ट्रादुः प्रेक्ष्य वक्त्रोदरविवरलसल्लोलजिह्वाग्रभासाम् ॥ विद्युल्लोलाक्षियुग्मां हृदयतटलसद्भोगिनीम्भीममूर्तिं सद्यश्छिन्नात्मकण्ठप्रगलितरुधिरैर्डाकिनी

वर्द्धयन्तीम् ।। ५ ।। ब्रह्मेशानाच्युताद्यैः शिरसि विनिहिता मन्दपादारविन्दैराप्तैर्योगीन्द्रमुख्यैः प्रतिपदमनिशञ्चिन्तितञ्चिन्त्यरूपाम् ।। संसारे सारभूतान्त्रिभुवनजननीञ्छिन्नमस्ताम्प्रशस्तामिष्टान्तामिष्टदात्रीङ्कलिकलुषहराञ्चेतसाचिन्तयामि ।। ६ ।। उत्पत्तिस्थितिसंहृतीर्घटयितुन्धत्ते त्रिरूपान्तनुन्त्रैगुण्याञ्जगती यदीयविकृतिर्ब्रह्माच्युतः शूलभृत ।। तामाद्याम्प्रकृतिं स्मरामि मनसा सर्वार्थसंसिद्धये यस्याः स्मेरपदारविन्दयुगले लाभम्भजन्ते नराः ।।७ ।। अभिलषितपरस्त्रीयोगपूजापरोऽहम्बहुविधिजनभावारम्भसम्भावितोऽहम् ।। पशुजनविरतोऽहम्भैरवीसंस्तितोऽहंगुरुचरणपरोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहम् ।। ८ ।। इदं स्तोत्रम्महापुण्यम्ब्रह्मणा भाषितम्पुरा ।। सर्वसिद्धिप्रदं साक्षान्महापातकनाशनम् ।।९।। यः पठेत्प्रातरुत्थाय देव्यास्सन्निहितोऽपि वा ।। तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि वाञ्छितार्थप्रदायिनी ।।१०।। धनन्धान्यं सुतञ्जायां हयं हस्तिनमेव च ।। वसुन्धरांमहाविद्यामष्टसिद्धिलभेद्ध्रुवम् ।। ११ ।। वैयाघ्राजिनरञ्जितस्वजघनेऽरण्ये प्रलम्बोदरे खर्वेऽनिर्वचनीयपर्वसुभगे मुण्डावलीमण्डिते । कर्त्रीङ्कुन्दरुचिविचित्रवनिताञ्ज्ञाने दधाने पदे मातर्भक्तजनानुकम्पिनि महामायेऽस्तु तुभ्यन्नमः ।। १२ ।।

इति छिन्नमस्तास्तोत्रं समाप्तम् ।।

अथ कवचम्

श्रीदेव्युवाच ।। कथिताश्छिन्नमस्तायाः या या विद्याः

सुगोपिताः ।। त्वया नाथेन जीवेश श्रुताश्चाधिगता मया ।।१।।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्वसूचितम् ।। त्रैलोक्यविज-
यन्नाम कवचङ्कथ्यताम्प्रभो ।। २ ।। भैरव उवाच ।। शृणु
देवीशि सर्वदेवनमस्कृते ।। त्रैलोक्यविजयन्नाम कवचं
सर्वमोहनम्।।३ ।। सर्वविद्यामयं साक्षात्सुरासुरजयप्रदम् ।।
धारणात्पठनादीशस्त्रैलोक्यविजयी विभुः ।। ४ ।। ब्रह्मा
नारायणो रुद्रो धारणात्पठनाद्यतः ।। कर्त्ता पाता च संहर्त्ता
भुवनानां सुरेश्वरि ।।५।। न देयं परशिष्येभ्यः अभक्तेभ्यो
विशेषतः ।। देयं शिष्याय भक्ताय प्राणेभ्योऽप्यधिकाय
च ।।३।। देव्याश्च छिन्नमस्तायाः कवचस्य च भैरवः ।।
ऋषिर्विराट च छन्दश्च देवता छिन्नमस्तका ।। ७ ।।
त्रैलोक्यविजये मुक्तौ विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।। ओंहूँकारो मे
शिरः पातु छिन्नमस्ता बलप्रदा ।। ८ ।। ह्रींह्रींऐंत्र्यक्षरी
पातु भालवक्त्रं दिगम्बरी ।। श्रींह्रींहूँऐं दृशौ पातु मुण्डङ्क-
र्तृधरापि सा ।। ९ ।। सा विद्या प्रणवाद्यन्ता श्रुतियुग्मं
सदाऽवतु ।। वज्रवैरोचनीयेहूँफट्स्वाहा च भ्रुवादिकम्
।। १०।। घ्राणम्पातु छिन्नमस्ता मुण्डकर्तृविधारिणी ।।
श्रीमायाकूर्च्चवाग्बीजैर्वज्रवैरोचनीये हूं ।। ११ ।। हूंफट्-
स्वाहा महाविद्या षोडशी ब्रह्मरूपिणी ।। स्वपार्श्वे वालिका
चासृग्धाराम्पाययती मुदा ।। १२ ।। वदनं सर्वदा पातु
छिन्नमस्तका स्वशक्तिका ।। मुण्डकर्तृधरारक्ता साधकाभी-
ष्टदायिनी ।।१३ ।। वर्णिनी डाकिनीयुक्ता सापि मामभितोऽ-

वतु ।। रामाद्या पातु जिह्वाञ्च लज्जाद्या पातु कण्ठकम् ।।१४।। कूर्च्चाद्या हृदयम्पातु वागाद्या स्तनयुग्मकम् ।। रमया पुटिता विद्या पार्श्वे पातु सुरेश्वरी ।। १५ ।। मायया पुटिता विद्या नाभिदेशन्दिगम्वरी ।। कूर्च्चेन पुटिता देवी पृष्ठदेशं सदावतु ।। १६ ।। वाग्बीजपुटिता तेषाम्मध्यम्पातु सशक्तिका ।। ईश्वरीकूर्च्चवाग्बीजैः वज्रवैरोचनीये हूं ।।१७।। हूं फट्स्वाहा महाविद्या सूर्यकोटिसमप्रभा ।। छिन्नमस्ता सदा पायादूरुयुग्मं सशक्तिका ।। १८ ।। ह्रींहूं वर्णिनी जानू श्रींह्लंह्लींह्लू च डाकिनीपदम् ।। सर्वविद्यास्थिता नित्या सर्वाङ्गम्मे सदावतु ।। १९ ।। प्राच्याम्पायादेकलिङ्गा योगिनी पावकेऽवतु ।। डाकिनी दक्षिणे पातु श्रीमहाभैरवी च माम्।।२०।। नैर्ऋत्यां सततम्पातु भैरवी पश्चिमेऽवतु ।। इन्द्राणी पातु वायव्येऽसिताङ्गी पातु चोत्तरे ।।२१ ।। संहारिणी सदा पातु शिवकोणे सकर्तृका ।। इत्यष्टशक्तयः पान्तु दिग्विदिक्षु सकर्तृका ।।२२।। क्रींक्रींक्रीं सा पातु पूर्वे हूं हूं माम्पातु पावके ।। ह्रीं ह्रीं मान्दक्षिणे पातु दक्षिण कालिकाऽवतु ।। २३ ।। क्रींक्रींक्रीं चैव नैर्ऋत्यां ह्रीं ह्रीं माम्पश्चिमेऽवतु ।। ह्रीं ह्रीं पातु मरुत्कोणे स्वाहा पातु सदोत्तरे ।। २४ ।। महाकाली खड्गहस्ता शिवकोणे सदाऽवतु ।। तारामायावधूः कूर्च्चं फट्कारो मां महामनुः ।। २५ ।। खड्गकर्तृधरा तारा चोद्ध्र्वदेशं सदाऽवतु ।। ह्रीं श्रीं हूं फट् च पाताले मां पातु चैकजटा सती ।। २६ ।। तारा तु सहिता खेऽव्यान्महानी-

लसरस्वती ॥ इति ते कथितन्देव्या कवचम्मन्त्रविग्रहम्
॥२७॥ यद्‌धृत्वापठनाद्‌भीमः क्रोधाख्यो भैरवः प्रभु ॥ सुरा-
सुरमुनीन्द्राणाङ्कर्त्ता हर्त्ता भवेत्स्वयम् ॥ २८ ॥ यस्याज्ञया
मधुमती याति सा साधकालयम् ॥ भूतिन्याद्याश्च
योगिन्यो यक्षिण्याद्याश्च खेचराः ॥ २९ ॥ आज्ञां
गृह्णन्ति तास्तस्य कवचस्य प्रसादतः ॥ एतदेव
परम्ब्रह्म कवचम्मन्मुखोदितम् ॥ ३० ॥ देवीमभ्य-
र्च्य गन्धाद्यैर्मूलेनैव पठेत्सकृत ॥ सँवत्सरकृतायाश्च पूजाया
फलमाप्नुयात् ॥ ३१ ॥ भूर्जे विलिखितंचैव गुटिकाङ्का-
ञ्चनीस्थिताम् ॥ धारयेद्-दक्षिणे वाहौ कण्ठे वा यदि
वान्यतः ॥ ३२ ॥ सर्वैश्वर्ययुतो भूत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत्
॥ तस्य गेहे वसेल्लक्ष्मीर्वाणी च वदनाश्रमे ॥३२॥ ब्रह्मा-
स्त्रादीनि शस्त्राणि तद्‌गात्रे यान्ति सौम्यताम् ॥ इदङ्कवच-
मज्ञात्वा यो भजेच्छिन्नमस्तकाम् ॥ सोऽपि शस्त्रप्रहारेण
मृत्युमाप्नोति सत्वरम् ॥ ३४ ॥

इति श्रीभैरवतन्त्रे भैरवीभैरव संवादे त्रैलोक्य
विजयं नाम छिन्नमस्तका कवचं समाप्तम् ॥

अथाष्टोत्तरशतनाम

श्रीपार्वत्युवाच । नाम्नां सहस्रं परमं छिन्नमस्ताप्रियं
शुभम् ॥ कथितम्भवता शम्भो सद्यश्शत्रुनिकृन्तनम् ॥ १ ॥
पुनः पृच्छाम्यहन्देव कृपाङ्कुरु ममोपरि ॥ सहस्रनामपाठे
च अशक्तो यः पुमान् भवेत् ॥ १ ॥ तेन किम्पठ्यते नाथ

तम्मे ब्रूहि कृपामय ॥ श्रीसदाशिव उवाच । अष्टोत्तरशतन्नाम्नाम्पठ्यते तेन सर्वदा ॥ ३ ॥ सहस्रनामपाठस्य फलम्प्राप्नोति निश्चितम् ।

ॐ अस्य श्रीछिन्नमस्ताष्टोत्तरशतनामस्तोत्रस्य सदाशिवऋषिरनुष्टुप्छन्दः श्रीछिन्नमस्ता देवता मम सकलसिद्धिप्राप्तये जपे विनियोगः ॥

ॐछिन्नमस्ता महाविद्या महाभीमा महोदरी । चण्डेश्वरी चण्डमाता चण्डमुण्डप्रभञ्जिनी ॥ ४ ॥ महाचण्डा चण्डरूपा चण्डिका चण्डखण्डिनी । क्रोधिनी क्रोधजननी क्रोधरूपा कुहू कला ॥ ५ ॥ कोपातुरा कोपयुता कोपसंहारकारिणी ॥ वज्रवैरोचनी वज्रा वज्रकल्पा च डाकिनी ॥ ६ ॥ डाकिनीकर्मनिरता डाकिनीकर्मपूजिता । डाकिनीसंगनिरता डाकिनीप्रेमपूरिता ॥ ७ ॥ खट्वाङ्गधारिणी खर्वा खड्गखर्परधारिणी । प्रेताशना प्रेतयुता प्रेतसङ्गविहारिणी ॥ ८ ॥ छिन्नमुण्डधरा छिन्नचण्डविद्या च चित्रिणि । घोररूपा घोरदृष्टिर्घोररावा घनोदरी ॥ ९ ॥ योगिनी योगनिरता जपयज्ञपरायणा ॥ योनिचक्रमयीयोनिर्योनिचक्रप्रवर्त्तिनी ॥ १० ॥ योनिमुद्रा योनिगम्या योनियन्त्रनिवासिनी । यन्त्ररूपा यन्त्रमयी यन्त्रेशी यन्त्रपूजिता ॥ ११ ॥ कीर्त्या कपर्दिनी काली कङ्काली कलविकारिणी । आरक्ता रक्तनयना रक्तपानपरायणा ॥ १२ ॥ भवानी भूतिदा भूतिर्भूतिदात्री च

भैरवी । भैरवाचारनिरता भूतभैरवसेविता ॥ १३ ॥ भीमा भीमेश्वरीदेवी भीमनादपरायणा ॥ भवाराध्या भवनुता भवसागरतारिणी ॥ १४ ॥ भद्रकाली भद्रतनुर्भद्ररूपा च भद्रिका । भद्ररूपा महाभद्रा सुभद्रा भद्रपालिनी ॥ १५ ॥ सुभव्या भव्यवदना सुमुखी सिद्धसेविता ॥ सिद्धिदा सिद्धिनिवहा सिद्धा सिद्धनिषेविता ॥ १६ ॥ शुभदा शुभगा शुद्धा शुद्धसत्त्वा शुभावहा । श्रेष्ठादृष्टिमयीदेवी दृष्टि-संहारकारिणी ॥ १७ ॥ शर्वाणी सर्वगा सर्वा सर्वमङ्गल-कारिणी ॥ शिवा शान्ता शान्तिरूपा मृडानी मदनातुरा ॥ १८ ॥ इति ते कथितन्देवि स्तोत्रम्परमदु-र्लभम् ॥ गुह्याद्गुह्यतरङ्गोप्यङ्गोपनीयम्प्रयत्नतः ॥ १९ ॥ किमत्र बहुनोक्तेन त्वदग्रे प्राणवल्लभे ॥ मारणम्मोहनं-देवि ह्युच्चाटनमतः परम् ॥ २० ॥ स्तम्भनादिककर्माणि ऋद्धयस्सिद्धयोऽपि च ॥ त्रिकालपठनादस्य सर्वे सिद्धयन्त्य-संशयः ॥ २१ ॥ महोत्तमं स्तोत्रमिदं वरानने मयेरितन्नि-त्यमनन्यवुद्धयः ॥ पठन्ति ये भक्तियुता नरोत्तमा भवेन्न तेषां रिपुभिः पराजयः ॥ २२ ॥

इति श्रीछिन्नमस्ताष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं समाप्तम् ॥

4. अथ वगलामुखीतन्त्रम्

अथ वगुलामुखीध्यानम्

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदीसिंहासनोपरि गतां परिपीत वर्णाम् । पीताम्वराभरणमाल्य विभूषितांगीं देवीं नमामि धृतमुद्गरवरैः जिह्वाम् ॥ १ ॥ जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम् गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्वराढ्यां द्विभुजां नमामि ।

अथ यन्त्रोद्धारः

त्र्यस्त्रं षडस्त्रं वृत्तमष्टदलम्पद्‌मम्भूपुरान्वितम् ।।

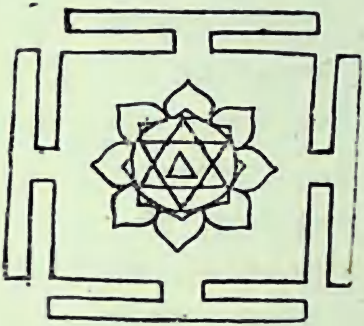

अथ मन्त्रोद्धारः

प्रणवं स्थिरमायाञ्च ततश्च वगलामुखि ।। तदन्ते सर्वदुष्टानान्ततो वाचम्मुखम्पदम् ।। स्तम्भयेति ततो जिह्‌वाङ्कीलयेति पदद्वयम् ।। बुद्धिन्नाशय पश्चात्तु स्थिर-मायां समालिखेत् ।। लिखेच्च पुनरोङ्कारं स्वाहेति पद्‌मन्ततः ।। षट्‌त्रिंशदक्षरी विद्या सर्वसम्पत्करी मता ।।

अथ मन्त्रः

ॐ ह्लीं वगलामुखि सर्वदुष्टानां वाचम्मुखं स्तम्भय जिह्‌वाङ्कीलय कीलय बुद्धिन्नाशय ह्रीं ॐ स्वाहा ।।

अथ पूजाविधिः

प्रातः कृत्यादि प्राणायामान्तं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्य्यात् । यथा शिरसि नारदऋषयेनमः, मुखे त्रिष्टुप्छ-

न्दसे नमः, हृदि बगलामुख्यै देवतायै नमः, गुह्ये ह्लींबीजाय-नमः, पादयोः स्वाहा शक्तये नमः ।। नारदोऽस्य ऋषिर्मू-र्ध्नि त्रिष्टुब्छन्दश्च तन्मुखे ।। श्रीबगलामुखीन्देवीं हृदये विन्यसेत्ततः ।। ह्लींबीजं गुह्यदेशे तु स्वाहाशक्तिस्तु पादयोः ।। ततः कराङ्गन्यासौ ।। ॐ ह्लीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, बगलामुखीतर्जनीभ्यां स्वाहा, सर्वदुष्टानाम्मध्यमाभ्यां वषट्, वाचं मुखं स्तम्भय अनामिकाभ्यां हुम्, जिह्वाङ्कीलय कीलय कनिष्ठाभ्यां वौषट, ह्लीं ॐस्वाहा करतलकरपृष्ठा-भ्यां फट् ।। एवं हृदयादिषु ।। तथा च दिव्यतन्त्रे ।। युग्म-बाणेषु सप्ताहिशेषार्णैश्च मनूद्भवैः ।। करशाखासुतलयोः करांगन्यासमाचरेत् ।। ततो मूलान्ते आत्मतत्त्वव्यापिनी-बगलामुखीश्रीपादुकाम्पूजयामि इतिमूलाधारे, मूलान्ते विद्यातत्त्वव्यापिनीबगलामुखीं श्रीपादुकाम्पूजयामि शिरसि, मूलान्ते शिवतत्त्वव्यापिनीबगलामुखी श्रीपादुकाम्पूजयामि सर्वाङ्गे । ततश्च । मूर्ध्नि भाले दृशोः श्रोत्रे गण्डयोर्ना-सयोः पुनः ।। ओष्ठयोर्मुखवृत्ते च दक्षिणांसे च कूर्परे ।। मणिबन्धेऽङ्गुलेर्मूले गले च कुचयो हृदि ।। नाभौ कट्यङ्गदेशे वामांसे कूर्परे तथा ।। मणिबन्धेऽङ्गुले मूले ततश्च विन्यसेत्पुनः ।। दक्षवामे चोरुजान्वोर्गुल्फयोरङ्गु-लिमूलयोः ।। क्रमेण मन्त्रवर्णांस्तु न्यस्य ध्यायेद्यथाविधिः ।। ततो ध्यानम् ।। मध्ये सुराब्धिमणिमण्डपरत्नवेदींसिंहास-नोपरिगताम्परिपीतवर्णाम् ।। पीताम्बराभरणमाल्यविभूषि-

ताङ्गोन्देवीं स्मरामि धृतमुद्गरवैरि जिह्वाम् ।। जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून्परिपीडयन्तीम् ।। गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्वराढ्यान्द्विभुजान्नमामि ।। एवन्ध्यात्वा मानसैः सम्पूज्य वहिः पूजामारभेत् ।। तत्र प्रथमोऽर्घ्यस्थापनम् ।। यथा ।। अष्टाङ्गुलश्चतुरस्त्रं विधाय ऐशानादिकोणेषु पूर्वादिदिक्षु च कुसुमाक्षतरक्त चन्दनैः-ग्लौंगणपतये नम इत्यनेन गजवदनं सम्पूज्य तेन मधुना वा अर्घ्यपात्रमापूरयेत् । ततो दारत्रयं विद्यया सम्पूज्य अङ्गानि विन्यसेत् । ततो धेनुयोनिमुद्रे प्रदर्श्य तेनोदकेन आत्मानम्पूजोपकरणञ्चाभ्युक्षयेत् । ततो मूलमुच्चार्य ॐ आधारशक्तिकमलासनाय नमः । एवं शक्ति-पद्मासनाय नमः पूर्ववद्ध्यात्वा पींठे आवाह्य षडङ्गानि न्यसेत् । ततो मुद्रां प्रदर्श्य पुरतः षडङ्गत मण्डलं यजेत् । ततो मूलेन मन्त्रयित्वा धेनुयोनिमुद्रे प्रदर्श्य आत्मविद्याशिवैस्तत्त्वैर्बिन्दुत्रयम्मुखे क्षिप्त्वा तर्जन्यङ्गुष्टयोगेन साङ्गावरणांबगलामुखीन्तर्पयेत् । ततो यथासम्भवोपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजामारभेत् । षट्कोणेषु पूर्वे ॐसुभगायैनमः, एवमग्निकोणे भगसर्पिण्यै० ईशाने भगवाहायै० पश्चिमे भगसिद्धायै० नैर्ऋत्ये भगपातिन्यै० वायौ भगमालिन्यै० । ततोऽष्टदलपत्रेषु ब्राह्म्याद्या पूज्या । पत्राग्रेषु ॐजयायैनमः, एवं विजयायै० अजितायै० अपराजितायै० स्तम्भिन्यै० जम्भिन्यै० मोहिन्यै० आकर्षिण्यै । ततो

द्वारेषु ॐ भैरवायनमः, तद्बाह्ये इन्द्रादीन्वज्रादीन्पूजयेत् ॥ ततो मूलेन धूपादिकं दत्वा यथाशक्ति जपं विधाय त्रिशूलमुद्राम्प्रदर्श्य पुष्पाञ्जलित्रयं दत्वा देव्यै योनिमुद्रांप्रदर्शयेत् । ततो भैरवाय वलिन्दद्यात् । ततो विसर्जनान्तङ्कर्म समापयेत् । अस्य पुरश्चरणं लक्षजपः । तथा च । पीताम्वरधरो भूत्वा पूर्वाशाभिमुखस्थितः ॥ लक्षमेकञ्जपेन्मन्त्रं हरिद्राग्रन्थिमालया ॥ ब्रह्मचर्यरतो नित्यम्प्रयतो ध्यानतत्परः प्रियङ्गु कुसुमेनापि पीतपुष्पैश्च होमयेत् ॥

अथ स्तोत्रम्

ॐ अस्य श्रीवगलामुखीस्तोत्रस्य नारदऋषिः श्रीवगलामुखी देवता मम सन्निहितानां विरोधिनां वाङ्मुखपदवुद्धीनां स्तम्भनार्थे विनियोगः ॥

मध्ये सुधाब्धिमणिमण्डपरत्नवेदीसिंहासनोपरिगतां परिपीतवर्णाम् ॥ पीताम्वराभरणमाल्यविभूषिताङ्गीं देवीम्भजामि धृतमुद्गरवैरिजिह्वाम् ॥ १ ॥ जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं वामेन शत्रून्परिपीडयन्तीम् ॥ गदाभिघातेन च दक्षिणेन पीताम्वराढ्यान्द्विभुजाम्भजामि ॥ २ ॥ चलत्कनककुण्डलोल्लसित-चारुगण्डस्थलाँ लसत्कनकचम्पकद्युतिमदिन्दुविम्बाननाम् ॥ गदा-हतविपक्षकाङ्कलितलोलजिह्वाञ्चलां स्मरामि वगलामुखीं विमुख-वाङ्मनस्स्तम्भिनीम् ॥ ३ ॥ पीयूषोदधिमध्यचारुविलसद्रक्तोत्पले मण्डपे सत्सिंहासनमौलिपातितरिपुम्प्रेतासनाध्यासिनीम् ॥ स्वर्णा-

भाङ्करपीडितारिरसनाम्भ्राम्यद्गदाँ विभ्रमामित्थन्ध्यायति यान्ति तस्य विलयं सद्योऽथ सर्वापदः ॥ ४ ॥ देवि त्वच्चरणाम्वुजार्चन-कृते यः पीतपुष्पाञ्जलीन्भक्त्या वामकरे निधाय च मनुम्मन्त्री मनोज्ञाक्षरम् ॥ पीठन्ध्यानपरोऽथ कुम्भकवशाद्वीजं स्मरेत्पार्थिवस्तस्यामित्रमुखस्य वाचि हृदये जाड्यम्भवेत्तत्क्षणात् ॥ ५ ॥ वादी मूकति रङ्कति क्षितिपतिर्वैश्वानरः शीतति क्रोधी शाम्यति दुर्जनः सुजनति क्षिप्रानुगः खञ्जति ॥ गर्वी खर्वति सर्वविच्च जडति त्वद्यन्त्रणा यन्त्रितः श्रीनित्ये वगलामुखि प्रतिदिनङ्कल्याणि तुभ्यन्नमः ॥ ६ ॥ मन्त्रस्तावदलं विपक्षदलनं स्तोत्रम्पवित्रञ्च ते यन्त्रं वादिनियन्त्रणन्त्रिजगताजैत्रं च चित्रं च ते ॥ मातः श्रीवगलेति नाम ललितं यस्यास्ति जन्तोर्मुखे त्वन्नामग्रहणेन संसदि मुखस्तम्भो भवेद्वादिनाम् ॥ ७ ॥ दुष्टस्तम्भनमुग्रविघ्नशमनन्दारिद्रयविद्रावणं भूभृदीशमनञ्चलामृगादृशाञ्चेतस्समाकर्षणम् ॥ सौभाग्यैकनिकेतनं समदृशः कारुण्यपूर्णामृतम्मृत्योर्मारणमाविरस्तु पुरतो मात-स्त्वदीयं वपुः ॥८॥ मातर्भञ्जय मे विपक्षवदनञ्जिह्वाञ्च सङ्कीलय ब्राह्मीम्मुद्रय नाशयाशु धिषणामुग्राङ्गतिं स्तम्भय ॥ शत्रूञ्चूर्णय देवी तीक्ष्णगदया गौराङ्गि पीताम्बरे विघ्नौघम्बगले हर प्रणमता-ङ्कारुण्यपूर्णेक्षणे ॥ ९ ॥ मातर्भैरवि भद्रकालि विजये वाराहि विश्वाश्रये ॥ श्रीविद्ये समये महेशि बगले कामेशि रामे

रमे ।। मातङ्गि त्रिपुरे परात्परतरे स्वर्गापवर्गप्रदे दासोऽहं शरणागत : करुणया विश्वेश्वरि त्राहि माम् ।।१०।। संरम्भे चौरसंघे प्रहरण- समये बन्धने वारिमध्ये विद्यावादे विवादे प्रकुपितनृपतौ दिव्य-काले निशायाम् ।। वश्ये वा स्तम्भने वा रिपुवधसमये निर्जने वा वने वा गच्छंस्तिष्ठं-स्त्रिकालं यदि पठति शिवम्प्राप्नुयादाशु धीरः ।।११।। नित्यं स्तोत्रमिदम्पवित्रमिह यो देव्या : पठत्यादराद्धृत्वा यन्त्रमिदन्तथैव समरे वाहौ करे वा गले ।। राजानोऽप्यरयो मदान्धकरिणस्सर्पा मृगेन्द्रादिकास्ते वै यान्ति विमोहिता रिपुगणा लक्ष्मीः स्थिरास्सिद्धयः ।। १२ ।। त्वं विद्या परमा त्रिलोकजननी विघ्नौघसञ्छेदिनी योषा-कर्षणकारिणी त्रिजगता-मानन्दसंवर्द्धिनी ।। दुष्टोच्चाटन-कारिणी जनमनस्सम्मोहन्दायिनी ।। जिह्वाकीलनभैरवी विजयते ब्रह्मादिमन्त्रो यथा ।।१३।। विद्या लक्ष्मीस्सर्वसौ-भाग्यमायु : पुत्रै : पौत्रै : सर्वसाम्राज्य-सिद्धिः ।। मान-म्भोगो वश्यमारोग्यसौख्यम्प्राप्तन्तत्तद्भूतले-ऽस्मिन्नरेण ।। १४।। यत्कृतञ्जपसन्नाहङ्गदितम्परमेश्वरि ।। दुष्टानां निग्रहार्थाय तद्गृहाण नमोऽस्तु ते ।। १५ ।। ब्रह्मास्त्रमिति विख्यातन्त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् ।। गुरुभक्ताय दातव्यन्न देयं यस्य कस्यचित् ।। १६ ।। पीताम्वरान्द्विभुजाञ्च त्रिनेत्रा-ङ्गात्र- कोज्ज्वलाम् ।। शिलामुद्गरहस्ताञ्च स्मरेत्ताम्व-गलामुखीम् ।। १७ ।। इति रुद्रयामले वगलामुखीस्तोत्रं समाप्तम् ।।

अथ कवचम्

कैलासाचलमध्यगम्पुरवहं शान्तन्त्रिनेत्रं शिवं वामस्थः कवचम्प्रणम्य गिरिजा भूतिप्रदम्पृच्छति ।। देवी श्रीबगलामुखी रिपुकुलारण्याग्निरूपा च या तस्याश्चापविमुक्तमन्त्रसहितम्प्रीत्याऽधुना ब्रूहि माम् ।। १ ।। श्री शङ्कर उवाच ।। देवी श्रीभववल्लभे श्रृणु महामन्त्रं विभूतिप्रदन्देव्या वर्मयुतं समस्तसुखदं साम्राज्यदम्मुक्तिदम् ।। तारं रुद्रवधूं विरञ्चिमहिलाविष्णुप्रियाकामयुक्कान्ते श्रीवगलानने मम रिपून्नाशय युग्मन्त्विति ।। २ ।। ऐश्वर्याणि पदञ्च देहि युगलं शीघ्रम्मनोवाञ्छिदङ्कार्यं साधय युग्मयुक्छिववधूवह्निप्रियान्तो मनुः ।। कंसारेस्तनयञ्च बींजमपरा शक्तिश्च वाणी तथा कोलं श्रीमति भैरवर्षिसहितञ्छन्दौ विराट्संयुतम् ।। ३ ।। स्वेष्टार्थस्य परस्य वेत्ति नितगङ्कार्यस्य सम्प्राप्तये नानासाध्यमहागदस्य नियतन्नाशाय वीर्याप्तये ।। ध्यात्वा श्रीवगलाननाम्मनुवरञ्जप्त्वा सहस्राख्यकन्दीर्घैः षट्कयुतैश्च रुद्रमहिताबीजैर्विनश्याङ्गके ।।

ध्यानम् ।। सौवर्णासनसंस्थितान्त्रिनयनाम्पीतांशुकोल्लासिनीं हेमाभाङ्गरुचिं शशाङ्कमुकुटां स्रक्चम्पकस्रग्युताम् ।। हस्तैर्मुद्गरपाशवद्धरसनां सम्बिभ्रतीम्भूषणंव्याप्ताङ्गीम्बगलामुखीन्त्रिजगतां संस्तम्भिनीञ्चिन्तये ।।

ॐ अस्य श्रीबगलामुखीब्रह्मास्त्रमन्त्रकवचस्य भैरव ऋषिर्विराट्छन्दः श्रीबगलामुखी देवता क्लींवीजम् ऐं शक्तिः श्रीं कीलकं मम परस्य च मनोभिलाषितेष्ट-कार्यसिद्धये विनियोगः ॥

शिरसि भैरवऋषये नमः, मुखे विराट्छन्दसे नमः, हृदि बगलामुखीदेवतायै नमः, गुह्ये क्लींवीजाय नमः, पादयोः ऐं शक्तये नमः, सर्वाङ्गे श्रींकीलकाय नमः, ॐ ह्लांअङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐह्लींतर्जनीभ्यां नमः ॐह्लंमध्यमाभ्यां नमः, ॐह्लैंअनामिकाभ्यां नमः, ॐह्लौंकनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐकरतलकरपृष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्लांहृदयायनमः, ॐह्लींशिर-से स्वाहा, ॐह्लूंशिखायै वषट्: ॐह्लैंकवचाय हुम्, ॐह्लौनेत्रत्र-याय वोषट्, ॐह्लः अस्त्रायफट् ॥

मन्त्रोद्धारः— ॐह्लां ऐं श्रींक्लीं श्रीवगलानने मम रिपू-न्नाशय २, ममैश्वर्याणि देहि २, शीघ्रम्मनोवाञ्छितकार्यं साधय २, ह्लींस्वाहा ॥

शिरो मे पातु ॐह्लींऐंश्रीक्लींपातु ललाटकम् ॥ सम्वोधनपदम्पातु नेत्रे श्रीबगलानने ॥ १ ॥ श्रुतौ मम रिपुम्पातु नासिकान्नाशय द्वयम् ॥ पातु गण्डौ सदा मामैश्व र्याण्यन्तन्तु मस्तकम् ॥२ ॥ देहि द्वन्द्वं सदा जिह्वाम्पातु-शीघ्रं वचो मम ॥ कण्ठदेशं स न पातु वाञ्छितम्बा-हुमूलकम् ॥ ३ ॥ कार्यं साधय द्वन्द्वन्तु करौ पातु सदा मम ॥ मायायुक्ता तथा स्वाहा हृदयम्पातु सर्वदा ॥ ४ ॥

अष्टाधिकचत्त्वारिंशदण्डाढ्या बगलामुखी ।। रक्षाङ्करोतु सर्वत्र गृहेऽरण्ये सदा मम ।। ५ ।। ब्रह्मास्त्राख्यो मनु पातु सर्वाङ्गे सर्वसन्धिषु ।। मन्त्रराजः सदा रक्षाङ्करोतु मम सर्वदा ।। ६ ।। ॐह्लीं पातु नाभिदेशम्मे कटिम्मे बगलावतु ।। मुखी वर्णद्वयम्पातु लिङ्गम्मे मुष्कयुग्मकम् ।। ७ ।। जानुनी सर्वदुष्टानाम्पातु मे वर्णपञ्चकम् ।। वाचम्मुखन्तथा पादं षड्वर्णा परमेश्वरी ।। ८ ।। जङ्घायुग्मे सदा पातु बगला रिपुमोहिनी ।। स्तम्भयेति पदम्पृष्ठम्पातुवर्णत्रयम्मम ।। ९ ।। जिह्वां वर्णद्वयम्पातु गुल्फौ मे कीलयेति च ।। पादोदूर्ध्वं सर्वदा पातु बुद्धिं पादतले मम ।। १० ।। विनाशय पदम्पातु पादाङ्गुल्योर्नखानि मे ।। ह्लीं बीजं सर्वदा पातु बुद्धीन्द्रियवचांसि मे ।।११।। सर्वाङ्गम्प्रणवः पातु स्वाहा रोमाणि मेऽवतु ।। ब्राह्मी पूर्वदले पातु चाग्नेय्यां विष्णुवल्लभा ।। १२ ।। माहेशी दक्षिणे पातु चामुण्डा राक्षसेऽवतु ।। कौमारी पश्चिमे पातु वायव्ये चापराजिता ।। १३ ।। वाराही चोत्तरे पातु नारसिंही शिवेऽवतु ।। ऊर्द्ध्वम्पातु महालक्ष्मी पाताले शारदाऽवतु ।। १४ ।। इत्यष्टौ शक्तयः पान्तु सायुधाश्च सवाहनाः ।। राजद्वारे महादुर्गे पातु मां गणनायकः ।। १५ ।। श्मशाने जलमध्ये च भैरवश्च सदाऽवतु ।। द्विभुजा रक्तवसना सर्वाभरणभूषिताः ।। १६ ।। योगिन्यः सर्वदा पान्तु महारण्ये सदा

मम ॥ इति ते कथितंदेवि कवचम्परमाद्भुतम् ॥ १७ ॥ श्रीविश्वविजयंनाम कीर्तिश्रीविजयप्रदम् ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं धीरं शूरं शतायुषम् ॥ १८ ॥ निर्धनो धनमाप्नोति कवचस्यास्य पाठतः ॥ जपित्वा मन्त्रराजं तु ध्यात्वा श्रीबगलामुखीम् ॥ १९ ॥ पठेदिदं हि कवचं निशायां नियमात्तु यः ॥ यद्यत्कामयते कामं साध्यासाध्ये महीतले ॥ २० ॥ तत्तत्काममवाप्नोति सप्तरात्रेण शङ्करी ॥ गुरुं ध्यात्वा सुराम्पीत्वा रात्रौ शक्तिसमन्वितः ॥ २१ ॥ कवचं य पठेद्देवि तस्याऽसाध्यन्न किञ्चन ॥ यं ध्यात्वा प्रजपेन्मन्त्रं सहस्रङ्कवचम्पठेत् ॥ २२ ॥ त्रिरात्रेण वशं याति मृत्युं तन्नात्र संशयः ॥ लिखित्वा प्रतिमां शत्रो सतालेन हरिद्रया ॥ २३ ॥ लिखित्वा हृदि तन्नाम तं ध्यात्वा प्रजपेन्मनुम् ॥ एकविंशद्दिनं यावत्प्रत्यहञ्च सहस्रकम् ॥ २४ ॥ जप्त्वा पठेत्तु कवचञ्चतुर्विंशतिवारकम् ॥ संस्तम्भञ्जायते शत्रोर्नात्र कार्या विचारणा ॥ २५ ॥ विवादे विजयन्तस्य सङ्ग्रामे जयमाप्नुयात् ॥ श्मशाने च भयंनास्ति कवचस्य प्रभावतः ॥ २६ ॥ नवनीतञ्चाभिमन्त्र्य स्त्रीणांदद्यान्महेश्वरि ॥ वन्ध्यायांजायते पुत्रो विद्यावलसमन्वितः ॥ २७ ॥ श्मशानाङ्गारमादाय भौमे रात्रौ शनावथ ॥ पादोदकेन स्पृष्ट्वा च लिखेल्लौहशलाकया ॥ २८ ॥ भूमौ शत्रोः स्वरूपञ्च हृदि नाम समालिखेत् ॥ हस्तन्तद्धृदये दत्वा कवचन्तिथिवारकम् ॥२९॥

ध्यात्वा जपेन्मन्त्रराजन्नवरात्रम्प्रयत्नतः ॥ म्रियते ज्वरदाहेन दशमेऽह्नि न संशयः ॥ ३० ॥ भूर्जपत्रेष्विदं स्तोत्रमष्टगन्धेन संलिखेत् ॥ धारयेद्दक्षिणे बाहौ नारी वामभुजे तथा ॥ ३१ ॥ सङ्ग्रामे जयमाप्नोति नारी पुत्रवती भवेत् ॥ ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तं जनम् ॥ ३२ ॥ सम्पूज्य कवचंनित्यम्पूजायाः फलमालभेत् ॥ बृहस्पतिसमो वापि विभवे धनदोपमः ॥३३॥ कामतुल्यश्च नारीणां शत्रूणाञ्च यमोपमः ॥ कवितालहरी तस्य भवेद्गङ्गप्रवाहवत् ॥ ३४ ॥ गद्यपद्यमयी वाणी भवेद्देवीप्रसादतः ॥ एकादशशतं यावत्पुरश्चरणमुच्यते ॥ ३५ ॥ पुरश्चर्य्याविहीनन्तु न चेदम्फलदायकम् । न देयम्परं शिष्येभ्यो दुष्टेभ्यश्च विशेषतः ॥ ३६ ॥ देयं शिष्याया भक्ताय पञ्चत्वञ्चान्यथाप्नुयात् ॥ इदं कवचमज्ञात्वा भजेद्यो वगलामुखीम् ॥ शतकोटि जपित्वा तु तस्य सिद्धिर्न जायते ॥ ३७ ॥ दाराढ्यो मनुजोऽस्य लक्षजापतः प्राप्नोतिसिद्धिं पराम् । विद्या श्री विजयं तथा सुनियतं धारं च वीरं वरम् । ब्रह्मास्त्राख्यमनुविलिख्य नितराम्भूर्जेष्टगन्धेन वै धृत्वा राजपुरं व्रजन्तिखलु ये दासोऽस्ति तेषां नृपः ।

इति विश्वसारोद्धारतन्त्रे पार्वतीश्वरसंवादे वगलामुखी कवचं सम्पूर्णम् ॥

अथशतनामस्तोत्रम

नारद उवाच

भगवन् देव देव सृष्टिस्थिति लयात्मक ।
शतमष्टोत्तरं नाम्नां वगलाया : वदाधुना ॥ १ ॥

भगवान् उवाच

शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि नाम्नाष्टोत्तर शतम् ।
पीताम्वर्याः महादेव्याः स्तोत्रं पाप प्रणाशकम्॥ २ ॥
प्रपठनात् सद्यो वादी मूको भवेत् क्षणात् ।
रिपूणां स्तम्भनं याति सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ३ ॥

उों अस्य श्री पीताम्वर्यष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रस्य सदाशिवऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्री पीताम्बरी देवता श्री पीताम्बरी प्रीतये जपे विनियोगः ।

ॐ वगलामुखी विष्णु वनिता विष्णु शंकरभामिनी ।
वहुला वेदमाता च महाविष्णु प्रसूरपि ॥१॥
महामत्स्या महाकूर्मा महावाराह रूपिणी ।
नरसिंहप्रियारम्या वामना बहुरूपिणी ॥२ ॥
जामदग्न्यस्वरूपा च रामा राम प्रपूजिता ।
कृष्णा कपर्दिनी कृत्या कलहा कलविकारिणी ॥३ ॥
बुद्धिरूपा बुद्धभार्या बौद्धपाखण्ड खण्डिनी ।
कल्किरूपा कलिहरा कलिदुर्गति नाशिनी ॥ ४ ॥

कोटिसूर्यं प्रतीकाशा कोटिकन्दर्प मोहिनी ।
केवला कठिन काली कला कैवल्यदायिनी ॥ ५ ॥
केशवी केशवाराध्या किशोरी केशवस्तुता ।
रुद्ररूपा रुद्रमूर्त्ती रुद्राणी रुद्रदेवता ॥ ६ ॥
नक्षत्ररूपा नक्षत्रा नक्षत्रेश प्रपूजिता ।
नक्षत्रेशप्रिया नित्या नक्षत्रपति वन्दिता ॥ ७ ॥
नागिनी नागजननी नागराजप्रवन्दिता ॥
नागेश्वरी नागकन्या नागरी च नागात्मजा ॥ ८ ॥
नगाधिराजतनया नागराज प्रपूरिता ।
नवीना नीरदा पीता श्यामा सौन्दर्य कारिणी ॥ ९ ॥
रक्ता नीला घना शुभ्रा श्वेता सौभाग्यदायिनी ।
सुन्दरी सौभगा सौम्या स्वर्णभास्वर्गतिप्रदा ॥ १० ॥
रिपुत्रसकरी रेखा शत्रुसंहारकारिणी ।
भामिनी च तथा माया स्तम्भिनी मोहिनी प्रभा ॥११॥
रागद्वेषकरी रात्रि रौरवध्वंसकारिणी ॥
यक्षिणी सिद्धनिवहा सिद्धेशा सिद्धिरूपिणी ॥१२ ॥
लंकापति ध्वंसकरी लंकेश रिपुवन्दिता ।
लंका नाथ कुलहरा महारावण हारिणी ॥ १३ ॥
देवदानव सिद्धौघ-पूजिता परमेश्वरी ।
परमाणुरूपा परमा पर तन्त्रविनाशिनी ॥ १४ ॥
वरदा वरदाराध्या वरदान परायणा ।
वरदेशप्रिया वीरा वीरभूषणभूषिता ॥ १५ ॥

वसुदा बहुदा वाणी ब्रह्मरूपा वरानना ।
बलदा पीतवसना पीतभूषण भूषिता ॥ १६ ॥
पीत पुष्पप्रिया पीतहारा पीतस्वरूपिणी ।
इति ते कथितं विप्र नाम्नामष्टोत्तरशतम् ॥ १७ ॥
यः पठेत् पाठयेद्वापि शृणुयाद्वा समाहित : ।
तस्य शत्रुक्षयं सद्यो याति नैवात्र संशय : ॥ १८ ॥

प्रभात काले प्रयतो मनुष्यः पठेत् सुभक्त्या परिचिन्त्यपीताम् ।

द्रुतं भवेत्तस्य समस्त वृद्धिर्विनाशमायाति च तस्य शत्रु : ॥ १९ ॥

इति विष्णुयामले नारद विष्णुसंवादे श्रीवगलाष्टोत्तर शतनाम स्तोत्रम् ।

नोट—वगलामुखी (पीताम्वरा) की साधना विशेष ध्यान देते हुए ही करनी चाहिए । इसमें पीला आसन, हल्दी की पीली माला, पीले वस्त्र, पीले पुष्प का प्रयोग होना चाहिए । तिलक भी पीला (हल्दी) होना चाहिए । इसमें तले हुए उड़द की दाल के बड़े की वलि देना आवश्यक है । बलि चौराहे में देनी चाहिए । नंगे पैर जाना चाहिए । वलि देकर वापिसी में पीछे की ओर नहीं देखना चाहिए । आकर हाथ-पैर मुख धो कर वस्त्र वदलने चाहिए । ब्रह्मचर्य की साधना आवश्यक है ।

5. अथ मातङ्गीतन्त्रम्

अथ मातङ्गीतन्त्रम्

श्यामाङ्गीं शशिशेखरां त्रिनयनां रत्नसिंहासन स्थिताम्
वेदै र्बाहुदण्डैरसिखेटक पाशङ्कुशधराम् ।

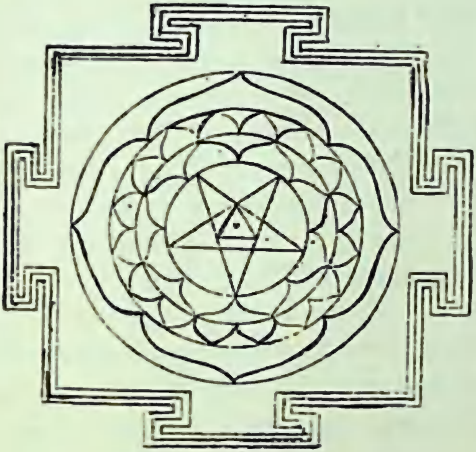

अथ यन्त्रोद्धारः

षट्कोणाष्टदलम्पद्मंलिखेद्यन्त्रम्मनोरमम् ॥
तत्र पूजा प्रकर्त्तव्या जवापुष्पेण मन्त्रवित् ॥

अथ मन्त्रोद्धारः

प्रणवञ्च ततो मायाङ्कामबीजञ्च कूर्च्चकम् ॥
मातङ्गी ङेयुता चास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ॥

अथ मन्त्रः

ॐ ह्रीं क्लीं हूं मातङ्ग्यै फट्स्वाहा ॥

अथ पूजाविधिः

अथ वक्ष्ये महादेवीम्मातङ्गीं सर्वसिद्धिदाम् ।। अस्याः पूजनमात्रेण वाक्सिद्धि लभते ध्रुवम् ।। प्रणवञ्च ततो मायाङ्कामबीजञ्च कूर्चकम् ।। मातङ्गी ङेयुता चास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ।। ऋषिरस्य दक्षिणा-मूर्त्ति विराट् छन्दः प्रकीर्त्तितम् ।। मातङ्गीदेवता देवी सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।। अङ्गन्यास-करन्यासौ कुर्यान्मन्त्री समाहितः । षड्दीर्घभाजा बीजेन प्रणवाद्येन कल्पयेत् ।। षट्कोणाष्टदलम्पद्मं लिखेद्यन्त्रम्मनोरमम् ।। तत्र पूजा प्रकर्त्तव्या जवापुष्पेण मन्त्रवित् ।। अष्टशक्तीश्चाष्टदले पूजयेत्सुसमाहितः ।। रति प्रीतिर्मनोभवा क्रिया शुद्धा च शक्तयः ।। अनङ्गकुसुमानङ्गमदना मदनालसा ।। इत्यष्टशक्तीः सम्पूज्य उपहारसमन्वितः ।। ततो देवीम्परां ध्यायेत्साधकः स्थिरमानसः ।। श्यामाङ्गीं शशिशेखरान्त्रिनयनां रत्नसिंहासन स्थिताम् ।। वेदैर्बाहुदण्डैरसिखेटकपाशाङ्कुशवराम् ।। एवं ध्यात्वा महादेवीं-गन्धपुष्पैर्मनोरमैः ।। नैवेद्यन्तु महादेव्यै पायसं शर्करान्वितम् ।। पुरश्चरण-काले तु षट्सहस्रं मनुञ्जपेत् ।। तद्दशांशं हुनेदाज्यैः शर्करामधुभिः सह ।। ब्रह्मवृक्षोद्भवैः काष्ठैः साधकः शक्तिभिः सह ।। एवं पुरस्क्रियां कृत्वा प्रयोगविधिमाचरेत् ।। चतुष्पथे श्मशाने वा कलामध्ये च मान्त्रिकः ।। मत्स्यम्मांसम्पायसञ्च दद्याद्धूपञ्च गुग्गुलुम् ।। रात्रियोगेन कर्त्तव्यं सदा पूर्णश्च साधकः ।। एवम्प्रयोगमात्रेण कविता जायते ध्रुवम् ।। अग्निस्तम्भ-ञ्जलस्तम्भं वाक्स्तम्भङ्कारयेद्ध्रुवम् ।। मन्त्री जयति शत्रूंश्च तार्क्ष्यो भोगिकुलं यथा ।। शास्त्रे वादे कवित्वे च बृहस्पतिरिवापरः ।। अनेनैव विधानेन मातङ्गी सिद्धिदायिनी ।। नूनन्तद्गृहमागत्य कुबेरैर्दीयते वसु ।। विना मत्स्यैर्विना मांसैर्नार्चियेत्परदेवताम् ।। इति तन्त्रसारः ।।

अथ मातङ्गीस्तोत्रम्

ईश्वर उवाच ।।

आराध्य मातश्चरणाम्बुजे ते ब्रह्मादयो विस्तृतकीर्त्तिमापुः अन्ये परं वा विभवम्मुनीन्द्राः परां श्रियं भक्तिपरेण चान्ये ।।1।। नमामि देवीन्नव-चन्द्रमौलेर्मातङ्गिनीञ्चन्द्रकलावतंसाम् ।। आम्नायप्राप्तिप्रतिपादितार्थ-म्प्रबोधयन्तीम्प्रियमादरेण ।।2।। विनम्रदेवस्थिरमौलिरत्नैर्विराजितन्ते

चरणारविन्दम् ।। अकृत्रिमाणां वचसां विशुल्कम्पदाम्पदं शिक्षितनूपुराभ्याम् ।।3।। कृतार्थयन्तीम्पदवीं पदाभ्यामास्फालयन्तीङ्कलवल्लकीन्ताम् ।। मातङ्गिनीं सद्धृदयान्धिनोंमि लीलांशुकां शुद्धनितम्वविम्वाम् ।।4।। तालीदलेनार्पितकर्णभूषांमाध्वीमदोद्घूर्णितनेत्रपद्माम् ।। घनस्तनीं शम्भुवधून्नमामि तडिल्लताकान्तिमनर्घ्यभूषाम् ।। 5 ।। चिरेण लक्ष्यान्नवलोमराज्यां स्मरामि भक्त्या जगतामधीशे ।। वलित्रयाढ्यन्तव मध्यमम्व नीलोत्पलांशुश्रियमावहन्तीम् ।।6।। कान्त्या कटाक्षैः कमलाकराणाङ्कदम्वमालाञ्चितकेशपाशाम् ।। मातङ्गकन्यां हृदि भावयामि ध्यायेयमारक्तकपोलविम्वम् ।।7।। विम्वाधरन्यस्तललामवश्यमालोललीलालकमायताक्षम् ।। मन्दस्मितन्ते वदनम्महेशि स्तुत्यानया शङ्करधर्मपत्नीम् ।।8।। मातङ्गिनीं वागधिदेवतान्तां स्तुवन्ति ये भक्तियुता मनुष्याः ।। परां श्रियन्नित्यमुपाश्रयन्ति परत्र कैलासतले वसन्ति ।।9।।

इति रुद्रयामले मातङ्गीस्तोत्रं समाप्तम् ।।

अथ मातङ्गीकवचम्

श्रीदेव्युवाच ।।

साधु साधु महादेव कथयस्व सुरेश्वर । मातङ्गीकवचन्दिव्यं सर्वसिद्धिकरन्नृणाम् ।।1।। श्रीईश्वर उवाच ।। शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मातङ्गीकवचं शुभम् । गोपनीयम्महादेवि मौनी जापं समाचरेत् ।।2।। अस्य श्रीमातङ्गीकवचस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिर्विराट् छन्दो मातङ्गी देवता चतुर्वर्गसिद्धये विनियोगः ।। ॐ शिरो मातङ्गिनी पातु भुवनेशी तु चक्षुषी ।। तोडला कर्णयुगलन्त्रिपुरा वदनम्मम ।।3।। पातु कण्ठे महामाया हृदि माहेश्वरी तथा त्रिपुष्पा पार्श्वयोः पातु गुदे कामेश्वरी मम ।।4।। ऊरुद्वये तथा चण्डी जङ्घयोश्च हरप्रिया ।। महामाया पादयुग्मे सर्वाङ्गेषु कुलेश्वरी ।।5।। अङ्गम्प्रत्यङ्गकञ्चैव सदा रक्षतु वैष्णवी ।। ब्रह्मरन्ध्रे सदा रक्षेन्मातङ्गी नाम संस्थिता ।।6।। ललाटे रक्षयेन्नित्यम्महापिशाचिनीति च ।। नेत्राभ्यां सुमुखी रक्षेद्देवी रक्षतु नासिकाम् ।।7।। महापिशाचिनी पायान्मुखे रक्षतु सर्वदा ।। लज्जा रक्षतु मान्दन्ते चोष्ठौ सम्मार्ज्जनीकरी ।।8।। चिवुके कण्ठदेशे तु चकारत्रितयम्पुनः ।। सुविसर्गम्महादेवी

हृदयम्पातु सर्वदा ॥1॥ नाभिं रक्षतु मां लोला कालिकावतु लोचने ॥ उदरे पातु चामुण्डा लिङ्गे कात्यायनी तथा ॥10॥ उग्रतारा गुदे पातु पादौ रक्षतु चाम्बिका ॥ भुजौ रक्षतु शर्वाणी हृदयञ्चण्डभूषणा ॥11॥ जिह्वायाम्मातृका रक्षेत्पूर्वे रक्षतु पुष्टिका ॥ विजया दक्षिणे पातु मेधा रक्षतु वारुणे ॥12॥ नैर्ऋत्यां सुदया रक्षेद्वायव्याम्पातु लक्ष्मणा ॥ ऐशान्यां रक्षयेद्देवी मातङ्गी शुभकारिणी ॥13॥ रक्षेत्सुरेशा चाग्नेये बगला पातु चोत्तरे ॥ ऊर्द्ध्वम्पातु महादेवी देवानां हितकारिणी ॥14॥ पाताले पातु मां नित्यं वशिनी विश्वरूपिणी ॥ प्रणवञ्च ततो माया कामवीजञ्च कूर्चकम् ॥15॥ मातङ्गिनी ङेयुतास्त्रं वह्निजायावधिर्मनुः ॥ सार्द्धैकादशवर्णा सा सर्वत्र पातु मां सदा ॥16॥ इति ते कथितन्देवि गुह्याद्गुह्यतरम्परम् ॥ त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कवचन्देवदुर्लभम् ॥17॥ य इदम्प्रपठेन्नित्यञ्जायते सम्पदालयम् ॥ परमैश्वर्यमतुलम्प्राप्नुयान्नात्र संशयः ॥18॥ गुरुमभ्यर्च्य विधिवत्कवचम्प्रपठेद्यदि ॥ ऐश्वर्यं सुकवित्वञ्च वाक्सिद्धिं लभते ध्रुवम् ॥19॥ नित्यन्तस्य तु मातङ्गी महिला मङ्गलञ्चरेत् ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ये देवा सुरसत्तमाः ॥20॥ ब्रह्मराक्षसवेताला ग्रहाद्या भूतजातयः ॥ तन्दृष्ट्वा साधकन्देवि लज्जायुक्ता भवन्ति ते ॥21॥ कवचन्धारयेद्यस्तु सर्वसिद्धिलभेद् ध्रुवम् ॥ राजानोऽपि च दासत्वं षट्कर्म्माणि च साधयेत् ॥22॥ सिद्धो भवति सर्वत्र किमन्यैर्बहु भाषितैः ॥ इदं कवचमज्ञात्वा मातङ्गीं यो भजेन्नरः ॥23॥ अल्पायुर्निर्धनो मूर्खो भवत्येव न संशयः ॥ गुरौ भक्तिः सदा कार्या कवचे च दृढा मतिः ॥24॥ तस्मै मातङ्गिनी देवी सर्वसिद्धिं प्रयच्छति ॥ इतिनन्द्यावर्ते उत्तरखण्डेत्वरितफलदायिनी मातंगिनी कवचं समाप्तम् ॥

अथ हृदयम्

एकदा कौतुकाविष्टा भैरवं भूतसेवितम् ॥ भैरवी परिपप्रच्छ सर्वभूतहिते रता ॥1॥ श्रीभैरव्युवाच ॥ भगवन्सर्वधर्मज्ञ भूतवात्सल्यभावन ॥ अहं वेदितुमिच्छामि सर्वभूतोपकारकम् ॥2॥ केन मन्त्रेण जप्तेन स्तोत्रेण पठितेन च ॥ सर्वथा श्रेयसाम्प्राप्तिर्भूतानाम्भूतिमिच्छताम् ॥3॥ श्रीभैरव

उवाच ।। शृणु देवि तव स्नेहात्प्रायो गोप्यमपि प्रिये ।। कथयिष्यामि तत्सर्वं सुखसम्पत्करं शुभम् ।।4।। पठतां शृण्वतान्नित्यं सर्वसम्पत्तिदायकम् ।। विद्यैश्वर्यसुखावाप्ति-मङ्गलप्रदमुत्तमम् ।।5।। मातंगया हृदयस्तोत्रं दुःखदारिद्र्यभञ्जनम् ।। मङ्गलम्मङ्गलानाञ्च अस्ति सर्वसुखप्रदम् ।।6।।

ॐ अस्य श्रीमातङ्गीहृदयस्तोत्रमन्त्रस्य दक्षिणामूर्तिऋर्षिविराट् छन्दो मातङ्गी देवता ह्लींबीजं हूं शक्तिः क्लींकीलकं सर्ववाञ्छितार्थसिद्धये पाठे विनियोगः ।।

अथाङ्गन्यासः ।। ॐ ह्लीं हृदयाय नमः, ॐ क्लीं शिरसेस्वाहा, ॐ हूंशिखायैवषट्, ॐ ह्लीं नेत्रत्रयायवौषट्, ॐ क्लींकवचायहुम्, ॐ हूंअस्त्रायफट् ।। एवं करन्यासः ।।

अथ, ध्यानम् ।। श्यामां शुभ्रांशुभालान्त्रिकमलनयनां रत्नसिंहासनस्थाम्भक्ताभीष्टप्रदात्रीं सुरनिकरकरासेव्यकञ्जाङ्घ्रियुग्माम् ।। नीलाम्भोजांशुकान्ति निशिचरनिकरारण्यदावाग्निरूपाम्पाशंखड्गञ्चतुर्भिर्वरकमलकरैः खेटकञ्चांकुशञ्च ।। मातङ्गीमावहन्तीमभिमतफलदाम्मोदिनीञ्चिन्तयामि ।।7।। नमस्ते मातङ्ग्यै मृदुमुदिततन्वै तनुमतांपरश्रेयोदायै कमलचरणध्यानमनसाम् ।। सदा संसेव्यायै सदसि विबुधैर्दिव्यधिषणैर्दयार्द्रायै देव्यै दुरितदलनोद्दण्डमनसे ।।8।। परम्मातस्ते यो जपति मनुमेवोग्रहृदयः कवित्वङ्कल्पानाङ्कलयति सुकल्पः प्रतिपदम् ।। अपि प्रायोरम्यामृतमयपदा तस्य ललिता नटीम्मन्या वाणी नटति रसनायाञ्चपलिता ।।9।। तव ध्यायन्तो ये वपुरनुजपन्ति प्रवलितं सदा मन्त्रम्मातर्नहि भवति तेषाम्परिभवः ।। कदम्बानाम्माल्यैश्शिर अपि च युञ्जन्ति यदि ये भवन्ति प्रायस्ते युवतिजनयूथस्ववशगाः ।।10।। सरोजैस्साहस्रैस्सरसिजपदद्वन्द्वमपि ये सहस्रन्नामोक्त्वा तदपि तव ङेऽन्तम्मनुमितम् ।। पृथङ्नाम्ना तेनायुतकलितमर्चन्ति प्रसृते सदा देवव्रातप्रणमितपदाम्भोजयुगला ।।11।। तव प्रीत्यै मातर्ददति वलिमाधाय वलिना समत्स्यम्मांसं वा सुरुचिरसितं राजरुचितम् ।। सुपुण्या ये स्वान्तस्तव चरणप्रेमैकरसिका अहोभाग्यन्तेषान्त्रिभुवनमलं वश्यमखिलम् ।।12।। लसल्लोलश्रोत्राभरणकिरणक्रांति-

कलित म्मितस्मित्यापन्नप्रतिभितममन्नं विकरितम् ॥ मुखाम्भोजम्मातस्तव परिलुठद्भ्रूमधुकरं रमा ये ध्यायन्ति त्यजति नहि तेषां सुभवनम् ॥13॥ परः श्रीमातंग्या जपति हृदयाख्यस्सुमनसामयं सेव्यस्सद्योभिमतफलदश्चातिललितः ॥ नरा ये शृण्वन्ति स्तवमपि पठन्तीममनिशन्न तेषान्दुःप्राप्यञ्जगति यदलभ्यन्दिविपदाम् ॥14॥ धनार्थी धनमाप्नोति दारार्थी सुन्दरीम्प्रियाम् ॥ सुतार्थी लभते पुत्रं स्तवस्यास्य प्रकीर्त्तनात् ॥15॥ विद्यार्थी लभते विद्यां विविधां विभवप्रदाम् ॥ जयार्थी पठनादस्य जयम्प्राप्नोति निश्चितम् ॥16॥ नष्टराज्यो लभेद्राज्यं सर्वसम्पत्समाश्रितम् ॥ कुवेरसमसम्पत्तिः स भवेद्धृदयम्पठन् ॥17॥ किमत्र बहुनोक्तेन यद्यदिच्छति मानवः ॥ मातङ्गीहृदयस्तोत्र-पाठात्तत्सर्वमाप्नुयात् ॥18॥

इति श्रीदक्षिणामूर्त्तिसंहितायां श्रीमातङ्गीहृदयस्तोत्रं समाप्तम् ॥

6 अथ कमलात्मिकातन्त्रम्

ध्यानम्

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरि प्रख्यैश्चतुर्मिर्गजैः
हस्तोक्षिप्तहिरण्मयाभृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् ।
विभ्राणां वरमव्जयुग्ममभयंः हस्तैं किरीटोज्ज्वलाम्,,
क्षौमां वद्धनितम्वविम्व ललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

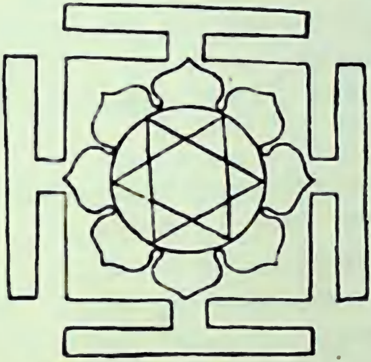

अथ यन्त्रोद्धारः

अनुक्तकल्पे यन्त्रन्तु लिखेत्पद्मन्दलाष्टकम् ॥
पट्कोणकर्णिकन्तत्र देवद्वारोपशोभितम् ॥

अथ मन्त्रोद्धारः

तारम्पूर्वं लिखित्वा परमलममलं वाग्भवम्वीजमन्यल्लज्जा
श्रीबीजपूर्वं वशकरणतमङ्कामवीजम्परस्तात् । हसौ पश्चाद्योजनीयं सुयुतमथ
जगत्पूर्विकायाः प्रसूत्या ङेऽन्तं रूपनमोन्तन्निखिलमनुविदैर्मन्त्रमुक्तं रमायाः ॥

अथ मन्त्रः

ॐ ऐं ह्रीं श्रींक्लींह्सौः जगत्प्रसूत्यै नमः ॥

अथ पूजाप्रयोग:

प्रात: कृत्यादि पीठन्यासान्तंकर्म्म विधाय हृत्पद्मस्थपूर्वकेसरेषु मध्ये च पीठशक्ती: पीठमनुञ्च न्यसेत् ।। ओं विभूत्यैनम: एवम् उन्नत्यै० कान्त्यै० सृष्टयै० कीर्त्यै० सन्नत्यै० व्युष्टटै० उत्कृष्ट्यै० ऋद्धयै० । तत: श्रीकमलासनायनम: इत्यासनं विन्यस्य ऋष्यादिन्यासङ्कुर्य्यात् ।।

शिरसि भृगुऋषयेनम:, मुखे निचृच्छन्दसेनम: हृदि श्रियै देवतायै नम: ।

तत: कराङ्गन्यासौ कुर्य्यात् ।। श्रां अङ्गुष्ठाभ्यांनम:, श्रीं तर्जनीभ्यां-स्वाहा, श्रूं मध्यमाभ्यां वषट् इत्यादि ।। एवं श्रांहृदयायनम: इत्यादिना च न्यसेत् ।। तथा च निबन्धे ।। अङ्गानि दीर्घयुक्तेन रमाबीजेन कल्पयेत् ।। ततो ध्यानम् ।।

कान्त्या काञ्चनसन्निभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिर्गजैर्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम् । बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तै: किरीटोज्ज्वलाङ्क्षौमाबद्धनितम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ।। एवं-ध्यात्वा मानसै: सम्पूज्य शङ्खस्थापनङ्कुर्यात् ।। तत: पीठपूजां विधाय केसरेषु मध्ये विभूत्यादि पीठमन्वन्तपूजां विधाय पुनर्ध्यात्वा आवाहनादि पञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तं विधाय ।। आवरणपूजामारभेत् ।। अग्न्यादि केसरेषु मध्ये दिक्षु च श्रांहृदयायनम: ।। इत्यादिना सम्पूज्य दिग्दलेषु पूर्वादिषु ।। ओंवासुदेवायनम:, एवं सङ्कर्षणाय० प्रद्युम्नाय० अनिरुद्धाय० विदिग्दलेषु ओंदमकाय० ओंसलिलाय० ओंगुग्गुलाय० ओंकुरण्टकाय० ।। ततो देव्या दक्षिणे ओंशङ्खनिधये नम:, एवं वसुधायैनम: वामे ओंपद्मनिधये० ओंवसुमत्यै० पत्राग्रेषु पूर्वादित: ओंवलाकायैनम: एवं विमलायै० वन-मालिकायै० विभीषिकायै० तद्वहिरिन्द्रादीन् वज्रादींश्च पूजयेत् ।। ततो धूपादि विसर्जनान्तंकर्म समापयेत् ।। अस्य पुरश्चरणंद्वादशलक्षजप: ।। तथा च भानुलक्षञ्जपेन्मन्त्रन्दीक्षितो विजितेन्द्रिय: ।। तत्सहस्रञ्च जुहुयात् कमलैर्मधुराप्लुतै: ।। जपान्ते जुहुयान्मन्त्री तिलैर्वा मधुराप्लुतै: ।। बिल्वै: फलैर्वा जुहुयात्त्रिभिर्वा साधकोत्तम: ।। इति पूजाप्रयोग: ।।

अथ स्तोत्रम्

त्रैलोक्यपूजिते देवि कमले विष्णुवल्लभे ।। यथा त्वमचला कृष्णे तथा भव मयि स्थिरा ।।1।। ईश्वरी कमला लक्ष्मीश्चला भूतिर्हरिप्रिया ।। पद्मा पद्मालया सम्यगुच्चैः श्रीपद्मधारिणी ।।2।। द्वादशैतानि नामानि लक्ष्मीं सम्पूज्य यः पठेत् ।। स्थिरा लक्ष्मीर्भवेत्तस्य पुत्रदारादिभिः सह ।।3।। इति श्रीकमलात्मिकास्तोत्रं समाप्तम् ।।

अथ कवचम्

अथ वक्ष्ये महेशानि कवचं सर्वकामदम् ।। यस्य विज्ञानमात्रेण भवेत्साक्षात्सदाशिवः ।।1।। नार्चनन्तस्य देवेशि मन्त्रमात्रञ्जपेन्नरः ।। स भवेत्पार्वतीपुत्रः सर्वशास्त्रविशारदः ।।2।। विद्यार्थिनां सदा विद्या धनदातृ विशेषतः ।। धर्मार्थिभिस्सदा सेव्या कमला विष्णुवल्लभा ।।3।। अस्याश्चतुरक्षरीविष्णुवल्लभाया कवचस्य भगवान् ऋषिरनुष्टुपछन्दो वाग्भवी शक्तिर्देवता वाग्भवं वीजं लज्जारमाकीलकं कामवीजात्मकङ्कवचं मम सुपाण्डित्यकवित्व-सर्वसिद्धिसमृद्धये विनियोगः ।।

ऐंकारो मस्तके पातु वाग्भवी सर्वसिद्धिदा ।। ह्रीं पातु चक्षुषोर्मध्ये चक्षुयुग्मे च शाङ्करी ।।4।। जिह्वायाम्मुखवृत्ते च कर्णयोर्दन्तयोर्नसि ।। ओष्ठाधरे दन्तपङ्क्तौ तालुमूले हनौ पुनः ।।5।। पातु मां विष्णुवनिता लक्ष्मीः श्रीविष्णुरूपिणी ।।6।। कर्णयुग्मे भुजद्वन्द्वे स्तनद्वन्द्वे च पार्वती ।। हृदये मणिवन्धे च ग्रीवायाम्पार्श्वयोः पुनः ।।7।। पृष्ठदेशे तथा गुह्ये वामे च दक्षिणे तथा ।। उपस्थे च नितम्बे च नाभौ जङ्घाद्वये पुनः ।।8।। जानुचक्रे पदद्वन्द्वे घुटिकेऽङ्गुलिमूलके ।। स्वधातुप्राणशक्त्यात्मसीमन्ते मस्तके पुनः ।।9।। विजया पातु भवने जया पातु सदा मम ।। सर्वाङ्गे पातु कामेशी महादेवी सरस्वती ।।10।। तुष्टिः पातु महामाया उत्कृष्टिः सर्वदावतु ।। ऋद्धिः पातु महादेवी सर्वत्र शम्भुवल्लभा ।।11।। वाग्भवी सर्वदा पातु पातु मां हरगेहिनी ।। रमा पातु सदा देवी पातु रम्या स्वराट्स्वयम् ।।12।। सर्वाङ्गे पातु मां लक्ष्मीर्विष्णुमाया सुरेश्वरी ।। शिवदूती सदा पातु सुन्दरी पातु सर्वदा ।।13।। भैरवी पातु सर्वत्र भेरुण्डा सर्वदावतु ।। त्वरिता पातु मान्नित्यमुग्रतारा सदावतु ।।14।। पातु माङ्कालिका नित्यङ्कालरात्रिः

सदावतु ।। नवदुर्गा सदा पातु कामाक्षी सर्वदावतु ।।15।। योगिन्यः सर्वदा पान्तु मुद्राः पान्तु सदा मम ।। मात्राः पान्तु सदा देव्यश्चक्रस्था योगिनीगणाः ।।16।। सर्वत्र सर्वकार्येषु सर्वकर्म्मसु सर्वदा ।। पातु मान्देवदेवी च लक्ष्मीः सर्वसमृद्धिदा ।।17।। इति ते कथितं दिव्यङ्कवचं सर्वसिद्धये ।। यत्र तत्र न वक्तव्यं यदीच्छेदात्मनो हितम् ।।18।। शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरी ।। न्यूनाङ्गे चातिरिक्ताङ्गे दर्शयेन्न कदचन ।।19।। न स्तवन्दर्शयेद्दिव्यं सन्दर्श्य शिवहा भवेत् ।। कुलीनाय महेच्छाय दुर्गाभक्तिपराय च ।।20।। वैष्णवाय विशुद्धाय दद्यात्कवच-मुत्तमम् ।। निजशिष्याय शान्ताय धनिने ज्ञानिने तथा ।।21।। दद्यात्कवच-मित्युक्तं सर्वतन्त्रसमन्वितम् ।। शनौ मङ्गलवारे च रक्तचन्दनकैः-तथा ।।22।।यावकेन लिखेन्मन्त्रं सर्वतन्त्रसमन्वितम् ।। विलिख्य कवचन्दिव्यं स्वयम्भुकुसुमैः शुभैः ।।23।। स्वशुक्रैः परशुक्रैर्वा नानागन्धसमन्वितैः ।। गोरोचनाकुङ्कुमेन रक्तचन्दनकेन वा ।।24।। सुतिथौ शुभयोगे वा श्रवणायां रवेर्दिने ।। अश्विन्याङ्कृत्तिकायां वा फल्गुन्यां वा मघासु च ।।25।। पूर्वभाद्रपदायोगे स्वात्याम्मङ्गलवासरे ।। विलिखेत्प्रपठेत्स्तोत्रं शुभयोगे सुरालये ।।26।। आयुष्मत्प्रीतियोगे च ब्रह्मयोगे विशेषतः ।। इन्द्रयोगे शुभे योगे शुक्रयोगे तथैव च ।।27।। कौलवे बालवे चैव वणिजे चैव सत्तमः ।। शून्यागारे श्मशाने च विजने च विशेषतः ।।28।। कुमारीम्पूजयित्वाऽऽदौ यजेद्देवीं सनातनीम् ।। मत्स्यैर्मांसैः शाकसूपैः पूजयेत्पर देवताम् ।।29।। तृताद्यैः सोपकरणैः पूपसूपैर्वित्तपतः । ब्राह्मणान् भोजयित्वा च पूजयेत परमेश्वरीम् ।।30।। आखेटक मुपाख्यानं तत्र कुर्याद् दिनत्रयम् । तदाधारेन् महाविद्या शंकरेण प्रभाषिताम् ।।31।। मरणद्वेषणादीनि लभते नात्र संशयः । स भवेत्पार्वतीपुत्रः सर्वशास्त्र पुरस्कृतः ।।32।। गुरुर्देवो हरः साक्षात् पत्नी हर प्रिया । अभेदेनभजेद्यस्तु तस्य सिद्धि-रदूरतः ।।35।। पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रन्तिरात्मा जप फल मनुमेयं लप्स्यते यद्विधेयम् । स भवति पदमुच्चैः सम्पदांपाद नम्र क्षितिपमुकुट लक्ष्मी लक्षणानां चिरायुः ।।34।।

इतिश्रीविश्वसार तन्त्रे कमलात्मिका कवचम् ।।

अथ श्रीसूक्तम्

उों हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीञ्जातवेदो ममावह ।।1।। ताम्म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।। यस्यां हिरण्यं विन्देयङ्गामश्वम्पुरुषानहम् ।।2।। अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम् ।। श्रियन्देवीमुपह्वये श्रीर्म्मा देवी जुषताम् ।।3।। कां सोस्मि तां हिरण्यप्राकारामार्द्राञ्ज्वलन्तीन्तृप्तान्तर्पयन्तीम् ।। पद्मे स्थिताम्पद्मवर्णान्तामिहोपह्वये श्रियम् ।।4।। चन्द्राम्प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम् ।। ताम्पद्मनेमि शरणमहम्प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतान्त्वां वृणोमि ।।5।। आदित्यवर्णे तपसोधिजातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः ।। तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ।।6।। उपैतु मान्देवसखः कीर्त्तिश्च मणिना सह ।। प्रादुर्भूतोसि राष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिं वृद्धिन्ददातु मे ।।7।। क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठां अलक्ष्मीर्नाशियाम्यहम् ।। अभूतिमसमृद्धि ञ्च सर्वान्निर्णुद मे गृहात् ।।8।। गन्धद्वारान्दुराधर्षान्नित्यपुष्टाङ्करीषिणीम् ।। ईश्वरीं सर्वभूतानान्तामिहोपह्वये श्रियम् ।।9।। मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः ।।10।। कर्द्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भ्रमकर्द्दम ।। श्रियं वासय मे कुले मातरम्पद्ममालिनीम् ।।11।। आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे ।। निचदेवीम्मातरं श्रियं वासय मे कुले ।।12।। आर्द्राम्पुष्पकरिणीम्पुष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम् ।। सूर्य्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीञ्जातवेदो ममावह ।।13।। आर्द्रां यः करणीं यष्टीम्पिङ्गलाम्पद्ममालिनीम् ।। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीञ्जातवेदो ममावह ।।14।। ताम्म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।। यस्यां हिरण्यम्प्रभूतङ्गावो दास्योश्वान्विन्देयम्पुरुषानहम् ।।15।। यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्यमन्वहम् ।। श्रियः पञ्चदशर्चञ्च श्रीकामः सततञ्जपेत् ।।16।। इति श्रीसूक्तम् ।।

अथाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

श्रीशिव उवाच ।। शतमष्टोत्तरन्नाम्नाङ्कमलाया वरानने ।। प्रवक्ष्याम्यतिगुह्यं हि न कदापि प्रकाशयेत् ।।1।। महामाया महालक्ष्मी-

महावाणी महेश्वरी ।। महादेवी महारात्रिर्महिषासुरमर्दिनी ।।2।। कालरात्रि: कुहू: पूर्णा नन्दाद्या भद्रिका निशा ।। जया रिक्ता महाशक्तिर्देवमाता कृशोदरी ।।3।। शचीन्द्राणी शक्रनुता शङ्करप्रियवल्लभा ।। महावराहजननी मदनोन्मथिनी मही ।।4।। वैकुण्ठनाथरमणी विष्णुवक्षस्थलस्थिता ।। विश्वेश्वरी विश्वमाता वरदा भयदा शिवा ।।5।। शूलिनी चक्रिणी मा च पाशिनी शङ्खधारिणी । गदिनी मुण्डमाला च कमला करुणालया ।।6।। पद्माक्षधारिणी ह्यम्बा महाविष्णुप्रियङ्करी ।। गोलोकनाथरमणी गोलोकेश्वरपूजिता ।।7।। गया गङ्गा च यमुना गोमती गरुडासना ।। गण्डकी सरयू तापी रेवा चैव पयस्विनी ।।8।। नर्मदा चैव कावेरी केदारस्थलवासिनी ।। किशोरी केशवनुता महेन्द्रपरिवन्दिता ।।9।। ब्रह्मादिदेवनिर्माणकारिणी वेदपूजिता ।। कोटिब्रह्माण्डमध्यस्था कोटिब्रह्माण्डकारिणी ।।10।। श्रुतिरूपा श्रुतिकरी श्रुतिस्मृतिपरायणा ।। इन्दिरा सिन्धुतनया मातङ्गी लोकमातृका ।।11।। त्रिलोकजननी तन्त्रा तन्त्रमन्त्रस्वरूपिणी ।। तरुणी च तमोहन्त्री मङ्गला मङ्गलायना ।।12।। मधुकैटभमथर्नी शुम्भासुरविनाशिनी ।। निशुम्भादिहरा माता हरिशङ्करपूजिता ।।13।। सर्वदेवमयी सर्वा शरणागतपालिनी ।। शरण्या शम्भुवनिता सिन्धुतीरनिवासिनी ।।14।। गन्धर्वगानरसिका गीता गोविन्दवल्लभा । त्रैलोक्यपातिनी तत्त्वरूपतारूण्यपूरिता ।।15।। चन्द्रावली चन्द्रमुखी चन्द्रिका चन्द्रपूजिता। चन्द्राशशाङ्कभगिनी गीतवाद्यपरायणा ।।16।। सृष्टिरूपा सृष्टिकरी सृष्टिसंहारकारिणी । इति ते कथितं देवि रमानाम शताष्टकम् ।।17।। त्रिसन्ध्यं प्रयतो भूत्वा पठेतैतत्समाहित: । यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति असंशय: 18।। इमं स्तवं य: पठतीह मर्त्यो वैकुण्ठपत्न्या: परमादरेण धनाधिपाद्यै: परिवंदित: स्यात् प्रयास्यति श्रीपदमन्तकाले ।।19।।

इतिकमलाया: अष्टोतर नामस्तोत्रम् ।

Ambaji

7 अथ दुर्गातन्त्रम्

दुर्गाध्यानम्

सिंहस्कन्धसमारूढां नानालंकार भूषिताम् ॥
चतुर्भुजां महादेवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ।
रक्तवस्त्रपरीधानां बालार्कसदृशीं तनुम् ।
नारदाद्यैः मुनिगणैः सेवितां भवगेहिनीम् ।
त्रिवली वलयोपेतां नाभिनाल सुवेशिनीम् ।
रत्न द्वीपे महाद्वीपे सिंहासनसमन्विते ।
प्रफुल्ल कमला रूढां ध्यायेत्तां भवगेहनीम् ॥

अथ यन्त्रोद्धारः

दुर्गायन्त्रम्प्रवक्ष्यामि शृगुष्व हरवल्लभे ॥ त्रिकोणं विन्यसेत्पूर्वंन्नवकोणसमन्वितम् ॥ त्रैबिम्बसहितं सर्वमष्टपत्रसमन्वितम् ॥ त्रिरेखासहितं वज्रम्भूपुरद्वयसंय्युतम् ॥ समीकृत्य यथोक्तेन विलिखेद्विधिनामुना ॥ नानास्त्रसंय्युतं लेख्यञ्चक्रम्मन्त्रविभूषितम् ॥ तत्र ताम्पूजयेद्देवीम्मूलप्रकृतिरूपिणीम् ॥

अथ मन्त्रोद्धारः

अथ दुर्गामनु वक्ष्ये दृष्टादृष्टफलप्रदम् ॥ मायादिः कर्णविद्धाह्यो

भूयोऽसौ सर्गवान्भवेत् ।। चान्तकश्च प्रतिष्ठावान्मारुतो भौतिकासनः ।। तारादिहृदयान्तोयम्मन्त्रो वस्वक्षरात्मकः ।।

अथ मन्त्र

ॐ ह्रींदुन्दुर्गायै नमः ।

अथ पूजाविधिः

प्रातः कृत्यादि पीठन्यासान्तं विधाय केसरेषु मध्ये च पीठशक्ती-र्विन्यसेत् ।। तद्यथा ।। आं प्रभायैनमः ईं मायायै नमः । ऊं जयायैनमः, ऋं सूक्ष्मायै नमः, लृं विशुद्धायैनमः, ऐं नन्दिन्यै नमः ।। औं सुप्रभायै नमः, अं विजयायै नमः, अःसर्वसिद्धिदायैनमः ।। तदुपरि ।। ॐ वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहासनाय हूंफट्नम इतिपूजयेत ।।

ततः ऋष्यादिन्यासः ।। शिरसि नारदऋषये नमः ।। मुखे गायत्री-छन्दसे नमः ।। हृदि दुर्गादेवतायै नमः ।।

ततः कराङ्गन्यासौ—ह्रांॐह्रींदुन्दुर्गायै अङ्गुष्ठाभ्यांनमः, ह्रींॐह्रीं-दुन्दुर्गायै तर्जनीभ्यां स्वाहा, ह्रूंॐह्रींदुन्दुर्गायै मध्यमाभ्यांवषट् ह्रैंॐह्रींदु-न्दुर्गायै अनामिकाभ्यां हुम्, ह्रौंॐह्रींदुन्दुर्गायै कनिष्ठिकाभ्यांवौषट्, ह्रःॐ-ह्रींदुन्दुर्गायै करतलकरपृष्ठाभ्यांफट् ।। एवं हृदयादि ।। ह्रांॐह्रींदुन्दुर्गायै हृदयायनमः, ह्रींॐह्रींदुन्दुर्गायै शिरसेस्वाहा, ह्रूंॐह्रींदुन्दुर्गायै शिखायैवषट् ह्रैंॐह्रींदुन्दुर्गायै नेत्रत्रयायवौषट्, ह्रौंॐह्रींदुन्दुर्गायै कवचायहुम्, ह्रः ॐह्रींदुन्दुर्गायै अस्त्रायफडिति षडङ्गादिन्यासः ।। तथा च निबन्धे । नमस्कारनियुक्तेन मूलमन्त्रेण देशिकः ।। ह्रीमाद्यैः सह कुर्वीत षडङ्गानि यथाविधिः ।।

अथ ध्यानम् ।। सिंहस्था शशिशेखरा मरकतप्रख्यैश्चतुर्भिभुजैः, षड्गञ्चक्रधनुःशरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभि र्शोभिता ।। आमुक्ताङ्गदहार-कङ्कणरणत्काञ्चीक्वणन्नूपुरा, दुर्गा दुर्गतिहारिणी भवतु नो रत्नोल्ल-सत्कुण्डला ।। एवंध्यात्वा मानसैः शङ्खस्थापनङ्कुर्यात् ।। ततः पीठपूजां कुर्यात् ।। केसरेषु मध्ये च आं प्रभायैनमः, ईं मायायैनमः, ऊं जयायैनमः, ऋं सूक्ष्मायैनमः, लृं विशुद्धायैनमः, ऊं ऐंनन्दिन्यैनमः ।। औं सुप्रभायैनमः ।।

अं विजयायैनम: ।। अ:सर्वसिद्धिदायैनम: ।। तदुपरि वज्रनखदंष्ट्रायुधाय महासिंहासनाय हुम्फट्नम: । दद्यादासनमेतेन मूर्तिमूलेन कल्पयेत् ।। तत: पुनर्घ्यात्वाऽऽवाहनादिपञ्चपुष्पाञ्जलिदानपर्यन्तंविधायावरणपूजामारभेत् ।। अग्निनैर्ऋतिवाय्वीशानकोणमध्ये दिक्षु च ।। ह्रांऊोंह्रींदुन्दुर्गायै हृदयायनम: ।। इत्यादिना पूजयेत् ।। तत: पत्रेषु पूर्वादि ।। जं जयायै०, विं विजयायै०, किं कीर्त्यै०, पं प्रीत्यैनम:, पं प्रभायै०, शं शुद्धायै०, मं मेधायै०, शं श्रुत्यै० ।। पत्राग्रेषु लं खड्गायनम:, वं खेटकायनम:, शं वाणायनम:, पं धनुषेनम:, संशूलाय०, हंतर्ज्जन्यै० तद्बहिरिन्द्रादिवज्रादींश्च पूजयेत् ।। ततो धूपादि-विसर्जनान्तङ्कर्म समापयेत् ।। अस्या वलिमन्त्रस्तु ।। एहि एहि पदद्वन्द्वम्म-दीयञ्च वलिन्देवि लुलायकपदद्वयं साधय द्वितीयम्ब्रूयात्खादय द्वितीयम्पुन: । सर्वसिद्धिपदंदेवी तत: स्वाहा पदं भवेत् ।। वलिदानस्य मन्त्रोऽयं मन्त्रिण्या परिकीर्त्तित: ।। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्ष: ।। अष्टसहस्रतिलैर्होम: ।। तथा च ।। वसुलक्षं जपेन्मन्त्रं तत्सहस्रतिलै: सह इत्यादिवचनात् ।।

अथ स्तोत्रम्

न मन्त्रन्नो यन्त्रन्तदपि च न जाने स्तुतिमहो न चाह्वानंध्यानन्त-दपि च न जाने स्तुतिकथा: ।। न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विल-पनम्परञ्जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणम् ।।1।। विधेरज्ञानेन द्रविण-विरहेणाऽलसतया विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत् ।। तदेतत्क्षन्त-व्यञ्जननि सकलोद्धारिणि शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।।2।। पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि वहव: सन्ति सरला: परंतेपाम्मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुत: ।। मदीयोऽयंत्याग: समुचितमिदंनो तव शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।।3।। जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता न वा दत्तंदेवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।। तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ।।4।। परित्यक्त्वा देवान्विविधविधि सेवाकुलतया मया पञ्चाशीतेरधिकमुपनीते तु वयसि ।। इदानीञ्चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता निरालम्बो लम्बो-दरजननि कं यामि शरणम् ।।5।। श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपम-गिरा निरातङ्को रङ्को विहरति चिरङ्कोटिकनकै: ।। तवापर्णे कर्णे विशति

मनुवर्णे फलमिदं जनः को जानीते जननि जपनीयञ्जपविधौ ॥6॥ चिता-भस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ॥ कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवींभवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटी फल-मिदम् ॥7॥ न मोक्षस्याकाङ्क्षा न च विभववाञ्छापि च न मे न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः ॥ अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै, मृडानी रुद्राणी शिवशिव भवानीति जपतः ॥8॥ नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः किं रूक्षचिन्तनपरैर्न कृतं वचोभिः ॥ श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे धत्से कृपामुचितमम्ब परंतवैव ॥9॥ आपत्सु मग्नः स्मरणंत्वदीयङ्करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि ॥ नैतच्छठत्वंमम भावयेथाः क्षुधातृषार्त्ता जननीं स्मरन्ति ॥10॥ जगदम्ब विचित्रमत्र किम्परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि ॥ अपराधपरम्परापरन्न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥11॥ मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि ॥ एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु ॥12॥ इति स्तोत्रम् ॥

अथ कवचम्

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिदम् ॥ पठित्वा पाठयित्वा च नरो मुच्येत सङ्कटात् ॥ अज्ञात्वा कवचन्देवि दुर्गामन्त्रञ्च यो जपेत् ॥ स नाप्नोति फलन्तस्य परञ्च नरकं व्रजेत् ॥ उमादेवी शिरः पातु ललाटे शूलधारिणी ॥ चक्षुषी खेचरी पातु कर्णौ चत्वरवासिनी ॥ सुगन्धा नासिके पातु वदनं सर्वधारिणी ॥ जिह्वाञ्च चण्डिका देवी ग्रीवां सौभद्रिका तथा ॥ अशोकवासिनी चेतो द्वौ बाहू वज्रधारिणी ॥ हृदयं ललिता देवी उदरं सिंहवाहिनी ॥ कटिम्भगवती देवी द्वावूरू विन्ध्यवासिनी ॥ महाबला च जङ्घे द्वे पादौ भूतलवासिनी ॥ एवं स्थितासि देवि त्वं त्रैलोक्ये रक्षा-त्मिका ॥ रक्ष मां सर्वगात्रेषु दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ इति कवचम् ॥

अथोपनिषत्

सर्वे देवा देवीमुपतस्थुः । कासि त्वम्महादेवि । साब्रवीदहम्ब्रह्म-स्वरूपिणी । मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकञ्जगत । शून्यञ्चाशून्यञ्च । अहमा-नन्दावानन्दौ ॥ अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहम्ब्रह्माणी वेदब्रह्माणि वेदितव्ये इति चाथर्वणी श्रुतिः ॥ अहम्पञ्चभूतानि अहं पञ्चतन्मात्राणि ॥ अहम-

खिलञ्जगत्, वेदोऽहमवेदोऽहम्, विद्याहमविद्याहम्, अजाहमनजाहम्, अधश्चोर्द्ध्वञ्च तिर्य्यक् चाहम् । अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि अहमादित्यैरुत विश्वेदेवैः ।। अहम्मित्रावरुणावुभौ विभर्मि अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ ।। अहं सोमं त्वष्टारम्पूषणम्भगं सन्दधामि ।। अहं विष्णुमुरुक्रमम्ब्रह्माणमुतप्रजापतिदधामि ।। द्रविणं हविष्मते सुप्रजाय यजमानाय सुन्वते ।। अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनाञ्चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ।। अहं सुवेर्यः पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।। य एवं वेद स देवीपदमाप्नोति । ते देवा अब्रुवन् ।। नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततंनमः ।। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।। तामग्निवर्णातपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषुजुष्टाम् ।। दुर्गान्देवी शरणमहम्प्रपद्ये सुतरां नाशयते तमः ।। देवीमम्बामजनयन्त देवास्तां विश्वरूपा पशवो वदन्ति । सा नो मन्द्रेषमूर्जन्दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्ठुतैतु ।। कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतामनन्तां वैष्णवीं स्कन्दमातरं सरस्वतीमदितिन्दक्षदुहितरन्नमाम्यहं पावनां शिवाम् ।। महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि ।। तन्नो देवी प्रचोदयात् ।। अदितिह्यजनिष्ट दक्षया दुहिता तव ।। तान्देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतवन्धवः ।। कामोयोनिः कमलावेत्रपाणिगुहाहस्ता मातरिश्वाशमिन्द्रः पुनर्गहा सफला मायया चापृथुकेन विश्वमातादि विद्या एषात्म शक्तिः । एषा विश्वमोहिनी । पाशाङ्कुशधनुर्वाणधरा एषा श्रीमहाविद्या य एवं वेद स शोकन्तरति । नमस्ते भगवति मातरस्मान्पाहि सर्वतः । सैषाष्टौ वसवः सैषा एकादश रुद्राः सैषा द्वादशादित्याः सैषा विश्वेदेवाः, सोमपा असोमपाश्च सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्धाः, सैषा सत्त्वरजस्तमांसि, सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी, सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः, सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि कलाकाष्ठादीनि भस्मरूपिणी तामहम्प्रणतोस्मि ।। नित्यपापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीं ।। अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शुभाम् ।। वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम् ।। अर्द्धेन्दुलसितंदेव्या वीजं सर्वार्थसाधकम् ।। एवमेकाक्षरम्मन्त्रंक्रतवः शुद्धचेतसः ।। ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ।। वामा या ब्रह्मभूतस्मात्यष्टवक्त्र-समन्वितम् ।। सूर्यो वामश्रोत्रविन्दुः संय्युक्ताष्टातृतीयकः । नारायणेन सम्मित्रो सावाद्य-

श्चाधरयुक्तय: ।। विधे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महानन्दप्रदायक: ।। हृत्पुण्डरीक-मध्यस्थाम्प्रात: सूर्यसमप्रभाम् ।। पाशाङ्कुशधरां सौम्यांवरदाभयहस्तकाम् ।। त्रिनेत्रां रक्तवसनाम्भक्तकामदुहाम्भजे ।। भजामि त्वाम्महादेवीम्महाभय-विनाशिनीम् ।। महादारिद्र्यशमनी महारूपास्वरूपिणी ।। यस्या: स्वरूपं-ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अनन्ता । यस्या गृहन्नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्यम् । यस्या जननन्नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अजा । एकैव सर्वत्र वर्त्तते तस्मादुच्यते एका । एकैकविश्व रूपिणी तस्मादुच्यतेऽनेका । अनन्ततपोवाच्यज्ञेयानन्ता-लक्ष्याजैकानेकानमन्त्राणाम्मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी ।। ज्ञाना-नाञ्चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ।। यस्या परतरन्नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्त्तिता । तांदुर्गांदुर्गमान्देवीन्दुराचारविघायिनीम् ।। नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ।। इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्व-शीर्षफलमाप्नोति इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा यो अर्चां स्थापयति शतलक्षञ्जप्त्वा नार्चाशुद्धिञ्च विन्दति । शतमष्टोत्तरञ्चास्य पुरश्चर्य्या-स्मृत: । दशवारम्पठेद्यस्तु सद्य: पापै: प्रमुच्यते ।। महादुर्गाणि तरति महा-देव्या प्रसादत: ।। सायमधीयानो दिवसकृतम्पापन्नाशयति । सायम्प्रात: प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसन्ध्यायां वा जप्त्वा वाक्सिद्धि-र्भवति । नूतनायाम्प्रतिमायांसन्निधौ जप्त्वा देवतासान्निध्यम्भवति । प्राण-प्रतिष्ठायाञ्जप्त्वा देवता भवति ।। भौमाश्विन्याम्महादेवीसन्निधौ जप्त्वा महामृत्युंतरति य एवं वेद ।। इति देव्या अथर्वशीर्षोपनिषत्समाप्ता ।।

अथ शतनामाष्टकम्

ईश्वर उवाच ।। शतनाम प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने ।। यस्य प्रसादमात्रेण दुर्गा प्रीता सदा भवेत ।।1।। सती साध्वी भवप्रीता भवानी भवमोचनी ।। आर्या दुर्गा जया आद्या त्रिनेत्रा शूलधारिणी ।।2।। पिनाक-धारिणी चित्रा चन्द्रघण्टा महातपा ।। मनोबुद्धिरहङ्कारा चित्तरूपा चिता चिति: ।।3।। सर्वमन्त्रमयी सत्या सत्यानन्दस्वरूपिणी ।। अनन्ता भाविनी भाव्या भवा भव्या सदागति: ।।4।। शम्भुपत्नी देवमाता चिन्ता रत्नप्रिया सदा ।। सर्वविद्या दक्षकन्या दक्षयज्ञविनाशिनी ।।5।। अपर्णा चैव पर्णा च

पाटला पाटलावती ॥ पट्टाम्वरपरीधाना कलमञ्जीररञ्जिनी ॥6॥ अमेया विक्रमा क्रूरा सुन्दरी कुलसुन्दरी ॥ नवदुर्गां च मातङ्गी मतङ्ग-मुनिपूजिता ॥7॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैन्द्री कौमारी वैष्णवी तथा ॥ चामुण्डा चैव वाराही लक्ष्मीश्च पुरुपाकृति ॥8॥ विमलोत्कर्षिणी ज्ञाना-क्रिया सत्या च वाक् प्रदा ॥ वहुला वहुलप्रेमा सर्ववाहनवाहना ॥9॥ निशुम्भ-शुम्भहननी महिषासुरमर्दिनी ॥ मधुकैटभहन्त्री च चण्डमुण्ड-विनाशिनी ॥10॥ सर्वाऽसुरविनाशा च सर्वदानवघातिनी ॥ सर्वशास्त्रमयी विद्या सर्वास्त्रधारिणी तथा ॥11॥ अनेकशस्त्रहस्ता च अनेकास्त्रविधारिणी ॥ कुमारी चैव कन्या च कौमारी युवती यतिः ॥12॥ अप्रौढा चैव प्रौढ़ा च वृद्धमाता वलप्रदा ॥ य इदञ्च पठेत्स्तोत्रंदुर्गानाम शताष्टकम् ॥13॥ नासाध्यं विद्यते देवि त्रिपु लोकेपु पार्वति ॥ धनंधान्यं सुतञ्जायां हयं हस्तिनमेव च ॥14॥ चतुर्वर्गन्तथा चान्ते लभेन्मुक्तिञ्च शाश्वतीम् ॥ कुमारीं पूजयित्वा च ध्यात्वा देवीं सुरेश्वरीम् ॥15॥ पूजयेत्परया भक्त्या पठेन्नाम शताष्टकम् ॥ तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि सर्वैः सुरवरैरपि ॥ राजानो दासतां यांति राज्यश्रियमवाप्नुयात् ॥16॥ गोरोचनलक्तककुङ्कुमेन सिन्दूर-कर्पूरमधूत्रयेन ॥ विलिख्य यन्त्रं विधिना विधिज्ञो भवेत्सदा धारयते पुरारिः ॥17॥ भौमावास्यानिशाभागे चन्द्रे शतभिपाङ्कते ॥ विलिख्य प्रपठेत्स्तोत्रं स भवेत्सम्पदाम्पदम् ॥18॥ इति शतनामाष्टोत्तरशतम् ॥

---

8. अथशिवतन्त्रम्

शिवध्यानम्

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारु चन्द्रावतंसं रत्ना कल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवरा भीतिहस्तं प्रसन्नम्। पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैः व्याघ्रकृत्ति वसानं विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिलभयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥

अथ यन्त्रोद्धारः

अनुक्तकल्पे यन्त्रन्तु लिखेत्पद्मदलाष्टकम् ॥
षट्कोणकर्णिकन्तत्र वेदद्वारोपशोभितम् ॥

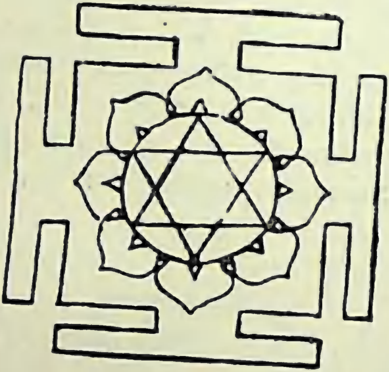

अथ मन्त्रोद्धारः

नमस्कारं समुद्धृत्य वान्तं नेत्रसमन्वितम् ॥ वारुणम्मुखवृत्तञ्च वायु लालाटसंय्युतम् ॥ अमुम्पञ्चाक्षरम्मन्त्रम्पञ्चकामफलप्रदम् ॥ प्रणवादिर्यदा देवि तदा मन्त्रः षडक्षरः ॥

SUBHASH CALENDAR CO.,
4416, NAI SARAK, DELHI-6.

अथ मन्त्रः

उँ नमश्शिवाय ।

अथ पूजाप्रयोगः

प्रातः कृत्यादिकङ्कृत्वा पूजागृहङ्गत्वा आसने उपविश्य दीपम्प्रज्वाल्य उँ दींदीपनाथायनमः इति दीपं सम्पूज्य भूतापसर्पणङ्कृत्वा पूजामारभेत् ।। तद्यथा ।।

अथ ध्यानम् ।। वन्धूकसन्निभन्देवन्त्रिनेत्रञ्चन्द्रशेखरम् ।। त्रिशूलधारिणन्देवञ्चारुहासं सुनिर्म्मलम् ।।1।। कपालधारिणन्देवं वरदाभयहस्तकम् ।। उमया सहितं शम्भुन्ध्यायेत्सोमेश्वरं सदा ।।2।। इति ध्यानम् ।।

नोट—शिवपूजन के लिए हमारी लिखी शिवार्चनपद्धति का प्रयोग करें ।

अथशिवकवचम्

अस्य श्री शिवकवचस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीसदाशिवरुद्रोदेवता ह्रीं शक्तिः, रं कीलकम्, श्रीं ह्रीं क्लीं वीजम् श्रीसदाशिव प्रीत्यर्थे शिवकवचस्तोत्र जपे विनियोगः ।

अथ करन्यासः—उँ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने उँ रां सर्वशक्ति धाम्ने ईशानात्मने अङ्गुष्ठाभ्यांनमः, उँ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने उँ नरींनित्यतृप्तिधाम्ने तत्पुरुषात्मने तर्जनीभ्यांनमः, उँ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने उँ मंरूं अनादिशक्तिधाम्ने अघोरात्मने मध्यमाभ्यांनमः, उँ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने उँ शिं रैं स्वतन्त्रशक्तिधाम्ने वामदेवात्मने अनामिकाभ्यां नमः, उँ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने उँ वां रों अतुल्यशक्तिधाम्ने सद्योजातात्मने कनिष्ठाभ्यांनमः, उँ नमो भगवते ज्वलज्ज्वालामालिने उँ यं रः अनादिशक्तिधाम्ने सर्वात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः, एवं हृदयादि ।।

अथ ध्यानम् ।। वज्रदंष्ट्रन्त्रिनयनङ्कालकण्ठमरिन्दमम् ।। सहस्रकरमत्युग्रं वन्दे शम्भुमुमापतिम् ।।1।। अथापरं सर्वपुराणगुह्यन्निः शेषपापौघहरम्पवित्रम् ।। जयप्रदं सर्वविपत्प्रमोचनं वक्ष्यामि शैवङ्कवचं हितांय ते

॥2॥ ऋषभ उवाच ॥ नमस्कृत्वा महादेव विश्वव्यापिनमीश्वरम् ॥ वक्ष्ये शिवमयं वर्म्म सर्वरक्षाकरन्नृणाम् ॥3॥ शुचौ देशे समासीनो यथावत्कल्पितासन: ॥ जितेन्द्रियो जितप्राणश्चिन्तयेच्छिवमव्ययम् ॥4॥ हृत्पुण्डरीकान्तरसन्निविष्टं स्वतेजसा व्याप्तनभोवकाशम् ॥ अतीन्द्रियं सूक्ष्ममनन्तमाद्यंन्ध्यायेत्परानन्दमयम्महेशम् ॥5॥ ध्यानावधूताखिलकर्मबन्धश्चिरञ्चिदानन्दनिमग्नचेता: ॥ षडक्षरन्याससमाहितात्मा शैवेन कुर्यात्कवचेन रक्षाम् ॥6॥ माम्पातु देवोऽखिलदेवतात्मासंसारकूपे पतितङ्गभीरे ॥ तन्नाम दिव्यं वरमन्त्रमूलन्धुनोतु मे सर्वमघं हृदिस्थम् ॥7॥ सर्वत्र मां रक्षतु विश्वमूर्त्तिर्ज्योतिर्मयानन्दघनश्चिदात्मा ॥ अणोरणीयानुरुशक्तिरेक: स ईश्वर: पातु भयादशेषात् ॥8॥ यो भूस्वरूपेण विभर्त्तिविश्वम्पायात् स भूमेर्गिरिशोऽष्टमूर्त्ति: ॥ योऽपांस्वरूपेण नृणाङ्करोति सञ्जीवनं सोऽवतु माञ्जलेभ्य: ॥9॥ कल्पावसाने भुवनानि दग्ध्वा सर्वाणि यो नृत्यति भूरिलील: ॥ स कालरुद्रोऽवतु मान्दवाग्नेर्वात्यादिभीतेरखिलाञ्च तापात् ॥10॥ प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासो विद्यावराभीतिकुठारपाणि: ॥ चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्र: प्राच्यां स्थितं रक्षतु मामजस्रम् ॥11॥ कुठारखेटाङ्कुशपाशशूलकपालढक्काक्षगुणान्दधान: ॥ चतुर्मुखो नीलरुचिस्त्रिनेत्र: पायादघोरो दिशि दक्षिणस्याम् ॥12॥ कुन्देन्दुशङ्खस्फटिकावभासो वेदाक्षमालावरदाभयाङ्क: ॥ त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्र उरुप्रभाव: सद्योधिजातोऽवतु माम्प्रतीच्याम् ॥13॥ वराक्षमालाभयटङ्कहस्त: सरोजकिञ्जल्कसमानवर्ण: ॥ त्रिलोचनश्चारुचतुर्मुखो माम्पायादुदीच्यान्दिशि वामदेव: ॥14॥ वेदाभयेष्टाङ्कुशपाशटङ्ककपालढक्काक्षकशूलपाणि ॥ सितद्युति: पञ्चमुखोऽवतान्मामीशान ऊर्द्ध्वम्परमप्रकाश: ॥15॥ मूर्द्धानमव्यान्मम चन्द्रमौलि: र्भालम्ममाव्यादथ भालनेत्र: ॥ नेत्रे ममाव्याद्भगनेत्रहारी नासां सदा रक्षतु विश्वनाथ: ॥16॥ पायाच्छ्रुती मे श्रुतिगीतकीर्त्ति: कपोलमव्यात्सततङ्कपाली ॥ वक्त्रं सदा रक्षतु पञ्चवक्त्रो जिह्वां सदा रक्षतु वेदजिह्व: ॥17॥ कण्ठङ्गिरीशोऽवतु नीलकण्ठ: पाणिद्वयम्पातु पिनाकपाणि: ॥ दोर्म्मूलमव्यान्मम धर्मबाहुर्वक्षस्थलन्दक्षमखान्तकोऽव्यात् ॥18॥ ममोदरम्पातु गिरीन्द्रधन्वा मध्यम्ममाव्यान्मदनान्तकारी ॥ हेरम्बतातो मम पातु

नाभिम्पायात्कटिन्धूर्जटिरीश्वरो मे ॥19॥ ऊरुद्वयम्पातु कुबेरमित्रो जानुद्वयम्मे जगदीश्वरोऽव्यात् ॥ जङ्घायुगम्पुङ्गवकेतुरव्यात्पादौ ममाव्यात्सुरवन्द्यपाद: ॥20॥ महेश्वर: पातु दिनादियामे माम्मध्ययामेऽवतु वामदेव: ॥ त्रियम्बक: पातु तृतीययामे वृषध्वज: पातु दिनान्त्ययामे ॥ 21 ॥ पायान्निशादौ शशिशेखरो माङ्गङ्गाधरो रक्षतु मान्निशीथे ॥ गौरीपति: पातु निशावसाने मृत्युञ्जयो रक्षतु सर्वकालम् ॥ 22 ॥ अन्त:स्थितं रक्षतु शङ्करो मां स्थाणु: सदा पातु वहि: स्थितम्माम् ॥ तदन्तरे पातु पति: पशूनां सदाशिवो रक्षतु मां समन्तात् ॥ 23॥ तिष्ठन्तमव्याद्भुवनैकनाथ: पायाद्व्रजन्तम्प्रमथाधिनाथ: ॥ वेदान्तवेद्योऽवतु मान्निषण्णम्मामव्यय: पातु शिव: शयानम् ॥ 24 ॥ मार्गेषु मां रक्षतु नीलकण्ठ: शैलादिदुर्गेषु पुरत्रयारि: ॥ अरण्यवासादिमहाप्रवासे पायान्मृगव्याध उदारशक्ति: ॥ 25 ॥ कल्पान्तकाटोप-पटुप्रकोपस्फुटाट्टहासोच्चलिताण्डकोश: ॥ घोररिसेनार्णवदुर्निवार महाभयाद्रक्षतु वीरभद्र: ॥ 26 ॥ पत्त्यश्वमातङ्गरथावरूथसहस्र- लक्षायुतकोटिभीषणम् ॥ अक्षौहिणीनां शतमाततायिनांच्छिन्द्याम्मृडो घोरकुठारधारया ॥ 27 ॥ निहन्तुदस्यून्प्रलयानलार्चिज्वलन्त्रिशूलन्त्रिपुरान्तकस्य ॥ शार्दूलसिंहर्क्षवृकादिहिंस्रान् सन्त्रासयत्वीश धनु: पिनाक: ॥ 28 ॥ दु:स्वप्नदु:शकुनदुर्गतिदौर्मनस्यदुर्भिक्षदुर्व्यसनदु:सहदुर्यशांसि ॥ उत्पाततापविषभीतिमसद्ग्रहार्त्तिव्याधींश्च नाशयतु मे जगतामधीश: ॥ 29 ॥ ॐ नमो भगवते सदाशिवाय सकलतत्त्वात्मकाय सर्वमन्त्ररूपाय सर्वयन्त्राधिष्ठिताय सर्वतन्त्ररूपाय सर्वतत्त्वविदूराय ब्रह्मारुद्रावतारिणे नीलकण्ठाय पार्वतीमनोहरप्रियाय सोमसूर्याग्निलोचनाय भस्मोद्धूलितविग्रहाय महामणिमुकुटधारणाय माणिक्यभूषणाय सृष्टिस्थितिप्रलयकालरौद्रावताराय दक्षाध्वरध्वंसकाय महाकालभेदनाय मूलधारैकनिलयाय तत्त्वातीताय गङ्गाधराय सर्वदेवाधिदेवाय षडाश्रयाय वेदान्तसाराय ॥ त्रिवर्गसाधनायान-न्तकोटिब्रह्माण्डनायकायाऽनन्त-वासुकि-तक्षक- कर्कोटकशङ्खकुलिकपद्म-महापद्मेत्यष्टमहानागकुलभूषणाय प्रणवस्वरूपाय चिदाकाशाया-काशदिक्स्वरूपाय ग्रहनक्षत्रमालिने सकलाय कलङ्करहिताय सकललोकैककर्त्रे सकललोकैकसंहर्त्रे

सकललोकैकगुरवे सकललोकैक-साक्षिणे सकलनिगमगुह्याय सकललोकैकवर-प्रदाय सकललोकैकशङ्कराय शशाङ्कशेखराय शाश्वतनिजावासाय निराभासाय निरामयाय निर्म्मलाय निर्लोभाय निर्मदाय निश्चिन्ताय निरहङ्काराय निरङ्कुशाय निष्कलङ्काय निर्गुणाय निष्कामाय निरुपप्लवाय निरवद्याय निरन्तराय निष्कारणाय निरातङ्काय निष्प्रपञ्चाय निस्सङ्गाय निर्द्वन्द्वाय निराधाराय नीरागाय निष्क्रोधाय निर्मलाय निष्पापाय निर्भयाय निर्विकल्पाय निर्भेदाय निष्क्रियाय तिस्तुलाय निः संशयाय निरञ्जनाय निरुपमविभवाय नित्यशुद्ध-वुद्धिपरिपूर्णसच्चिदानन्दाद्वयाय परमशान्तस्वरूपाय तेजोरूपाय तेजोमयाय जय जय रुद्र महारौद्र महावतार महाभैरव कालभैरव कल्पान्तभैरव कपालमालाधर खट्वाङ्गखड्गचर्मपाशाङ्कुशडमरु-शूलचाप-वाणगदाशक्तिभिन्दिपालतोमरमुसलमुद्गापाशपरिघभुशुण्डीशतघ्नीचक्राद्यायु-धभीषणकरसहस्रमुखदंष्ट्राकरालवदन विकटाट्टहासविस्फारितब्रह्माण्डमण्डल नागेन्द्रकुण्डल नागेन्द्रहार नागेन्द्रवलय नागेन्द्रचर्मधर मृत्युञ्जय त्र्यम्वक त्रिपुरान्तक विश्वरूप विरूपाक्ष विश्वेश्वर वृषभवाहन विश्वतोमुख सर्वतो रक्ष रक्ष मां ज्वल ज्वल महामृत्युमपमृत्युभयन्नाशय नाशय, चोरभयमुत्साद-योत्सादय, विषसर्पभयं शमय शमय, चोरान्मारय मारय, मम शत्रूनुच्चाटयोच्चाटय, त्रिशूलेन विदारय विदारय, कुठारेण भिन्धि भिन्धि, खड्गेन छिन्धि छिन्धि, खट्वाङ्गेन विपोथय विपोथय, मुसलेन निष्पेषय निष्पेषय, वाणैः सन्ताडय सन्ताडय, रक्षांसि भीषय भीषय, अशेषभूतानि विद्रावय विद्रावय, कूष्माण्ड-वेतालमारीगणब्रह्मराक्षसगणान् सन्त्रासय सन्त्रासय, ममाभयङ्कुर कुरु, वित्रस्तम्मामाश्वासयाश्वासय, नरकमहा भयान्मामुद्धरोद्धर सञ्जीवय सञ्जीवय, क्षुत्तृड्भ्याम्मामाप्याययाप्यायय, दुःखातुरम्मामानन्दयानन्दय, शिवकवचेन मामाच्छादयाच्छादय, मृत्यु ञ्जय त्र्यम्वक सदाशिव नमस्ते ॥ ऋषभ उवाच ॥ इत्येतत्कवचं शैवं वरदं व्याहृतम्मया ॥ सर्वबाधाप्रशमनं रहस्यं सर्वदेहिनाम् ॥ 30 ॥ यः सदा धारयेन्मर्त्यः शैवङ्कवचमुत्तमम् ॥ न तस्य जायते कापि भयं शम्भोरनुग्रहात् ॥ 31 ॥ क्षीणायुः प्राप्तमृत्युर्वा महारोगहतोऽपि वा ॥ सद्यः सुखमवाप्नोति दीर्घमायुश्च विन्दति ॥ 32 ॥ सर्वदारिद्र्यशमनं

सौमङ्गल्यविवर्द्धनम् ।। यो धत्ते कवचं शैवं स देवैरपि पूज्यते ।। 33 ।। महापातकसङ्घातैर्मुच्यते चोपपातकैः ।। देहान्ते मुक्तिमाप्नोति शिववर्मानुभावतः ।। 38 ।। त्वमपि श्रद्धया वत्स शैवङ्कवचमुत्तमम् ।। धारयस्व मया दत्तं सद्यः श्रेयो ह्यवाप्स्यसि ।। 35 ।। सूत उवाच ।। इत्युक्त्वा ऋषभो योगी तस्मै पार्थिवसूनवे ।। ददौ शङ्खम्महारावखड्गञ्चारिनिषूदनम् ।। 36 ।। पुनश्च भस्म सम्मन्त्र्य तदङ्गम्परितोऽस्पृशत् ।। गजानां षट्सहस्रस्य द्विगुणस्य वलन्ददौ ।। 37 ।। भस्मप्रभावात्सम्प्राप्त-बलैश्वर्यधृतिस्मृतिः ।। स राजपुत्रः शुशुभे शरद इव श्रिया ।। 38 ।। तमाह प्राञ्जलिम्भूयः स योगी नृपनन्दनम् ।। एष खड्ग मया दत्तस्तपो मन्त्रानुभावितः ।। 39 ।। शितधारमिमं खड्गं यस्मै दर्शयसे स्फुटम् ।। स सद्यो म्रियते शत्रुः साक्षान्मृत्युरपि स्वयम् ।। 40 ।। अस्य शङ्खस्य निर्ह्लादं ये श्रृण्वन्ति तवाहिताः ।। ते मूर्च्छिताः पतिष्यन्ति न्यस्तशस्त्रा विचेतनाः ।। 41 ।। खड्गशङ्खाविमौ दिव्यौ परसैन्यविनाशिनौ ।। आत्मसैन्यस्वपक्षाणां शौर्यतेजोविवर्द्धनौ ।। 42 ।। एतयोश्च प्रभावेण शैवेन कवचेन च ।। द्विषट्सहस्रनागानाम्बलेन महतापि च ।। 43 ।। भस्मधारणसामर्थ्याच्छत्रुसैन्यं विजेष्यसि ।। प्राप्य सिंहासनम्पित्र्यङ्गोप्ताऽसि पृथिवीमिमाम् ।। 44 ।। इति भद्रायुषं सम्यगनुशास्य समातृकम् ।। ताभ्यां सम्पूजितः सोऽथ योगी स्वैरगतिर्ययौ ।। 45 ।। इति शिवकवचं सम्पूर्णम् ।।

अथोपनिषत्

ओं नमश्शिवाय ओं नमोऽस्तु शर्व शम्भो त्रिनेत्र चारुगात्र त्रैलोक्यनाथ उमापते दक्षयज्ञविध्वंसकारक सकामाङ्गनाशन घोरपापप्रणाशन महापुरुष महोग्रमूर्त्ते सर्वसत्त्वक्षयङ्कर शुभङ्कर महेश्वर त्रिशूलधर स्मरारे गुहाधामन् दिग्वासः महाशङ्खशेखर-जटाधर कपालमालविभूषितशरीर वामचक्षुक्षुभितदेवप्रजाध्यक्ष भगाक्ष्णोःक्षयङ्कर भीससेननाथ पशुपते कामाङ्गदहन चत्वरवासिन् शिव महादेव ईशान शङ्कर भीमभव वृषध्वज कैटभ प्रौढ महानाथेश्वर भूतिरत अविमुक्तक रुद्ररुद्रेश्वर स्थाणो एकलिङ्ग कालिन्दीप्रिय श्रीकण्ठ अपराजित रिपुभयङ्कर सन्तोषपते वामदेव अघोर तत्पुरुष महावीर अघोरमूर्त्ते शान्त सरस्वतीकान्त सहस्रमूर्ते महोद्भव विभो कालाग्ने

रुद्र रौद्र हर महीधरप्रिय सर्वतीर्थाधिवास हंस कामेश्वर केदार अधिपते परिपूर्ण मुचुकुन्द मधुनिवास कृपाणपाणे भयङ्कर विद्याराज सोमराज कामराज महीधरराजकन्याहृदब्जवसते समुद्रशायिन् गयामुखगोकर्णब्रह्मयोने सहस्रवक्त्राक्षिचरणहाटकेश्वर नमस्ते नमस्ते ।। इत्युपनिषत् ,।

अथ शतनाम

शिवो महेश्वरः शम्भुः पिनाकी शशिशेखरः ।।
वामदेवो विरूपाक्षः कपर्दी नीललोहितः ।।1।।
शङ्करः शूलपाणिश्च खट्वाङ्गी विष्णुवल्लभः ।।
शिपिविष्टोऽम्बिकानाथः श्रीकण्ठो भक्त-वत्सलः ।।2।।
भवः सर्वः त्रिलोकेशः शितिकण्ठः शिव प्रियः ।
उग्रः कपालिः कामारिरन्धकासुरसूदनः ।।3।।
गंगाधरो ललाटाक्षः कालकालः कृपानिधिः ।
भीमः परशुहस्तश्च मृगपाणिः जटाधरः ।।4।।
कैलासवासी कवची कठोरस्त्रिपुरान्तकः ।
वृषाङ्को वृषभारूढो भस्मोद्वलितविग्रहः ।।5।।
सामप्रियः स्वरमयस्त्रयी मूर्त्तिरनीश्वरः ।
सर्वज्ञः परमात्मा च सोमसूर्याग्निलोचनः ।।6।।
हविर्यज्ञमयः सोमः पञ्चवक्त्रः सदाशिवः ।
विश्वेश्वरो वीरभद्रो गणनाथः प्रजापतिः ।।7।।
हिरण्यरेता दुर्धर्षो गिरीशो गिरिशोऽनघः ।
भुजंगभूषणो भर्गो गिरिधन्वा गिरि प्रियः ।।8।।
कृत्तिवासाः पुरारातिर्भगवान् प्रमथाधिपः ।
मृत्युंजयः सूक्ष्मतनुः जगद्व्यापी जगद् गुरुः ।।9।।
व्योमकेशो महासेनः जनकश्चारु विक्रमः ।
रुद्रोभूतपतिः स्थाणुः अहिर्बुध्न्यो दिगम्बरः ।।10।।
अष्टमूर्त्तिरनेकात्मा सात्त्विकः शुद्ध विग्रहः ।
शाश्वतः खण्डपरशुरजः पाशविमोचकः ।।11।।
मृडः पशुपतिर्देवो महादेवोऽव्ययः प्रभुः ।

पूषदन्त मिदव्यग्रो दक्षाध्वरहरो हर: ॥12॥
भगनेत्र भिदव्यक्त: सहस्राक्ष: सहस्रपात् ।
अपवर्गप्रदोऽनन्त: तारक: परमेश्वर: ॥13॥
इमानि दिव्यनामानि जप्यन्ते सर्वदा मया ।
नामकल्पलतेयम्मे सर्वाभीष्टदायिनी ॥14॥
नामान्येतानिसुभगे शिवदानि न संशय: ।
वेद: सर्वस्वभूतानि नामान्येतानि वस्तुत: ॥15॥
एतानि यानि नामानि तानि सर्वार्थदान्यत: ।
जप्यन्ते सादरं नित्यं मयानियम पूर्वकम् ॥16॥
वेदेषु शिव नामानि श्रेष्ठानि अघहराणि च ।
सन्त्यनन्तानि सुभगे वेदेषु विविधेष्वपि ॥17॥
तेभ्यो नामानि संगृह्य कुमाराय महेश्वर: ।
अष्टोत्तर सहस्रं तु नाम्नामुपदिशत्पुरा ॥18॥
इति शिवाष्टोत्तर शतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

9. अथ गणेशतन्त्रम्

गणेशध्यानम्

नवरत्नमयं द्वीपं स्मरेदिक्षुरसाम्वुधौ ।
तद्वीचि धौत पर्यन्तं मन्दमारुत सेवितम् ॥1॥
मन्दारपारिजातादि कल्पवृक्ष लता कुलम् ।
उद्भूतरत्न छायाभिररुणीकृत भूतलम् ॥2॥
उद्यद् दिनकरेन्दुभ्यामुद्भासितदिगन्तरम् ।
तस्यमध्ये पारिजातं नवरत्नमयं स्मरेत् ॥3॥

Ganesh Ji

Subhash Calendar Co.
Nai Sarak. DELHI-6.

ऋतुभिः सेवितं षड्भिरनिशं प्रीति वर्धनैः ।
तस्याधस्तान् महापीठे रचिते मातृकाम्वुजे ॥4॥
षट्कोणान्तस्त्रिकोणाढ्यं महागणपतिं स्मरेत् ॥
गण्डपाली गलद्दान पूर लालसमानसान् ।
द्विरेफान्कर्णतालाभ्यां वारयन्तं मुहुर्मुहुः ॥5॥
कराग्रधृतमाणिक्य कुम्भवक्त्र विनिस्सृतैः ।
रत्नवर्षैः प्रीणयन्तं साधकं मदविह्वलम् ।
माणिक्य मुकुटोपेतं रत्नाभरणभूषितम् ॥6॥

अथ यन्त्रोद्धारः

षट्कोणञ्च त्रिकोणञ्च तद्वहिः अन्यत्सर्वम्मातृकायन्त्रवत् ।

अथ मन्त्रोद्धारः

श्रीशक्तिस्मरभूविघ्नवीजानि प्रथमं वदेत् ॥ ङेऽन्तङ्गणपतिम्पश्चाद्वरान्ते वरदम्परम् ॥ उक्त्वा सर्वजनम्मेऽन्ते वशमानय ठद्वयम् ॥ अष्टाविंशत्यक्षरोऽयन्तारांद्यो मनुरीरितः ॥

अथ मन्त्रः

उों श्रीं ह्रीं क्लीं ग्लौं गंगणपतये वरवरद सर्वजनम्मे वशमानय ठः ठः ॥

अथ पूजाप्रयोगः

प्रातः कृत्यादि पीठन्यासान्तं विधाय पूर्वोक्तपीठशक्तीर्विन्यस्य ॥ तद्यथा ॥ केशरेषु मध्ये च ॥ तीव्रायै० ज्वालिन्यै० नन्दायै० भोगदायै० कामरूपिण्यै० उग्रायै० तेजोवत्यै० सत्यायै० विघ्ननाशिन्यै० तदुपरि मध्ये सर्वशक्तिकमलासनाय नमः ॥ सर्वत्र प्रणवादि नमोऽन्तेन पूजयेत् ॥

ततः ऋष्यादिन्यासमाचरेत्—शिरसि गणकऋषये नमः ॥ मुखे निचृदगायत्रीच्छन्दसे नमः ॥ हृदि गणपतयेदेवतायै नमः ॥

ततः कराङ्गन्यासौ—उों ह्लींश्रींक्लींग्लौंगंगां अङ्गुष्ठाभ्यान्नमः ॥ उों श्रींह्लींक्लींग्लौंगंगीं तर्जनीभ्यांस्वाहा ॥ 6 ॥ एवं गूंमध्यमाभ्यां वषट् ॥ 6॥ गैं तर्जनीभ्यांस्वाहा ॥ 6 ॥ अनामिकाभ्यां हूम् ॥ गौं कनिष्ठाभ्यांवषट् ॥ गःकरतलकरपृष्ठाभ्याम्फट् ॥ एवं हृदयादिषु ॥ केचित्तु उों गांहृदयायनमः श्रींगींशिरसेस्वाहेति तत्त्वषड्बीजस्थस्वबीजेन दीर्घभाजा प्रकल्पयेत् ॥ इति वचनाद्विशिष्टस्यैव ग्रहणात् ॥

अथ षोडशोपचारक्रमेण पूजाविधिः

अथ ध्यानम्—एकदन्तं शूर्पकर्णङ्गजवक्त्रञ्चतुर्भुजम् पाशाङ्कुशधरन्देवम्मोदकं बिभ्रतङ्करैः । रक्तपुष्पमयीम्मालाङ्कण्ठे हस्ते परां शुभाम् भक्तानां वरदं सिद्धिबुद्धिभ्यां सेवितं सदा । सिद्धिबुद्धिप्रदं नृणान्धर्मार्थकाममोक्षदम् । ब्रह्मरुद्रहरीन्द्राद्यैस्संस्तुतम्परमर्षिभिः ॥ इति ध्यानम् ॥

अथावाहनम्—आगच्छ जगदाधार सुरासुरवरार्चित ॥ अनाथनाथ सर्वज्ञ गीर्वाणपरिपूजित ॥ इत्यावाहनम् ॥

अथासनम्—स्वर्णसिंहासनन्दिव्यन्नानारत्नसमन्वितम् ॥ समर्पितम्मया देव तत्र त्वं समुपाविश ॥ इत्यासनम् ॥

अथ पाद्यम्—देवदेवेश सर्वेश सर्वतीर्थाहृतञ्जलम् ॥ पाद्यङ्गृहाण गणपते गन्धपुष्पाक्षतैर्युतम् ॥ इति पाद्यम् ॥

अथार्घ्यम्—प्रवालमुक्ताफलपूगरत्नन्ताम्बूलजाम्बूनदमष्टगन्धम् ॥ पुष्पाक्षतायुक्तममोघशक्ते दत्तम्मयार्घ्यं सफलीकुरुष्व ॥ इत्यर्घ्यम् ॥

अथाचमनीयम्—गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्यः प्रार्थितन्तोयमुत्तमम् ॥ कर्पूरैलालवङ्गादिवासितं स्वीकुरु प्रभो ॥ इत्याचमनीयम् ॥

सुगन्धिततैलम्—चम्पकाशोकबकुलमालतीमल्लिकादिभिः ॥ वासितं स्निग्धताहेतुन्तैलञ्चारु प्रगृह्यताम् ॥ इति तैलम् ॥

अथ दुग्धस्नानम्—कामधेनुसमुद्भूतं सर्वेषाञ्जीवनम्परम् ॥ पावनं यज्ञहेतुन्ते पयः स्नानार्थमर्पितम् ॥ इति दुग्धस्नानम् ।

अथ दधिस्नानम्—धेनुदुग्धसमुद्भूतं शुद्धं सर्वगतं प्रियम् ॥ मयानीतन्दधि वरं स्नानार्थम्प्रतिगृह्यताम् ॥ इति दधिस्नानम् ॥

अथ घृतस्नानम्—नवनीतसमुत्पन्नं सर्वसन्तोषकारणम् ॥ यथाङ्गंदेवताहारङ्घृतं स्नातुं समर्पितम् ॥ इति घृतस्नानम् ॥

अथ मधुस्नानम्—रक्तसारसम्भूतं सर्वतेजोविवर्द्धनम् ॥ सर्वपुष्टिकरन्देव मधु स्नानार्थमर्पितम् ॥ इति मधुस्नानम् ॥

अथ शर्करास्नानम्—इक्षुसारसमुद्भूतां शर्करां सुमनोहराम् ॥ मलापहारिणीं स्नातुङ्गृहाण त्वम्मयार्पिताम् ॥ इति शर्करास्नानम् ॥

अथ गुडस्नानम्—सर्वमाधुर्यताहेतुस्स्वादुस्सर्वप्रियङ्करः । पुष्टिकृत्स्नातुमानीतं इक्षुसारभवो गुडः ॥ इति गुडस्नानम् ॥

अथ मधुपर्कम्—कांस्ये कांस्येन पिहितो दधिमध्वाज्यपूरितः ॥ मधुपर्को मयानीतः पूजार्थम्प्रतिगृह्यताम् ॥ इति मधुपर्कः ॥

अथ शुद्धोदकस्नानम्—सर्वतीर्थाहृतन्तोयम्मया प्रार्थनया विभो ॥ सुवासितङ्गृहाणेदं सम्यक् स्नातुं सुरेश्वर ॥ इति शुद्धोदकस्नानम् ॥

अथ वस्त्रम्—रक्तवस्त्रयुगन्देव लोकलज्जानिवारणम् ॥ अनर्घ्यमतिसूक्ष्मञ्च गृहाणेदम्मयार्पितम् ॥ इति वस्त्रम् ॥

अथोपवीतम्—राजतम्ब्रह्मसूत्रञ्च काञ्चनं रक्तसंयुतम् ॥ भक्त्योपपादितन्देव गृहाण परमेश्वर ॥ इति यज्ञोपवीतम् ॥

अथ भूषणम्—अनेकरत्नयुक्तानि भूषणानि बहूनि च ॥ तत्तदङ्गे काञ्चनानि योजयामि तवाज्ञया ॥ इति भूषणानि ॥

अथ चन्दनम्—अष्टगन्धसमायुक्तं रक्तचन्दनमुत्तमम् ॥ द्वादशाङ्गेषु ते देव लेपयामि कृपाङ्कुरु ॥ इति चन्दनम् ॥

अथाक्षताः—रक्तचन्दनसंमिश्रांस्तन्दुलांस्तिलकोपरि ॥ शोभायै सम्प्रदास्यामि गृहाण परमेश्वर ॥ इत्यक्षताः ॥

अथ पुष्पाणि—पाटलङ्कर्णिकारञ्च बन्धूकं रक्तपङ्कजम् ॥ मोगरम्मालतीपुष्पङ् गृहाण सुमनोहरम् ॥ इति पुष्पाणि ॥

अथ धूपः—दशांगगुग्गुलन्धूपं सर्वसौगन्ध्यकारकम् ॥ सर्वपापक्षयकरन्त्वं गृहाण मयार्पितम् ॥ इति धूपः ॥

अथ दीपः—सर्वज्ञ सर्वलोकेश तमोनाशनमुत्तमम् ॥ गृहाण मङ्गलन्दीपन्देवदेव नमोऽस्तु ते ॥ इति दीपः ॥

अथ नैवेद्यानि—नानापक्वान्नसंयुक्तम्पायसं शर्करान्वितम् ॥ नानाव्यञ्जनशोभाढ्यं शाल्योदनमनुत्तमम् ॥ दधिदुग्धघृतैर्युक्तं लवङ्गैलासमन्वितम् ॥ मरीचिचूर्णसहितक्वथिकावटकान्वितम् ॥ राजिकाधान्यसंयुक्तम्मेथीपिष्टं स-तक्रकम् ॥ हिङ्गु-जीरक-कूष्माण्ड-म्मरीचि-माष-पिष्टकैः ॥ सम्पादितैः सुपक्वैश्च भर्जितैर्वटकैर्युतम् ॥ मोदकापूप-लड्डूक-शष्कुली-मण्डका-दिभिः ॥ पर्प्पटैरपि संयुक्तन्नैवेद्यममृतान्वितम् हरिद्रा-हिङ्गु-लवणसहितं सूपमुत्तमम् । स सामुद्रङ् गृहाणेदम्भोजनङ्कुरु सादरम् । इति नैवेद्यानि ॥

अथाचमनीयम्—सुतृप्तिकारकन्तोयं सुगन्धञ्च पिबेच्छया । त्वयि तृप्ते जगत्तृप्तन्नित्यतृप्ते महात्मनि । उत्तरापोशनार्थन्ते दद्मि तोयं सुवासितम् । मुखपाणिविशुद्ध्यर्थम्पुनस्तोयन्ददामि ते ॥ इत्याचमनीयम् ॥

अथ फलानि—दाडिमम्मधुरन्निम्बु-जम्बाम्र-पनसादिकम् ॥ द्राक्षारम्भाफलम्पक्वङ्कर्कन्धूः खार्जुरम्फलम् ॥ नारिकेलञ्च नारिङ्गमञ्जिरञ्जम्बिरन्तथा । उर्वारुकञ्च देवेश फलान्येतानि गृह्यताम् ॥ इति फलानि ।

अथ साचमनीयङ्करोद्वर्त्तनादिकम्—मुखपाणिविशुद्ध्यर्थम्पुनस्तोयन्ददामि ते ॥ गृहाण चन्दनञ्चारु कराङ्गोद्वर्त्तनं शुभम् ॥ नाना परिमलद्रव्यैर्निर्मितचूर्णमुत्तमम् ॥ सुगन्धिनामकम्पुण्यं गन्धि चारु प्रगृह्यताम् ॥ इति करोद्वर्त्तनम् ॥

अथ सिन्दूरम्—चारुशालूरसम्भूतं वंशसारसमुद्भवम् ।। सीमन्तभूषणञ्चूर्णं लाक्षारञ्जितमस्तु ते ।। इति सिन्दूरम् ।।

अथ ताम्वूलम्—सचन्द्रपूगचूर्णाढ्यञ्चाद्यखादिरसंय्युतम् ।। एलालवङ्गसंमिश्रन्ताम्वूलङ्केसरान्वितम् ।। इति ताम्वूलम् ।।

अथ द्रव्यम्—न्यूनातिरिक्तपूजायाः सम्पूर्णफलहेतवे ।। दक्षिणाङ्काञ्चनीन्देव स्थापयामि तवाग्रतः ।। इति दक्षिणा ।।

अथ माला—सितपीतैस्तथा रक्तैर्ज्जलजैः कुसुमैः शुभैः ।। ग्रथितां सुन्दराम्मालाङ्गृहाण परमेश्वर ।। इति माला ।।

अथ दूर्वाः—हरिताश्श्वेतवर्णा वा पञ्चत्रिपत्रसंय्युताः ।। दूर्वाङ्कुरा मया दत्ता एकविंशतिसम्मिताः ।। इति दूर्वाः ।।

अथ प्रदक्षिणा—एकविंशतिसंख्याकाः कुर्य्यां देव प्रदक्षिणाः ।। पदे पदे ते देवेश नश्यन्तु पातकानि मे ।। इति प्रदक्षिणा ।।

अथारार्त्तिकम्—औदुम्वरे राजते वा कांस्ये काञ्चनसम्भवे ।। पात्रे प्रकल्पितान्दीपान्गृहाण चक्षुरर्णकाम् ।। पञ्चारार्त्तिम्पञ्चदीपर्द्दीपिताम्परमेश्वरः ।। चारु चन्द्रनिभं दीपङ्गृहाण वीचिवारणम् ।। यथास्यंनेक्ष्यते भस्म तथा पापं विनाशय ।। इत्यारार्त्तिकम् ।।

इति पूजाविधिः

अथ गणेशस्तवराजः

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि ।। तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् ।। ॐ कारमाद्यम्प्रवहन्ति सन्तो, वाचः श्रुतीनामपि यंङ्गृणन्ति ।। गजाननन्देवगणानताङ्घ्रिम्भजेऽहमर्द्धेन्दुकृतावतंसम् ।। पादारविन्दार्चनतत्पराणां, संसारदावानलभङ्गदक्षम् ।। निरन्तरन्निर्गतमानतोयैस्तन्नौमि विघ्नेश्वरमम्वुदाभम् ।। कृताङ्गरागन्नवकुङ्कुमेन, मत्तालिजालम्मदपङ्कलग्नम् ।। निवारयन्तन्निजकर्णतालैः, को विस्मरेत्पुत्रमनङ्गशत्रोः ।। शम्भोर्जटाजूटनिवासिगङ्गाजलं समानीय कराम्वुजेन ।। लीलाभिराराच्छिवमर्चयन्तङ्गजाननम्भक्तियुता भजन्ति ।। कुमारभुक्तौ पुनरात्महेतोः पयोधरौ पर्वतराजपुत्र्याः ।। प्रक्षालयन्तङ्करशीकरेण मौग्ध्येन तन्नागमुखम्भजामि ।। तया समुद्धृत्य गजस्य हस्तं ये शीकराः पुष्कर-

रन्ध्रमुक्ता: ।। व्योमाङ्गणे विचरन्ति तारा: कालात्मना मौक्तिकतुल्यभास: ।। क्रीडारते वारिनिधौ गजस्थे वेलामतिक्रामति वारिपूरे ।। कल्पावसानम्परिचिन्त्य देवा: कैलासनाथं श्रुतिभि: स्तुवन्ति ।। नागानने नागकृतोत्तरीये क्रीडारते देवकुमारसङ्घै: ।। त्वयि क्षणङ्कालगतिं विहाय तौ प्रापतु: कन्दुकतामिनेन्दू ।। मदोल्लसत्पञ्चमुखैरजस्रमध्यापयन्तं सकलागमार्थम् ।। देवानृषीन्भक्तजनैकमित्रं हेरम्बमर्कारुणमाश्रयामि ।। पादाम्बुजाभ्यामति वामनाभ्याङ्कृतार्थयन्तंकृपया धरित्रीम् ।। अकारणङ्कारणमाप्तवाचान्तन्नागवक्त्रन्न जहाति चेत: ।। येनार्पितं सत्यवतीसुताय पुराणमालिख्य विषाणकोट्या ।। तञ्चन्द्रमौलेस्तनयन्तपोभिराराध्यमानन्दघनम्भजामि ।। पदं श्रुतीनाम पदं स्तुतीनां लीलावतारम्परमात्ममूर्त्ते: ।। नागात्मकं वा पुरुषात्मकं वा त्वमेदमाज्ञाम्भज विघ्नराजम् ।। पाशाङ्कुशौ भग्नरदन्त्वभीष्टङ्करैर्दधानङ्कररन्ध्रमुक्तै: ।। मुक्ताफलाभै: पृथुशीकरौघै: सिञ्चन्तमङ्गं शिवयोर्भजामि ।। अनेकमेकङ्गजमेकदन्तञ्चैतन्यरूपञ्जगदादिवीजम् ।। ब्रह्मेति यं वेदविदो वदन्ति तं शंभुसूनुं सततम्भजामि ।। स्वाङ्कस्थिताया: निजवल्लभाया: मुखाम्बुजालोकनलोलनेत्रम् ।। स्मेराननाब्जम्मदवैभवेन रुद्धम्भजे विश्वविमोहनन्तम् ।। ये पूर्वमाराध्य गजाननन्त्वां सर्वाणि शास्त्राणि पठन्ति तेषाम् ।। त्वत्तो न चान्यत्प्रतिपाद्यमेतैस्तदस्ति चेत्सर्वमसत्यकल्पम् ।। हिरण्यवर्णाञ्जगदीशितारङ्कविम्पुराणं रविमण्डलस्थम् ।। गजाननं यम्प्रविशन्ति सन्तस्तत्कालयोगैस्तमहम्प्रपद्ये ।। वेदान्तगीतम्पुरुषम्भजेऽहमात्मानमानन्दघनं हृदिस्थम् ।। गजाननं यन्महसा जनानां विघ्नान्धकारो विलयम्प्रयाति ।। शम्भोस्समालोक्य जटाकलापे शशाङ्कखण्डन्निजपुष्पकरेण ।। सुभग्नदन्तम्प्रविचिन्त्य मौग्ध्यादाक्रष्टुकाम: श्रियमातनोतु ।। विघ्नार्गलानां विनिपातनार्थं यन्नारिकेलै: कदलीफलाद्यै: ।। प्रसारयन्तम्मदवारणास्यम्प्रभुं सदाभीष्टमहम्भजे यम् ।। यज्ञैरनेकैर्वहुभिस्तपोभिराराध्यमाद्यङ्गजराजवक्त्रम् ।। स्तुत्याऽनया ये विधिवत्स्तुवन्ति ते सर्वलक्ष्मीनिलया भवन्ति ।। इति गणेशस्तवराज: समाप्त: ।।

अथ कवचम्

ईश्वर उवाच

श्रृणु वक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिकरम्प्रिये ॥ पठित्वा पाठयित्वा च मुच्यते सर्वसङ्कटात् ॥ अज्ञात्वा कवचन्देवि गणेशस्य मनुञ्जपेत् ॥ सिद्धिर्ना जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥ ओं आमोदश्च शिर: पातु प्रमोदश्च शिखोपरि ॥ सम्मोदो भ्रूयुगे पातु भ्रूमध्ये च गणाधिप: ॥ गणक्रीडश्चक्षुर्युगनासायाङ्गणनायक: ॥ गणक्रीडार्चित: पातु वदने सर्वसिद्धये । जिह्वायां सुमुख: पातु ग्रीवायान्दुर्मुख: सदा । विघ्नेशो हृदये पातु विघ्ननाशश्च वक्षसि ॥ गणानान्नायक: पातु वाहुयुग्मे सदा मम ॥ विघ्नकर्त्ता च उदरे विघ्नहर्त्ता च लिङ्गके ॥ गजवक्त्र: कटिदेशे एकदन्तो नितम्वके ॥ लम्बोदर: सदा पातु गुह्यदेशे ममारुण: ॥ व्यालयज्ञोपवीती माम्पातु पादयुगे सदा ॥ जापक: सर्वदा पातु जानुजङ्घे गणाधिप: ॥ हारिद्र: सर्वदा पातु सर्वाङ्गे गणनायक: ॥ य इदम्प्रपठेन्नित्यङ्गणेशस्य महेश्वरि ॥ कवचं सर्वसिद्धाख्यं सर्वविघ्नविनाशनम् ॥ सर्वसिद्धिकरं साक्षात् सर्वपापविमोचनम् ॥ सर्वसम्पत्प्रदं साक्षात्सर्वशत्रुक्षयङ्करम् ॥ ग्रहपीडा ज्वरा रोगा ये चान्ये गुह्यकादय: ॥ पठनाद्धारणादेव नाशमायान्ति तत्क्षणात् ॥ धनधान्यकरन्देवि कवचं सुरपूजितम् ॥ समो नास्ति महेशानि त्रैलोक्ये कवचस्य च ॥ हारिद्रस्य महेशानि कवचस्य च भूतले ॥ किमन्यैरसदालापैर्यत्रायुर्ययतामियात् ॥

इति विश्वसारतन्त्रे गणेशकवचं समाप्तम् ॥

अथोपनिषत्

ओं लंस्वाहा नाववतु स्वाहा नौ भुनक्तु स्वाहा वीर्यं करवावहै ॥ तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥ ओं शान्ति: शान्ति: शान्ति: ॥ ओं ॥ लंनमस्ते गणपतये ॥ त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि ॥ त्वमेव केवलं कर्त्तासि ॥ त्वमेव केवलन्धर्त्तासि ॥ त्वमेव केवलं हर्त्तासि । त्वमेवसर्वं खल्विदं व्रह्मासि । त्वं साक्षादात्मासि नित्यं ऋतं वच्मि । सत्यं वच्मि । अव त्वं माम् । अव वक्तारम, अव श्रोतारम् । अव दातारम् । अव धातारम् । अवानूचानमव शिष्यम् । अव पश्चात्तात् । अव पुरस्तात्

अवोत्तरात्तात् । अव दक्षिणात्तात् । अव चोर्द्ध्वात्तात् । अवाधरात्तात् । सर्वतो मामपाहि पाहि समन्तात् । त्वं वाङ्मयः त्वं चिन्मयः । त्वमानन्दमयः त्वं ब्रह्ममयस्त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि । त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि । सर्वजगदिदं त्वत्तो जायते । सर्वजगादिदं त्वत्तस्तिष्ठति । सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति । त्वं भूमिरापोऽनलोऽनिलोनभः । त्वं चत्वारि वाक्पदानि । त्वं गुणत्रयातीतः । त्वं देहत्रयातीतः । त्वं कालत्रयातीतः । त्वं मूलाधारस्थितोऽसि नित्यम् । त्वं शक्तित्रयात्मकः । त्वां योगिनो ध्यायन्ति नित्यम् । त्वं ब्रह्मा त्वं-विष्णुस्त्वं रुद्रः त्वमिन्द्र; त्वमग्निः स्वं वायुः त्वं सूर्यः त्वं चन्द्रमा त्वं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् । गणादीन् पूर्वमुच्चार्य वर्णादींस्तदनन्तरम् । अनुस्वारः परतरः । अर्द्धेन्दुलसित तारेण रुद्धम् । एतत्तव मनुस्वरूपम् । गकारः पूर्वं रूपम् अकारोमध्यमरूपम् । अनुस्वारश्चान्त्य रूपम् । विन्दुरुत्तर रूपम् । नादः सन्धानम् । संहिता सन्धिः । सैषा गणेश विद्या । गण ऋषिः निचृद्गायत्री छन्दः । गणपतिर्देवता । ॐ गं गणपतये नमः । एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् ॥ एकदन्तं चतुर्हस्तं पाशमंकुशधारिणम् । रदं च वरदं हस्तैः विभ्राणं मूषकध्वजम् । रक्त लम्बोदर शूर्पकर्णकं रक्तवाससम् । रक्तगन्धानुलिप्तांगं रक्त पुष्पैः सुरपूजितम् । भक्तानुकम्पिनं देवं जगत्कारणमच्युतम् । आविर्भूतं च सृष्ट्यादौ प्रकृतेः पुरुषात्परम् ॥ एवं ध्यायति यो नित्यं स योगी योगिनां वरः । ॐ नमो व्रातपतये नमो गणपतये नमः प्रमथपतये नमस्तेऽस्तु लम्वोदराय एकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय वरदमूर्त्तये नमः । एतदथर्वशीर्षं योऽधीते स ब्रह्मभूयाय कल्पते । सर्वविघ्नैर्न वाध्यते । स सर्वतः सुखमेधते । स पंचमहापापात् प्रमुच्यते । सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । सर्वत्राधीयानोऽपविघ्नो भवति । धर्ममर्थं कामं मोक्षं च विन्दति । इदमथर्वशीर्षमशिष्याय न देयम् । यो यदि मोहात् दास्यति स पापीयान् भवति । सहस्रावर्त्तनाद्यं यं काममधीते तं.तमनेन साधयेत् । अनेन गणपतिमभिषिञ्चति स वाग्मीभवति ।

चतुर्थ्यामनश्नन् जपति स विद्यावान् भवति । इत्यथर्वण वाक्यम् । ब्रह्माद्याचरणं विद्यां न विभेति कदाचन इति । यो दूर्वांकुरैः यजति स वैश्रवणोपमो भवति । यो लाजैः यजति स यशोवान् भवति । स मेधावान् भवति । यो मोदकसहस्रेण यजति स वाञ्छितं फलमवाप्नोति । यः साज्यं समिद्भिः यजति स सर्वं लभते स सर्वं लभते । अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयित्वा सूर्यवर्चस्वीभवति । सूर्यग्रहे महा नद्यां प्रतिमासन्निधौ वा जप्त्वा सिद्धमन्त्रो भवति । महाविघ्नात् प्रमुच्यते । महादोषात् प्रमुच्यते । स सर्वविद् भवति स सर्वविद्भवति । यः एवं वेद । इत्युपनिषत् ।

सह नाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै, तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ इति गणपत्युपनिषत् ॥

अथ शतनाम

ओं गणेश्वरो गणक्रीडो महागणपतिस्तथा ।
विश्वकर्त्ता विश्वमुखो दुर्जयो धूर्जयो जयः ॥1॥
सुरूपः सर्वनेत्राधिवासरे वीरासनाश्रयः ।
योगाधिपस्तारकस्थः पुरुषो गजकर्णकः ॥2॥
चित्रांकः श्यामदशनो भालचन्द्रश्चतुर्भुजः ।
शम्भुतेजा यज्ञकायः सर्वात्मा सामबृंहितः ॥3॥
कुलाचलांसो व्योमनाभिः कल्पद्रुमवनालयः ।
निम्ननाभिः स्थूलकुक्षिः पीनवक्षा बृहद्भजः ॥4॥
पीनस्कन्धः कम्बुकण्ठो लम्बोष्ठो लम्बनासिकः ।
सर्वावयवसम्पूर्णः सर्व लक्षण लक्षितः ॥5॥
इक्षुचापधरः शूली कान्तिकन्दलिताश्रयः ।
अक्षमालाधरो ज्ञानमुद्रावान् विजयावहः ॥6॥
कामिनी कामनः काममालिनी केलिलालितः ।
अमोघसिद्धिराधारः आधाराधेय वर्जितः ॥7॥

इन्दीवरदलश्याम: इन्दुमण्डल निर्मल: ।
कर्मसाक्षी कर्मकर्त्ता कर्माकर्मफलप्रद: ॥8॥
कमण्डलुधर: कल्प: कपर्दी कटिसूत्रभृत् ।
कारुण्यदेह: कपिलो गुह्यागमनिरूपित: ॥9॥
गुहाशयो गुहाब्धिस्थो घट कुम्भो घटोदर: ।
पूर्णानन्द: परानन्दो धनदो धरणीधर: ॥10॥
वृहत्तमो ब्रह्मपुरो ब्रह्मण्यो ब्रह्मवित् प्रिय: ।
भव्यो भूतालयो भोगदाता चैव महामना: ॥11॥
वरेण्यो वामदेवश्च वन्द्यो वज्रनिवारण: ।
विश्वकर्त्ता विश्वचक्षु: हवनं हव्यकव्यभुक् ॥12॥
स्वतन्त्र: सत्यसंकल्प: तथा सौभाग्य वर्द्धन: ।
कीर्त्तिद: शोकहारी च त्रिवर्गफलदायक: ॥13॥
चतुर्वाहु: चतुर्दन्तश्चतुर्थीतिथि सम्भव: ।
सहस्रशीर्षा पुरुष: सहस्राक्ष: सहस्रपात् ॥14॥
कामरूप: कामगति: द्विरदो द्वीप रक्षक: ।
क्षेत्राधिप: क्षमाभर्त्ता लयस्थो लड्डुकप्रिय: ॥15॥
प्रतिवादि मुखस्तम्भो दुष्टचित्तप्रसादन: ।
भगवान् भक्तिसुलभो याज्ञिको याजकप्रिय: ॥16॥
इत्येवं देवदेवस्य गणराजस्य धीमत: ।
शतमष्टोत्तरनाम्नां सारभूतं प्रकीर्तितम् ॥17॥
सहस्रनाम्नामाकृष्यमयाप्रोक्तं मनोहरम् ।
ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय स्मृत्वा देवंगणेश्वरं ॥18॥
पठेत् स्तोत्रमिदं भक्त्या गणराज: प्रसीदति ॥
इति गणेशस्याष्टोत्तरशत नाम स्तोत्रम् ।

---

10 अथ सूर्यतन्त्रम्

श्री सूर्यध्यानम्

भास्वद्रत्नाढ्य मौलिः स्फुरदधररुचा रञ्जितश्चारु केशो ।
भास्वान्यो दिव्यतेजाः कर कमलयुतः स्वर्णवर्ण प्रभाभिः ।
विश्वाकाशावकाशो ग्रहगणसहितो भाति यश्चोदयाद्रौ ।
सर्वानन्दप्रदाता हरिहर नमितः पातु मां विश्वचक्षुः ॥

अथ यन्त्रोद्धारः

पूर्वमष्ट दलं पद्मं प्रणवादि प्रतिष्ठितम् ।
माया वीजं दलाष्टाग्रे यन्त्रमुद्धारयेदिति ।
आदित्यं भास्करं भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम् ।
मार्तण्डं तपनं चेति दलेष्वष्टसु योजयेत ।
दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला तथा ।
अमोघा विद्युता चेति मध्ये श्रीः सर्वतोमुखी ।

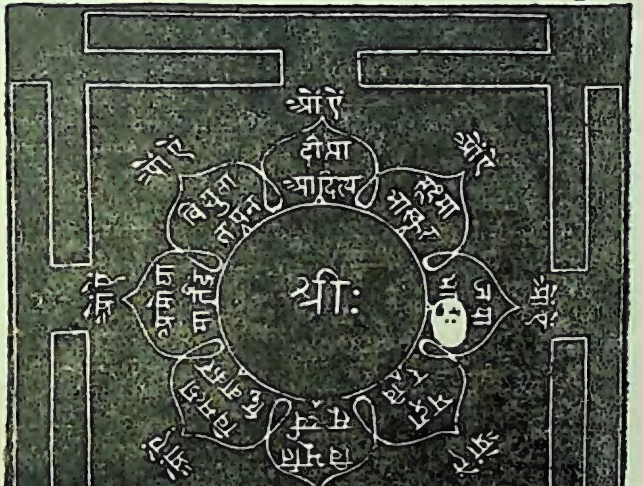

अथ मन्त्रोद्धारः

तारो घृणिर्भृगुः पश्चाद्वामकर्णविभूषितः ।। वह्न्यासनो मरुच्छेषः सनेत्रोदित्यपश्चिमः ।। अष्टाक्षरो मनु प्रोक्तो भानोरभिमतः परः ।।

अथ मन्त्रः

ओं घृणिः सूर्यः आदित्यः ।

अथ पूजाविधिः

प्रातःकृत्यादि प्राणायामान्तं विधाय पीठन्यासङ्कुर्य्यात् ।। तत्र विशेषः ।। हृदयस्य पूर्वादिदिक्षु मध्ये च प्रभूतं विमलं सारं समाराध्यम्परसुखं विन्यस्याधारशक्त्यादि असूर्यमण्डलाय दशकलात्मनेनमः इत्यन्तं विन्यसेत् ।। तथा च निबन्धे ।। पीठे च क्लृप्ते प्रथमन्दिक्षु मध्ये च संयजेत् ।। प्रभूतं विमलं सारं समाराध्यमनन्तरम् ।। परमादिसुखम्पीठं स्वबिम्बान्तम्प्रकल्पयेत् ।। ततः केसरेषु मध्ये च ।। रांदीप्तायैनमः ।। एवं रींसूक्ष्मायै०, रूंजयायै०, रैंभद्रायै०, वैंविभूत्यै०, वोंविमलायै०, वौअमोघायै०, रंविद्युतायै०, दःसर्वतोमुख्यै० ।। तथा च निबन्धे ।। दीप्ता सूक्ष्या जया भद्रा विभूतिर्विमला पुनः ।। अमोघा विद्युता सर्वतोमुखी पीठशक्तयः ।। दीप्तदीपशिखाकाराबीजान्यासां विदुः क्रमात् ।। अक्लीवह्लस्वत्रितयस्वरान् बिन्द्वग्निसंयुतान् ।। ओं तदुपरि ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय सौराय योगपीठाय नमः ।। तथा च शारदायाम् ।। वदेत्पदञ्चतुर्थ्यन्तम्ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।। सौराय योगपीठाय नमः पदमनन्तरम् ।। पीठमन्त्रोऽयमाख्यातो दिनेशस्य जगत्पतेः ।।

ततः ऋष्यादिन्यासः ।। शिरसि देवभागऋषयेनमः ।। मुखे गायत्रीछन्दसेनमः ।। हृदि आदित्याय देवतायैनमः ।। तथा च निबन्धे ।। देवभागो मुनिः प्रोक्तो गायत्रीछन्द ईरितम् ।। आदित्यो देवता प्रोक्ता दृष्टादृष्टफलप्रदा ।।

ततः कराङ्गन्यासौ ।। सत्याय तेजोज्वालामणे हुंफट् स्वाहा अगुष्ठाभ्यां नमः एवं ब्रह्मणेतेजो ज्वालामणे तर्जनीभ्यां स्वाहा । विष्णवे ते० मध्यमाभ्यां । रुद्राय ते० अनामिकाभ्यां हुम् । अग्नये ते० कनिष्ठाभ्यां वौषट् । सर्वाय वषट् । ते०करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् ।। एवं हृदयादिषु ।। तथा च शारदायाम् ।।

सत्याय हृदयम्प्रोक्तम्ब्रह्मणे शिर ईरितम् ।। विष्णवे स्याच्छिखा वर्म्म रुद्राय परिकीर्त्तितम् ।। अग्नये नेत्रमाख्यातं सर्वायास्त्रमुदाहृतम् ।। तेजोज्वालामणे हुंफट् द्विठान्ता: परिकीर्त्तिता: ।।

ततो मूर्त्तिन्यास: ।। यथा ।। उों शिरसि आदित्यायनम: ।। एवं मुखे एंरवये०, हृदये उंभानवे०, गुह्ये इंभास्कराय, चरणयो: अंसूर्य्याय० ।। तथा च निवन्धे ।। आदित्यं विन्यसेन्मूर्ध्नि रविम्मुखगतंन्यसेत् ।। हृदयं भानुनामानम्भास्करङ्गुह्यदेशत: ।। सूर्यञ्चरणयोर्न्यस्य वर्णै: सत्यादिपञ्चभि: ।।

ततो न्यास: ।। शिरसि उों नम:, आस्ये उों घृंनम:; कण्ठे उों णिनम:, हृदि उों सूनम:, कुक्षौ उों र्यनम:, नाभौ उों आनम:, लिङ्गे उों दि नम:, पादयो: उों त्य नम: ।। तथा च उों मूर्द्धाऽऽस्यकण्ठ-हृदय-कुक्षि-नाभि-ध्वजाङ्घ्रिषु ।। मन्त्रवर्णान्न्यसेदष्टौ प्रत्येकम्प्रणवादिकम् ।।

ततो ध्यानम् ।। रक्ताब्जयुग्माभयदानहस्तङ्केयूरहाराङ्गदकुण्डलाढ्यम् ।। माणिक्यमौलिन्दिननायमीडे वन्धूक कान्ति विलसत्त्रिनेत्रम् ।। एवन्ध्यात्वा मानसै: सम्पूज्य कुम्भस्थापनङ्कुर्य्यात् ।। ततो गुरुपङ्क्तपूजाङ्कृत्वा पीठपूजाङ्कुर्य्यात् ।। उों खंखखोल्कायनम: इतिमन्त्रेण मूर्ति सङ्कल्प्य पुनर्ध्यात्वाऽऽवाहनादिपुष्पांजलिदानपर्य्यन्तं विधायाऽऽवरणपूजामारभेत् ।। तथा च निवन्धे ।। तारादिखंखखोल्काय मनुना मूर्त्तिकल्पना ।। साक्षिणं सर्वलोकानान्तस्यामावाह्य पूजयेत् ।। केसरेष्वग्न्यादिकोणे मध्ये दिक्षु च सत्याय तेजोज्वालामणि हुंफट्स्वाहा हृदयायनम: एवं ब्रह्मणे० शिरसेस्वाहा । विष्णवे० शिखायैवषट् । रुद्राय० कवचायहुम् । अग्नये० नेत्रत्रयायवौषट् । सर्वाय० अस्त्रायफट् ।। दिक्पत्रेयु पूर्वादिषु उों आदित्यायनम: एवं एं रवये० उं भानवे० दं भास्कराय० विदिक्पत्रेषु अग्न्यादि ऊं उषायै० एवं प्रं प्रज्ञायै०. पम्प्रभायै०. संसन्ध्यायै० ।। तथा च ।। अङ्गानि पूजयेदादौ दिक्पत्रे सूर्यमूर्त्तय: ।। आदित्याद्यश्चतस्रोऽर्च्या: शक्तय: कोणपत्रगा: ।। स्वस्वनामादिवर्णा: स्युस्तासाम्बीजान्यनुक्रमात् ।। उषा-प्रज्ञा-प्रभा-सन्ध्या: शक्तय: परिकीर्त्तिता: ।। तत: पत्रेषु ब्राह्म्याद्या: पुरतोऽरुणम-

र्चयेत् ।। तथा च शारदायाम् ।। पत्राग्रसंस्था ब्रह्म्याद्याः पुरतोऽरुणमर्चये-दिति ।। तद्वाह्ये पूर्वादिचन्द्रादीन्पूजयेत् ।। ॐ चन्द्रायनमः, ॐ मङ्ग-लायनमः, एवं बुधाय०, बृहस्पतये०, शुक्राय०, शनैश्चराय०, राहवे०, केतवेनमः ।। तथा च शारदायाम् ।। चन्द्रादीन्वजाद्रादींश्च सम्पूज्य धूपादि-विसर्जनान्तङ्कर्म समापयेत् ।। अस्य पुरश्चरणमष्टलक्षजपः ।। तथा च ।। वसुलक्षञ्जपेन्मन्त्रमाज्येन च दशांशतः ।। तिलैर्वा मधुरासिक्तैर्जुहुयाद्वि-जितेन्द्रियः ।। इति पूजा ।

अथ स्तोत्रम्

वसिष्ठ उवाच ।।

स्तुवंस्तत्र ततः साम्बः कृशोधर्मनिसन्ततः ।।
राजन्नाम सहस्रेण सहस्रांशुन्दिवाकरम् ।।
विद्यमानन्तु तन्दृष्ट्वा सूर्यः कृष्णात्मजन्तदा ।।
स्वप्ने तु दर्शनन्दत्वा पुनर्वचनमब्रवीत् ।।

श्रीसूर्य्य उवाच ।।

साम्ब साम्ब महाबाहो शृणु जाम्बवतीसुत ।
अलन्नाम सहस्रेण पठस्वेमं स्तवं शुभम् ।।
यानि नामानि गुह्यानि पवित्राणि शुभानि च ।।
तानि ते कीर्त्तयिष्यामि श्रुत्वा वत्सावधानतः ।।
विकर्त्तनो विवस्वांश्च मार्त्तण्डो भास्करो रविः ।।
लोकप्रकाशकः श्रीमांल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः ।।
लोकसाक्षी त्रिलोकेशः कर्त्ता हर्त्ता तमिस्रहा ।।
तपनस्तापसश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः ।।
गभस्तिहस्तो ब्रह्मा च सर्वदेवनमस्कृतः ।।
एकविंशतिरित्येष स्तव इष्टः सदा मम ।।
श्रीरारोग्यकरश्चैव धनवृद्धियशस्करः ।।
स्तवराज इति ख्यातस्त्रिषु लोकेषु विश्रुतः ।।
य एतेन महाबाहो द्वे सन्ध्ये स्तवनोदये ।।
स्तौति मां प्रणतो भूत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ।।

कायिकं वाचिकञ्चैव मानसं यच्च दुष्कृतम् ॥
एष जाप्येन तत्सर्व्वम्प्रणश्यति न संशयः ॥
एष जप्यश्च होमश्च सन्ध्योपासनमेव च ॥
बलिमन्त्रोऽर्घ्यमन्त्रश्च धूपमन्त्रस्तथैव च ॥
अन्नप्रदाने स्नाने च प्रणिपाते प्रदक्षिणे ॥
पूजितोऽयम्महामन्त्रः सर्वपापहरः शुभः ॥
एवमुक्त्वा तु भगवान् भास्करो जगदीश्वरः ॥
आमन्त्र्य कृष्णतनयन्तत्रैवान्तरधीयत ॥
साम्बोऽपि स्तवराजेन स्तुत्वा सप्ताश्ववाहनम् ॥
पूतात्मा नीरुजः श्रीमांस्तस्माद्रोगाद्विमुक्तवान् ॥
इति साम्वपुराणे सूर्य्यस्तवः सम्पूर्णः ॥

अथ कवचम्

श्रीसूर्य्य उवाच ॥

साम्ब साम्ब महाबाहो श्रृणु मे कवचं शुभम् ॥
त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कवचम्परमाद्भुतम् ॥
यज्ज्ञात्वा मन्त्रवित्सम्यक्फलमाप्नोति निश्चितम् ॥
यद्धृत्वा च महादेवो गणानामधिपोऽभवत् ॥
पठनाद्धारणाद्विष्णुः सर्वेषाम्पालकः सदा ॥
एवमिन्द्रादयः सर्वे सर्वैश्वर्य्यमवाप्नुयुः ॥
कवचस्य ऋषिर्ब्रह्मा छन्दोऽनुष्टुबुदाहृतम् ॥
श्रीसूर्य्यो देवता चात्र सर्वदेवनमस्कृतः ॥
आरोग्ययशोमोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥
प्रणवो मे शिरः पातु घृणिर्मे पातु भालकम् ॥
सूर्योऽव्यान्नयनद्वन्द्वमादित्यः कर्णयुग्मकम् ॥
अष्टाक्षरो महामन्त्रः सर्वाभीष्टफलप्रदः ॥
ह्रींबीजम्मे मुखम्पातु हृदयम्भुवनेश्वरी ॥
चन्द्रबीजं विसर्गाढ्यम्पातु मे गुह्यदेशकम् ॥
अक्षरोऽसौ महामन्त्रः सर्वतन्त्रेषु गोपितः ॥

शिवोवह्निसमायुक्तो वामाक्षिविन्दुभूषित: ॥
एकाक्षरो महामन्त्र: श्रीसूर्यस्य प्रकीर्त्तित: ॥
गुह्याद्‌गुह्यतरो मन्त्रो वाञ्छाचिन्तामणि: स्मृत: ॥
शीर्षादिपादपर्यन्तं सदा पातु मनूत्तम: ॥
इति ते कथितन्दिव्यन्त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ॥
श्रीप्रदङ्कान्तिदन्नित्यन्धनारोग्यविवर्द्धनम् ॥
कुष्ठाधिरोगशमनम्महाव्याधिविनाशनम् ॥
त्रिसन्ध्यं य: पठेन्नित्यमरोगी वलवान्भवेत् ॥
वहुना किमिहोक्तेन यद्यन्मनसि वर्त्तते ॥
तत्तत्सर्वम्भवत्येव कवचस्य च धारणात् ॥
भूतप्रेत-पिशाचाश्च यक्ष-गन्धर्व-राक्षसा: ॥
व्रह्म-राक्षस-वेताला नैव द्रष्टुमपि क्षमा: ॥
दूरादेव पलायन्ते तस्य सङ्कीर्त्तनादपि ॥
भूर्ज्जपत्रे समालिख्य रोचनागुरुकुङ्कुमै: ॥
रविवारे च सङ्क्रान्त्यां सप्तम्याञ्च विशेषत: ॥
धारयेत्साधकश्रेष्ठस्त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥
त्रिलोहमध्यगङ्कृत्वा धारयेद्दक्षिणे भुजे ॥
शिखायामथवा कण्ठे सोऽपि सूर्य्यो न संशय: ॥
इति ते कथितं साम्व त्रैलोक्यमङ्गलाभिधम् ॥
कवचन्दुर्ल्लभं लोके तव स्नेहात्प्रकाशितम् ॥
अज्ञात्वा कवचन्दिव्यं यो जपेत्सूर्यमुत्तमम् ॥
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥18॥
इति व्रह्मयामले त्रैलोक्यमङ्गलं नाम श्रीसूर्य्यकवचं सम्पूर्णम् ।

अथ आदित्य हृदयम्

ततो युद्धपरिश्रान्तं समरे चिन्तया स्थितम् ॥
रावणञ्चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम् ॥1॥
दैवतैश्च समागम्य द्रष्टुमभ्यागतो रणम् ॥
उपगम्याव्रवीद्राममगस्त्यो भगवांस्तदा ॥2॥

राम राम महावाहो श्रृणु गुह्यं सनातनम् ॥
येन सर्वानरीन्वत्स समरे विजयिष्यसे ॥3॥
आदित्यहृदयम्पुण्यं सर्वशत्रुविनाशनम् ॥
जयावहञ्जपन्नित्यमक्षय्यपरमं शिवम् ॥4॥
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम् ॥
चिन्ताशोकप्रशमनमायुर्वर्द्धनमुत्तमम् ॥5॥
रश्मिमन्तं समुद्यन्तन्देवासुरनमस्कृतम् ॥
पूजयस्व विवस्वन्तम्भास्करम्भुवनेश्वरम् ॥6॥
सर्वदेवात्मको ह्येप तेजस्वी रश्मिभावन: ॥
एप देवासुरगणांन्लोकान् पाति गभस्तिभि: ॥7॥
एप ब्रह्मा च विष्णुश्च शिव: स्कन्द: प्रजापति: ॥
महेन्द्रो धनद: कालो यम: सोमो ह्यपाम्पति: ॥ 8॥
पितरो वसव: साध्या अश्विनौ मरुतो मनु: ॥
वायुर्वह्नि: प्रजा: प्राण, ऋतुकर्ताप्रभाकर: ॥9॥
आदित्य: सविता सूर्य: खगपूषा गभस्तिमान् ।
सुवर्ण सदृशो भानुर्हिरण्यरेता दिवाकर: ॥10॥
हरिदश्व: सहस्रार्चि सप्तसप्ति: मरीचिमान् ।
तिमिरोन्मथन: शम्भुस्त्वष्टा मार्त्तण्डकोऽंशुमान् ॥11॥
हिरण्यगर्भ: शिशिरस्तपनोऽहस्करो रवि: ।
अग्निगर्भोऽदिते: पुत्र: शंख: शिशिरनाशन: ॥12॥
व्योमनाथस्तमोभदी ऋग्यजु: सामपारग: ।
घनवृष्टि रपाम्मित्रो विन्ध्यवीथी प्लवंगम: ॥13॥
आतपी मण्डली मृत्यु: पिंगल: सर्वतापन: ।
कविर्विश्वो महा तेजो रक्त: सर्व भवोद्भव: ॥14॥
नक्षत्र ग्रह ताराणामधिपो विश्वभावन: ।
तेजसामपि तेजस्वी द्वादशात्मन्नमोऽस्तुते ॥15॥
नम: पूर्वाय गिरये पश्चिमायाद्रये नम: ।
ज्योतिर्गणानाम्पतये दिनाधिपतये नम: ॥16॥

जयाय जयभद्राय हर्यश्वाय नमो नमः ।
नमो नमः सहस्रांशो आदित्याय नमो नमः ॥17॥
नमः उग्राय वीराय सारंगाय नमो नमः ।
नमः पद्म प्रबोधाय प्रचण्डाय नमोऽस्तु ते ॥18॥
ब्रह्मेशानाच्युतेशाय सुरायाऽऽदित्यवर्चसे ।
भास्वते सर्वभक्षाय रौद्राय वपुषे नमः ॥19॥
तमोघ्नाय हिमघ्नाय शत्रुघ्नायामितात्मने ।
कृतघ्नघ्नाय देवाय ज्योतिषाम्पतये नमः ॥20॥
तप्तचामीकराभाय हरये विश्वकर्मणे ।
नमस्तमोभिनिघ्नाय रुचये लोकसाक्षिणे ॥21॥
नाशयत्येष वै भूतन्तमेव भूतन्तमेव सृजति प्रभुः ।
पायत्येष तपत्येष वर्षत्येष गभस्तिभिः ॥22॥
एष सुप्तेषु जागर्त्ति भूतेषु परिनिष्ठितः ।
एष चैवाग्निहोत्रञ्च फलञ्चैवाग्निहोत्रिणाम् ॥23॥
देवाश्च क्रतवश्चैव क्रतूनाम् फलमेव च ।
यानि कृत्यानि लोकेषु सर्वेषु परम प्रभुः ॥24॥
एनमापत्सु कृच्छ्रेषु कान्तारेषु भयेषु च ।
कीर्त्तयन् पुरुषः नावसीदति राघव ॥25॥
पूजयस्वैन मेकाग्रो देवदेवं जगत्पतिम् ।
एतत् त्रिगुणितं जप्त्वा युद्धेषु विजयिष्यसे ॥26॥
अस्मिन् क्षणे महावाहो रावणं त्वं जयिष्यसि ।
एवमुक्त्वा ततोऽगस्त्यो जगाम स यथागतम् ॥27॥
एवं तच्छ्रुत्वा महातेजा नष्टशोकोऽभवत्तदा ।
धारयामास सुप्रीतो राघवः प्रयतात्मवान् ॥28॥

आदित्यं वीक्ष्य जप्त्वेदं परं हर्षमवाप्तवान् ।
त्रिराचम्य शुचिर्भूत्वा धनुरादाय वीर्यवान् ।।29।।
रावणं प्रेक्ष्य हृष्टात्मा जयार्थं समुपागतम् ।
सर्वयत्नेन महतावृतस्तस्य वधेऽभवत् ।।30।।
अथ रविरवदन् निरीक्ष्यरामं
मुदितमनाः परमं हृष्यमाणः ।
निशिचर पतिसंक्षयं विदित्वा
सुरगण मध्यगतो वचस्त्वरेति ।।
इति वाल्मीकीये श्रीमद्रामायणे आदित्य हृदय स्तोत्रम् ।।

11 अथ विष्णुतन्त्रम्

अथ विष्णुध्यानम्

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं विश्वाधारं गगनसदृशं मेघ-वर्णं शुभांगम् । लक्ष्मीकान्तं कमलनयन योगिभि: ध्यानगम्यभ्वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्व लोकैक नाथम् ॥

अथ यन्त्रोद्धार:

अमुक्तकल्पे यन्त्रन्तु लिखेत पद्म दलाष्टकम् पट्कोणं कर्णिकं तत्र वेद-द्वारोपशोभितम् ॥

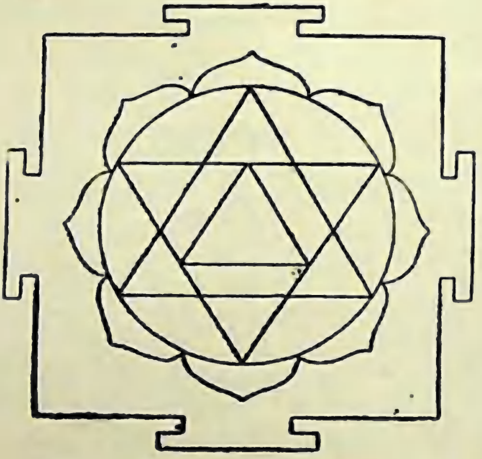

अथ मन्त्रोद्धार:

स-चतुर्थीनमोऽन्तैश्च नामभिर्विन्यसेत्सुधी: ॥ तारन्नम: पदम्ब्रूयान्नरौ दीर्घसमन्वितौ ॥ यवर्णो णायमन्त्रोऽयम्प्रोक्तो वस्वक्षर; पर: ॥

RADHA KRISHAN

Subhash Picture Publisher
4416, Nai Sarak. Delhi-6.

अथ मन्त्रः

ओं नमो नारायणाय ।

अथ पूजाप्रयोगः

प्रातः कृत्यादि मातृकान्यासान्तंकर्म्म विधाय केशवकृत्यादिन्यासं-कुर्य्यात् ।। अथ ऋष्यादिन्यासः ।। शिरसि प्रजापतयेऋषयेनमः ।। मुखे गायत्रीछन्दसेनमः ।। हृदि अर्द्धलक्ष्मीहरये देवतायै नमः ।। ततः कराङ्ग-न्यासौ ।। श्रीं अङ्गुष्ठाभ्यान्नमः इत्यादि ।। तथा च गौतमीये ।। ऋषिः प्रजापतिश्छन्दो गायत्री देवता पुनः ।। अर्द्धलक्ष्मीहरिः प्रोक्तः श्रींबीजेनाङ्ग-कल्पनेति ।। ततो ध्यानम् ।। उद्यत्प्रद्योतनशतरुचिन्तप्तहेमावदातम्पार्श्वं-द्वन्द्वे जलधिसुतया विश्वधात्र्या च जुष्टम् ।। नानारत्नोल्लसितविविधा-कल्पमापीतवस्त्रं विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकीचक्रपाणिम् ।। एवं-ध्यात्वा न्यसेत् ।। वर्णान्मुक्त्वा सार्द्धचन्द्रानिति दर्शनात् । अंकेशवकृत्यैनमो ललाटे ।। आंनारायणायकान्त्यैनमो मुखे ।। इंमाधवायपुष्टयैनमो दक्षनेत्रे ।। ईंगोविन्दायपुष्ट्यैनमो वामनेत्रे ।। नमः सर्वत्र ।। उंविष्णवेधृत्यै० दक्ष-कर्णे ।। ऊंमधुसूदनायशान्त्यै० वामकर्णे । ऋंत्रिविक्रमायक्रियायै० दक्षना-सापुटे ।। ॠंवामनायदेव्यायै० वामनासापुटे । लृंश्रीधरायमेधायै० दक्ष-गण्डे । लॄंहृषीकेशायदुर्गायै० वामगण्डे । एंपद्मनाभायश्रद्धायै० ओष्ठे । ऐंदामोदरायलज्जायै० अधरे । ओंवासुदेवायलक्ष्म्यै० ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ ।। औं सङ्कर्षणायसरस्वत्यै० अधोदन्तपङ्क्तौ । अंप्रद्युम्नायधृत्यै मस्तके । अः अनिरुद्धायरत्यै० मुखे । कंचक्रिणेजयायै०, खंगदिनेदुर्गायै०, गंशार्ङ्गिणे-प्रभायै०, घंखड्गिनेसत्यायै०, ङंशङ्खिनेचन्द्रायै० दक्षकरमूलसन्ध्यग्रकेषु ।। चंहलिनेवाण्यै०, छंमुसलिने विलासिन्यै०, जंशूलिनेविजयायै०, झंपाशिने-विरजायै०, अंअङ्कुशिनेविम्बायै० वामकरमूलसन्ध्यग्रकेषु ।। टंमुकुन्दाय विनदायै०, ठंनन्दजाय सुनन्दायै०, डंनन्दिनेस्मृत्यै०, ढंनरायऋद्धयै०, णंनरकजितेसमृद्धयै० दक्षपादमूलसन्ध्यग्रकेषु ।। तंहरयेशुद्धयै०, थंकृष्णायवृद्धयै०, दंसत्यायभूम्यै०, धंसात्वतायमत्यै० नंसौराष्ट्राय-क्षमायै० वामपादमूलसन्ध्यग्रकेषु ।। पंशराय रमायै० दक्षपार्श्वे ।। फंजनार्द-नाय उमायै० वामपार्श्वे । बंभूधराय क्लेदिन्यै० पृष्ठे । भंविश्वमूर्त्तये

क्लिन्नायै० नाभौ । मंवैकुण्ठायवसुदायै० उदरे । यंत्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै० हृदि । रंअसृगात्मनेवलिनेपरायै० दक्षांसे । लंमांसात्मनेवालानुजाय-परायणायै० ककुदि । वंमदआत्मनेवलायसूक्ष्मायै० वामांसे । शंअस्थ्यात्मने-वृषघ्नायसंघायै० हृदादिदक्षकरे । पंमज्जात्मनेवृषायप्रज्ञायै० हृदादिवामकरे । संशुक्लात्मनेहंसायप्रभायै० हृदादिदक्षपादे । हंप्राणात्मनेवराहायनिशायै० हृदादिवामपादे । लंजीवात्मनेविमलायअमोघायै० हृदाद्युदरे । क्षंक्रोधात्मने नृसिंहायविद्युतायै० हृदादिमुखे ॥ तथा च गौतमीये ॥ केशवादिरयंन्यासो न्यास-मात्रेण देहिनाम् ॥ अच्युतत्वन्ददात्येव सत्यं सत्यन्न संशयः ॥ मातृकार्णं समुच्चार्य्य केशवाय इति स्मरेत् ॥ कीर्त्यै च नमसायुक्त-मित्यादि न्यासमाचरेत् ॥ केशवाय ततः कीर्त्त्यै कान्त्यै नारायणाय च ॥ इत्याद्यगस्त्यसंहितावचनाच्चायं क्रमः ॥ न तु केशवकीर्तिभ्याम् इत्यादि ॥ तथा भुक्तिमुक्तिमिच्छता ऽयन्न्यासः कर्त्तव्यः श्रीबीजादि ॥ यथा—॥ श्रीं अं केशवायकीर्त्यैनम इत्यादि ॥ अथोपचारक्रमेण पूजा ॥ अथावाहनम् ॥ यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवाः स्वाभीष्टसिद्धये ॥ कृपया देवदेवेश मदग्रे सन्निधोभव ॥ यस्य ते परमेशान स्वागतं स्वागतम्प्रभो ॥ कृतार्थोऽनु-गृहीतोऽसि सफलञ्जीवनम्मम ॥ यदागतोऽसि देवेश चिदानन्दमयाव्यय ॥ अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा वैकल्पात्साधकस्य च ॥ यदपूर्णम्भवेत्कृत्यन्तथाप्य-भिमुखोभव ॥ इत्यावाहनम् ॥ अथ पाद्यम् ॥ यद्भक्तिलेशसम्पर्कात्परमा-नन्दसम्भवः ॥ तस्मै ते परमेशान पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥ इति पाद्यम् ॥ अथाचमनम् ॥ देवानामपि देवाय देवानान्दैवताय च ॥ आचामङ्कल्पयामीश स्वधया शुद्धिहेतवे ॥ इत्याचमनम् ॥ अथार्घ्यम् ॥ तापत्रयहरंदिव्यम्परमा-नन्दलक्षणम् ॥ तापत्रयविमोक्षाय तवार्घ्यङ्कल्पयाम्यहम् ॥ इत्यर्घ्यम् ॥ अथ मधुपर्कम ॥ सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुधात्मकम् ॥ मधुपर्कमिमन्देव कल्पयामि प्रसीद मे ॥ इति मधुपर्कम् ॥ अथ पुनराचमनीयम् ॥ उच्छिष्टो-प्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः ॥ शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमन-न्त्विदम् ॥ इति पुनराचमनीयम् ॥ अथाभ्यङ्गम् ॥ गन्धतैलंगृहीत्वा पठेत् । स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकनाथ महाशय ॥ सर्वलोकेषु शुद्धात्मन्ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥ इत्यभ्यङ्गम् ॥ अथ स्नानम् ॥ ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः

सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ स भूमिं सर्वतस्स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥ 1 ॥ पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ 2 ॥ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ॥ पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥ 3 ॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ॥ ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥4॥ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ॥ स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ 5 ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम् ॥ पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥6॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ॥ छन्दा॰ंसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥7॥ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ॥ गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥8॥ तं यज्ञम्बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः ॥ तेन देवा अयजन्त साद्धया ऽऋषयश्च ये ॥9॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ॥ मुखङ्किमस्यासीत्किम्बाहू किमूरू पादा उच्येते ॥10॥ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः ॥ ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥11॥ चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ॥ श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥12॥ नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत ॥ पद्भ्यांम्भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकां 2 अकल्पयन् ॥13॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ॥ वसन्तोऽस्यासीदाज्यङ्ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥14॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृतः ॥ देवा यद्यज्ञन्तन्वाना अबध्नन पुरुषम्पशुम् ॥14॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ॥ ते ह नाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥16॥ अथ तान्त्रिकमन्त्रा ॥ परमानन्दबोधाब्धिनिमग्ननिजमूर्त्तये ॥ साङ्गोपाङ्गमिदं स्नानङ्कल्पयाम्यहमीश ते ॥ इति स्नानम् ॥ अथ वासः ॥ मायां विना न ते जन्म निजगूहोरुतेजसे ॥ निरावरणविज्ञाय वासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥ इति वासः ॥ यमाश्रित्य महामाया जगत्संमोहिनी तु सा ॥ तस्मै ते परमेशान कल्पयाम्युत्तरीयकम् ॥ अथ यज्ञसूत्रम् ॥ यस्य शक्तित्रयेणेदं सम्प्रोक्तमखिलञ्जगत् ॥ यज्ञसूत्राय तस्मै ते यज्ञसूत्रम्प्रकल्पयेत् ॥ इति यज्ञसूत्रम् ॥ अथ भूषणम् ॥ स्वभाव-

सुन्दराङ्गाय सत्यासत्याश्रयाय ते ।। भूषणानि विचित्राणि कल्पयामि सुरार्चित ।। इति भूषणम् ।। अथ जलम् ।। समस्तदेवदेवेश सर्वतृप्ति-करम्परम् ।। अखण्डानन्दसम्पूर्णङ्गृहाण जलमुत्तमम् ।। इति जलम् ।। अथ गन्धम् ।। परमानन्दसौरभ्यपरिपूर्णदिगन्तरम् ।। गृहाण परमङ्गन्धं कृपया परमेश्वर ।। इति गन्धम् ।। अथ पुष्पम् ।। तुरीयगुणसम्पन्न-नानागुण-मनोहरम् ।। आनन्दसौरभम्पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ।। इति पुष्पम् ।। अथ धूप: ।। वनस्पतिरसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तम: ।। आघ्रेय: सर्वदेवा-नान्धूपोऽयम्प्रतिगृह्यताम् ।। इति धूप: ।। अथ दीप: ।। सुप्रकाशो महादीप: सर्वतस्तिमिरापह: ।। सबाह्याभ्यन्तरज्योतिर्दीपोयम्प्रतिगृह्यताम् ।। इति दीप: ।। अथ नैवेद्यम् ।। सत्पात्रसिद्धं स-हविर्विविधानेकभक्षणम् ।। निवेद-यामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ।। इति नैवेद्यम् ।। अथाचमनार्थंजलम् ।। समस्तदेवदेवेश सर्वतृप्तिकरम्परम् ।। अखण्डानन्दसम्पूर्ण गृहाण जल-मुत्तमम् ।। इति जलम् ।। अथ ताम्बूलम् ।। ताम्बूलञ्च वरन्दिव्यङ्कर्पूरादि सुवासितम् ।। मया निवेदितम्भक्त्या गृहाण परमेश्वर ।। इति ताम्बूलम् ।। इति पूजा ।।

अथ स्तोत्रम्

आदाय वेदान्सकलान्समुद्रान्निहत्य चोन्मथ्य मधुं ह्युदग्रम् ।। दत्ता पुरा येन पितामहाय विष्णुन्तमाद्यम्भज मत्स्यरूपम् ।।1।। दिव्यामृतार्थम्म-थिते महाब्धौ देवासुरैर्वासुकिमन्दराभ्याम् ।। भूमेर्महावेगविघूर्णितायान्तं कूर्ममाधारगतन्नमामि ।।2।। समुद्रकाञ्चीसरिदुत्तरीया वसुन्धरामेरुकिरीट-भारा ।। दंष्ट्रागतो येन समुद्धृताऽभूत्तमादिकोलं शरणम्प्रपद्ये ।।3।। भक्तार्त्तिभङ्गक्षमयाधिपाय स्तम्भान्तरालादुदितो नृसिंह: ।। रिपुं सुरा-णान्निशितैर्नखाग्रैर्विदारयन्तन्न च विस्मरामि ।।4।। चतुस्समुद्राभरणा-धरित्रीन्यासाय नालञ्चरणस्य यस्य ।। एकस्य नान्यस्य पदं सुराणान्त्रि-विक्रमं सर्वगतन्नमामि ।।5।। त्रिसप्तकृत्वो नृपतीन्निहत्य यस्तर्पणं रक्त-मयम्पितृभ्य: ।। चकार दोर्दण्डबलेन सम्यक्तमादिशूरम्प्रणमामि रामम् ।।6।। कुले रघूणां समवाप्य जन्म विधाय सेतुञ्जलधेर्जलान्त: । लङ्केश्वरं य: शमयाञ्चकार सीतापतितम्प्रणमामि भक्त्या ।।7।। हलेन सर्वानसुरान्नि-

कृष्य चकार चूर्णम्मुसलप्रहारैः ।। यः कृष्णमासाद्य वलम्वलीयान्भक्त्या भजे तम्वलभद्ररामम् ।।8।। पुरा सुराणामसुरान्विजेतुं सम्भावयच्छ्रीवरचिह्नवेषम् ।। चकार यः शास्त्रममोघकल्पन्तम्मूलभूतम्प्रणतोऽस्मि वुद्धम् ।।9।। कल्पावसाने निखिलैः सुरैस्स्वैस्सङ्घट्टयामास निमेषमात्रात् ।। यस्तेजसा स्वेन ददाह भीमो विश्वात्मकन्तन्तुरगम्भजामः ।।10।। शङ्खं सुचक्रं सुगदां सरोजंदोर्भिर्दधानङ्गरुडाधिरूढम् ।। श्रीवत्सचिह्नञ्जगदादिमूलन्तमालनीलं हृदि विष्णुमीडे ।।11।। क्षीराम्वुधौ शेषविशेषतल्पे शयानमन्तः स्मितशोभिवक्त्रम् ।। उत्फुल्लनेत्राम्वुजमम्वुदाभसामाद्यं श्रुतीनामसकृत्स्मरामि ।।12।। प्रीणयेदनया स्तुत्या जगन्नाथञ्जगन्मयम् ।। धर्मार्थकाममोक्षाणामाप्तये पुरुषोत्तमम् ।।13।। इति श्रीविष्णुस्तोत्रं समाप्तम् ।।

अथ कवचम्

श्रीनारद उवाच ।। भगवन्सर्वधर्मज्ञ कवचं यत्प्रकाशितम् ।। त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कृपया कथय प्रभो ।।1।। सनत्कुमार उवाच ।। शृणु वक्ष्यामि विप्रेन्द्र कवचपरमाद्भुतम् ।। नारायणेन कथितं कृपया ब्रह्मणे पुरा ।।2।। ब्रह्मणा कथितम्मह्यम्परं स्नेहाद्ददामि ते ।। अतिगुह्यतरन्तत्त्वम्ब्रह्ममन्त्रौघविग्रहम् ।।3।। यद्धृत्वा पठनाद्ब्रह्मा सृष्टिं वितनुते ध्रुवम् ।। यद्धृत्वा पठनात्पाति महालक्ष्मीर्जगत्त्रयम् ।।4।। पठनाद्धारणाच्छम्भुः संहर्त्ता सर्वमन्त्रवित् ।। त्रैलोक्यजननी दुर्गा महिषादिमहासुरान् ।।5।। वरदृप्ताञ्जघानैव पठनाद्धारणाद्यतः ।। एवमिन्द्रादयस्सर्वे सर्वैश्वर्य्यमवाप्नुयुः ।।6।। इदङ्कवचमत्यन्तगुप्तङ्कुत्रापि नो वदेत् ।। शिष्याय भक्तियुक्ताय साधकाय प्रकाशयेत् ।।7।। शठाय परशिष्याय दत्त्वा मृत्युमवाप्नुयात् ।। त्रैलोक्यमङ्गलस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः ।।8।। ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवो नारायणः स्वयम् ।। धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्त्तितः ।।9।। प्रणवो मे शिरः पातु नमो नारायणाय च ।। भालम्मे नेत्रयुगलमष्टार्णो भक्तिमुक्तिदः ।।10।। क्लीम्पायाच्छ्रोत्रयुग्मञ्चैकाक्षरसर्वमोहनः ।। क्लींकृष्णाय सदा घ्राणङ्गोविन्दायेति जिह्विकाम् ।। गोपीजनपद वल्लभाय स्वाहाननम्मम ।।11।। अष्टादशाक्षरो मन्त्रः कंठम्पातु दशाक्षरः ।।12।। गोपीजनपद वल्लभाय स्वाहा भुजद्वयम् ।। क्लींग्लौंक्लीं-

श्यामलाङ्गाय नम: स्कन्धौ दशाक्षर: ॥13॥ क्लींकृष्ण: क्लीं करौ पायात्क्लींकृष्णायाङ्गतोऽवतु ॥ हृदयम्भुवनेशानी क्लींकृष्णाय क्लीं स्तनौ मम ॥14॥ गोपालायाग्निजायान्तङ्कुक्षियुग्मं सदावतु ॥ क्लींकृष्णाय सदा पातु पार्श्वयुग्ममनुत्तम: ॥15॥ कृष्णगोविन्दकौ कट्यां स्मराद्यौ ङेयुतौ मनु: ॥ अष्टाक्षर: पातु नाभिं कृष्णेति द्वयक्षरोऽवतु ॥16॥ पृष्ठं क्लींकृष्णकङ्कालं क्लींकृष्णाय द्विठान्तक: ॥ सक्थिनी सततम्पातु श्रींह्रींक्लीं कृष्ण ठद्वयम् ॥17॥ ऊरूसप्ताक्षर: पायात्त्रयोदशाक्षरोऽवतु ॥ श्रींह्रींक्लींपदतो गोपीजनवल्लभ दन्तत: ॥18॥ भाय स्वाहेति पायुं वै क्लींह्रींश्रीं सदशार्णक: । जानुनी च सदा पातु ह्रींश्रींक्लीं च दशाक्षर: ॥19॥ त्रयोदशाक्षर: पातु जङ्घे चक्राद्युदायुध: ॥ अष्टादशाक्षरो ह्रींश्रीं-पूर्वको विंशदर्णक: ॥20॥ सर्वाङ्गम्मे सदा पातु द्वारकानायको बली ॥ नमो भगवते पश्चाद्वासुदेवाय तत्परम् ॥21॥ ताराद्यो द्वादशार्णोऽयम्प्राच्याम्मां सर्वदाऽवतु ॥ श्रींह्रींक्लीं च दशार्णस्तु क्लींह्रींश्रीं षोडशार्णक: ॥22॥ गदाद्युदायुधो विष्णुम्मामग्नेर्दिशि रक्षतु ॥ ह्रींश्रीं दशाक्षरो मन्त्रो दक्षिणे मां सदाऽवतु ॥23॥ तारो नमो भगवते रुक्मिणीवल्लभाय च ॥ स्वाहेति षोडशार्णोऽयन्नैर्ऋत्यान्दिशि रक्षतु ॥24॥ क्लींहृषीकेशदेशाय नमो मां वारुणेऽवतु ॥ अष्टदशार्ण: कामान्तो वायव्ये मां सदावतु ॥25॥ श्रींमायाकामकृष्णाय ह्रींगोविन्दाय द्विठो मनु: ॥ द्वादशार्णात्मको विष्णुरुत्तरे मां सदावतु ॥26॥ वाग्भावङ्कामं कृष्णाय ह्रींगोविन्दाय तत्परम् ॥ श्रींगोपीजनवल्लभान्ते भाय स्वाहा हसौस्तत: ॥27॥ द्वाविंशत्यक्षरो मन्त्रो मामैशान्ये सदावतु ॥ कालियस्य फणानांमध्ये दिव्यन्नृत्यङ्करोति तम् ॥28॥ नमामि देवकीपुत्रन्नृत्यराजानमच्युतम् ॥ द्वात्रिंशदक्षरो मन्त्रोऽप्यधो मां सर्वदावतु ॥29॥ कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि ॥ तन्नोऽनङ्ग: प्रचोदयादेषा माम्पातु चोर्द्ध्वत: ॥30॥ इति ते कथितं विप्र ब्रह्ममन्त्रौघविग्रहम् ॥ त्रैलोक्यमङ्गलन्नाम कवचम्ब्रह्मरूपकम् ॥31॥ ब्रह्मणा कथितम्पूर्वन्नारायणमुखाच्छ्रुतम् ॥ तव स्नेहान्ममाऽऽख्यातम्प्रवक्तव्यन्न कस्यचित् ॥32॥ गुरुम्प्रणम्य विधिवत्कवचम्प्रपठेत्तत: ॥ सकृद्द्विस्त्रिर्यथाज्ञानं सोऽपि सर्वतपोमय: ॥33॥ मन्त्रेषु सकलेष्वेव देशिको

नात्र संशय: ।। शतमष्टोत्तरञ्चास्य पुरश्चर्याविधि: स्मृत: ।।34।। हवनादीन्दशांशेन कृत्वां तत्साधयेद्ध्रुवम् ।। यदि स्यात्सिद्धकवचो विष्णुरेव भवेत्स्वयम् ।।35।। मन्त्रसिद्धिर्भवेत्तस्य पुरश्चर्य्याविधानत: ।। स्पर्द्धामुद्धूय सततं लक्ष्मीर्वाणी वसेत्तत: ।।36।। पुष्पाञ्जल्यष्टकन्दत्वा मूलेनैव पठेत्सकृत् ।। दशवर्षसहस्राणाम्पूजाया: फलमाप्नुयात् ।।37।। भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थान्धारयेद्यदि ।। कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न संशय: ।।38।। अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च ।। महादानादि यान्येव प्रादक्षिण्यम्भुवस्तथा ।।39।। कलान्नार्हन्ति तान्येव सकृदुच्चारणात्तत: ।। कवचस्य प्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेन्नर: ।।40।। त्रैलोक्यङ्क्षोभयत्येव त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।। इदङ्कवचमज्ञात्वा यजेद्य: पुरुषोत्तमम् ।। शतलक्षप्रजप्तोऽपि न मन्त्रस्तस्य सिद्ध्यति ।।41।। इति कवचं समाप्तम् ।।

अथ हृदयम्

आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा ममाभीष्टसिद्ध्यर्थं सङ्कलीकरणरीत्या सम्पुटीकरणरीत्या वा नारायणहृदयस्य सकृदावर्त्तनङ्करिष्ये ।। अस्य श्रीनारायणहृदयस्तोत्रमन्त्रस्य, भार्गवऋषि:, अनुष्टुप्छन्द:, श्रीलक्ष्मीनारायणो देवता, ओं बीजम्, नम: शक्ति:, नारायणायेति कीलकम्, श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीत्यर्थे जपे विनियोग: ।। ओं नारायण: परञ्ज्योतिरित्यङ्गुष्ठाभ्यान्नम:, ओं नारायण: परब्रह्मेति तर्जनीभ्यां०, ओं नारायण: परो देव इतिमध्यमाभ्यां०, ओं नारायण: परो ध्यातेति अनामिकाभ्यां०, ओं नारायण: परन्धामेति कनि०, ओं नारायण: परो धर्म इति करतलकर०, एवं हृदयादि ।। अथ दिग्बन्ध: ।। ओं ऐन्द्र्यादि ... दिशम् ।। "ओं नम: सुदर्शनाय सहस्राराय हुम्फट् बध्नामि नमश्चक्राय स्वाहा" इति प्रतिदिशं योज्यम् ।। अथ ध्यानम् ।। उद्यदादित्यसङ्काशम्पीतवाससमच्युतम् ।। शङ्खचक्रगदापाणिन्ध्यायेल्लक्ष्मीपतिं हरिम् ।। "ओं नमो नारायणाय" इति जप: ।। अथ मूलाष्टकम् ।। ओं नारायण: परञ्ज्योतिरात्मा नारायण: पर: ।। नारायण: परब्रह्म नारायण नमोस्तु ते ।।1।। नारायण: परो देवो दाता नारायण: पर: ।। नारायण: परो ध्याता नारायण नमोऽस्तु ते ।।2।। नारायण: परन्धाम ध्यानन्नारायण: पर: ।।

नारायणः परो धर्मो नारायण नमोऽस्तु ते ॥3॥ नारायणपरो वेदो विद्या नारायणः परा ॥ विश्वन्नारायणस्साक्षान्नारायण नमोऽस्तु ते ॥4॥ नारायणाद्विधिर्जातो जातो नारायणाच्छिवः ॥ जातो नारायणादिन्द्रो नारायण नमोऽस्तु ते ॥5॥ रविर्नारायणन्तेजश्चान्द्रन्नारायणम्महः ॥ वह्निर्नारायणः साक्षान्नारायण नमोऽस्तु ते ॥6॥ नारायणउपास्यः स्याद्गुरुर्नारायणः परः ॥ नारायणः परो बोधो नारायण नमोऽस्तु ते ॥7॥ नारायणः फलम्मुख्यं सिद्धिर्नारायणः सुखम् ॥ सेव्यो नारायणश्शुद्धो नारायण नमोऽस्तु ते ॥8॥ इति मूलाष्टकम् । अथ प्रार्थनादशकम् ॥ नारायणस्त्वमेवासि दहराख्ये हृदि स्थितः ॥ प्रेरकः प्रेर्यमाणानान्त्वया प्रेरितमानसः ॥1॥ त्वदाज्ञां शिरसा धृत्वा जपामि जनपावनम् ॥ नानोपासनमार्गाणाम्भावहृद्भावबोधकः ॥2॥ भावार्थकृद्भावभूतो भावसौख्यप्रदो भव ॥ त्वन्मायामोहितं विश्वन्त्वयैव परिकल्पितम् ॥3॥ त्वदधिष्ठानमात्रेण सैषा सर्वार्थकारिणी ॥ त्वमेव ताम्पुरस्कृत्य मम कामान्समर्पय ॥4॥ न मे त्वदन्यस्त्रातास्ति त्वदन्यन्न हि दैवतम् ॥ त्वदन्यन्न हि जानामि पालकस्पुण्यरूपकम् ॥5॥ यावत्सांसारिको भावो मनःस्थो भावनात्मकः ॥ तावत्सिद्धिर्भवेत्साध्या सर्वथा सर्वदा विभो ॥6॥ पापिनामहमेवाग्रयो दयालूनान्त्वमग्रणीः ॥ दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगत्त्रये ॥7॥ त्वयाप्यहन्न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता ॥ आमयो नैव सृष्टश्चेदौषधस्य वृथोदयः ॥8॥ पापसङ्घपरिक्रान्तः पापात्मा पापरूपधृक् ॥ त्वदन्यः कोऽत्र पापेभ्यस्त्राता मे जगतीतले ॥9॥ त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च गुरुस्त्वमेव, त्वमेव सर्वम्मम देवदेव ॥10॥ प्रार्थनादशकञ्चैव मूलाष्टकमुदाहृतम् ॥ यः पठेच्छृणुयान्नित्यं तस्य लक्ष्मीः स्थिरा भवेत् ॥11॥ नारायणस्य हृदयं सर्वाभीष्टफलप्रदम् ॥ लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं यदि चेत्तद्विना कृतम् ॥12॥ तत्सर्वन्निष्फलम्प्रोक्तं लक्ष्मीः क्रुद्धयति सर्वदा ॥ एतत्सङ्कलितं स्तोत्रं सर्वकर्मफलप्रदम् ॥13॥ लक्ष्मीहृदयकञ्चैव तथा नारायणात्मकम् ॥ जपेद्यः सङ्कलीकृत्वा सर्वाभीष्टमवाप्नुयात् ॥14॥ नारायणस्य हृदयमादौ जप्त्वा ततः परम् ॥ लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रञ्जपेन्नारायणम्पुनः ॥15॥

पुनर्नारायणञ्जप्त्वा पुनर्लक्ष्मीकृतञ्जपेत् ॥ पुनर्न्नारायणञ्जाप्यं सङ्कलीकरणम्भवेत् ॥13॥ एवम्मध्ये द्विवारेण जपेत्सङ्कलितं हि तत् ॥ लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं सर्वकामप्रकाशितम् ॥17॥ तद्वज्जपादिकङ्कुर्यदित-त्सङ्कलितं शुभम् ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति आधिव्याधिभयं हरेत् ॥18॥ गोप्यमेतत्सदा कुर्यान्न सर्वत्र प्रकाशयेत् ॥ इति गुह्यतमं शास्त्रम्प्राप्त-म्ब्रह्मादिकैः पुरा ॥19॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गोपयेत्साधयेत्सुधीः ॥ यत्रैतत्पुस्तकन्तिष्ठेल्लक्ष्मीनारायणात्मकम् ॥20॥ भूतपैशाचवेताला न स्थिरास्तत्र सर्वदा ॥ लक्ष्मीहृदयकम्प्रोक्तं विधिना साधयेत्सुधीः ॥21॥- भृगुवारे च रात्रौ च पूजयेत्पुस्तकद्वयम् ॥ सर्वस्वं सर्वदा सत्यङ्गोपये त्साधयेत्सुधीः ॥22॥ गोपनात्साधनाल्लोके धन्यो भवति तत्त्वतः ॥23॥ इत्यथर्वणरहस्ये उत्तरभागे श्रीनारायणहृदयं सम्पूर्णम् ॥

अथोपनिषत्

कश्यप उवाच ॥ एकशृङ्गवृषसिन्धो वृषाकपे सुरवृष अनादि-सम्भव रुद्र कपिल विष्वक्सेन सर्वभूतपते ध्रुवधर्म वैकुण्ठ वृषावर्त्त अनादिमध्यनिधन धनञ्जय शुचिश्रवः पृश्नितेजः निजजय अमृतशय सनातन त्रिधामन् तुषित महातत्त्व लोकनाथ पद्मनाभ विरञ्च बहुरूप अक्षय अक्षर हव्यभुक् खण्डपरशो शक्र मुञ्जकेश हंस महादक्षिण हृषीकेश सूक्ष्म महानियमधर विरजः लोकप्रतिष्ठ अरूप अग्रज धर्मज धर्मनाभ हव्यभुक् गभस्तिनाथ शतक्रतुनाथ चन्द्ररथ सूर्यतेजः समुद्रवासः अज सहस्रशिरः सहस्रपाद अयोमुख महापुरुष पुरुषोत्तम सहस्रबाहो सहस्रमूर्त्ते सहस्रास्य सहस्रसम्भव विश्वन्त्वामाहुः ॥ पुष्पहासचरम त्वमेव वौषट्-कारस्त्वामाहुरस्यमखेषु प्राशितारम् ॥ शतधारं सहस्रधारं बभूव ॥ भूवन्द्य भूनाथ भृगुपुत्र वेदवेद्य ब्रह्मशय ब्रह्मणप्रिय त्वमेव द्यौरसि मातरिश्वासि धर्मोसि होता पोता हन्ता मन्ता नेता होमहेतुस्त्वमेव ॥ अग्रयश्च धाम्नां त्वमेव ऋग्भिः सुभाण्ड इज्योऽसि सुमेधोसि समिधस्त्वमेव मतिर्गतिर्दाता त्वमसि मोक्षोऽसि योगोऽसि सृजसि धाता परमयज्ञोऽसि सोमोसि दीक्षितो-ऽसि दक्षिणासि विश्वमसि ॥ स्थविर हिरण्यगर्भ नारायण त्रिनयन आदि-वर्ण आदित्यतेजः महापुरुष पुरुषोत्तम आदिदेव भूविक्रम त्रिविक्रम प्रभाकर

शम्भो स्वयम्भू भूतादिमहाभूतोऽसि । विश्वभूत विश्वं त्वमेव विश्वगोप्तासि पवित्रमसि विश्वभव ऊर्ध्वकर्मन् अमृत दिवस्पते वाचस्पते घृतार्चे अनन्तकर्म वंशप्राग्वंशधीः त्वमश्वमेधः वरार्थिना वरदोऽसि त्वम् ।। चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्याम्पञ्चभिरेव च ।। हूयते च पुनर्द्वाभ्यान्तुभ्यं होत्रात्मने नमः ।। इत्युपनिषत्समाप्ता ।।

अथाष्टोत्तरशतनाम

अष्टोत्तरशतन्नाम्ना विष्णोरतुलतेजसः ।। यस्य श्रवणमात्रेण नरो नारायणो भवेत् ।।1।। विष्णुर्जिष्णुर्वषट्कारो देवदेवो वृषाकपिः ।। दामोदरो दीनबन्धुरादिदेवोऽदितेस्सुतः ।।2।। पुण्डरीकः परानन्दः परमात्मा परात्परः ।। परशुधारी विश्वात्मा कृष्णः कालीमलापहः ।।3।। कौस्तुभोद्भासितोरस्को नरो नारायणो हरिः ।। हरो हरप्रियः स्वामी वैकुण्ठो विश्वतोमुखः ।।4।। हृषीकेशोऽप्रमेयात्मा वराहो धरणीधरः ।। वामनो वेदवक्ता च वासुदेवस्सनातनः ।।5।। रामो विरामो विरजो रावणारी रमापतिः ।। वैकुण्ठवासी वसुमान् धनदो धरणीधरः ।।6।। धर्मेशो धरणीनाथो ध्येयो धर्मभृतांवरः ।। सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षस्सस्रपात् ।।7।। सर्वगः सर्ववित्सर्वः शरण्यः साधुवल्लभः ।। कौसल्यानन्दनश्श्रीमानृक्षः कुलविनाशकः ।।8।। जगत्कर्त्ता जगद्धर्त्ता जगज्जेता जनार्त्तिहा ।। जानकीवल्लभो देवो जयरूपो जलेश्वरः ।।9।। क्षीराब्धिवासी क्षीराब्धितनयावल्लभस्तथा ।। शेषशायी पन्नगारिवाहनो विष्टरश्रवाः ।।10।। माधवो मथुरानाथो मोहदो मोहनाशनः ।। दैत्यारिः पुण्डरीकाक्षो ह्यच्युतो मधुसूदनः ।।11।। सोमसूर्याग्निनयनो नृसिंहो भक्तवत्सलः ।। नित्यो निरामयश्शुद्धो नरदेवो जगत्प्रभुः ।।12।। हयग्रीवो जितरिपुरुपेन्द्रो रुक्मिणीपतिः ।। सर्वदेवमयः श्रीशः सर्वाधारः सनातनः ।।13।। सौम्यः सौम्यप्रदः स्रष्टा विष्वक्सेनो जनार्दनः ।। यशोदातनयो योगी योगशास्त्रपरायणः ।।14।। रुद्रात्मको रुद्रमूर्त्ती राघवो मधुसूदनः ।। इति ते कथितन्दिव्यन्नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।।15।। सर्वपापहरम्पुण्यं विष्णोरमिततेजसः ।। दुःखदारिद्र्यदौर्भाग्यनाशनं सुखवर्द्धनम् ।।16।। सर्वसम्पत्करं सौम्यम्महापातकनाशनम् ।। प्रातरुत्थाय विप्रेन्द्र पठेदेकाग्रमानसः ।। तस्य नश्यन्ति विपदां राशयः ततः सिद्धिमाप्नुयात् ।।17।। इत्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

12. अथ नारायणहृदयस्तोत्रम्

(नारायण हृदय स्तोत्र से लक्ष्मी हृदय स्तोत्र को सम्पुटित करने से अभीष्टसिद्धि की प्राप्ति होती है। लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए इस को प्रतिदिन स्नानादि करके शुद्धासन पर बैठकर शुद्ध वस्त्र धारण कर इस स्तोत्र का इस विधि से पाठ करें।)

ममाभीष्ट सिद्ध्यर्थं सम्पुटीकरणरीत्या नारायण हृदयेन लक्ष्मीहृदयस्य सम्पुटमहं करिष्ये।

अस्य श्री नारायण हृदय स्तोत्र मन्त्रस्य भार्गव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्री लक्ष्मी नारायणो देवता, ॐ बीजम्, नमः शक्तिः, नारायणायेति कीलकम्, श्री लक्ष्मी नारायण प्रीत्यर्थे जपे विनियोग?।

अगंन्यास—ॐ नारायणः परं ज्योतिः अगंुष्ठाभ्यां नमः। हृदयाय।
,, नारायणः परं ब्रह्म तर्जनीभ्यां नमः। शिरसे।
,, नारायणः परो देवः मध्यमाभ्यां नमः। शिखायै।
,, नारायणः परो ध्याता अनामिकाभ्यां नमः। कवचाय।
,, नारायणः परं धाम कनिष्ठिकाभ्यां नमः। नेत्रयाय।
,, नारायणः परोधर्मः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः। अस्त्राय।

ऐन्द्रादि दशदिग्वन्धनम्—ॐ नमः सुदशर्नाय सहस्राय हुं फट् बध्नामि नमश्चक्राय स्वाहा। इति प्रतिदिशं योज्यम्।

ध्यानम्—उद्यदादित्य संकाशं पीतवाससमच्युतम्।
शंख चक्र गदापाणि ध्यायेल्लक्ष्मी पति हरिम्॥

मन्त्रः—ॐ नमोनाराणाय—इति जपः। अष्टोत्तरशतम्।

अथ मूलाष्टकम्

1. नारायणः परं ज्योतिरात्मा नारायणः परः।
नारायणः परं ब्रह्म नारायण नमोऽस्तुते॥

2. नारायणः परो देवो दाता नारायणः परः ।
नारायणः परो ध्याता नारायण नमोऽस्तुते ॥
3. नारायणः परं धाम ध्यानं नारायणः परः ।
नारायणः परो धर्मो नारायण नमोऽस्तुते ॥
4. नारायणः परो वेदो विद्या नारायणः परा ।
विश्वं नारायणः साक्षान्नारायण नमोऽस्तुते ॥
5. नारायणाद् विधिर्जातो जातो नारायणाच्छिवः ।
जातो नारायणादिन्द्रो नारायण नमोऽस्तुते ते ॥
6. रविः नारायणं तेजश्चान्द्रं नारायणं महः ।
वह्निः नारायणः साक्षान्नारायण नमोऽस्तुते ॥
7. नारायणः उपास्यः स्याद् गुरुः नारायणः परः ।
नारायणः परो बोधो नारायण नमोऽस्तु ते ॥
8. नारायणः फलं मुख्यं सिद्धिर्नारायणः सुखम् ।
सेव्यो नारायणः शुद्धो नारायण नमोऽस्तु ते ॥

अथ प्रार्थनादशकम्

1. नारायणस्त्वमेवासि दहराख्ये हृदि स्थितः ।
प्रेरकः प्रेर्यमाणानां त्वया प्रेरितमानसः ॥
2. त्वदाज्ञां शिरसा धृत्वा जपामि जन पावनम् ।
नानोपासन मार्गाणां भावहृद् भाव बोधकः ॥
3. भावार्थ कृद् भाव भूतो भाव सौख्य प्रदो भव ।
त्वन्माया मोहितं विश्वं त्वयैव परिकल्पितम् ॥
4. त्वदधिष्ठान मात्रेण सैषा सर्वार्थ कारिणी ।
त्वमेव तां पुरस्कृत्य मम कामान् समर्पय ॥
5. न मे त्वदन्यस्त्राताऽस्ति त्वदन्यं नहि दैवतम् ।
त्वदन्यं नहि जानामि पालकम् पुण्य रूपकम् ॥
6. यावत्संसारिको भावो मनःस्थो भावनात्मकः ।
तावत्सिद्धिः भवेत्साध्या सर्वथा सर्वदा विभो ॥

7. पापिनामहमेवाग्रो दयालूनां त्वमग्रणी: ।
दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगत्त्रये ।।
8. त्वयाप्यहं न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता ।
आमयो नैव सृष्टश्चेदौषधस्य वृथोदय: ।।
9. पापसंघ परिक्रान्त: पापात्मा पाप रूपधृक् ।
त्वदन्य: कोऽत्र पापेभ्य स्त्राता मे जगती तले ।।
10. त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या च गुरुस्त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव ।।
11. प्रार्थना दशकं चैव मूलाष्टक मुदाहृतम् ।
य: पठेच्छृणुयान्नित्य तस्य लक्ष्मी स्थिरा भवेत् ।।
फलम्—नारायणस्य हृदयं सर्वाभीष्ट फलप्रदम् ।
लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं यदि चेत्तद्विना कृतम् ।।12।।
तत्सर्वं निष्फलं प्रोक्तं लक्ष्मीक्रुध्यति सर्वदा ।
एतत्संकलितं स्तोत्रं सर्व काम फलप्रदम् ।।13।।
लक्ष्मी हृदयकं चैव तथा नारायणात्मकम् ।
जपेद्य: संकलीकृत्य सर्वाभीष्टमवाप्नुयात् ।।14।
नारायणस्य हृदयमादौ जप्त्वा तत: परम् ।
लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं जपेन्नारायणं पुन: ।।15।।
पुन: नारायणं जप्त्वा पुन: लक्ष्मीकृतं जपेत् ।
पुन: नारायणं जाप्यं सकलीकरणं भवेत् ।।16।।
एवं मध्ये द्विवारेण जपेत्संकलितं हि तत् ।
लक्ष्मीहृदयकं स्तोत्रं सर्वकाम प्रकाशितम् ।।17।।
तद्वज्जपादिकं कुर्यादेतत्संकलितं शुभम् ।।
सर्वान् कामानाप्नोति आधिव्याधिभयं हरेत् ।।18।।

गोप्यमेतत् सदा कुर्यान्न सर्वत्र प्रकाशयेत ।
इति गुह्यतमं शास्त्रं प्राप्तं ब्रह्मादिकैः पुरा ॥19॥
तस्मात् सर्व प्रयत्नेन गोपयेत्साधयेत् सुधीः ।
यत्रैतत्पुस्तकं तिष्ठेत् लक्ष्मी नारायणात्मकम् ॥20॥
भूत पैशाचवेतालाः न स्थिरास्तत्र सर्वदा ।
लक्ष्मी हृदयकं प्रोक्तं विधिना साधयेत् सुधी ॥21॥
भृगुवारे च रात्रौ च पूजयेत् पुस्तकद्वयम् ।
सर्वस्वं सर्वदा सत्यं गोपयेत् साधयेत् सुधी ॥22॥
गोपनात् साधनाल्लोके धन्यो भवति तत्त्वतः ॥23॥
इत्यथर्वण रहस्ये उत्तरभागे श्री नारायण-हृदयं सम्पूर्णम् ॥

13. अथ महालक्ष्मी हृदयस्तोत्रम्

ओ३न्-अस्य श्री महालक्ष्मी हृदय माला मन्त्रस्य, भार्गव ऋषि:, आद्यादि श्री महालक्ष्मीर्देवता, अनुष्टुवादि नानाछन्दांसि, श्री बीजम्, ह्रीं शक्ति:, ऐं कीलकम्, श्री महालक्ष्मी प्रसाद सिद्धयर्थं जपे विनियोग: ।

न्यास:—उों भार्गव ऋषये नम: शिरसि ।
अनुष्टुवादि नानाछन्दोभ्यो नमो मुखे ।
आद्यादि श्री महालक्ष्म्यै देवतायै नमो हृदये ।
श्रीं बीजाय नमो गुह्ये ।
ह्रीं शक्तये नम: पादयो: ।
ऐं कीलकाय नम: सर्वाङ्गे ।

करन्यास:—श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नम: ।
ह्रीं तर्जनीभ्यां नम: ।
ऐं मध्यमाभ्यां नम: ।
श्रीं अनामिकाभ्यां नम: ।
ह्रीं कनिष्ठकाभ्यां नम: ।
ऐं करतल करपृष्ठाभ्यां नम: ।

अंगन्यास—उों श्रीं हृदयाय नम: ।
ह्रीं शिरसे स्वाहा ।
ऐं शिखायै वषट् ।
श्रीं कवचाय हुम् ।
ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ऐं अस्त्राय फट् ।
उों श्रीं ह्रीं ऐं दिग्बन्ध: ।

ध्यानम्—हस्तद्वयेन कमले धारयन्तीं स्व लीलया ।
हार नूपुर संयुक्तां लक्ष्मीं देवीं विचिन्तये ॥

इति ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूज्य ।

शंख चक्र गदाहस्ते शुभ्रवर्णे सुवासिनी ।
मम देहि वरं लक्ष्मि सर्वसिद्धि प्रदायिनि ।।

इति संप्रार्थ्य—ओं श्रीं ह्रीं ऐं महालक्ष्म्यै कमलधारिण्यै सिंहवाहिन्यै स्वाहा ।

इति मन्त्रं जप्त्वा पुनः हृदयादि न्यासं कृत्वा स्तोत्रं पठेत् ।

1. वन्दे लक्ष्मीं परशिवमयीं शुद्ध जांबू नदाभाम् ।
तेजो रूपां कनकवसनां सर्व भूषोज्ज्वलांगीम् ।।
बीजा पूरं कनक कलशं हेम पद्मं दधाना—
माद्यां शक्तिं सकल जननीं विष्णु वामांक संस्थाम् ।।

2. श्रीमत्सौभाग्य जननीं स्तौमि लक्ष्मीं सनातनीम् ।
सर्व काम फलावाप्तिं साधनैक सुखावहाम् ।।

3. स्मरामि नित्यं देवेशि त्वया प्रेरित मानसः ।
त्वदाज्ञां शिरसा धृत्वा भजामि परमेश्वरीम् ।।

4. समस्त सम्पत्सुखदां महाश्रियं
समस्त सौभाग्य करीं महाश्रियम् ।
समस्तकल्याण करीं महाश्रियं,
भजाम्यहं ज्ञान करीं महाश्रियम् ।।

5. विज्ञान सम्पत्सुखदां सनातनीं,
विचित्र वाग्विभूति करीं मनोहराम् ।
अनन्त सामोद सुखप्रदायिनीं
नमाम्यहं भूति करीं हरि प्रियाम् ।।

6. समस्त भूतान्तर संस्थिता त्वं
समस्त भोक्त्रीश्वरि विश्वरूपे ।
तन्नास्ति यद्वद् व्यतिरिक्त वस्तु,
त्वत्पाद पद्मं प्रणमाम्यहं श्रीः ।।

7. दारिद्र्य दुःखौघ तमोपहन्त्री,
त्वत्पाद पद्मं मयि सन्निधत्स्व,

दीनार्ति विच्छेदन हेतुभूतैः,
कृपाकटाक्षैरभिषिञ्च मां श्रीः ॥

8. अम्ब प्रसीद करुणासुधयार्द्रं दृष्टया,
मां त्वत्कृपाद्रविण गेह मिमं कुरुष्व ।
आलोकय प्रणत हृद्गत शोक हन्त्री,

9. शान्त्यै'नमोऽस्तु शरणागत रक्षणायै,
कान्त्यै नमोऽस्तु कमनीय गुणाश्रयायै
क्षान्त्यै नमोऽस्तु दुरित क्षय कारणायै,
धात्र्यै नमोऽस्तु धनधान्य समृद्धिदायै ॥

10. शक्त्यै नमोऽस्तु शशिशेखर संस्तुतायै,
रत्यै नमोऽस्तु रजनीकर सोदरायै ।
भक्त्यै नमोऽस्तु भवसागर तारकायै,
मत्यै नमोऽस्तु मधुसूदनवल्लभायै ॥

11. लक्ष्म्यै नमोऽस्तु शुभलक्षण लक्षितायै,
सिद्ध्यै नमोऽस्तु शिवसिद्धि सुपूजितायै ।
धृत्यै नमोऽस्त्वमित दुर्गति भंजनायै,
गत्यै नमोऽस्तु वर सद्गति दायकायै ॥

12. देव्यै नमोऽस्तु दिवि देव गणार्चितायै,
भूत्यै नमोऽस्तु भुवनार्ति विनाशनायै ।
दात्र्यै नमोऽस्तु धरणीधर वल्लभायै,
पुष्ट्यै नमोऽस्तु पुरुषोत्तम वल्लभायै ॥

13. सुतीव्र दारिद्रय विदुःख हन्त्र्यै,
नमोऽस्तुते सर्वभयापहन्त्र्यै ।
श्री विष्णु वक्षस्थल संस्थितायै,
नमो नमः सर्वविभूतिदायै ॥

14. जयतु जयतु लक्ष्मी लक्षणालंकृतांगी,
जयतु जयतु पद्मा पद्म सद्माभिवन्द्या ।
जयतु जयतु विद्या विष्णु वामांक संस्था,

जयतु जयतु सम्यक् सर्वसंपत्करी श्रीः ॥

15. जयतु जयतु देवी देव संघाभि पूज्या,
जयतु जयतु भद्रा भार्गवी भाग्य रूपा ।
जयतु जयतु नित्या निर्मल ज्ञान वेद्या,
जयतु जयतु सत्या सर्वभूतान्तरस्था ॥

16. जयतु जयतु रम्या रत्न गर्भान्तरस्था,
जयतु जयतु शुद्धा शुद्ध जाम्बूनदाभा ।
जयतु जयतु कान्ता कान्तिमद् भासितांगी,
जयतु जयतु शान्ता शीघ्रमागच्छ सौम्ये ॥

17. यस्या, कलायाः कमलोद्भवायाः,
रुद्राश्च शक्रप्रमुखाश्च देवाः ।
जीवन्ति सर्वा अपि शक्तयस्ताः,
प्रभुत्वमाप्ताः परमायुपस्ते ॥

18. लिलेख निटिले विधिर्मम लिपिं विसृज्यापरं,
त्वया विलिखितव्य मेतदिति तत्फल प्राप्तये ।
तदन्तर फले स्फुटं कमल वासिनि श्रीरिमां
समर्पय स्वमुद्रिकां सकल भाग्य संसूचिकाम् ॥

19. कलया ते यथा देवि, जीवन्ति सचराचराः ।
तथा संपत्करे लक्ष्मीः सर्वदा संप्रसीद मे ॥

20. यथा विष्णु ध्रुवे नित्यं स्व कलां संन्यवेशयेत् ।
तथैव स्व कलां लक्ष्मि मयि सम्यक् समर्पय ॥

21. सर्व सौख्यप्रदे देवि भक्तानामभयप्रदे ।
अचलां कुरु यत्नेन कलां मयि निवेशिताम् ॥

22. मुदास्तां मद्भाले परमपद लक्ष्मी स्फुट कला,
सदा वैकुण्ठ श्री निवसतु कला मे नयनयोः ।
वसेत्सत्ये लोके मम वचसि लक्ष्मीर्वरकला,
श्रियः श्वेत द्वीपे निवसतु कला मेऽस्तु करयोः ॥

23. तावन्नित्यं ममाङ्गेषु क्षीराब्धौ श्रीकला वसेत् ।
सूर्या चन्द्रमसौ यावद्यावल्लक्ष्मीपति श्रिया ॥
24. सर्वमंगल सम्पूर्णा सर्वैश्वर्य समन्विता ।
आद्यादि श्री महालक्ष्मीस्त्वत्कला मयि तिष्ठतु ॥
25. अज्ञानतिमिरं हन्तुं शुद्धज्ञान प्रकाशिका ।
सर्वैश्वर्य प्रदा मेऽस्तु त्वत्कलामयि संस्थिता ॥
26. अलक्ष्मी: हरतु क्षिप्रं तम: सूर्य प्रभा यथा ।
वितनोतु मम श्रेयस्त्वत्कला मयि संस्थिता ॥
27. ऐश्वर्य मंगलोत्पत्तिस्त्वत्कलाया निधीयते ।
मयि तस्मात्कृतार्थोऽस्मि पात्रमस्मि स्थितेस्तव ॥
28. भवदावेश भाग्यार्हो भाग्यवानस्मि भार्गवि ।
त्वत्प्रसादात्पवित्रोऽहं लोक मातर्नमोऽस्तु ते ॥
29. पुनासि मां त्वं कलयैव यस्मादत: समागच्छ ममाग्रत: त्वम् ।
परं पदं श्री भव सुप्रसन्ना मय्यच्युतेन प्रविशादि लक्ष्मी: ॥
30. श्रीवैकुण्ठस्थिते लक्ष्मी: समागच्छ ममाग्रत: ।
नारायणेन सह मां कृपा दृष्ट्याऽवलोकय ॥
31. सत्य लोक स्थिते लक्ष्मी स्त्वं समागच्छ सन्निधिम् ।
वासुदेवेन सहिता प्रसीद वरदा भव ॥
32. श्वेत द्वीप स्थिते लक्ष्मी: शीघ्रमागच्छ सुव्रते ,
विष्णुना सहिते देवि जगन्मात: प्रसीद मे ॥
33. क्षीराम्बुधि स्थिते लक्ष्मी: समागच्छ समाधवे ।
त्वत्कृपादृष्टि सुधया सततं मां विलोकय ॥
34. रत्नगर्भ स्थिते लक्ष्मी: परिपूर्ण हिरणमयी ।
समागच्छ समागच्छ स्थित्वाशु पुरतो मम ॥
35. स्थिरा भव महालक्ष्मी: निश्चला भव निर्मले ।
प्रसन्ने कमले देवि प्रसन्न हृदया भव ॥
36. श्रीधरे श्रीमहाभूते त्वदंतस्थं महानिधिम् ॥
शीघ्र मुद्धृत्य पुरत: प्रदर्शय समर्पय ॥

37. वसुन्धरे श्री वसुधे वसुदोग्ध्रि कृपां मयि ।
त्वत्कुक्षिगत सर्वस्वं शीघ्रं मे सम्प्रदर्शय ॥

38. विष्णुप्रिये रत्नगर्भे समस्त फलदे शिवे ।
त्वद्गर्भगत हेमादीन संप्रदर्शय दर्शय ॥

39. रसातल गते लक्ष्मी शीघ्रमागच्छ मे पुरः ।
न जाने परमं रूपं मातर्मे संप्रदर्शय ॥

40. आविर्भव मनोवेगाच्छीघ्रमागच्छ मे पुरः ।
मा वत्सभैरिहेत्युक्त्वा कामं गौरिव रक्ष माम् ॥

41. देवि शीघ्रं समागच्छ धरणीगर्भ संस्थिते ।
मातस्त्वद्भृत्य भृत्योऽहं मृगये त्वां कुतूहलात् ॥

42. उत्तिष्ठ जागृहि त्वं मे समुत्तिष्ठ सुजागृहि ।
अक्षयान् हेमकलशान्सुवर्णेन सुपूरितान् ॥

43. निक्षेपान्मे समाकृष्य समुद्धृत्य ममाग्रतः ।
समुन्नतानना भूत्वा समाधेहि धरान्तरात् ॥

44. मत्सन्निधिं समागच्छ मदाहितकृपारसात् ।
प्रसीद श्रेयसां दोग्ध्रि लक्ष्मी मे नयनाग्रतः ॥

45. अत्रोपविश लक्ष्मीस्त्वं स्थिरा भव हिरण्मयी ।
सुस्थिरा भव संप्रीत्या प्रसीद वरदा भव ॥

46. आनीय त्वं तथा देवी निधीन्मे संप्रदर्शय ।
अद्य क्षणेन सहसा दत्त्वा संरक्ष मां सदा ॥

47. मयि तिष्ठ तथा नित्यं यथेन्द्रादिषु तिष्ठसि ।
अभयं कुरु मे देवि महालक्ष्मी र्नमोऽस्तु ते ॥

48. समागच्छ महालक्ष्मीः शुद्धजांवूनद प्रभे ।
प्रसीद पुरतः स्थित्वा प्रणतं मां विलोकय ॥

49. लक्ष्मी भुवं गता भासि यत्र यत्र हिरण्मयीं ।
तत्र-तत्र स्थिता त्वं मे तव रूपं प्रदर्शय ॥

50. क्रीडसे वहुधा भूमौ परिपूर्णा कृपामयि ।
मम मूर्ध्नि स्थिते हस्तमविलम्बिमर्पय ॥

51. फलद्भाग्योदये लक्ष्मी: समस्त पुरवासिनी ।
प्रसीद मे महालक्ष्मी: परिपूर्ण मनोरथे ॥
52. अयोध्यादिषु सर्वेषु नगरेषु समाश्रिते ।
विभवै: विविधै: युक्ते समागच्छ बलान्विते ॥
53. समागच्छ समागच्छ ममाग्रे भव सुस्थिरा ।
करुणा रस निष्यन्द नेत्रद्वय विशालिनी ॥
54. संविधत्स्व महालक्ष्मीस्त्वं पाणि मम मस्तके ।
करुणासुधया मां त्वमभिषिञ्च स्थिरं कुरु ॥
55. सर्वराज गृहे लक्ष्मी: समागच्छ बलान्विते ।
स्थित्वाशु पुरतो मेऽद्य प्रसादेनाभङ्कुरु ॥
56. सादरं मस्तके हस्तं मम त्वं कृपयार्पय ।
सर्वराजगृहे लक्ष्मी: त्वत्कलामयि तिष्ठतु ॥
57. आद्यादि श्रीर्महालक्ष्मी: विष्णु वामाङ्क संस्थिते ।
प्रत्यक्षं कुरु मे रूपं रक्ष मां शरणागतम् ॥
58. प्रसीद मे महालक्ष्मी सुप्रसीद महाशिवे ।
अचला भव संप्रीत्या सुस्थिरा भव मद् गृहे ॥
59. यावत्तिष्ठन्ति वेदाश्च यावत्त्वन्नाम तिष्ठति ।
यावद् विष्णुश्च यावत्त्वं तावत्कुरु कृपां मयि ॥
60. चान्द्री कला यथा शुक्ले वर्धते सा दिने दिने ।
तथा दया ते मय्येव वर्धतामभिवर्धताम् ॥
61. यथा वैकुण्ठ नगरे यथा वै क्षीर सागरे ।
तथा मद्भवने तिष्ठ स्थिरं श्री विष्णुना सह ॥
62. योगिनां हृदये नित्यं यथा तिष्ठसि विष्णुना ।
तथा मद्भवने तिष्ठ स्थिरं श्री विष्णुना सह ॥
63. नारायणस्य हृदये भवती यथाऽऽस्ते,
नारायणोऽपि तव हृत्कमले यथाऽऽस्ते ।
नारायणस्त्वमपि नित्यमुभौ तथैव,
तौ तिष्ठतां हृदि ममापि दयावती श्री: ॥

64. विज्ञान वृद्धि हृदये कुरु श्रीः,
सौभाग्य वृद्धि कुरु मे गृहे श्रीः ।
दया सुवृद्धि कुरुतां मयि श्रीः,
सुवर्णवृद्धि कुरु मे गृहे श्रीः ॥

65. न मां त्यजेथाः श्रितकल्पवल्लि,
सद्भक्ति चिन्ता मणि काम धेनो ।
विश्वस्य मात भव सुप्रसन्ना,
गृहे कलत्रेषु च पुत्र वर्गे ॥

66. आद्यादि माये त्वमजाण्डबीजं,
त्वमेव साकार निराकृतिस्त्वम् ॥
त्वया धृताश्चाब्ज भवाण्ड संघा,
श्चित्रं चरित्रं तव देवि विष्णोः ॥

67. ब्रह्मरूद्रादयो देवाः वेदाश्चापि न शक्नुयुः ।
महिमानं तव स्तोतुं मन्दोऽहं शक्नुयां कथम् ॥

68. अम्ब त्वद्वत्स वाक्यानि सूक्तासूक्तानि यानि च ।
तानि स्वीकुरु सर्वज्ञे दयालुत्वेन सादरम् ॥

69. भवतीं शरणं गत्वा कृतार्थाः स्युः पुरातनाः ।
इति संचिन्त्य मनसा त्वामहं शरणं व्रजे ॥

70. अनन्ताः नित्य सुखिनः त्वद्भक्ता त्वत्परायणाः ।
इति वेद प्रमाणाद्धि देवि त्वां शरणं व्रजे ॥

71. तव प्रतिज्ञा मद्भक्ताः न नश्यन्तीत्यपि क्वचित् ।
इति संचिन्त्य संचिन्त्य प्राणान् संधारयाम्यहम् ॥

72. त्वदधीनस्त्वहं मातस्त्वत्कृपामयि विद्यते ।
यावत्सम्पूर्णकामः स्यां तावद् देहि दयानिधे ॥

73. क्षणमात्रं न शक्नोमि जीवितुं त्वत्कृपां विना ।
न जीवन्तीह जलजाः जलं त्यक्त्वा जलग्रहाः ॥

74. यथा हि पुत्र वात्सल्याज्जननी प्रस्नुतस्तनी ।
वत्सं त्वरितमागत्य संप्रीणयति वत्सला ॥

75. यदि स्यां तव पुत्रोऽहं माता त्वं यदि मामकी ।
दयापयोधरस्तन्य सुधाभिरभिषिंच माम् ।।

76. मृग्यो न गुणलेशोऽपि मयि दोषैक मन्दिरे ।
पांसूनां वृष्टि विन्दूनां दोषाणां च मे मितिः ।।

77. पापिनामहं मेवाग्रयो दयालूनां त्वमग्रणीः ।
दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगत्त्रये ।।

78. विधिनाहं न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता ।
आमयो वा न सृष्टश्चेदौपधस्य वृथोदयः ।।

79. कृपा मदग्रजः किं ते अहं किं वा तदग्रज; ।
विचार्य देहि मे वित्तं तव देहि दयानिधे ।।

80. माता पिता त्वं गुरु सद्गति श्रीः,
त्वमेव संजीवन हेतु भूता ।
अन्यन्न मन्ये जगदेक नाथे,
त्वमेव सर्वं मम देवि सत्ये ।।

81. आद्यादि लक्ष्मि भव सुप्रसन्ना,
विशुद्ध विज्ञान सुखैक दोग्ध्री ।
अज्ञानहन्त्री त्रिगुणातिरिक्ता,
प्रज्ञाननेत्री भव सूप्रसन्ना ।।

82. अशेषवाग्जाड्य मलापहन्त्री,
नवं नवं स्पष्ट सुवाक्प्रदायिनी ।
ममेह जिह्वाग्र सुरंग नर्तकी,
भव प्रसन्ना वदने च मे श्रीः ।

83. समस्तसम्पत्सु विराजमाना,
समस्त तेजश्च य भासमाना ।
विष्णुप्रिये त्वं भव दीप्यमाना,
वाग्देवता मे नयने प्रसन्ना ।।

84. सर्वं प्रदर्शे सकलार्थदे त्वं,
प्रभासु लावण्य दया प्रदोग्ध्री ।

सुवर्णदे त्वं सुमुखी भव श्री:,
हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥

85. सर्वार्थदा सर्व जगत्प्रसूति:,
सर्वेश्वरी सर्व भयापहन्त्री ।
गर्वोन्नता त्वं सुमुखी भव श्री:,
हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥

86. समस्तविघ्नौघ विनाशकारिणी,
समस्त भक्तोद्धरणे विचक्षणा ।
अनन्त सौभाग्य सुखप्रदायिनी,
हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥

87. देवि प्रसीद दयनीयतमाय,
मह्यं देवाधिनाथ भव देव गणाभिवन्द्ये ।
मातस्तथैव भव संनिहिता दृशोर्मे,
पत्या समं मम मुखे भव सुप्रसन्ना ॥

88. मा वत्स भैरभयदान करोऽर्पितस्ते,
मौलौ ममेति मयि दीन दयानुकम्पे ।
मात: समर्पय मुदा करुणा कटाक्षं,
मांगल्य बीजमिह न: सृज जन्म मात: ॥

89. कटाक्ष इह कामधुक् तव मनस्तु,
चिन्तामणि: कर: सुर तरु: सदा नवनिधिस्त्वमेवेन्दिरे ।
भवेत्तव दया रसो मम रसापनं चान्वहं,
मुखं तव कलानिधिर्विविधवांछितार्थ प्रदम् ॥

90. यथा रसस्पर्शनतोऽयसोऽपि,
सुवर्णता स्यात्कमले तथा ते ।
कटाक्ष संस्पर्शनतो जनाना
ममङ्गलानामपि मङ्गलत्वम् ॥

91. देहीति नास्तीति वच: प्रवेशाद्
भीतो रमे त्वां शरणं प्रपद्ये ।

अतः सदाऽस्मिन् अभयप्रदा त्वं
सहैव पत्या मयि सन्निधेहि ॥

92. कल्पद्रुमेण मणिना सहिता सुरम्या,
श्रीस्ते कला मयि रसेन रसायणेन ।
आस्तां यतो मम च दृक् शिरपाणिपाद—
स्पृष्टाः सुवर्ण वपुषः स्थिर जंगमाः स्युः ॥

93. आद्यादि विष्णोः स्थिरधर्मपत्नी,
त्वमेव पत्या मयि संनिधेहि ।
आद्यादिलक्ष्मि त्वदनुग्रहेण,
पदे पदे मे निधिदर्शनं स्यात् ॥

94. आद्यादि लक्ष्मी हृद्यं पठेद्यः
स राज्य लक्ष्मीमचलां तनोति ।
महादरिद्रोऽपि भवेद्धनाढ्यः,
तदन्वये श्रीः स्थिरतां प्रयाति ॥

95. यस्य स्मरण मात्रेण तुष्टा स्याद् विष्णु वल्लभा ।
तस्याभीष्टं ददात्याशु तं पालयति पुत्रवत् ॥

96. इदं रहस्यं हृदयं सर्वकामफलप्रदम् ।
जपः पंच सहस्रं तु पुरश्चरणमुच्यते ॥

97. त्रिकालमेक कालं वा नरो भक्ति समन्वितः ।
यः पठेच्छ्रुणुयाद्वापि स याति परमां श्रियम् ॥

98. महालक्ष्मीं समुद्दिश्य निशि भार्गववासरे ।
इदं श्री हृदयं जप्त्वा पञ्चवारं धनी भवेत् ॥

99. अनेन हृदयेनान्नं गर्भिण्या अभिमन्त्रितम् ।
ददाति तत्कुले पुत्रो जायते श्रीपति स्वयम् ॥

100. नरेण वाऽथवा नार्या लक्ष्मीहृदयमन्त्रिते ।
जले पीते च तद्वंशे मन्दभाग्यो न जायते ॥

101. यः आश्विने मासि शुक्ल पक्षे,
रमोत्सवे संनिहितैक भक्त्या ।

पठेत्तथैकोत्तर वार वृद्धया,
लभेत्स सौवर्णमयीं सुवृष्टिं ॥

102. य एक भक्तोऽन्वहमेक वर्षं,
विशुद्धधी: सप्तति वार जापी,
स मन्दभाग्योऽपि रमाकटाक्षाद्
भवेत्सहस्राक्ष शताधिकश्री: ॥

103. श्रीशांघ्रि भक्ति हरिदास दास्यम्,
प्रसन्नमन्त्रार्थ दृढैक निष्ठाम् ।
गुरो: स्मृति निर्मलवोध वृद्धि,
प्रदेहि मात: परमं पदं श्री: ॥

104. पृथ्वीपतित्वं पुरुषोत्तमत्वं,
विभूति वासं विविधार्थसिद्धिम् ।
सम्पूर्ण कीर्ति वहुवर्षभोगं,
प्रदेहि मे देवि पुन: पुनस्त्वम् ॥

105. वादार्थ सिद्धि वहुलोक वश्यं,
वय: स्थिरत्वं ललनासु भोगम् ।
पौत्रादिलब्धिं सकलार्थ सिद्धि
प्रदेहि मे भार्गवि जन्म जन्मनि ॥

106. सुवर्णवृद्धि कुरु मे गृहे श्री:
विभूतिवृद्धि कुरु मे गृहे श्री: ।
शिरोवीजम्—ओं यं हं कं लं पं श्रीं
ध्यायेल्लक्ष्मीं प्रहसित मुखीं कोटिवालार्कभासाम्
विद्युद् वर्णाम्वरधरां भूषणाढ्यां सुशोभाम् ।
बीजापूरं सरसिज युगं विभ्रतीं स्वर्णपात्रं,
भर्त्रायुक्तां मुहुरभयदां मह्यमप्यच्युत श्री: ॥107॥
गुह्यातिगुह्य गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्मयि स्थिता ॥
इति अथर्वणरहस्ये लक्ष्मीहृदयस्तोत्रंसम्पूर्णम् ॥

नारायणहृदयस्तोत्रम्

1. नारायणस्त्वमेवासि दहराख्ये हृदि स्थित: ।
प्रेरक: प्रेर्यमाणान्त्वया प्रेरितमानस: ।।

2. त्वदाज्ञां शिरसा धृत्वा जपामि जनपावनम् ।
नानोपासन मार्गाणां भावहृद् भावबोधक: ।।

3. भावार्थकृद् भावभूतो भाव सौख्य प्रदो भव ।
त्वन्माया मोहितं विश्वं त्वयैव परिकल्पितम् ।।

4. त्वदधिष्ठान मात्रेण सैषा सर्वार्थकारिणी ।
त्वमेव तां पुरस्कृत्य मम कामान् समर्पय ।।

5. न मे त्वदन्यस्त्राताऽस्ति त्वदन्यं नहि दैवतम् ।
त्वदन्यं न हि जानामि पालकं पुण्यरूपकम् ।।

6. यावत्संसारिको भावो मनस्थो भावनात्मक: ।
तावत्सिद्धि: भवेत्साध्या सर्वथा सर्वदा विभो ।।

7. पापिनामहमेवाग्रयो दयालूनां त्वमग्रणी: ।
दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगत्त्रये ।।

8. त्वयाप्यहं न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता ।
आमयो नैव सृष्टश्चेदौषधस्य वृथोदय: ।।

9. पापसंघ परिक्रान्त: पापात्मा पापरूपधृक् ।
त्वदन्य: कोऽत्र पापेभ्यस्त्राता मे जगतीतले ।।

10. त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या च गुरुस्त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव देव ।।

11. प्रार्थना दशकं चैव मूलाष्टकमुदाहृतम् ।
य: पठेच्छृणुयान्नित्यं तस्य लक्ष्मी: स्थिरा भवेत् ।।

अथ अथर्वणवेदोक्त प्रत्यंगिरासूक्तम्

(यह मन्त्र पाठ जीवन की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। इसके पाठ से मनुष्य का सभी प्रकार का कल्याण होता है। अनेकविध आपदाओं को पार कर जीवन में शान्ति एवं सुख प्राप्त होता है। इससे जीवन की रक्षा होती है। व्यक्ति कल्याण को देखता है। जीवन का श्रेय एवं प्रेय प्राप्त करता है।

देवी प्रत्यंगिरा का पूजन कर—दशदिशाओं का पूजन करे। अन्त में 48 मन्त्रों का पाठ कर दधि-मधु-धृत से विल्व की समिधा में हवन करे। 27 दिन करने का विधान है। एक चमत्कारी सर्वसिद्ध विधान है।

यह वेदोक्त विधि है। आज तक यह विधान अप्रकाशित रहा है।

उों श्री गणेशाय नम:। उों नम: प्रत्यंगिरायै ॥

उों सुमुखश्चैक० । अद्य पूर्वेत्यादि ॥

अथ प्रत्यंगिरा सूक्त पारायणमन्त्रं करिष्ये।

उों अखण्ड मण्डला कारं व्याप्तं येन चराचरं।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नम: ॥

उों नमो ब्रह्मादिभ्यो ब्रह्मविद्या संप्रदाय कर्तृभ्यो वंश ऋषिभ्यो नमो गुरुभ्य:।

सर्वोपप्लव रहित: प्रज्ञान घन: प्रत्यगर्थो ब्रह्मैवाहमस्मि।

उों नमो भगवते अथर्वणवेदाय।

ब्रह्म लोके सुखासीनं सर्व लोके गुरु शिवम्।
सर्व देव मयं साक्षात् सर्व तेजो मयं परम् ॥
सर्वविद्या करं सम्यग् ज्ञानोपायार्णव प्लवम्।
प्रणम्य सर्व देवाश्च ऋषय: प्रष्टुमागता: ॥
वशिष्टो वामदेवश्च जावालि: कपिलस्तथा।
नारदश्च शुक: कण्वो विश्वामित्रश्च कश्यप: ॥
अगस्त्यश्च पुलस्त्यश्च दुर्वासोरण्यकादय:।
एवमादि मुनीन्द्राणां वृन्द मध्ये पितामहम् ॥
पप्रच्छ स मुनिश्रेष्ठ: शौनक: सुमहातपा:।

अथर्वणस्य माहात्म्यं यथावद् वक्तुमर्हति ।।
उवाच तस्मै देवेशो रहस्यं परमं शिवम् ।
सर्वं देवमयं साक्षादथर्वण मिहोच्यते ।।
तादृशं मन्त्र भागेषु प्रत्यंगिरस उच्यते ।
चत्वारिंशद् ऋच्यनुष्टुप् अष्ट ऋग्भिश्च त्रिष्टुभिः ।
गुह्याद् गुह्यतरं साक्षात् त्रैलोक्य विजयं पुरा ।।
शिवेनोक्तं मयालब्धं समाहितमनाः शृणु ।
शान्तौ पुष्टौ च वृद्धौ च अपमृत्यु भये तथा ।।
आभिचारिक कृत्यायां शान्त्यां प्रत्यभिचारिके ।
निग्रहानुग्रहे चैव सर्वं पापहरं शुभम् ।।
भूत प्रेत पिशाचादि ग्रहबाधा निवारणम् ।
स्तंभनं पर सैन्यस्य स्व सैन्यस्य च रक्षणम् ।।
गजाश्वयोः प्रशान्तिः स्यात् राष्ट्रशान्तिर्भयापहम् ।
स्वदेश भ्रंश शमनं पर चक्र भयापहम् ।।
सर्व शत्रु क्षय करं वृष्टिस्तम्भनिवारणम् ।
उत्पात शान्तिः देवानां कोप शान्ति स्तथैव च ।।
ग्रह शान्ति रोग शान्तिः कृत्या शान्ति स्तथैव च ।
एवमादीनि कर्माणि सिध्यन्ति फलवन्ति च ।।
कुलद्वय विशुद्धात्मा मन्त्रार्थ ज्ञान कोविदः ।
आचार-प्रभवा शुद्धिः वाक्सिद्धिः मानसस्तथा ।।
शान्त बुद्धिः प्रसन्नात्मा जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।
दंभाहंकारमोहादि रहितो ज्ञानवित्तमः ।।
ध्यानयोगासनारूढः सर्वाभीष्ट प्रदायकम् ।
मन्त्रमांगिरसं लब्ध्वा स एकः सर्वं विज्जयीं ।।
विनियोगमथो वक्ष्ये चत्वारिंशद् ऋचेन च ।
प्रत्यंगिरा नाम ऋषिः छन्दोऽनुष्टुप् प्रकीर्तितम् ।।
उग्र कृत्या देवता स्यात् सर्वारिष्ट विनाशिनी ।
विनियोगोऽत्र सर्वेषु कार्येषु च तथाविधः ।।

लक्षयेत्प्रत्यरीन् सर्वान् ब्राह्मणे नैव योजयेत् ।
प्रयुक्तो ब्राह्मणे मन्त्रो विपरीतफलप्रदः ॥
उत्तमं सर्व विद्यानामैहिकामुष्मिक प्रदम् ।
तत्रादौ शरीर साधनार्थं प्राजापत्यं तथा चरेत् ॥
कुशोदकेन पंच गव्येन वा चरु हविष्या शिवा कपिला क्षीरं भुंजानः ।
दिन त्रयं प्रत्यहमष्टोत्तरशतं जपेत् ।
कृत पुरश्चरणो भवति ।
ततो दुर्गा गायत्रीं जपेत् दशवारम् ।

ॐ कात्यायन्यै विद्महे कन्याकुमार्यै धीमहि तन्नो दुर्गा प्रचोदयात् ॥

ततः स्वात्मरक्षां कुर्याद् यथा ।

ओम इत्यादि मन्त्राणां प्रत्यंगिरा ऋषिः अतिजगती छन्दः इन्द्रादयो देवताः आत्म सुरक्षार्थे जपे विनियोगः ।

पूर्वदिग्भागस्य इन्द्रो देवता ।

अ/20/5/70—ॐ इन्द्रो वो विश्वत स्परि हवामहे जनेभ्यः अस्माकमस्तु केवलः । इन्द्राय नमः ॥ इन्द्रो मे देवः सुप्रीतः सुप्रसन्नो वरदो भवतु । शमग्नि रग्निभिः कर छन्नस्तपतु सूर्यः । शं वातो वातु रया अपस्त्रिधः ।

यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने ।
यो मे केश नखे कुर्यादञ्जने दन्त धावने ।

यो मे स्व क्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृगृह धन देहाभिमानिनः प्राणान्वाधितु पूर्व दिग्भागादागतः पाप्मा पापकेनेहकर्मणा इन्द्रस्तं देवो राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोषयतु । मोहयतु । नाशयतु । मारयतु । क्षोभयतु । त्रासयतु । भ्रामयतु क्लेशयतु । कलिं तस्मै प्रयच्छतु ।

ॐ कृतं मम शिवं । मम शुभं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं मम । भद्रं नो अपि वात यमनः । मरुतामोजसे स्वाहा । इन्द्रो विश्वस्य राजति शन्नोभव द्विपदेशं चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्नुः मर्तासो अनृतं वदन्तः तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेदः शुष्कं न वृक्षमभिसंदहस्व ।

जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेद: । स न पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि: । उों नमो विष्णु गणेभ्य: सर्वं रक्षा करेभ्य: । इन्द्राय नम: । **पूर्वदिग्भागं वंधयामि ।**

2. आग्नेय दिग्भागस्य अग्निदेवता ।

उों अग्नि दूतं वृणीमहे होतारं विश्व वेदसं । अ/20/9/10

अस्य यज्ञस्य सुक्रतम् । अग्नये नम: ।

अग्नि: मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु ।

शमग्निरग्निभि: करछन्नस्तपतु सूर्य: ।

शं वातो वातु रया अपस्रिध: ।

यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने ।

यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्त धावने ।।

यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन: । प्राणान्वाधितुं आग्नेय दिग्भागादागत: पाप्मा पापकेनेह कर्मणा । अग्नेस्तं देवी राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोषयतु । मोहयतु । नाशयतु । मारयतु । क्षोभयतु । त्रासयतु भ्रामयतु । क्लेशयतु । कलिं तस्मै ; प्रयच्छतु ।। उों कृतं मम शिवं मम शुभम् मम शान्ति: स्वस्त्ययनं मम ।

भद्रं नो पि वातय मन: मरुतामोजसे स्वाहा । इन्द्रो विश्वस्य राजति शन्नो •भव द्विपदे शं चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्नु: मर्तासो अनृतं वदन्त: । तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेद: शुष्कं न वृक्षमभि संदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि: । उों नमो विष्णु गणेभ्य: सर्वं रक्षा करेभ्य: । अग्नये नम: । **आग्नेय दिग्भागं वन्धयामि ।।**

3. दक्षिणादिग्भागस्य यमो देवता ।

उों यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हवि: । ऋ/10/14/13

यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्नि दूतो अरंकृत: । अ/18/2/1

यमाय नम: । यमो मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु । शमग्नि रग्निभि: कर छन्नस्तपतु सूर्य: । शं वातो वात्वरय: अपस्रिध: । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने ।

यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने। यो मे स्व क्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिनः। प्राणान्वाधितुं दक्षिणदिग्भागादागतः। पाप्मा पापकेनेह कर्मणा यमस्तं देवो राजा जंभयतु। जृंभयतु। स्तंभयतु। शापयतु। शोषयतु। मोहयतु। नाशयतु। मारयतु। क्षोभयतु। त्रासयतु। भ्रामयतु। क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु। उों कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं मम भद्रं नो अपि वातय मनः मरुतामोजसे स्वाहा। इन्द्रो विश्वस्य राजति। शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्लुः मर्त्या सो अनृतं वदन्तः। तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेदः शुष्कन्न वृक्षमभि संदहस्व। जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स न पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः। उों नमो विष्णु गणेभ्यः सर्व रक्षा करेभ्यः। यमाय नमः।

दक्षिण दिग्भागं बन्धयामि।

4. निर्ऋति दिग्भागस्य निर्ऋतिः देवता॥

य/12/62—उों असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहि तस्करस्य। अन्यमस्मदिच्छ सात इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु। निर्ऋतये नमः।। निर्ऋतिः मे देवः सुप्रीतः सुप्रसन्नो वरदो भवतु। शमग्निरग्निभिः करच्छन्नस्तपतु सूर्यः। शं वातो वात्वरपा अपस्त्रिधः। यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने। यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने। यो मे स्व क्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिनः प्राणान्वाधितुं निर्ऋति दिग्भागादागतः। पाप्मा पापकेनेह कर्मणा निर्ऋतिः तं देवो राजा। जंभयतु। जृंभयतु। स्तंभयतु। क्षोभयतु। त्रासयतु। भ्रामयतु। क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु। उों कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं मम। भद्रं नो अपि वातय मनः मरुता मोजसे स्वाहा। इन्द्रो विश्वस्य राजति शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्लुः मर्त्यासो अनृतं वदन्तः। तेषां वपूंष्यर्चिषा जातयेदः शुष्कं न वृक्षमभि संदहस्व। जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः स नः पर्षदति। दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः। उों नमो विष्णु गणेभ्यः सर्व रक्षा करेभ्यः निर्ऋतये नमः।

निर्ऋति दिग्भागं बंधयामि।

5. पश्चिस दिग्भागस्य वरुणो देवता ।

(हे वरुण ! मन्त्रयुक्त वाणी से स्तवन करता हुआ तुम से ही याचना करता हूं । हवि वाला यजमान, क्रोध न करने की आप से प्रार्थना करता हुआ आयु मांगता है) ।

ऋ/1/24/11—उों तत्त्वायामि ब्रह्मणा वंदमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भि: । अहेडमानो वरुणेह वोध्युरूशꣳसमान आयु: प्रमोषी: । वरुणाय नम: । वरुणो मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदोभवतु । शमग्निरग्निभि: करच्छन्नस्तपतु सूर्य: । शं वातो वात्वरया अपस्त्रिध: । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने । यो मे केश नखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने । यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन: प्राणान्वाधितुं पश्चिम दिग्भागादागत: । पाप्मा पापकेनेह कर्मणा वरुणस्तं देवो राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोपयतु । मोहयतु । नाशयतु । मारयतु । क्षोभयतु । त्रासयतु । भ्रामयतु । क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु । उों कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्ति: स्वस्त्ययनं मम । भद्रन्नो अपि वातय मन: मरुतामोजसे स्वाहा । इन्द्रो विश्वस्य राजति शन्नो भव द्विपदे श चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्लु: मर्त्या सो अनृतं वदन्त: । तेषां वपूंप्यर्चिपा जातवेद: शुष्कं न वृक्षमभिसंदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वाना-वेवसिन्धुं दुरिता त्यग्नि: । उों नमो विष्णु गणेभ्य: । सर्व रक्षा करेभ्य: । **पश्चिमदिग्भागं वन्धयामि ।**

6. वायु दिग्भागस्य वायु: देवता ।

(हे विचित्र कर्म वाले वायो ! तुम यज्ञ के स्वामी और त्वष्टा के जामाता हो । हम आप की रक्षाएं प्राप्त करें) ।

उों तव वायवृतस्पते त्वष्टु र्जामातरद्भुतं । अवांस्या-वृणीमहे-वायवे नम: । ऋ/8/26/21

वायुर्मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु ।
शमग्नि रग्निभि: करच्छन्नस्तपतु सूर्य: ।
शं वातो वात्वरया अपस्त्रिध: । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने ।

यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्त धावने। यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन:। प्राणान्वाधितुं वायु दिग्भागादागत: पाप्मा पापकेनेह कर्मणा वायुस्तं देवो राजा जंभयतु। जृंभयतु। स्तंभयतु। शापयतु। शोषयतु। मोहयतु। नाशयतु। मारयतु। क्षोभयतु। त्रासयतु। भ्रामयतु। क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु।

उों कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं मम। भद्रं नो अपि वातय मन: मरुतामोजसे स्वाहा। इन्द्रो विश्वस्य राजति शं नो भव द्विपदेशं चतुष्पदे। यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्रु: मर्तासो अनृतं वदन्त:। तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेद: शुष्कन्न वृक्षमभि संदहस्व। जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेद:। स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वाना-वेव सिन्धुं दुरिता त्यग्नि।

उों नमो विष्णुगणेभ्य: सर्व रक्षा करेभ्य:-वायवे नम:।

वायुदिग्भागं वन्धयामि।

7. उत्तर दिग्भागस्य कुवेरो देवता।

(गौ, अश्व के देने वाले तथा कर्मवान्, गृहकार्य कुशल, यज्ञाधिकारी, पितरों को यश दिलाने वाले पुत्र के दाता सोम को हवि देनी चाहिये)।

उों सोमो धेनुं सोमो अर्वन्तमाशु: सोमो वीरं कर्मण्यं ददाति। सादन्यं विदत्थ्यं सभेयं पितृ श्रवणं यो ददाशदस्मै—कुवेराय नम:।

ऋ/1/91/20

कुवेरो मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु।

शमग्निरग्निभि: करच्छन्नस्तपतु सूर्य:।

शं वातो वात्वरपा अपस्त्रिध:। यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने। यो मे केशेनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने। यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन: प्राणान्वाधितुं उत्तर दिग्भागादागत: पाप्मा पापकेनेह कर्मणा कुवेरस्तं देवो राजा जंभयतु। जृंभयतु। स्तंभयतु। शापयतु। शोषयतु। मोहयतु। नाशयतु। मारयतु। क्षोभयतु। त्रासयतु। भ्रामयतु। क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु। उों कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्ति: स्वस्त्ययनं मम। भद्रं नो अपि वाताय मन: मरुता-मोजसे स्वाहा। इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे।

यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्रु: मर्त्यासो अनृतं वदन्त: तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेद: शुष्कन्न वृक्षमभि-संदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम-मरातीयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि: । ॐ नमो विष्णु गणेभ्य: सर्वरक्षाकरेभ्य: कुबेराय नम: ।

उत्तर दिग्भागं बन्धयामि ।

८. ईशान दिग्भागस्य ईशानो देवता ।

(स्थावर-जंगम के पालनकर्त्ता, बुद्धि प्रेरक विश्वे देवों को हम रक्षार्थ बुलाते हैं, जिससे अहिंसित पूषा हमारे धन के बढ़ाने वाले और रक्षक हों) ।

ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषानो यथा वेदसा मसद्वृधे रक्षितापायुरदब्ध: स्वस्तये—ईशानाय नम: ।

ऋ/1/89/5

ईशानो मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु ।

शमग्नि रग्निभि: करच्छन्नस्तपतु सूर्य: । शं वातो वात्वरपा अपस्त्रिध: । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने । यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने । यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन: प्राणान्बाधितुं—ईशानदिग्भागादागत: पाप्मा पापकेनेह कर्मणा ईशानस्तं देवो राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोपयतु । मोहयतु । नाशयतु । मारयतु । क्षोभयतु । त्रासयतु । भ्रामयतु । क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु । ॐ कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्ति: स्वस्त्ययनं मम । भद्रं नो अपि वातय मन: मरुता मोजसे स्वाहा । इन्द्रो विश्वस्य राजति । शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्रु: मर्त्यासो अनृतं वदन्त: । तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेद: शुष्कं न वृक्षमभि संदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दूरिता त्यग्नि: । ॐ नमो विष्णु-गणेभ्य: सर्व रक्षाकरेभ्य:—ईशानाय नम: ।

ईशानदिग्भागं बंधयामि ।

9. ॐ ऊर्ध्व दिग्भागस्य ब्रह्मा देवता

य/13/3 ॐ ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत: सुरुचो वेन आव: ।

सुबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः—ब्रह्मणे नमः ।.

ब्रह्मा देवः सुप्रीतः सुप्रसन्नो वरदो भवतु ।

शमग्नि रग्निभिः करच्छन्नस्तपतु सूर्यः ।

शं वातो वात्वरया अपस्त्रिधः । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने । यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने । यो मे स्व क्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्रभ्रातृ गृह धन देहाभिमानिनः । प्राणान्वाधितुं ऊर्ध्वदिग्भागादागतः । पाप्मा पापकेनेह कर्मणा ब्रह्मा त्वं देवो राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोपयतु । मोहयतु । नाशयतु । मारयतु । क्षोभयतु । त्रासयतु । भ्रामयतु । क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु । ॐ कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं मम ।

भद्रं नो अपि वातय मनः मरुताभोजसे स्वाहा । इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासोऽग्ने जह्नुः मर्त्यासो अनृतं वदन्तः । तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेदः शुष्कं न वृक्षमभिसंदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेदः । स न पर्पदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः । ॐ नमो विष्णु गणेभ्यः सर्व रक्षाकरेभ्यः—ब्रह्मणे नमः । **ऊर्ध्वदिग्भागं वन्धयामि ।**

10. अधो दिग्भागस्य विष्णु देवता

य/5/15 ॐ इदं विष्णु विचक्रमे त्रेधा निदधे पदं समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा । विष्णवे नमः । विष्णुः मे देवः सुप्रीतः सुप्रसन्नो वरदो भवतु । शमग्नि रग्निभिः करच्छन्नस्तपतु सूर्यः । शं वातो वात्वरया अपस्त्रिधः । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने । यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने । यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृगृह धन देहाभिमानिनः प्राणान्वाधितुं अधोदिग्भागादागतः पाप्मा पापकेनेह कर्मणा विष्णुस्त्वं देवो राजा जृंभयतु । जंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोषयतु । मोहयतु । नाशयतु । मारयतु । क्षोभयतु । त्रासयतु । भ्रामयतु । क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु । ॐ कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्तिः स्वस्त्ययनं मम । भद्रं नो अपि वातय मनः मरुता मोजसे स्वाहा । इन्द्रो

विश्वस्य राजति । शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्नेजह्नु: मर्त्यासो अनृतं वदन्त: । तेपां वपूंष्यर्चिषाजातवेद: शुष्कं न वृक्षमभिसंदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेवसिन्धुं दुरितात्यग्नि: । ओं नमो विष्णु गणेभ्य: सर्व रक्षा करेभ्य:—विष्णवे नम: । **अधो दिग्भागं वन्धयामि ।**

11. अन्तरिक्ष दिग्भागस्य रुद्रो देवता

(मेधावी. अभीष्ट वर्द्धक महावली रुद्र के निमित्त किस स्तुतिकापाठ करें) ।

ओं कद्रुद्राय प्रचतसे मीढुष्टमाय तव्यसे । वोचेंमशंतम: रुद्रे । शर्वे त्येप रुद्र: तस्मै रुद्राय नमो अस्तु रुद्राय नम: । ऋ/1/43/

रुद्रो मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु ।

शमग्नि रग्निभि: करच्छन्नस्तपतु सूर्य: ।

शं वातो वात्वरया अपस्निध: । यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने । ये मे केशनखे कुर्यादिञ्जने दन्तधावने । यो मे स्वक्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन: प्राणान्वाधितुं अन्तरिक्ष दिग्भागादागत: । पाप्मा पापकेनेह कर्मणा रुद्रस्तं देवो राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु । शोपयतु । मोहयतु । नाशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु । ओं कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्ति: स्वस्त्ययनं मम । भद्रं नो अपि वातय मन: मरुतामोजसे स्वाहा । इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्नेजह्नु: मर्त्यासो अनृतं वदन्त: । तेपां वपूंष्यर्चिपा जातवेद: । शुष्कं न वृक्षमभिसंदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम मरातींयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि: । ओं नमो विष्णुगणेभ्य: सर्वरक्षाकरेभ्य: रुद्राय नम: । **अन्तरिक्ष दिग्भागं वन्धयामि ।**

12. अवान्तर दिग्भागस्य गरुडो देवता-

य/12/4—सुपर्णोहि गरुत्मान् त्रिवृत्ते शिरोगायत्रं चक्षु र्वृहद्रथन्तरे पक्षौ । स्तोम आत्मा छन्दांस्यङ्गानि यजूंषि नाम । सामते तनू र्वामि देव्यं

यज्ञाय यज्ञियं पुच्छं धिष्ण्या: शफा: सुपर्णोसि गुरुत्मान् दिवं गच्छ स्व: पत। गरुत्मते नम: । गरुडो मे देव: सुप्रीत: सुप्रसन्नो वरदो भवतु। शमग्मिरग्निभि: करच्छन्नस्तपतु सूर्य: शं वातो वात्वरया अपस्त्रिध:। यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने। यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने । यो मे स्व क्षेत्र कलत्र पशु पुत्र मित्र भ्रातृ गृह धन देहाभिमानिन: प्राणान्वाधितु अवान्तर दिग्भागादागत: पाप्मा पपकेनेह कर्मणा। गरुडस्तं देवो राजा जंभयतु । जृंभयतु । स्तंभयतु । शापयतु। शोषयतु। मोहयतु। नाशयतु। मारयतु। क्षोभयतु। त्रासयतु। भ्रामयतु। क्लेशयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु । ओं कृतं मम शिवं मम शुभं मम शान्ति स्वस्त्ययनं मम। भद्रं नो अपि वातय मन: मरुतामोजसे स्वाहा। इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे। यो नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्रु: मर्तासो अनृतं वदन्त:। तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेद: शुष्कं न वृक्षमभिसंदहस्व । जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेद:। स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि:। ओं नमो विष्णु गणेभ्य: सर्व रक्षाकरेभ्य: गरुत्मते नम: ।

अवान्तर दिग्भागं वन्धयामि ।

सर्व दिग्भागस्य पर ब्रह्मा देवता ।

यो मे आध्यात्मिकाधिदैविकाधिभौतिकादागत: ।

पाप्मा पापकेनेह कर्मणा। परं ब्रह्म तं देवो राजा ।

ओं भू: तत्सवितुर्वरेण्यम् । ओं भुव: भर्गो देवस्य धीमहि। ओं स्व: धियो योन: प्रचोदयात् ।

ओं भूर्भुव: तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। ओं स्व: धियो यो न: प्रचोदयात् । ओं भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि धियो योन: प्रचोदयात् । परो रजसि सावदोम्॥ ओं श्रियै नम:। ओं पुष्ट्यै नम:। ओं तुष्ट्यै नम: । ओं भूत्यै नम:। ओं प्रभूत्यै नम:। ओं ज्वालामुख्यै नम: ।

ओं ज्वालामुख्यै नम:। ओं प्रज्वालामुख्यै नम:। ओं ब्रह्मज्वालामुख्यै नम:। ओं आत्माज्वालामुख्यै नम: । ओं वरदायै नम:। ओं सिद्धिविनाय-

काय नम: । ओं शीघ्रसिद्धिविनायकाय नम: । ओं अनेकाय नम: । ओं नीति मतये नम: । ओं प्रकामपतये नम: ।

इत्यंगिरा देवता: ।। ओं ऐं ह्रीं हं सौं प्रत्यंगिरादेवि सकल मनोरथान् साधय साधय देवि तुभ्यं नम: । पुन: कवचदिग्वन्धनं करिष्ये ।

शिरो रक्षतु ब्रह्माणी मुखं माहेश्वरी तथा ।
कौमारी हृदयं चैव वैष्णवी नाभी रक्षतु ।
वाराही कटि-गुह्यं च ऐन्द्रीरुरुद्वयं तथा ।
चामुण्डा जानुदेशं च पादौ रक्षत चण्डिका ।
अंग प्रत्यंगिरा रक्षेत् सर्व रक्षन्तु मातर: ।
ओं आं ह्रीं क्रों महायोगिनी गौरी हुं फट् स्वाहा ।
त्रिशूल भीषणै: हस्तै: समभि: त्रिभि: अंघ्रिभि: ।
जिह्वायां रक्तवर्षिण्यां लेलिहान निजोन्मुखाम् ।
उद्गरन्तीव नेत्राभ्यां आद्या शक्ति: हवि: भुजाम् ।
नरास्थि मालां विभ्राणां रिपुत्वक्कुल मेखलाम् ।
कपाल-कुण्डलोपेतां प्रहसन्निर्भयाननाम् ।
ओष्ठे च लम्बमानाभ्यां स्तनाभ्यां मुक्तमूर्धजाम् ।
अधिरूढां खर स्कन्ध मन्धकार निभाकृतिम् ।
स्फुलिंग मण्डलोपेतां विमुक्ता कोप भूषणाम् ।
उत्थाय प्रांजलि भूत्वा किं करोमीति भाषसे ।

अथ पुष्पांजलि

1. ओ ह्रीं नम: कृष्ण वाससे शतसहस्रानिल कोटि सिंहासने सहस्रवदने अष्टादश भुजे महाबलपराक्रम पुंजिते । अपराजिता देवि महा प्रत्यंगिरे परसैन्य परकर्म विध्वंसिनी परमंत्रोत्पाटनी सर्व भूतदमनीके । ज्रौं प्रें ह्रीं क्रौं मांस परिवारेभ्य: सर्वोपद्रवेभ्य: रक्ष रक्ष ह्रीं क्रों सर्वदेवानां मुखं स्तंभय-स्तंभय । सर्व विघ्नान् छिन्दय छिदय सर्व दुष्टान् भक्षय भक्षय । वर्मालय ज्वाला जिह्वे करालवक्त्रे सर्व यन्त्राणि स्फोटय स्फोटय । शृंखलस्त्रोटय त्रोटय । सर्व मुद्रा: विद्रावय विद्रावय ।

ज्वाला जिह्वे कराल वदने प्रत्यंगिरे मां रक्ष रक्ष ।

मम शत्रून् भक्षय भक्षय इति प्रथम पुष्पाञ्जलिं समर्पयमि । ओं

2. ह्लीं ह्लां ह्लू जंभिनी मोहे मोहिनी । स्तंभे स्तंभिनी ।

ओं हूं हुं फट् स्वाहा । इति द्वितीय पुष्पाञ्जलि समर्पयामि ।

3. तच्छं योः शंयु विश्वेदेवा: शक्वरी शान्त्यर्थे जपे विनियोग: ।

तच्छंयोरावृणीमहे गातुं यज्ञाय गातुं यज्ञपतये ।

देवी स्वस्ति रस्तुन: । स्वस्ति: मानुषेभ्य: ।

ऊर्ध्वं जिगातु भेषजम् । शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे । ओं शान्ति: शान्ति: शान्ति: । तै/2/6/10/2

त्र्यम्वकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनम् ।

उर्वारुकमिव वन्धनान्मृत्यो र्मुक्षीय मामृतात् । य/3/60

सं समिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ । इ डस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर । ऋ/10/191/1

तत्सवितु: वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो योन: प्रचोदयात् ।
य/3/35

जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेद: । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि: । ऋ/1/99/1

तामग्नि वर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् । दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये सुतरसि तरसे नम: । सुतरसि तरसे नम: ।

अग्ने त्वं पारयानव्यो अस्मान् स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा । पूश्च पृथ्वी वहुला न उर्वी भवातोकाय तनयाय शंयो: । ऋ.1/189/2

विश्ववानि नो दुर्गहा जातवेद: सिंधुं न नावा दुरितातिपर्षि ।

अग्ने अत्रिवन्नमसा गृणानोऽस्माकं वोध्यविता तनूनाम् ।। ऋ./5/4/9 पृतना जित꣡सहमान मग्नि मुक्थै: हवामहे परमात् सधस्थात् । स न: पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्देवो अतिदुरिता त्यग्नि: ।। एत्रापित्रे विश्व देवाय वृष्णे यज्ञै:विधे यमनसा हविर्भि: । तै/1/8/22/6

वृहस्पते सुप्रजावीरवंतो वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।।

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मंधातृवदंगिरस्वदवाचि: ।

त्रिधातुना शर्मणा पातमस्मान् वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।
ऋ/8/40/12

यूयमस्मान्नयत वस्यो अच्छा निरंहतिभ्यो मरुतो गृणानाः ।
जुषध्वं नो हव्यदातिं यजत्रा वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।
ऋ/5/55/10

त्वं सोम पितृभिः संविदानोऽनु द्यावापृथिवी आततंथ ।
तस्मैत इन्द्रो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।
तै/2/6/12/4

प्रजापते न त्व देतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता वभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥
ऋ/10/121/10

नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नमः औषधीभ्यः । नमो वाचे नमो वाचस्पतये नमो विष्णवे बृहते करोमि भद्रं नो अपि वातय मनः ।

ॐ शान्तिः शान्तिः इति तृतीय पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि । इत्याद्यन्तयोः जपित्वा ।

विनियोगः—ॐ अस्य श्री प्रत्यंगिरा सूक्त ब्रह्मविद्याया प्रत्यंगिरसो भगवन्तः ऋषयः ब्रह्माणः परमेष्ठिनः परम ऋषयः द्वात्रिंशदृचानुष्टुप् छन्दः । यथे त्रयर्चः पंक्तिः छन्दः । अव ब्रह्मेत्येक पदा गायत्री । ये नो इति त्रिष्टुप् छन्दः । शिष्टानुष्टुभः सर्वापत्प्रतिहन्त्री कृत्या भगवती ब्रह्माग्निः देवता कालाग्निरुद्राः श्री महादेवो देवोऽधिदेवता । क्रां बीजं, फट् शक्तिः, स्वाहा कीलकं मदीय पुरुषार्थस्य ये ये अस्मत्प्रतिकूलकारिणः समूलोन्मूलत्वे सानुकूलत्वे वा जपे विनियोगः ।

कर न्यासः—क्रां ह्लां खट् फट् जहि अंगुष्ठाभ्यां नमः ।
क्रीं ह्लीं महाकृत्ये तर्जनीभ्यां नमः ।
क्रूं ह्लूं विधू माग्नि सम प्रभे मध्यमाभ्यां नमः ।
क्रैं ह्लैं देवि देवि अनामिकाभ्यां नमः ।
क्रौं ह्लौं महादेवी कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।

क्रः ह्लः विनाशाय करतल कर पृष्ठाभ्यां नमः ।

षडंगन्यासः—क्रां ह्लां खट् फट् जहि हृदयाय नमः ।

क्रीं ह्लीं महा कृत्ये शिरसे नमः ।

क्रूं ह्लूं विधूमाग्निसमप्रभे शिखायै नमः ।

क्रैं ह्लैं देवि देवि कवचाय नमः ।

क्रौं ह्लौं महादेवि नेत्रत्रयाय नमः ।

क्रः ह्लः विनाशाय अस्त्राय नमः ।

ध्यानम्—सिंही सिंहमुखीं सुखीं भगवतः प्रोत्फुल्ल नेत्रोज्ज्वलां शूल स्थूल कपाल पाश डमरु व्यग्रोग्र हस्ताम्बुजाम् । दंष्ट्रा कोटि विशं कटास्य कुहरामा रक्त नेत्र त्रयीं । वालेन्दूज्ज्वल मौलिकां भगवतीं प्रत्यंगिरां भावयेत् ।

लं पृथिव्यात्मिकायै गन्धं लेपयामि ।

हं आकाशात्मिकायै पुष्पं निवेदयामि ।

यं रं लं वं अथ मुद्रा ।

कपाल शूल गदापाश अंकुश धेनु निर्याण मुद्राः प्रदर्श्य ।

अथ मनुः—अस्य श्री अथर्वण भद्रकाली महामन्त्रस्य अंगिरा ऋषिः अनुष्टुप छन्दः अथर्वण भद्रकाली देवता क्षं वीजं हुं शक्ति, फट् कीलकं अथर्वण भद्रकालिप्रसाद सिध्यर्थे जपे विनियोगः ।

क्षां अंगुष्ठाभ्यां नमः । क्षीं तर्जनी० । क्षुं मध्य० । क्षैं अनामिकाभ्यां० । क्षौं कनि० । क्षः करतल० । क्षां हृद० । क्षीं शि० स्वाहा । क्षुं शिखा० । क्षैं कव० । क्षौं नेत्र० । क्षः अस्त्रयफट् ।

ध्यानम्—ॐ ध्यायेत्समस्त शत्रुघ्नीं सर्व सौख्य जयावहाम्
कालीं कराल वदनां कालजीमूत संनिभाम् ।
भीम दंष्ट्रां ज्वलन्नेत्र त्रय ज्वाला शिखोज्ज्वलाम् ।
अष्ट नाग कृता कल्पामष्टदिक् पूर्ण विग्रहाम् ।
सहस्र भुज दण्डोद्यत् सहस्रायुध शोभितां
विभ्रतीं किंकिणी मालामापादतल लंविनीं ।
पर प्रयुक्त कर्मघ्नीं पर राष्ट्र प्रदायिनीं ।

समस्त शत्रु रुधिरयन्म भर्ता परां शिवाम् ।
एवं ध्यायेन्महाकृत्यां जपेन्मंत्रान् यथाविधिः ।
लमित्यादि पंच पूजां कृत्वा धेनु मुद्रां प्रदर्श्य ।
गायत्री मंत्रमुच्चार्य ।

मन्त्र—भक्षं भक्ष ज्वाला जिह्वे करालदंष्ट्रे प्रत्यंगिरे क्षं ह्रीं हुं फट् । इति विंशत्यक्षरो मंत्रः ।। चतुःषष्टि सहस्रसंख्या जपं कृत्वा दशांश जप होमः, तद्दशांश तर्पणम्, तद्दशांशमार्जनम् । ब्राह्मण भोजनं-पश्चात् प्रयोगविधिः ।

भद्रकाली मंत्र—जातवेदसे सुनवाम सोम मरातीयतो निदहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ।

यथा शक्तिः जपित्वा, जपान्ते गायत्री मूलं जातवेदसे इत्यग्नि इत्येकवारं जपित्वा अंगुष्ठादि पंच पूजांन्तं विधाय । निर्याण मुद्रां प्रदर्श्य ।

तंच्छं यो, रावृणीमहे गातुं यज्ञाय गातुं यज्ञपतये दैवी स्वस्ति रस्तु नः स्वस्ति र्मानुषेभ्यः ऊर्ध्वं जिगातु भेषजं शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ।

उत्तु दिशि मिजावरि तल्ये जेत्तल्प उतु गिरिॆरनुप्रवेशाय । मरीचि रूपसन्तुद यावदितः पुरस्तादुदयाति सूर्यः तावदितो मुन्नाशय योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

स्तोत्रम्

यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ।
तां ब्रह्मणा परि निङ्मः प्रत्यक्कर्तारमृच्छतु ।।1।।
शीर्षण्वतीं कर्णवतीं विश्वरूपां भयंकरीम् ।
यः प्रहिणोमि ह्यद्य त्वा वि तत्त्वं योजयाशुभिः ।।2।
येन चितेन वदसि प्रतिकूल मघायूनि ।
तमेवं ते नि कृत्ये ह मास्मां ऋषयो अनागसः ।।3।।
अभिवर्तस्व कर्तारं निरस्तास्माभि-रोजसा ।
आयुरस्य निवर्तस्व प्रजां च पुरुषादिनि ।।4।।
यस्त्वा कृत्ये चकारेह तं त्वं गच्छ पुनर्नवे ।

अरातीः कृत्यां नाशय सर्वाश्च यातुधान्यः ॥5॥
क्षिप्रं कृत्ये निवर्तस्व कर्तुरेव गृहान् प्रति ।
पशूंश्चावास्य नाशय वीरांश्चास्य नि वर्हय ॥6॥
यस्त्वा कृत्ये प्रजिगाति विद्वां अविदुषो गृहान् ।
तस्यै वेत परेत्याशु तनुं कृधि परुष्यसः ॥7॥
प्रतीचीं त्वाप सेधतु ब्रह्म रोचिष्णव मित्रहा ।
अग्निश्च कृत्ये रक्षोहा रि प्रहा चाज एकपात् ॥8॥
यथा त्वाङ्गिरसः पूर्वे भृगवश्चाप सेधिरे ।
अत्रयश्च वसिष्ठाश्च तथैव त्वाप सेधिम ॥9॥
यस्ते परुंषि संदधौ रथस्येव ऋभुर्धिया ।
तं गृच्छ तत्र ते जनमज्ञातस्तेऽयं जनः ॥10॥
यो नः कश्चिद्रणस्थो वा कश्चिद्वान्यो ऽभिहिंसति ।
तस्य त्वं द्रोरिवेद्धो ऽग्निस्तनुः पृच्छस्व हेतितः ॥11॥
भवा शर्वा देव हेलिमस्य ते पाप कृत्वने ।
हरस्वतीस्त्वं च कृत्ये नोच्छिषस्तस्य किंचन ॥12॥
ये नो शिवासः पन्थानः परायान्ति परावतम् ।
तैं र्देव्यरातीः कृत्या नो गमयस्वा नि वर्तय ॥13॥
यो नः कश्चिद् द्रुहो ऽरातिर्मनसाप्यभि दासति ।
दूरस्थो वान्तिकस्थो वा तस्य हृद्य मसृक् पिव ॥14॥
येनासि कृत्ये प्रहिता दृढयेनास्मज्जिघांसया ।
तस्य व्यनच्चाव्य नच्च हिनस्तु शरदाशनि ॥15॥
यद्यु वैषि द्विपद्यस्मान् यदि वैपि चतुष्पदी ।
निरस्तातो ऽव्रतास्माभिः कर्तुरष्टापदी गृहम् ॥16॥
यो नः शपादशपतो यश्च नः शपतः शपात् ।
वृक्ष इव विद्युता हत आ मूलादनु शुष्यतु ॥17॥
यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्ट्यघायु र्यश्च न शपात् ।
शुने पेष्ट्र मिवाव क्षामं तं प्रत्यस्यामि मृत्यवे ॥18॥

यश्च सापत्नः शपथो यश्च जाम्या शपथः ।
ब्रह्मा च यत्क्रुद्धः शपात् सर्वं तत् कृष्यधस्पदम् ॥19॥
सबन्धुश्चास बन्धुश्च यो अस्मां अभि दासति ।
तस्य त्वं भिन्ध्यधिष्ठाय पदा विष्पूर्यते शिरः ॥20॥
अभि प्रेहि सहस्राक्षं युक्त्वाशुं शपथ रथम् ।
शत्रूंरन्विच्छती कृत्ये वृकी वा विवृतो गृहान् ॥21॥
परिणो वृङ्धि शपथान् दहन्नाग्निरिव व्रजम् ।
शत्रूं रेवा वि नो जहि दिव्या वृक्षमिवाशनिः ॥22॥
शत्रून्मे प्रोष्ट शपथान् कृत्याश्च सुहृदो हृद्याः ।
जिह्वाः श्लक्ष्णाश्च दुर्हृदः समिद्धं जातवेदसम् ॥23॥
असपत्नं पुरस्तान्नः शिवं दक्षिणतस्कृधि ।
अभयं सततं पश्चाद् भद्रमुत्तरतो गृहे ॥24॥
परेहि कृत्ये मा तिष्ठ वृद्धस्येव पदं नय ।
मृगस्य हि मृगारिस्त्वं तं त्वं निकर्तुमर्हसि ॥25॥
अघ्नास्ये घोर रूपे वर रूपे विनाशनि ।
जम्भिताः प्रत्या गृभ्नीष्व स्वयमादार्याद्भुतम् ॥26॥
त्वामिन्द्रो यमो वरुण स्त्वमापो अग्निरथानिलः ।
ब्रह्मा चैव रुद्रश्च त्वष्टा चैव प्रजापतिः ॥27॥
आवर्तध्वं निर्वतध्वमृतवः परिवत्सराः ।
अहो रात्राश्चाब्दाश्च त्वं दिशः प्रदिशश्च मे ॥28॥
त्वमिन्द्रो यमो वरुणस्त्वमापो अग्नि रथानिलः ।
अत्याहृत्य पशून् देवानुत्पादयस्वाद्भुतम् ॥29॥
अभ्यक्तास्ताः स्वलंकृताः सर्वं नो दुरितं जहि ।
जानीयाश्चैव कृत्यानां कर्तॄन्मृन् पाप चेतसः ॥30॥
यथा हन्ति पूर्वासिनं तथैवेष्वाशु कृज्जनः ।
तथा त्वया युजा वयं तस्य निकृण्म स्थास्नु जङ्गमम् ॥31॥
उत्तिष्ठैव परेहितोऽघ्नास्ये किमिहेच्छसि ।
ग्रीवास्ते कृत्ये पदा चापि कर्त्स्यामि निर्द्रव ॥32॥

स्वायसा सन्ति नो सयो विद्मश्चैव परूंषि ते ।
तैः स्थ निकृण्म स्थान्यग्रे यदि नो जीवयस्व ईम् ॥33॥
मास्योच्छिषो द्विपदं मो च किंचिच्चतुष्पदम् ।
मा ज्ञाती रनु जास्वन्वा मा वेशं प्रति वेशिना ॥34॥
शत्रूयता प्रहितामिमां येनाभि यथायथा ।
ततस्तथा त्वा नुदतु योऽयमन्तर्मपि श्रितः ॥35॥
एवं त्वं निकृतास्माभि र्ब्रह्मणा देवि सर्वशः ।
यथा तमाश्रितं कर्त्वा पापधीरेव नो जहि ॥36॥
यो नः स्वो अरणो यश्च निष्टयो जिघांसति ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥37॥
यथा विद्युद्धतो वृक्ष आ मूलादनु शुष्यति ।
एवं स प्रति शुष्यतु यो मे पापं चिकीर्षति ॥38॥
यथा प्रतिहता भूत्वा तामेव प्रतिधावति ।
पापं तमेव धावतु यो मे पापं चिकीर्षति ॥39॥
कुवीरं ते सुखं रुद्रं नन्दीमानं विमथ ह ।
ज्वरं मृत्युं भयं घोरे विषं नाशय मे ऽजर ।
ब्रह्म वर्मं ममान्तर शर्म वर्म ममान्तरं घर्म वर्म ममान्तरम् ॥40॥
उत्त्वा मन्दन्तु स्तोमा कृणुष्व राधो अद्रिवः ।
अव ब्रह्म द्विषो जहि ॥41॥
ये मे दमे दारुगर्भे शयानं धिया सहितं पुरुषं नि जह्रुः ।
कुम्भीपाकं नरकं ग्रीववद्धं हता एवं पुरुपासो यमस्य ॥42॥
यो मे करोति प्रद्वारे यो गृहे यो निवेशने ।
यो मे केशनखे कुर्यादञ्जने दन्तधावने ॥43॥
प्रतिसर प्रतिधाव कुमारीव पितु गृंहान् ।
मूर्धानि मेषां स्फोटय पदमेषां कुले कृधि ॥44॥
ये नो रयिं दुश्चरितासो अग्ने जह्रुः मर्तासो अनृतं वदन्तः ।
तेषां वपूंष्यर्चिषा जातवेदः शुष्कं न वृक्षमभि संदहस्व ॥56॥
कृष्ण वर्णे महद्रूपे बृहत्कर्णे महद्भये ।
देवि देवि महादेवि मम शत्रून् विनाशय ॥46॥

खट् फट जहि महाकृत्ये विधूमाग्नि समप्रभे ।
जहि शत्रूंस्त्रि शूलेन क्रुध्यस्व पिव शोणितम् ॥47॥
ये द्रुह्यु: ऋजवे मह्यमग्ने कदाधियो दुर्मदा अश्मनास: ।
आवध्यैतान् शोचिषा विध्य तन्तून वैवस्वतस्य सदनं नयस्व ॥48॥

मूलाधार चक्रे वर्तमानाय सांगांय सपरिवाराय सायुधाय सालंकाराय, सवाहनाय-ऋद्धिसिद्धि सहिताय गणाधिपतये अजपा जपानां षट्शतं नम: ।

अ अ:	कठ	उफ	वल	वस
विशुद्धि चक्र	अनाहत	मणिपूरक	स्वाधिष्ठान	मूलाधार गणेश
	6000	6000	वाणीहिरण्यगर्भ	600
1000			6000	

जीवात्मा उमामहेश्वर लक्ष्मीनारायण

1000 परमात्मा सहस्रारचक्रे तेजोमयायगुर्वे परमशिवरूपिणे

हं-सं: द्विदले आज्ञाचक्रे 1000

नादात्मनेपरमात्मने

त्रैलोक्य चैतन्यमयाधि देवि प्रत्यांगिरे त्वच्चरणाज्ञयैव ।
प्रात: समुत्थाय तवप्रियार्थं संसारयात्रामन्वर्तयिष्ये ॥
संसारयात्रामन्वर्तमानं प्रत्यंगिरे श्री परमेशि देवि ।
स्पर्धा तिरस्कार कलिप्रमाद भयानि मां नाभिभवन्तु मात: ॥

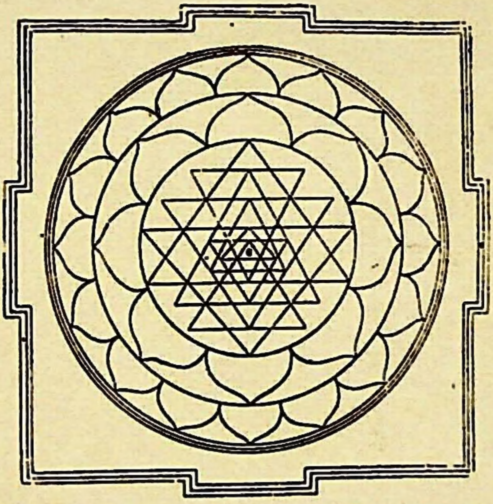

पन्द्रियायन्त्र

ह्रीं ८	ह्रीं १	ह्रीं ६	श्रीं
ह्रीं ३	ह्रीं ५	ह्रीं ७	श्रीं
ह्रीं ४	ह्रीं ९	ह्रीं २	श्रीं